॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः ।
संबोधयत्पत्रमिदं प्रवर्त्ततामू, दैगम्बरं जैन-समाज-मात्रम् ॥

वर्ष १५ वाँ. ‖ वीर संवत् २४४८. पौष–माह विक्रम सं० १९७८. ‖ अंक ३–४ था



लखनऊमें महासभा।

सबसे लखनऊमें महासभाको निमंत्रण मिला था। तबसे लखनऊ महासभाकी चर्चा चला ही करती थी क्योंकि महासभाके कितनेक कार्यकर्ताओंका लखनऊके भाइयों पर विश्वास न था! वे समझते थे कि नया जमाने लखनऊके भाई महासभाको लखनऊ ले जाकर इसकी दशा क्या जाने कैसी कर डालेंगे इससे किसी न किसी प्रकार लखनऊमें महासभा न हो तो ठीक। इसीसे दो तीन वार ऐसे २ विघ्न उपस्थित किये गये थे परंतु हमारे लखनऊके भाई इतने सज्जन सहनशील और महासभाकी सेवा और उन्नतिके लिये कटिबद्ध थे कि अंतमें लखनऊके भाईयोंको इस बारकी महासभामें इतनी सफलता मिली है कि जैसी किसीको भी आशा थी। अर्थात लखनऊमें भारतवर्षीय दि० जैन महासभाका २६वां वार्षिक अधिवेशन माघ सु० ६–७–८को अतीव समारोह और सफलताके साथ हो गया। स्वागत समितिने ठहरनेके लिये डेरे, दरी, रस्सी, पानी आदिका इतना उत्तम प्रबंध किया था कि किसीको शिकायत न थी तथा सेवाके लिये तीन चार सेवासमितिके स्वयंसेवकोंने रातदिन परिश्रम उठाकर सबकी सेवा की थी। स्वागत समितिके सभापति बाबू फतेचंदजी, बाबू अजितप्रसादजी मंत्री, बा० बालीलालजी उपमंत्री, लाला देवीदासजी आदि थे। लखनऊके करीब सभी भाई व्यापार धंदा छोड़कर डालीगंजमें ही आकर ठहरे थे और सबका उत्तम स्वागत करते थे। ला० देवीदासजीने तो अपने खर्चसे कई भाईयोंका नित्य भोजन सत्कार किया था। त्यागियोंमें ब्र० शीतलप्रसादजी, ब्र० ज्ञानानंदजी, ब्र० ठाकुरप्रसादजी, ब्र० चांदमलजी, भा० दीपचंदजी, ब्र० छोटेलालजी, और ब्र० सुखानंदजी पधारे थे। माघ सुदी ६ और ९को रथयात्रा उत्सव खूब धूमधामसे निकला था तथा नित्य जैन गंजके मंदिरमें पूजन विधान हुआ करता था। सबसे बढ़कर महासभाके अधिवेशनकी सफलताके आधारभूत तो इसके सभापति थे। इसप्रकार महासभाको ऐसे उत्तम, विचारशील, अनुभवी, विद्वान्, परिश्रमी, शांत स्वभावी, समाज सेवाके इच्छुक और समयको

परिस्थितिके जाननेवाले बाबू चम्पतरायजी बेरिस्टर हरदोई सभापति पदपर मिले थे कि महासभाका कार्य कुछ भी विघ्न न आते हुए अतीव सफलताके साथ पूर्ण हुआ था। हमें जहां तक ख्याल है यह प्रथम ही मौका था कि एक बेरिस्टरको यह पद मिला था। जब कि हमारे कितने ही पंडित तथा पुराने विचारवाले भाई यही समझते हैं कि अंग्रेजी पढ़े लिखे तो धर्मसे विमुख होते हैं और धर्मविरुद्ध चलते हैं आदि परन्तु उनके इन विचारोंको बेरिस्टर चंपतरायजीने निर्मूल कर दिया है और महासभामें नई जान पैदा करदी है जिसके लिये महासभा चिरकाल तक बैरिस्टर साहबकी ऋणी रहेगी इस बार महासभामें प्रबंधकारिणी क० का चुनाव जो नियमसे होनेवाला था उसको रोकनेके लिये अर्थात् एक वर्ष बंद करनेके लिये नई चालबाजी प्रथमसे की गई थी परन्तु सुयोग्य और निष्पक्ष सभापतिजीके सामने उचित ही न्याय हुआ और नवीन चुनाव इसी वर्ष हुआ है। इस बारके चुनावमें महत्वका चुनाव सभापतिका हुआ है अर्थात् वार्षिक अधिवेशनके सभापति ही सर्वदा अर्थात् आगामी अधिवेशन तक स्थायी सभापति रहेंगे इससे बेरिस्टर साहब ही १ वर्षके लिये सभापति

'गजट' कार्यालयको देहली ले जावें और वहांसे अपनी निगरानीमें गजटका प्रकाशन करावें और आप खुद अच्छी तरहसे संपादन करें तो 'गजट' की दशा सुधरनेका अच्छा मौका है। कोषाध्यक्ष बा० निर्मलकुमारजी नियुक्त हुए हैं जो बहुत ही योग्य हैं।

महासभाके सभापति बा० चंपतरायजीका व्याख्यान बहुत ही विद्वत्तापूर्ण और लंबा था। यह 'मित्र'में छप रहा है। हो सकेगा तो आगामी अंकमें हम उसका सार प्रकट करेंगे। और महासभामें पास हुए प्रस्ताव हमने इसी अंकमें अन्यत्र प्रकट किये हैं उस पर भी यहां हम कुछ निवेदन करना चाहते हैं जो उपयुक्त होगा।

ऐसे तो १० प्रस्ताव हुए हैं परंतु उनमें उल्लेख योग्य प्रस्ताव पर ही कुछ लिखेंगे। चौथे प्रस्तावमें सबजेक्ट कमेटीमें पास हुए प्रस्तावको परिवर्तन करनेका अधिकार साधारण सभाको दिया गया है जो युक्त हुआ है और इससे साधारण जनताका आदर हुआ है। पांचवें प्रस्ताव जैन-कानून (लॉ) बनानेके लिये एक कमेटी नियुक्त होनेका है। इस कमेटीके मैंबरोंको भरसक परिश्रम करके महासभाको शीघ्र ही जैन कानून तैयार करके सरकारसे पास करा लेना चाहिये। इसके प्रचलित करनेके लिये

...नेका है। पारसी जैसी एक लाख-प्राणीवाली कौमका त्यौहार सरकार मानती है तो क्या १२ लाखकी वस्तीवाली जैनकौमका एक भी जाहिर त्यौहार सरकार न मनावेगी ?

सातवां प्रस्ताव—ईडर नागौरके शास्त्र भंडारकी रक्षा करनेका है। इसके लिये ला० जम्बूप्रसाद-जी और ला० देवीप्रसादजी तन मन धन लगाकर कोशिश करेंगे तो अब सफलता हो सकेगी ऐसी पूर्ण संभावना है।

१२वां प्रस्ताव—भवने आवरण दि०जैन धर्मा-नुसार शुद्ध रखनेका है तथा इसमें रा० महासभाके अस्पृश्य स्पर्श आदि प्रस्तावका विरोध शास्त्रानुकूल किया गया है सो उचित ही है।

१५वां प्रस्ताव महासभाके ध्रौव्य फंडकी एक ट्रस्ट कमेटी नियत करनेका है। यह प्रस्ताव अतीव उचित हुआ है और अब इसके मंत्री बा० निर्मलकुमारजीको उचित है कि जहांतक हो शीघ्र ही ट्रस्ट करा लेवें।

१९वां प्रस्ताव तीर्थक्षेत्र कमेटीको लाग प्रति वर्ष १) हरएक गृहस्थ पीछे देनेका है। इस प्रस्तावके अमलमें लानेकी अतीव आवश्यकता है। क्योंकि कई तीर्थोंका प्रबंध तीर्थक्षेत्र कमेटीको करना पड़ता है, कई तीर्थोंकी रक्षाके लिये हजारों रुपये खर्च करने पड़ते हैं तथा कमेटीमें कुछ स्थायी फंड तो है नहीं परंतु खर्च तो नियमका ही चालु है और अभी महासभामें भी अयोध्याजी, सिवनी व काशीपुरके मंदिरोंका प्रबंध तीर्थक्षेत्र कमेटीको करनेका है इस लिये सभी जैन भाइयोंका फर्ज है कि वे तीर्थ रक्षा फंडका एक २ रुपिया प्रतिवर्ष पहुंचाते रहें। इस एक २ रुपयेसे हजारों रुपये इकट्ठे होते रहेंगे और तीर्थ रक्षाका कार्य सुचारु रूपसे चालु रह सकेगा।

२०वां प्रस्ताव स्वदेशी वस्त्र और स्वदेशी वस्तुके व्यवहारका है। आज सारे देशमें स्वदे-शीका आंदोलन पूरे वेगसे चल रहा है जिसका फल यह हुआ है कि सर्वत्र गाढेका और चर्खेके सूतका प्रचार होनेसे अनेक गरीबोंकी आजीवि-काका मार्ग निकल आया है। यदि इसी प्रकार स्वदेशीका ही व्यवहार रहेगा तो हिंदुस्तानकी आर्थिक उन्नति होनेमें देर न लगेगी। हम जैनियोंको तो स्वदेशी गाढेका ही व्यवहार इसी लिये भी करना चाहिये कि वह शुद्ध है। चर्बी मिश्रित मीलके कपडेका व्यवहार अब त्याग देना चाहिये तथा जो २ वस्तु स्वदेशी मिलती हों उनको ही खरीदना चाहिये चाहे वे कुछ मंहगी भी क्यों न हों।

अंतमें हम इतना ही कहते हैं कि महासभाके महामंत्री अब यदि कोशिश करेंगे तो नये संगठनके अनुसार अब महासभाको सर्वव्यापी बना सकेंगे। आगामी अधिवेशनके लिये कहींसे भी निमंत्रण नहीं हुआ है इसका खेद है परन्तु इसके लिये कोशिश करनेकी आवश्यका है। हमारे खयालसे अबके महासभाका जल्सा दक्षिण या तो गुजरातमें होनेकी आवश्यका है। यदि हमारे बंबईके भाई कोशिश करें तो आगामी मगसिर मासमें १५ यात्राके समयमें बंबईमें महासभाका अधिवेशन करा सकते हैं। गुजरात और दक्षिणके लिये बंबई स्थान अतीव उपयुक्त है।

* * *

अष्टाह्निका और हुताशणी।

अभी ही फाल्गुण सुदी ८ से १५ तक हमारा अष्टाह्निका पवित्र पर्व आ रहा है और साथमें मिथ्यात्वी हिंसक और बीभत्स पर्व हुताशणी (होली)का भी आरहा है। अब भी हमारे कई भोले भाई अष्टान्हिका जैसे पवित्र पर्वमें होलीके दिनोंमें बिभत्स व्यवहार करते हैं तथा होलीको पूजते हैं और उसमें श्रीफल होमते हैं तथा कृत्रिम खेलमें पड़ते हैं जो जैन धर्मसे बिलकुल विरुद्ध है। हम ऐसे भाइयोंको इसलिये याद दिलाते हैं कि वे किसी भी अवस्थामें अब ऐसा पाप न करें और अपना समय धर्मध्यानमें बितावें।

* * *

'देवेन्द्र' का स्वागत।

जैन साहित्यसेवी स्वर्गीय कुमार देवेन्द्रप्रसाद-जी आराकी स्मृतिमें कुछ भी होनेकी अतीव आवश्यकता थी और अतीव हर्षके साथ प्रगट किया जाता है कि इसकी पूर्ति जैनसमाजसेवक, परम उत्साही और हमारे विद्वान् बन्धु बाबू अजितप्रसादजी जैन एम० ए० एलएल० बी० वकील लखनऊने की है। आपने "देवेन्द्र" नामका एक साप्ताहिक पत्र जैन समाजमें प्रगट करनेका साहस उठाकर दिखाया है जिससे आपकी जितनी भी प्रशंसा की जाय कम है। इस साप्ताहिक पत्रका प्रथम अंक शनिवार ता० १८-३-२१को प्रगट होचुका है जो ८पेजका है। कागज छपाई अतीव उत्तम है और इसके संग्रह करनेसे एक वर्षमें ४००-५[illegible] एक उत्तम पुस्तक तैयार हो सकेगी। इस [illegible] अंकमें महासभा लखनऊका दिग्दर्शन बाबूजीने संक्षेपमें अच्छी तरह दर्शाया है तथा 'देवेन्द्र' नामका प्रारम्भिक लेख देवेन्द्रकुमारको उद्देश करके लिखा गया है जो अतीव पढ़ने योग्य है। इसका वार्षिक मूल्य ४) रु० है परन्तु छह २ मासके दोदो रु० अग्रिम लिये जाते हैं। वी०पी० करनेकी झंझट बाबूजीने नहीं रखी है परन्तु जिनको ग्राहक होना होवे २) रु० मनिआर्डरसे भेजें, 'देवेन्द्र' उनके पास आता रहेगा। यदि किसीको नमूना देखना हो तो ०)॥ की टिकट भेजनेसे मुफ्त मिलता है। 'देवेन्द्र'की स्मृतिका पत्र और फिर बाबू अजितप्रसादजी वकील जैसे प्रखर विद्वान् अपने तन मन और धनसे इस पत्रके संपादनके लिये कटिबद्ध हुए हैं तब सारी जैन समाजका फर्ज है कि वह इसको उत्तेजन दें। हरएक जैन भाईको २) भेजकर इसका ग्राहक हो जाना चाहिये। पत्र व्यवहारका पता—

व्यवस्थापक—देवेन्द्र, अमीनाबाद-लखनऊ है।



परवार जातिकी मनुष्यगणना—अमरावती निवासी सिं० पन्नालालजी परवारने हजारों रुपया खर्च करके परवार जातिकी मनुष्यगणना करनेका काम दो वर्ष हुए प्रारम्भ किया था। वह करीबर पूर्ण होने आया है। आपके मैनेजर राजेन्द्रकुमारने अभी इसका गोशवारा प्रगट किया है जिससे मालूम होता है कि संयुक्त प्रदेश ७१७४, मध्य प्रदेश व बुंदेलखंड १७०-४६, राजपूताना और मालवा ७२८३, बंगाल विहार उडीसा १३४, पंजाब अहाता १२, बम्बई अहाता १२ इस प्रकार कुल ४१६७२ मनुष्योंकी गणना हो चुकी है जिसमें २२०८१ पुरुष और १९५८६ स्त्रियें हैं। पुरुषोंमें कुंआरे ११०९८, विवाहे ८९८७ और विधुर २००१ है जब स्त्रियोंमें कुंआरी ५६६१, विवाही ८९६४ और विधवा ४९९९ हैं। इन विधवाओंमें सिर्फ २२१४ पढी हुई हैं जब १७३९१ अनपढ हैं। अब भी किसी परवार भाईने अपना नाम इस गणनामें नहीं लिखाया हो तो वे फोर्म मंगाकर उसकी खानापूरी करके भेज देवें। इस विषयमें पत्र व्यवहारका पता—राजेन्द्रकुमार जैन मैनेजर परवार डिरेक्टरी, अमरावती है।

दक्षिण महाराष्ट्र जैन सभा—का २४ वां अधिवेशन स्तवनिधि पर गत मासमें सेठ पायसागर कुदरस्टीके सभापतित्वमें हो गया। जिसमें उल्लेख योग्य प्रस्ताव ये हैं—प्राथमिक शिक्षा मुफ्त व जबरन की जाय, स्वदेशी उद्योगको उत्तेजन देना, जैनोंमें अंतर्जातीय रोटी बेटी व्यवहार करना, पठनक्रमकी पुस्तकोंमेंसे हिन्दू धर्मके पाठ कम करने, बोर्डिंगोंमें उचित धार्मिक शिक्षा देने; और १२००) का बजट पास करने आदि। उत्तम कीर्तनकार चोपडेको सुवर्ण पदक दिया गया था। महिला परिषद भी हुई थी।

सेठ हीं० गु० बोर्डिंग—अमदावादनी धार्मिक परीक्षा ब्र० शीतलप्रसादजी द्वारा ता० २९-१-२२ ने दिने छापेला प्रश्न पत्रो द्वारा रत्नकरंड, द्रव्य संग्रह, मोक्ष शास्त्र अने सागार धर्मामृतनी लेवाई हती।

ललितपुर—की क्षेत्रपाल दि० जैन पाठशाला जो दो माहसे बन्द पडी थी अब ता० १५ फर्वरीसे फिर प्रारम्भ होगई और अध्यापक पं० शीलचन्द्र न्यायतीर्थ नियुक्त किये गये हैं। यहां विद्यार्थियोंकी आवश्यकता है।

कुंडलपुर—में वार्षिक मेला हो गया। ५००० जन संख्या थी। ब्र०पं० गुणेशप्रसादजी, ब्र० ज्ञानानंदजी आदिके धार्मिक व्याख्यान तथा बा० गोकुलचंदजी, भैयालालजी, चौ० दीपचंदजी आदिके असहयोग पर जोशीले व्याख्यान होनेसे बहुतसे स्त्रीपुरुषोंने स्वदेशी कपडे वापरनेकी प्रतिज्ञा ली और विदेशी त्याग दिये। मेलेका प्रबंध दमोहकी सेवासमितिने किया था। जैन संस्थाओंकी व्यवस्था व देवद्रव्यके प्रबंधके लिये एक कमेटी नियुक्त हुई है। रसद न देनेकी सूचना प्रस्ताव हुआ तथा

खास प्रस्ताव यह हुआ कि यदि कोई पावार भाई देश सेवाके कारण जेल जावे तो उनके छूटने पर उनके साथ कोई व्यवहार बंद न किया जावे परंतु शास्त्रोक्त शुद्धिके बाद सब व्यवहार चालू किया जावे।

बारां (कोटा)—में रथयात्रा, तेरहद्वीप मंडल विधान व हाडौती प्रां० दि० जैन सभा का अधिवेशन ता० ६-७-८ मार्चको होगा।

कोडरमा—में बिहार उड़ीसा प्रां० दि० जैन सभाका अधिवेशन भी फा० सु० ७ से १० तक होगा। सभापति सेठ टाडचँदजी छिंदवाड़ा निवासी होंगे।

येसरवाई—जैन कन्या पाठशाला बड़वाहका वार्षिक अधिवेशन माघ सुदी १२को हो गया। स्त्रियोंके व्याख्यान तथा कन्याओंके गायन, भजन ...द आदिके बाद इनाम बांटा गया था।

धीनाजी—में वार्षिक मेला होचुका। १०० जन समुदाय था। चौधरी गिरधारीलालजीके सभापतित्वमें सभा होकर उदयलाल कासलीवालके विधवाविवाहमें शामिल होनेवाले रतनलाल, नन्हेलाल ये दो महाशय उपस्थित थे उनसे दंडित दंड लिया गया।

अहिक्षेत्र—पर संयुक्त प्रां० दि० जैन सभाका प्रथम अधिवेशन चैत्र बदी ९ से १२ तक धूमधामसे होगा। यह अहिक्षेत्र (रामनगर) आंवली स्टेशनसे ६ मील पर है। यहांके आदिका उचित प्रबंध किया गया है।

आत्मधर्म सम्मेलन—का प्रथम अधिवेशन लखनऊमें माघ सुदी ९ को गुरुवारको बाबू अजितप्रसादजी वकीलके हाथोंके सभापतित्वमें हुआ था। इसमें करीब १२ सभासद और १५० आदमी उपस्थित थे। एक अंग्रेज बहिन भी उपस्थित हुए थे। सभापतिजीका 'आत्मधर्म' पर उत्तम व्याख्यान हुआ था जो हम आगे प्रकट करेंगे। ब्रह्मचारीजी शीतलप्रसादजीने आत्मधर्मके उद्देश पर व्याख्यान दिया और प्रस्ताव किया कि हरएक सभासदको (१) आत्मधर्मका अभ्यास करना,(२) मौजशौक छोड़ कर सादा जीवन बिताना (३) अहिंसा पर चलते हुए एवं प्राणियोंसे प्रेम करना, (४) और आत्म धर्मके सिद्धांतोंको दूसरोंको अच्छी तरह समझाना चाहिये। इसका समर्थन सेठ मूलचंदजी कापड़िया, हकीम कल्याणरायजीने किया था और पास हुआ था। अंतमें सेठ मूलचंदजीके इशारा करनेपर कई महाशयोंने सभासदमें अपने नाम लिखाये थे।

नजीबाबाद—में सभा होकर सेठ पदमराजजी, दिग्विजयसिंहजी, म० भगवानदीनजी, पं० अर्जुनलालजी सेठी आदि जो देशसेवाके लिये जेल गये हैं उनको धन्यवाद दिया गया था।

भिवानी—में फा० सु० ६से पंजाब प्रां० खंडेलवाल सभाका अधिवेशन होगा।

सोलापुर—के औषधदान ज्ञान म० मंदिरको सेठ माणिकचंद पानाचंद जौहरी बम्बईने ५१) दिये हैं।

नेमगिरि क्षेत्र—निजाम राज्यमें परभणी जिलेमें जिंतुरके पास नेमगिरि नामक पर्वत पर विशाल जैन मंदिर है उसमें ८ अखंड २ मोंरे हैं। इनमें नेमनाथ स्वामीकी प्राचीन प्रतिमा ७ फुट ऊंची पद्मासन है तथा और भी

प्राचीन प्रतिमाएं हैं। इस मंदिरके जीर्णोद्धारकी आवश्यकता है। गजपंथाजीके यात्रियोंको इस अतिशय क्षेत्रका भी दर्शन करते जाना चाहिये। प्रबंधक सेठ अंबादास नेमासा सावजी जिंतुर (परभणी) हैं।

परस्पर जातिमें संबंध–गुजरानवाला (पंजाब)में बीसा ओसवाल, दशाओसवाल, बीसा खंडेलवाल व दशा खंडेलवालका एक व्यवहार होकर ओसवालोंकी कन्या खंडेलवालोंको और खंडेलवालोंकी कन्या ओसवालोंको ब्याही गई है। क्या गुजरातकी दशा–बीसा हुमड, मेवाडा आदि जाति इसका अनुकरण नहीं करेगी?

आगरा–के ताजगंजीके पं० दि० जैन मंदिरमें माघ सु० ९की रात्रिको बड़ी भारी चोरी हो गई और बदमाश लोग चंवर, छत्र, थाल रकाबी आदि सब लेगये। रक्षकको खुब मारा पीटा था।

गोपाल-दि०जै०सि० विद्यालय–मोरेनाका वार्षिकोत्सव माघ सुद १–२ को सेठ पानाचंद रायचंद जौहरीके सभापतित्वमें हुआ था। ब्र० शीतलप्रसादजी, पं० माखनशास्त्री, मगरे वकील, ला० मुन्नेलालजी, पं० वंशीधरजी, आदि पधारे थे। पंडितोंके तथा विद्वान छात्रोंके व्याख्यान हुए थे। सभापतिने १०१) विद्यालयको व १०) व्याख्यान देने वाले ९ छात्रोंको भेट किये थे तथा ला० मुन्नीलाल कमूनवालने इस कोर्टके विद्वान् बनानेको बीस २ रुपये मासिक तककी तीन छात्रवृत्ति देनेकी स्वीकार किया था। धन्य है ला०मुनीलालजीके विद्याप्रेमको!

झांसी–में बाल विधिनदारा मार्गीयको १००) जुर्माना न देनेपर तीन माहकी सादी जैल हुई थी इतनेमें गत ता० २२ जनवरीको पुलिस उनके बकबन्त प्रेसमें जाकर ताला तोडकर तिजोरीमेंसे १००) निकाल ले गई और वे ता० २५ को छोड दिये थे।

साहित्य सभा–लखनऊमें माघ सुदि ८ की रात्रिको पं० माणिकचंद्रजी न्यायाचार्यके सभापतित्वमें जैन साहित्य सभा हुई थी जिसमें जैन काव्यके महत्वपर तीन लेख पं० बनवारीलालजी, पं० सतीशचंद्रजी और पं० अजितकुमारजीके आये थे उनमें प्रथम दो सुनाये गये और तीनोंको क्रमशः ५०) ३०) और २०) लखनऊकी स्वागत सभाकी ओरसे दिया गया तथा षट् द्रव्योंकी आवश्यकतापर भी तीन लेख पं० मथुराप्रसाद, पं० अजितप्रसाद और पं० बुद्धूलाल श्रावकके आये थे उनको भी क्रमशः ५०) ३०) और २०) इनाम दिया गया था। अंतमें सभापतिजीका जैन काव्यके महत्व पर उत्तम व्याख्यान हुआ था।

नागपुर–में नागपुर प्रां० दि० जै० खंडेलवाल सभा द्वारा विद्यालय खुल चुका। २० विद्यार्थी प्रवेश हो चुके हैं। बोर्डिंग भी खुला है। प्रधानाध्यापक पं० शांतिराजजी न्यायतीर्थ हैं। छात्रालयमें भोजनके लिये खंडेलवाल विद्यार्थीको प्रथम मौका दिया जाता है।

जैन बाला विश्राम–धनुपुरा, आराके भवन निर्माणकी नींव माघ वदी ०)) को विधिपूर्वक रखी गई थी। आश्रममें आजकल २१ छात्राएं हैं। उत्तम प्रबंध है। पं० चंदाबाईजी आश्रमकी तन मन धनसे अपूर्व सेवा कर रही हैं।

ला० अमीचंद जेलमें–गोहाना (रोहतक) के लाला अमीचंद जैन रईस जो कि कांग्रेस कमेटीके सभापति थे, गत ता० १८को पकड़े गये और आपको छः माह सख्त कैदकी सजा हुई है। जेल जाते समय आपने अपनी मातासे कहा कि–हे माता! जब तुम्हारा एक पुत्र बखतावरसिंह ७ वर्षमें अमेरिकासे L. M. B. पास करके आये हैं तो मेरे विषयमें भी यह समझ ले कि मेरा पुत्र अमीचंद देशको दासत्व समुद्रसे पार उतारनेके लिये तीर्थकी यात्रा करने गया है आदि। माताने भी आपको आश्वासन दिया और उनकी कैदसे अपने कुलका गौरव समझा। गोहाना निवासियोंने आपको सत्कार देकर फूलमाला पहनाई थी। शिवरामसिंह।

अष्टान्हिकामें उत्सव-आगामी फाल्गुनी ८ से १५ तक अष्टान्हिका पर्वमें हस्तिनापुरमें ८ दिन तक मेला होगा। नंदीश्वरद्वीप मंडलविधान व रथयात्रा होगी तथा इस बार ऋ० ब्रह्मचर्याश्रमके व्यवस्थापकोंने उत्सवका विशेष प्रबन्ध किया है। वर्णी गणेशप्रसादजी, ब्र० जिनेश्वरदासजी, ब्र० गोकुलप्रसादजी आदि खास पधारनेवाले हैं। आश्रममें नये विद्यार्थी भी इसी समय भर्ती किये जावेंगे। व्यावहारिक विद्याके लिये अभी **ठाकुरप्रसादजी** एम० ए० नियुक्त किये गये हैं जो २-४ दिनमें आजावेंगे तथा यहां धर्म व संस्कृतकी ऊंचीसे ऊंची शिक्षा व [illegible] बालकोंको देनेके लिये भी आयोजन प्रारम्भ हो गया है। किन्तु हस्तिनापुरकी जलवायु अच्छी है और वर्षाऋतुमें वायु कुछ दूषित होती है इसलिये वर्षाऋतुमें यहां ही आश्रमके स्थान परिवर्तनका पक्का विचार होचुका है। ब्र० ज्ञानानंदजी, अधिष्ठाता।

विरोध-पं० अर्जुनलालजी सेठी आजकल सागरकी जेलमें है वहां उनको जबरन अंडे और बीड़ी लेनेका प्रयत्न उनकी मरजी विरुद्ध किया जाता है जो जैन धर्मके विरुद्ध है इस पर लाहोरके महावीर जैन ऐसोसिएशनने गत १९ ता० को सभा करके सरकारकी इस नीतिका घोर विरोध किया है और अन्य स्थानोंको ऐसा प्रस्ताव करनेकी सूचना की है और प्रस्तावकी नकल ना० वाइसरोयको भी भेजी है।

खेकड़ा (मेरठ)–में फाल्गुन वदी ९ को भूगर्भसे दो जिन प्रतिमा निकली हैं जिनमें एक पार्श्वनाथकी शुक्ल वर्ण प्रतिमा २ फुट ऊंची है उस पर 'मूलसंघ' आदि लिखा है।

५०००)का दान-श्री कुंथलगिरि ब्र० आश्रमको सोलापुर निवासी सेठ हीराचंद नेमचंदके पुत्र सेठ वालचंदजी वो ट्रस्टने ५०००) स्थायी कोषमें दिये हैं। आपका यह दान अन्य धनिकोंको अनुकरणीय है।

'परवार बन्धु'–नामक मासिक पत्र परवार जातिकी ओरसे चैत्र मासमें प्रकट करनेका प्रबंध हो रहा है। संपादक हैं पं० तुलसीरामजी न्यायतीर्थ दि० जैन हाईस्कूल बड़ौत (मेरठ) वार्षिक मू० १॥) होगा।

ब्यावरमें मं० महासभा–ब्यावर (अजमेर)में नवीन नसियांजीमें बड़ी प्रतिष्ठा उत्सव माघमें है उसी मौके पर यहां भा० दि० जैन [illegible] महासभाका अधिवेशन करना [illegible] से ५ तक होगा निश्चय हो चुका है।



पं० अर्जुनलालजी सेठी बी० ए०

(देशसेवाके लिये जेलका दुःख सहन करनेवाले निडर वीररत्न)

जैन 'विजय प्रेस-सूरत।

शरीर रक्षार्थ आवश्यकीय कार्य।

शरीर रक्षाके लिये प्रतिदिनके कार्योंका नियमित होना अत्यावश्यक है। प्राकृतिक जगत्पर दृष्टि डालनेसे सर्वत्र देखा जाता है कि एक नियमके अनुसार ही प्रकृतिके समस्त कार्य चल रहे हैं। नियम विरुद्ध जीवनके लिये क्लेश रूप है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष आदि सम्पूर्ण पुरुषार्थोंका मूल जीवन है। और उस जीवनका मूल उत्तम स्वास्थ्य है। अतएव शरीर और मन जिससे उत्तम प्रकार स्वस्थ रहें इस विषयमें विचारपूर्वक कार्य करना, मनुष्य मात्रका कर्तव्य है। स्वास्थ्य रक्षाके लिये किन २ नियमोंका पालन करना चाहिये और कौन २ से पदार्थ हमारे लिये नित्य प्रयोजनीय हैं इस विषयका सबको अच्छे प्रकारसे ज्ञान होना उचित है। नीचे कुछ साधारण नियमोंका उल्लेख संक्षेपसे किया जाता है।

हमारे शरीरका प्रतिक्षण क्षय होता रहता है। हम उठना, बैठना, चलना, फिरना आदि जो कुछ कार्य करते हैं उन सबसे हमारे शरीरका प्रतिक्षण क्षय होता रहता है। और हम प्रतिदिन जो कुछ खाते पीते हैं उसके द्वारा क्षयकी पूर्ति हुआ करती है।

जल हमारी जीवन रक्षाके लिए अत्यंत आवश्यकीय पदार्थ है। जलके बिना हम बहुत समय तक कदापि जीवन धारण नहीं कर सकते। जल हमारे शरीरके पोषणमें विशेष रूपसे सहायता करता है—और रुधिरको स्वच्छ करता है। शरीरके भीतरी भागमें रहनेवाले दूषित पदार्थोंको बाहर निकालनेके लिये जलकी हमें प्रतिदिन विशेष आवश्यकता होती है। इसके सिवाय शरीरके बाहरी भागों को धोनेके वास्ते और भोजनादिके तयार करनेके लिये भी हमें नित्य प्रति जलका व्यवहार करना पड़ता है। हमारे शरीरके तीन भागोंमें दो भाग जल और एक भाग दूसरे पदार्थ हैं। रुधिरके प्रायः सौ भागोंमें नव्वे भाग जल और शरीरकी हड्डियोंमें भी प्रायः सौमें दस भाग जल है। पसीना, मूत्र, कफ इत्यादिके रूपमें प्रतिदिन प्रायः तीन सेर जल हमारे शरीरसे बाहर निकलता है। पिपासाके लगने पर हमें शरीरमें जलका अभाव मालुम होता है हमारे भोजनके पदार्थोंमें कुछ जलका भाग कम होने पर भी हमें प्रतिदिन तीन सेर जल ग्रहण करना चाहिये।

भोजनके एक घंटे बाद जल पान करने एवं शयन करनेसे पहले और प्रातःकाल शय्या त्यागनेके पश्चात् एक गिलास जल पान करनेसे शरीरका बहुत उपकार होता है। भोजनके समय अति जलपान करना कदापि उचित नहीं है। क्योंकि इससे पाकस्थली निर्बल हो जाति है और जठराग्नि मन्द हो जाति है। थोडा या अल्पमात्रामें जलपान करनेसे शरीरका क्लेद अच्छे प्रकारसे नहीं निकलता इस कारण उससे कोष्टबद्धता होकर अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होजाते हैं।

हमें शरीर स्वच्छ रखनेके लिये प्रतिदिन स्नान करना भी उचित है। हमारे शरीरका समस्त क्लेद (मैल) पसीनेके रूपमें रोमकूपोंके मार्गसे शरीरके बाहर निकला करता है इस

कारण रोमकूपोंके क्लेद (मैल) से बन्द हो जानेपर शरीरके भीतरका क्लेद (मैल) बाहर नहीं हो सक्ता और इसके द्वारा त्वचा संबंधी अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होजाते हैं। फुफ्फुस और मूत्राशयके बहुतेरे कार्य त्वचाके द्वारा सम्पन्न होते हैं। इस कारण रोमकूपोंके द्वार बंद होने पर फुफ्फुस और मूत्राशयको अधिक कार्य करना पड़ता है जिससे कि वह शीघ्र दुर्बल होकर अनेक रोगोंके कारण बन जाते हैं। इस कारण हमें रोमकूपोंको उत्तम प्रकारसे स्वच्छ रखना आवश्यक है। हमें प्रतिदिन स्नान करना चाहिए। साधारणतः शीतल जलसे ही स्नान करना श्रेष्ठ है, किन्तु शीत ऋतुमें दुर्बल मनुष्यों को और जिनको कि शीतल जलसे स्नान करना अनुकूल नहीं पड़ता उनको गरम जलसे स्नान करना चाहिये। किन्तु पूर्ण भोजन करने और अधिक शारीरिक परिश्रम करनेके पश्चात् स्नान नहीं करना चाहिए। स्नान करनेसे पहले तेलका मलना बहुत अच्छा है। साबुन आदिका लगाना भी बुरा नहीं है।

प्रतिदिन दांतोंको स्वच्छ करनेके लिए नीम बबूल आदिकी दातौन करनी चाहिये। क्योंकि हम जो कुछ आहार करते हैं उसके कितने ही कण प्रायः हमारे दांतोंमें रह जाया करते हैं और उनके सड़नेसे दांतोंका विशेष अनिष्ट होता है। दांतोंके चारों तरफ मैल जमजाता है। उससे दांतोंकी पकड़ शक्ति कम होकर दन्तशूल आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

अतएव दातौन अथवा मंजनवगैरह आदिके द्वारा दांतोंको प्रतिदिन स्वच्छ रखना चाहिए।

खाने पकानेके बासनोंको खूब स्वच्छ रखना चाहिए, और उनको धोनेके लिये भी स्वच्छ जल व्यवहार करना चाहिये। बर्तनमें जूठन लगी रहनेसे अनेक प्रकारके शरीरमें विकार पैदा होसकते हैं। नित्यप्रति खानेके शाकोंको खूब स्वच्छ जलसे धोकर काममें लाना चाहिए। कारण कि-शाकोंके ऊपर अनेक प्रकारके कीट रहा करते हैं। विशेषकर पत्र शाकोंमें सूक्ष्म कृमि अधिकतासे वास करते हैं। उसी प्रकार फलोंको भी जलसे धोलेना चाहिए।

भोजन हमारे जीवन धारणके लिये सबसे आवश्यकीय कार्य है। भोजनके द्वारा हमारे शरीरका उत्तम रीतिसे पोषण होता है। और हमारे शरीरका जो प्रतिक्षण क्षय होता है उसकी पूर्ति होती है। हमारे नित्यप्रतिके भोजनमें सब ही प्रकारके शरीरोपयोगी पदार्थ होने चाहियें। जिससे शरीरका उत्तमरूपसे पोषण हो और जो स्वभावके विरुद्ध न हों ऐसे ही पदार्थ प्रत्येक मनुष्यके भोजनोपयोगी होसकते हैं। प्रत्येक मनुष्यको देश, काल, मल, वायु, अवस्था, प्रकृति और उपयोगिता समझ कर जो सहजमें हजम हों ऐसे पदार्थ ही भोजनके लिये लेने चाहियें। विशेष कर देखा जाता है कि प्रोटिड Protoids (पौष्टिक) जातिके भोजनके पदार्थ हमारे शरीरके अंगोंको संगठित करते और क्षयकी पूर्ति करते हैं। स्नेह जातिके पदार्थ Fatty हमारे शरीरकी गर्मीकी रक्षा करते हैं और हमारे शरीरमें स्नेहकी वृद्धि करते हैं। श्वेतसार व शर्कराजातिके पदार्थ स्नेह जातिके पदार्थोंके समान शरीरकी गर्मी व तेज

की रक्षा करते हैं किन्तु स्नेह जातिके पदार्थोंकी अपेक्षा बहुत कम। वरन् जातिके खाद्य पदार्थोंके द्वारा शक्ति प्रस्तुत होती है और पचन क्रियामें सहायता मिलती है। हम जो कुछ प्रतिदिन भोजन करते हैं, जल उसको समस्त शरीरमें बहाकर फैला देता है और शरीरके दूषित पदार्थोंके बाहर निकालनेमें सहायता करता है। भोजनके परिमाणका सब मनुष्योंके लिये कोई नियम निर्दिष्ट नहीं होसकता। व्यक्तिगत परिश्रमके अनुसार ही भोजनकी आवश्यकता होती है। जो किसी प्रकारका कठिन शारीरिक परिश्रम नहीं करते उनके लिये अधिक भोजनकी आवश्यकता नहीं है। वृद्ध मनुष्योंकी अपेक्षा युवकोंका भोजन कुछ अधिक परिमाणमें होना चाहिये। साधारणतः सब मनुष्योंको दो बार भोजन करना चाहिये। बार बार अधिक मात्रामें भोजन करना हानिकारक है।

जीवनरक्षाके लिये हमें खुली हुई और शुद्ध वायु अत्यावश्यक है। मनुष्य आहारके बिना बहुत दिनों तक जीवन धारण कर सकता है और जलके बिना भी कई दिन तक बच सकता है, किन्तु वायुके बिना कुछ क्षणोंमें मृत्यु हो जाती है। दूषित वायुमें रहनेसे अनेक प्रकारके रोग उत्पन्न होसकते हैं। और शुद्ध वायु अनेक रोगोंको दूर करती है। इसलिये हमें वायुकी उपयोगिता पर विशेष रूपसे ध्यान देना चाहिये। मन्द स्थानोंमें और जहां ही वायु दूषित हो ऐसे स्थानोंमें हमें कभी नहीं जाना चाहिये। जिस मकानमें बहुतसे आदमी एक जगह शयन करते हों वहां नहीं रहना चाहिये। बहुतसे मनुष्योंके श्वासोच्छ्वासके मिलनेसे वायु सहज ही दूषित होजाती है। जाड़ेके दिनोंमें घरको गरम रखनेके वास्ते अग्नि जलाकर घरके किवाड़ वगैरह बिलकुल बंद न करने चाहियें। कारण कि वहां की वायु शीघ्र दूषित होकर महा अनिष्ट कर सकती है। यहां तक कि—इससे मृत्यु भी हो सकती है।

स्वास्थ्य रक्षाके लिये कुछ व्यायामकी भी आवश्यकता है। व्यायामके द्वारा शरीर बलवान तथा उत्तम प्रकारसे संगठित होता है। खुली हवामें ही व्यायाम करना अच्छा है। व्यायाम करते समय फुफ्फुसकी तत्परता अधिक बढ़ जाति है। और उस समयके श्वास प्रश्वासके साथ कारबन (अंगाराम्लजान) हमारे शरीरमेंसे बाहर होती है और उसके परिवर्तनमें विशुद्ध वायुके साथ (अम्लजान—आक्सीजन) हमारे शरीरमें प्रविष्ट होता है और हमारे शरीरकी पुष्टि करता है। जो अधिक मस्तिष्क सम्बन्धी कार्य करते हैं उनके लिये व्यायाम करना अत्युपकारी है। प्रति दिन सभी मनुष्योंको व्यायाम करना आवश्यक है। अधिक व्यायाम करनेसे शरीरका अनिष्ट होता है इसलिये अपनी शक्तिके अनुसार ही व्यायाम करनेका नियम करना चाहिये। जो लोग बहुत कमजोर हैं उनको सवेरे शाम एकाध मील खुली हवामें भ्रमण करना ही उत्तम व्यायाम है। खुली हवामें भ्रमण करनेसे फेफड़ोंमें बल और परिपाक शक्तिकी वृद्धि होती है।

जो मनुष्य नित्य अधिक शारीरिक परिश्रमका कार्य करते हैं उनके लिये और किसी दूसरे प्रकारकी व्यायामकी आवश्यकता नहीं है। वे जो कुछ दिन भर काम करते हैं उसीमें उनकी खासी व्यायाम होजाती है।

स्वास्थ्य-रक्षाके लिये विश्राम और निद्राकी भी आवश्यकता है। जिस अवस्थामें हमारा मन और शरीर सम्पूर्ण रूपसे विश्राम करते हैं उस अवस्थाको निद्रा कहते हैं। हम दिन भर जो परिश्रमके कार्य करते हैं उनसे जो शरीरका क्षय होता है, निद्रा व विश्रामके द्वारा उसकी पूर्ति हुआ करती है। अवस्था, परिश्रम और अभ्यासके अनुसार निद्रा कम ज्यादह हुआ करती है। निद्राका अधिक आना अच्छा नहीं है। इससे परिश्रमकी अकर्मण्यता प्रगट होती है।

निद्रा हमारे शरीर रक्षाका प्रधान उपाय है। भोजनके अभावसे हमारी इतनी हानि नहीं होती जितनी कि निद्राके अभावसे होती है। परीक्षा द्वारा जाना गया है कि कुत्ता प्रायः तीन सप्ताह तक भोजनके बिना जीवित रह सकता है परन्तु निद्राके बिना वह पांच ही दिनमें मर जाता है। बालकोंके लिये अधिक निद्राकी आवश्यकता है। युवक मनुष्योंके लिये ६ घंटा वृद्ध और दुर्बल मनुष्योंके लिये कुछ अधिक निद्राकी आवश्यकता है।

भोजन करनेके पश्चात तत्काल ही नहीं सो रहना चाहिये। बिलकुल मुंह ढक कर नहीं सोना चाहिये।

एक घरमें बहुतसे मनुष्योंके साथ नहीं शयन करना चाहिये।

शयनका स्थान अधिक साफ सुथरा होना चाहिये और उसपर विशेष रखते इस बातका ध्यान रहना चाहिये कि वहां वायुका अच्छे प्रकार संचार हो। लेखक—बी० एस० वर्मा।

स्वास्थ्यरक्षाकी पचास बातें

(गत वर्ष अंक १०से आगे)

१९ बहुत सवेरी उठकर कुछ देर तक शरीरमें शुद्ध वायु लगनेसे विलक्षण स्फूर्तिका संचार होता है। रात्रिमें शयन करनेके पहले एक बार शरीर, और हाथ पांवोंको मलनेसे रक्तका संचालन अच्छे प्रकारसे होता है।

२० पहरनेके कपड़े मौसमके अनुसार थोड़े होने चाहिएं। शीतकालमें भी अत्यन्त गरम और चुस्त वस्त्र पहरने ठीक नहीं हैं, कारण उनसे रक्त संचालनकी क्रिया उत्तम प्रकारसे नहीं होती और व्यर्थ भार सहन करना पड़ता है। ग्रीष्म और वर्षाऋतुमें चौबीस घंटे शरीर पर कपड़े लादे रहना ठीक नहीं है। उक्त ऋतुओंमें एक मलमल या हलके गाढ़ेका कुर्ता या दुपट्टा रहना पर्याप्त है।

२१ जिनको केवल मानसिक परिश्रम करना पड़ता है उनके लिए प्रतिदिन नियमसे कुछ शारीरिक परिश्रम करना भी बहुत जरूरी है। और जो केवल शारीरिक परिश्रम करते हैं, उनके लिए प्रतिदिन १०—१५ मिनट अथवा आध घन्टा या १ घंटा मानसिक परिश्रम करना अच्छा है। साहित्यिक पुस्तक या गल्प अथवा समाचार पत्रोंको पढ़नेसे मन प्रसन्न होता है। जो लिखना, पढ़ना नहीं जानते, उनके लिए दूसरोंके पास बैठकर रामायण, भारतादि धार्मिक ग्रन्थोंका सुनना अच्छा है। यह अवलम्बन शरीर और मनके लिए मनको श्रम और विश्रामका देनेवाला है।

२७ जूता हलका और ढीला पहरना चाहिए। गरमीके मौसममें टाट या कपड़ेका जूता पहरना भी अच्छा है।

२८ स्नायविक दुर्बलतासे उत्पन्न हुई शिरकी पीड़ा धीरे २ थोड़ी देर तक माथेकी त्वचाको पकड़ कर खींचनेसे दूर हो जाती है।

२९ वात रोगसे पीड़ित रोगी कुछ देर तक धूपका सेवन करनेसे आरोग्य हो जाते हैं। सूर्यकी किरणें लगते ही वातका वेग कम होकर रोग नष्ट हो जाता है।

३० शरीरमें पीड़ा या क्लेश मालूम होनेपर तत्काल उसका कारण जानकर उपाय करना चाहिए। रोगकी उपेक्षा करना कभी ठीक नहीं है।

३१ सर्वदा अपनेको स्वस्थ समझते रहना चाहिए। कभी रोग होगा, इस भयसे कदापि भयभीत नहीं होना चाहिए। इच्छा शक्तिकी क्षमताकी सीमा नहीं है। प्रबल इच्छा शक्तिके द्वारा अनेक रोगोंके आक्रमणोंको दूर कर आत्म रक्षा करनी चाहिए। यह अत्यन्त शक्तिशाली रोगनाशक उपाय है। जो सर्वदा अपनेको रोगी समझते हैं, वे ही सदा बीमार रहते हैं।

३२ विद्याध्ययन करनेमें यदि स्वास्थ्य नष्ट होजाय तो वह विद्या निष्फल है। आरोग्यता होने पर विद्योपार्जन करना ठीक है।

३३ शिक्षक लोग इस बातका सदा ध्यान रक्खें कि विद्यार्थियोंकी मानसिक उन्नति करना ही उनका एकमात्र कार्य नहीं है किन्तु विद्यार्थियोंके शरीर आरोग्य रखने और उनके बल, वीर्यकी वृद्धिके लिए भी वे ही प्रतिभू हैं।

३४ बहुतसे आदमी चलते समय सामनेको झुककर चलते हैं, इससे उनकी पीठमें कुबड़ापन हो जाता है और दोनों कंधे गोल हो जाते हैं यह रोगका लक्षण है अथवा इसका परिणाम रोग है। इस बुरे अभ्यासको छोड़नेके लिए सामने को नेत्रोंके समभाव होनेकी अपेक्षा ऊंची वस्तुओंकी ओर दृष्टि रखकर चलनेसे कुबड़ापन दूर हो जाता है। यदि रास्तेकी सड़क पर घड़ी वाला गिर्जा या ऊंचा मंदिर हो तो उस घड़ी अथवा मंदिरके शिखरकी ओर दृष्टि लगाकर चलना अच्छा है। मंदिर या गिर्जेके न होनेपर उप तरहकी दूसरी ऊंची वस्तुकी तरफ निगाह रखनी ठीक है। किन्तु गाड़ी, घोड़े, मोटर आदिसे भी पूरी तौरसे बचाव रखना चाहिए।

३५ सायंकालको भोजन करनेके पश्चात् किसी प्रकारका मानसिक या शारीरिक श्रमसाध्य कार्य नहीं करना चाहिए। भोजनके पश्चात् और सोनेसे पहले किसी पुस्तकको पढ़ना अथवा एकाध हास्यजनक वार्तालाप करना अच्छा है।

३६ एक ही समयमें एक साथ फल, शाक, दाल, भात, मिष्टान्न आदि पदार्थ नहीं खाने चाहिए।

३७ प्रातःकालके खाद्य पदार्थोंमें फल अधिक होने चाहिए।

३८ सप्ताहमें एक दिन केवल फल खाकर रहना बहुत अच्छा है इस अभ्यासका उत्तम फल शीघ्र ही प्रत्यक्ष हो जाता है।

३९ जितना भोजन सहजमें हज्म हो सके उतना ही खाना चाहिए। उससे ज्यादा नहीं खाना चाहिए।

४० जो मनुष्य अपने स्वास्थ्यकी रक्षाके लिए सदा यत्नवान् रहता है, उसको कभी भी डाक्टर या वैद्योंके पास नहीं जाना पड़ता।

४१ खूब ठूंस ठूंसकर खाना, गुरुपाकी (भारी) पदार्थोंको खाना और उत्तम प्रकारसे भोजनको चबाकर न खाना, इन्हीं कारणोंसे विशेष कर रोगोंकी उत्पत्ति होती है।

४२ नेत्रोंके चारों तरफ काले रंगकी रेखा दीख पड़े तो समझना चाहिए कि यह स्वास्थ्य खराब होनेकी सूचना है। तभीसे इसके प्रतिकार करनेकी व्यवस्था करनी चाहिए।

४३ जहां पर वायु न आ जासकता हो, उस स्थानमें नहीं रहना चाहिए। यदि किसी प्रकारकी बाधा होनेसे ऐसे घरमें रहना ही पड़े तो जितना कम उस घरमें रहा जाय उतना ही अच्छा है। जनतापूर्ण स्थानका वायु भी स्वास्थ्यकर नहीं होता।

४४ बालक यदि रोवें तो उनको ताड़न न कर उनके रोनेका कारण जान करके उसको दूर करनेका उपाय करना चाहिए। बालकके रोने पर डराकी बातोंको देकर या उसे मिठाई देकर अथवा मीठी २ बातें करके उसको बुझानेकी चेष्टा करना ठीक नहीं। इससे बच्चोंकी तत्काल इच्छा शांत होनेपर भी रोनेका असली कारण दूर न होनेसे उसका फल अच्छा नहीं होता।

४५ जिससे अपने शरीरका अनिष्ट होता जान पड़े वह किनना ही उत्तम खाद्य क्यों न हो उसको कदापि नहीं खाना चाहिए। भोजनमें लोभको रोकना ही अच्छा है।

४६ बीच बीचमें एकाध दिन उपवास करनेसे शरीर बहुत अच्छा रहता है, इस प्रकार करनेसे अनेक रोगोंके आक्रमणसे भी रक्षा होती है।

४७ काम करते २ यदि थकावट मालूम हो तो काम बन्द करके विश्राम करना चाहिए। आत्म शक्तिसे अधिक कार्य करना विचारसंगत नहीं है।

४८ शयन करनेका कमरा खुला रहना चाहिए। विलासिताके कारण उसको हमेशा पर्दे या चिक आदि द्वारा ढका रखनेसे अनिष्ट होता है। उसमें अनेक रोगोंके कीटाणु आश्रय पाजाते हैं।

४९ रोगी मनुष्यको सदा प्रसन्न रखनेकी चेष्टा करनी चाहिए, किन्तु उसप्रसन्नतासे उसकी कोई हानि न होती हो, इस पर भी ध्यान रखना चाहिए।

५० चोरी, डकैती, हिंसा, और मिथ्या भाषणकी समान शरीरका अस्वस्थ रहना भी एक पाप समझना चाहिए। जिससे उस पापका भागी न होना पड़े, इस पर प्रत्येक मनुष्यको लक्ष रखना चाहिए।

गृहस्थ जैन स्त्री पुरुषोंके लिये आवश्यक काम

धार्मिक कर्त्तव्य।

(१) सूर्योदयसे पहले उठकर हाथ पैर धो, मनकी ग्लानि मिटा थोड़ी देर ध्यान, सामायिक, जप व भावना द्वारा अपनी आत्माको रागादि विभाव, ज्ञानावरणादि ८ कर्म, शरीरादिसे भिन्न शुद्ध ज्ञाता दृष्टा आनंदमई स्वभावधारी विचारना चाहिये।

(२) मन व इन्द्रियोंको वशमें रखनेके लिये व आलस्यको जीतनेके लिये २४ घंटोंमें क्या २ काम करना है सो सोचकर २४ घंटोंके लिये पांचों इंद्रियोंके भोगोंकी सीमा नियम द्वारा बांध लेना चाहिये।

(३) शुद्ध जलसे नित्य स्नानकर श्री जिनन्द्र देवकी शांत वीतराग प्रतिष्ठित प्रतिमाका दर्शन ले अरहंत व सिद्धका स्तवन पढ़ना तथा जलादि आठ द्रव्योंसे पूजन करके भावोंमें निर्मलता बढ़ाना चाहिये।

(४) मुनि महाराज अथवा अन्य त्यागी महात्मा व विशेषज्ञ शास्त्रज्ञाताके द्वारा पवित्र जिनवाणीका धर्मामृत रस पीना चाहिये।

(५) अपने ज्ञानके बढ़ानेके लिये नित्य स्वयं जैन शास्त्रका स्वाध्याय थोड़ी देर अवश्य करना चाहिये। बिना दो मिनट भी शास्त्र पढ़े भोजन न करना चाहिये।

(६) जैन त्यागी मुनि व श्रावकको व श्रद्धावान गृहस्थ स्त्री व पुरुषको भक्तिसे व दयाभावसे भुक्तिको भोजन देना चाहिये। अपने धनको विद्या, औषधि, अभय व अन्न दानमें लगाकर परलोकके लिये पुण्यकी कमाई बांध ले जाना चाहिये।

(७) अपने यहां जिन मंदिरका सुप्रबन्ध रखके वार्षिक आमद व खर्चेका हिसाब प्रगट कर देना चाहिये।

(८) बालक व बालिकाओंको धर्मज्ञान देनेके लिये जैन पाठशाला व कन्याशाला अवश्य खोल देना चाहिये।

(९) शुद्ध पानी छानकर, व शुद्ध भोजन ताजा शास्त्रकी मर्यादाका खाना चाहिये जिससे उत्तम धार्मिक बुद्धि रहे तथा शरीर रोगोंसे बचे। हाथका पीसा आटा व घरका दूध घी वर्तना चाहिये।

(१०) जुआ खेलना, आकुलता वर्द्धक सट्टेका व्यापार, चोरी, कुशील, झूठ बोलना, परपीड़ा आदि पापोंसे बचकर शुभ आचार व परोपकारसे जीवन बिताना चाहिये।

सामाजिक कर्तव्य।

(१) बालक, बालिकाओंको विद्यावान बनाकर बीस २० वर्षके पहले पुत्रका व १५-१६ वर्ष पहले पुत्रीका लग्न न करना चाहिये।

(२) अपनी पुत्रीको कुमार युवा पुरुषको ही विवाहना चाहिये। यदि कुमार न मिले तो अन्य युवान पुरुषको देना चाहिये। पैसेके लोभसे अयोग्य वर बनाना पुत्रीके साथ घोर अन्याय करना है—इस महापापसे बचना चाहिये।

(३) वेश्या नृत्य, आतशबाजी, आदि कुरीतियोंको मिटाकर व पंचायती नियम कम खर्चके बनाकर थोडे खर्चमें विवाहादि काम निवटाना चाहिये।

(४) विवाहादि सब मंगलीक कार्य जैन धर्मकी पद्धतिसे करना चाहिये।

आर्थिक कर्तव्य।

(१) भारतवर्षके गरीब भाई बहनोंके हाथका बना हुआ मोटा महीन जो शुद्धस्वदेशी वस्त्र मिले उनको ही पहनना चाहिये। मिलोंके कपड़ोंके बननेमें मनों चरबी खर्च होती है तथा वे टिकते भी कम हैं।

(२) घरोंमें चरखा कातने व कपड़ा बुननेका रिवाज बढ़ाना चाहिये।

(३) किसानों आदिको चरखा देकर उनके खेतीसे बचे समयको काममें लगाना चाहिये।

(४) कपड़ेके सिवाय हरकोई वस्तु जहांतक मिले अपने देशकी ही वर्तनी चाहिये।

(५) उपयोगी पशु रक्षार्थ चमड़ा हड्डी न बरतो न विदेशी शक्कर खाओ।

राजनैतिक कर्तव्य।

(१) भारत देश पहले समृद्धिशाली था अब यह अन्य देशोंके मुकाबलेमें तन्दुरुस्त, धन व शिक्षामें हदसे ज्यादा गिरा हुआ है। इसके उद्धारके शांतिमई व न्यायपूर्वक उपायमें अपना मन वचन काय व धन लगाना चाहिये तथा भारतकी सेवा अहिंसामई भावसे करते हुए यदि उपसर्ग पड़ें तो उनको प्रसन्न मनसे सहना चाहिये। किसीपर क्रोध-का भाव भी न लाना चाहिये।

मक्खियोंके कर्म।

यूरोपमें जब युद्ध होते हैं और सेनाओंके पड़ाव पड़ते हैं तब बहुधा वहां पर छूतवाले रोग अथवा फैलने वाली बीमारियां उत्पन्न हो जाती हैं। उन रोगोंसे सेनाका ऐसा संहार होता है कि जैसा शत्रुकी गोला-बारूदसे भी नहीं होता। पहले लोगोंने विचार किया था कि पानी द्वारा ही ऐसे रोगोंकी सृष्टि होती है। परन्तु जब १८९८ ईसवीमें स्पेन और अमेरिकासे युद्ध छिड़ा था तब डाक्टरोंकी खोजसे निश्चित हुआ कि ये बीमारियां पानी से नहीं—मक्खियों द्वारा उत्पन्न होती हैं। उन्होंने कई प्रकारसे इस बातकी जांचकी। एक छटांक भर दूधमें एक मक्खीको डाला और फिर उस दूधका निरीक्षण किया तो उसमें हजारों जीवाणु पाये गये। खाद्य द्रव्यों पर बैठी हुई मक्खियोंको उड़ाकर देखा गया कि रोटियों पर लाखों जीवाणु उपस्थित हैं। इतना होने पर भी डाक्टरोंने मक्खियोंकी यह करतूत संसारमें प्रकाशित नहीं की। जिस समय दक्षिण अफ्रीकामें युद्ध हो रहा था उस समय भी नाना प्रकारके रोग फैले। वहांके डाक्टरोंने भी खोज द्वारा मक्खियोंको कारण ही निश्चय किया। फिर तो मक्खियोंके ऊपर धड़ाधड़ ट्रैक्ट, पुस्तकें और लेख प्रकाशित होने लगे। प्रत्येक देशके डाक्टरोंने इस खोजका समर्थन किया। म्युनिसिपैलिटियोंमें गड़बड़ी मची और जनताका ध्यान इस ओर आकर्षित किया गया। यूरोपके कई देशोंमें कुछ दिन तक मक्खियोंपर घोर आंदोलन होता रहा। मक्खियोंको दूर करना और मार डालना ही एकमात्र उपाय निश्चित होनेके कारण, नानाप्रकारके संहारक उपाय तजवीज किये गये। उनमेंसे यहां पर कुछ उपायोंका उल्लेख किया जाता है।

(१) एक प्रकारके कागज़ोंकी सृष्टि हुई कि जो सदैव चिपकते रहते हैं। उनको चिपचिपे कागज़ भी कहा जासकता है। उन कागज़ोंको दीवालों पर आलपीनोंसे लगाया गया और जब हजारों मक्खियां उन पर चिपट गईं तो उन कागज़ोंको उतार कर जला दिया गया।

(२) टेनिसकी गेंद खेलनेके जैसे दस्ते होते हैं वैसे ही दस्ते बनाये गये और उनको हाथमें लेकर गेंदकी तरह मक्खियों पर आक्रमण किया गया। इस प्रकार मक्खियोंको मारा गया।

(३) छोटे २ जाल बनाये गये कि जिनमें रोटी, मिठाई और गोश्तके टुकड़े रक्खे जाते हैं। एक तरफसे जाल खुला रहता है, जो मक्खियोंके लिये द्वारका काम देता है। जब बहुतसी मक्खियां इकट्ठी होजाती हैं तब जालको बंदकर पानीमें डुबो देते हैं।

(४) रातके समय छतोंपर ही मक्खियां बसा करती हैं। अतएव लोगोंने कमरेके दरवाजे बंद करके, तमाम छतों पर 'प्रेथूम पाउडर' नामक दवा डाली कि जिसके जहरीले धुएंसे मक्खियां मरकर गिरपड़ें।

(५) फारमलिन का सल्यूशन मक्खियोंको मारनेके लिए निकाला गया। बाजारमें यह दवा बिकती है। शीशियोंमें प्रतिशत पानीमें चालीस हिस्सा सल्यूशन मिलाकर बेचा जाता है। उसको पांच भाग पानीमें मिलाकर और कुछ

शक्कर व दूध डाल देनेसे उस दवाका स्वाद और रंग बदल जाता है। शक्करके सबबसे मक्खियां खाना चाहती हैं। उस दवाको प्रातः और सायंकाल रकाबियोंमें भरकर रखते हैं। बिचारी भूखी, प्यासी मक्खियां ज्योंही उसे पीती हैं त्योंही लोट पोट होकर मरजाती हैं। इस दवामें बहुत लोग रोटीके टुकड़े भिगोकर उनको इधर उधर डाल देते हैं।

मक्खियोंके विषयमें सफाईके महकमों और म्यूनिसपैल्टियोंने दो प्रकारके सिद्धांत स्थिर किये हैं। मकानोंकी सफाई और कूड़ा करकटकी नवीन ढङ्गसे हिफाजत।

मकानोंकी सफाईसे मक्खियोंमें कमी होसकती है। पाखाने आदि भी साफ रखने चाहिए और बहुधा उनको धुलवाना चाहिए।

कूड़ा करकटका जलाना सबसे अच्छा है। परन्तु इससे 'खाद'में कमी उपस्थित होगी। अतएव शहरका कूड़ा करकट आबादीसे दूर पहुँचाया जाय। यह अच्छा उपाय है।

अथवा कूड़ेके ऊपर कुछ ऐसी दवाएं डाली जावें कि जिससे मक्खियां उस पर न बैठने पावें। कूड़े करकट ही से उनकी उत्पत्ति और उन्नति होती है। कूड़े करकट पर कसीस का पानी या मट्टीका तेल छिड़कना अच्छा है। कसीसका पानी पाखानोंमें भी छिड़कना चाहिए। मक्खियोंकी उत्पत्ति कूड़े करकटसे ही होती है और प्रायः शहरके बाहरसे मक्खियोंके दल आबादीमें आया करते हैं। यदि सड़ी गली चीजोंको जला दिया जाय, घरमें पूरी सफाई रक्खी जाय और घोड़ोंकी लीद, गोबर एवं कूड़ा करकट किसी बंद स्थान पर जमा करके, फिर गाड़ियों द्वारा शहरके बाहर भिजवा दिया जाय और वहांपर ऐसे उपायोंसे कूड़ेकी रक्षा की जाय कि जिससे मक्खियां उत्पन्न न हों तो जनताको पूरा लाभ पहुंच सकता है। कसीस के पानी के सिवाय यदि साढ़े तीनसेर पानीमें आध सेर सुहागा मिलाया जाय और पाव भर सोडियम आरसीनियट डाला जाय तो इससे दस सेर कूड़ा शुद्ध होसकता है। साढ़े तीन सेर पानीमें सेर भर नमक मिला दिया जाय तो यह आठ सेर कूड़ा करकट साफ कर सकता है।

यूरोपमें फ्लोरेडा नामक एक रियासत है। वहांके सफाईके कार्यालयने एक विज्ञापन बांटा था। यहां पर उस विज्ञापनका अनुवाद दिया जाता है।

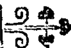
"फ्लोरेडा के सफाई और तन्दुरुस्तीके महकमे द्वारा आप लोगोंसे प्रार्थना की जाती है कि निम्न-लिखित कारणों पर ध्यान पूर्वक वीचार करनेके बाद आप लोग स्थिर करें कि मक्खियोंको मारा जाय या नहीं। यदि उनको मारनेकी आवश्यकता नहीं है तो उनसे बचनेके लिए कौन २ से उपाय किया करने चाहिए। प्रमाणित हुआ है कि—

(१) मक्खियों द्वारा फैलने वाले रोग ख़तरनाक होते हैं।

(२) गलाज़तसे उनकी उत्पत्ति और उन्नति होती है।

(३) खाने, पीनेकी वस्तुओं पर मक्खियां, जीवाणुओंको छोड़ा करती हैं।

(४) हर सीजनमें प्रत्येक मक्खी १२० अंडे

देती है। फिर दूसरे सप्ताह अंडे, मक्खी बन जाते हैं।

(५) जिस घरमें मक्खियोंकी अधिकता होगी उस घरके लोगोंकी सफ़ाई पसन्दगी शोचनीय समझी जायगी।

(६) मक्खियों द्वारा हवा साफ होती है। परन्तु, यह काम तभी तक अच्छा है कि जब वे घरके बाहर रहें।

(७) रोगियोंके थूकमें नाना प्रकारके जीवाणु होते हैं और उन थूकों पर मक्खियां एकदम टूट पड़ती हैं। अतएव सर्वत्र थूकना उचित नहीं है।

(८) स्टेशन, होटल और घरोंमें उगालदानोंका होना आवश्यक है और उनको ढक कर रखना और भी आवश्यक है।

(९) मक्खियां जीवाणुओंको खाजाती हैं परन्तु उनको कोई कष्ट नहीं होता है और वे अपने पाखाने द्वारा जीवाणुओंको बाहर निकाला करती हैं। अतएव जहां मक्खियोंसे बचाव करना उचित है वहां उनके मैलेसे भी।

(१०) मक्खियोंके सूखे मैलेसे इस कारण उदासीन न होना चाहिये कि मैलेके साथ ही साथ जीवाणु भी सूख गये होंगे। वे यों नहीं सूखते हैं और थोड़ीसी नमी पाकर पुनः सजीवता प्राप्त किया करते हैं।

(११) सूखे और हरे फल पकाये नहीं जाते हैं, इस कारण उनको अच्छी तरह धोकर और छील कर खाना चाहिये। पकी हुई वस्तु जीवाणुओंसे बचजाती है।

(१२) बच्चोंको प्रतिदिन धूपमें सुलाना चाहिये और जालीदार मसहरीमें सोना चाहिये।

(१३) रोगीकी कै, दस्त और थूक जलाना चाहिये और उसे मसहरीमें सुलाना चाहिये।

(१३) खाद्य पदार्थों पर जाली होनी चाहिये।

(१४) दूधको पकाकर व्यवहृत करना चाहिये।

(१५) उन जीवोंकी रक्षा होनी चाहिये कि जो मक्खियोंको खाजाते हैं।

पाठक! आपको मालूम होगया कि मक्खियोंके लिये कैसे ९ दण्ड निश्चित किये गये हैं और बताया गया है कि इनके द्वारा प्रतिशत ९० सफलता हुई है। पर हमारी रायमें उक्त उपाय अधिक लाभकारी नहीं हैं।

संसारमें सुख और दुःख दोनों हैं। इसी कारण इस सृष्टिमें सुखदायक जीव भी हैं और दुखदायी भी। दुखदायक जीवोंमें मक्खियों और मच्छड़ोंकी भी गणना कीगई है। मक्खीको हिंसक जीव भी कह सकते हैं। भारतवर्षमें पुराने समयमें भी इस प्रकारके जीवोंसे बचनेके उपाय निर्धारित किये गये हैं। मक्खी अधिक गलाजत पसन्द है। जहां पर जितनी गलाजत होगी वहां पर उतनीही मक्खियोंकी अधिकता होगी और जहां पर जितनी सफाई होगी वहां पर उतनी ही इस जीवकी कमी होगी। क्योंकि मैलेसे ही इसकी उत्पत्ति होती है और उसीसे उन्नति होती है। खानेके लिए तो यह जीव अच्छा और बुरा दोनों तरहके द्रव्य खाता है, परन्तु इसकी स्वाभाविक प्रवृत्ति गलाजत ही अधिक होती है। सबसे पहले पाखानेका उपाय कीजिये। बड़े २ शहरोंमें प्रत्येक घरमें पाखाने होते हैं। घोड़ों, बैलोंकी कमी नहीं होती है।

बूचड़खाने भी होते हैं और लोग मांस खाते हैं। अस्पतालोंमें रोगियोंकी भरमार होती है और नालियोंमें पेशाब, थूक, कूड़ा और करकट पड़ा रहता है। सड़क पर निकलने पर दुर्गन्धि की कमी नहीं रहती है। इस प्रकारकी आबादी में मक्खियोंकी उत्पत्ति और उन्नति होना सम्भव है। अतीत कालके प्रकृतिसेवी भारतवासी इतनी घनी आबादी कभी न बनाते थे! उनके छोटे २ गांव और घर साधुओंकी कुटियोंकी तरह होते थे। प्रत्येक घर छोटा और साफ होता था। प्रायः नित्य ही उनमें लीपा-पोती हुआ करती थी। पाखानोंके कहीं नामोनिशान भी न थे। दूर जंगलमें नदीके किनारे लोग फरागत होने जाया करते थे। इसके सिवाय प्रातः और सायंकाल अग्निहोत्र द्वारा मानसिक सुख उत्पन्न करते थे, वायुको शुद्ध करते थे और मच्छड़ मक्खियों जैसे जीवोंको उड़ाया करते थे। वहां न मांस था न मछली। न पाखाने और न अस्पताल। मक्खियां आवें तो किस लिये? वर्तमान समयमें रहनेका ढंग दूषित है। घनी और अधिक जन-संख्या पूर्ण नगर निर्माण पद्धति ही बीसों प्रकारके रोगोंकी उत्पत्ति करती है। परन्तु इस राजनैतिक और औद्योगिक युगमें अतीत कालकी सभ्यता नहीं आसकती है। सुधार होने पर और उसी आदर्श पर पहुंचने पर संसारकी बाधा नष्ट होसकती है। अतएव वर्तमान अवस्थामें मक्खियोंसे ऐसे छुटकारा पाया जासकता है इस विषय पर विचार करना आवश्यक है। हमारी रायमें कूड़े करकट पर औषधियोंका छिड़का जाना अधिक हानि भी सम्भव नहीं है और इस कर्म-हीन समयमें हम लोग अपने आवश्यक कार्योंको छोड़ कर मक्खियोंके प्रति आन्दोलन भी नहीं कर सकते। इसके साथ ही-कमसे कम हिन्दु जाति-प्रातः और सायंकाल रोटीमें जहर मिलाकर मक्खियोंकी हत्या भी नहीं कर सकती है और न टेनिसके बल्लेसे उनकी गेंद, खेल सकते हैं। हमारी रायमें कोई जाति ऐसा करनेका आवश्यक नहीं रखती है। कूड़ा करकट जला देना भी उचित नहीं है। ऐसा होनेसे कृषिकार्यको धक्का पहुंचेगा। फलतः, समस्त विषयों पर अवलोकनात्मक दृष्टि रखकर उपायोंको योजना करना समयानुकूल कर्तव्य है। हमारी रायमें-

(१) जो लोग शहरमें रहनेके लिये विवश न हों वे शहरमें न रहें।

(२) अंग्रेज और मुसलमान जाति एवं मांसाहारी हिन्दू लोग मांस खाना बंद कर दें।

(३) जब तक मांसाहार कम हो तब तक बूचड़खाने शहरसे एक मील, दक्षिणमें बनवाये जावें। क्योंकि उधरसे हवा बहुत कम चला करती है।

(४) घूरे को छायामें कदापि न रखना चाहिये। मक्खियोंके सिवाय उससे हवा भी गन्दी होती है। शहरके बाहर मैदानमें उसे इस प्रकार फैला कर डालना चाहिये जिससे रोजरा सूख जाया करे। इससे न तो मक्खियोंको अन्डे देनेकी सुविधा होगी और न इसमें दुर्गन्धि उत्पन्न होगी। बरसातके दिनोंमें कूड़ा करकट जला देना चाहिये या खेतोंमें तुरन्त गेर देना चाहिये।

(५) प्रातः और सायंकाल अपने घरमें आगके

ऊपर भी, मेवा और सुगन्धियुक्त खाद्य द्रव्य जलाने चाहिये। ऐसा करनेसे हवा भी अच्छी रहेगी और मच्छड़ वा मक्खियां भी भाग जायेंगी। इस क्रियाका कोई आधुनिक नाम भी रक्खा जा सकता है।

(६) खाद्य द्रव्योंको खुला न रखना चाहिये। दूधवाले हलवाई और फल बेचनेवालोंको सावधान करना चाहिये और खोमचेवालोंको भी इस विषयमें सतर्क करना चाहिये।

(७) अस्पताल भी शहरसे बाहर बनाये जायँ।

(८) किसी जीवको न मरना चाहिये। प्रकृतिकी ओरसे कई जीव मक्खियोंके शत्रु हैं। जैसे गिरगिट, छपकली; मकड़ी, तीतर, बटेर, बतक, मुर्गी आदि।

...एक प्रकृति सेवक।

विचार-वैचित्र्य।

(ले० नाथूराम सिंघई ललितपुर)

दीन हीन तथा दुःखित जनोंको पुण्य करना यह एकका काम नहीं किन्तु प्रत्येकका काम है। इसका अभ्यास प्रत्येक नरनारीको बचपनसे ही करना चाहिए। अवसर पाकर दूसरेकी सहायता करना भी एक प्रकारका पुण्य कार्य है। दुनियामें ऐसा कोई भी अशक्त तथा असमर्थ पुरुष नहीं जो अवसर आने पर अपने पड़ोसीकी सहायता न कर सके। जो दुःखियोंका दुःख अपहरण नहीं करसकता उसे चाहिए कि वह मूर्खोंको धर्मोपदेश दे जो रोग-ग्रसित मनुष्यकी तीमारदारी नहीं कर सकता, उसे चाहिए कि वह चारित्र हीन मनुष्यको सुधारे। जो स्वयं किसी काममें अधिक भाग नहीं ले सकता उसे चाहिए कि वह उन मनुष्योंको उत्साहित करे जिनसे उस काममें अधिक सहायता मिलनेकी आशा है। विधवा स्त्री जो अपनी फूटी कोड़ी भी कोषको देगी और निर्धन मनुष्य जो प्यासेको शीतल जल पिलाएगा तो ये दोनों व्यक्ति अपने पुरस्कारको अवश्य ही पाएँगे।

एक बड़े आदमीका कहना है कि मैं अपने मस्तिष्कको व्यर्थकी बातोंका गड्ढा नहीं बनाना चाहता किन्तु ज्ञान-भण्डार बनाना चाहता हूं। मैं किसी प्रकारके लेने देनेका व्योपार नहीं करना चाहता किन्तु ज्ञानका व्योपार करना चाहता हूं। मैं केवल अपने लिए ही ज्ञानका अभ्यास नहीं करना चाहता; किन्तु उन लोगोंके

लिए ज्ञान प्राप्त करता हूं जो अज्ञानी और मूर्ख हैं। मैं उन मनुष्योंसे ईर्ष्या द्वेष नहीं करना चाहता जो मुझसे ज्ञानमें बहुत बढ़े चढ़े हैं, किन्तु जो मुझसे कम जानते हैं उनका मुझे बहुत खेद है। अपने ज्ञान-अभ्यासके कारणमें दूसरोंको नसीहत नहीं देना चाहता और न इस आशयसे उनको उपदेश ही देना चाहता हूं कि जिससे मेरा ज्ञान और बढ़ जाए किन्तु इस अभिप्रायसे उन्हें शिक्षा देना चाहता हूं कि जिससे उनमें ज्ञानकी वृद्धि हो यदि मुझे दुःख है तो केवल इस बातसे कि जिस समय मैं मर जाऊंगा उस समय मेरा सारा ज्ञान मेरे साथ ही नष्ट हो जाएगा वह मैं अपने परमप्रिय इष्ट मित्रोंको नहीं सौंप सकता—

जितना अधिक प्रेमकी मात्रा पशुपक्षियोंमें होती है उतनी मनुष्यमें नहीं होती—परन्तु इस प्रेमवशके कारण जितना कष्ट वा दुःख मनुष्यको होता है उतना उनको नहीं। इसका प्रधान कारण यह है कि जैसे ही उनके बच्चे अपने आप दाना पानी खानेके लिए समर्थ होजाते हैं वैसे ही उनके पालकोंका प्रेम उनसे कम हो जाता है। फिर वे उन्हें बिल्कुल ही छोड़ देते हैं। जहां उनका जी चाहता है वहीं चले जाते हैं। यदि अकस्मात उनके बच्चों पर कोई आपत्ति आपड़े और वे अपना दाना पानी खानेमें असमर्थ हो जाएं तो उनके पालक फिर उन्हें फिर दाना पानी पहुंचाते हैं। उनका पारस्परिक प्रेम पूर्ववत् होजाता है। उदाहरण स्वरूप जैसे चिड़ियाका बच्चा अपना दानापानी खानेके योग्य हो जाता है तो फिर चिड़िया उसे अपने घोंसलेसे बाहर भगा देती है। परन्तु यदि वे किसी जाल या कठहरेमें फंस जाते हैं तो चिड़िया फिर उनकी सहायता करने लगती है।

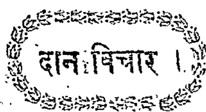
यदि भलाई करनेसे किसीको कष्ट पहुंचे तो वह सन्मानके योग्य है। यदि अभाग्यवश उसे दुःख हो तो वह पश्चातापके योग्य है। यदि बुरे कामोंसे दुःख हो तो वह अपमानके योग्य नहीं। क्योंकि जो अपराध उसने किया है उसका प्रतिफल शायद वही हो जो उससे उसे मिला है।

कला कुशल मनुष्य जो प्रशंसनीय और अनोखी वस्तुओंको तैयार करते हैं वे सब उसके निरन्तर परिश्रमका ही फल हैं। परिश्रमके द्वारा ही मनुष्य पत्थरोंसे बड़े २ गुम्बज और मीनार तैयार कर देता है और बड़े २ शहरोंको नहर द्वारा सम्बंधित करा देता है। यदि कोई मनुष्य बराबर खेती करता रहे तो फावड़ेसे उस मिट्टीको अलहदा करता रहे तो एक दिन यह होगा कि जिस दिन वह सारे पर्वतको खोदकर समतल भूमि बना देगा। अविश्रान्त परिश्रम द्वारा मनुष्य समुद्रको भी बांध सकता है। सारांश यह कि परिश्रममें एक महत शक्ति छिपी हुई है।

मृतक व्यक्तिका रंज एक ऐसा रंज है जिसको हम कभी विस्मरण नहीं कर सकते। हरएक घावको मरहम पट्टी बांध कर अच्छा कर सकते हैं परन्तु दुःखको हम भूल जा सकते हैं परन्तु यह ऐसा विकट दुःख रूपी घाव है जिसको हम किसी प्रकार भी अच्छा नहीं कर सकते। यह बराबर हमें याद आता रहता है और

एकान्तमें इसके कारण अधिक पीड़ा होती है। ऐसी वज्र-हृदया कोई भी माता न होगी जो अपने प्रिय पुत्रकी मृत्युके कारण दुःख न करती हो और ऐसा एक भी पुत्र नहीं जिसे अपने माता पिताके मरने पर दुःख न हो।

संसारमें जरासी हिम्मतके हार खानेसे मनुष्यकी सारी बुद्धि नष्ट भ्रष्ट होजाती है। बहुतसे मनुष्य अपने कायरपनके कारण भेद नर्म आला काम नहीं कर सकते। यदि वे हिम्मतके साथ काम करना प्रारम्भ कर दें तो एक दिन संसारमें वे विख्यात पुरुष होजाएं। असल बात यह है कि यदि कोई आदमी किसी अच्छे कार्यको करना चाहता है तो उसे फिर किसी भी बातसे भय न करना चाहिए। निशंक होकर उस काममें लग जाना चाहिए और उसको सफलता पूर्वक समाप्त करना चाहिए। किसी उर्दू शायरका कहना है कि "हिम्मते मर्दा, मददे खुदा"।



દોહરો.

નાના ભાંતિ દાન જે, દેવાએ સંસાર;
ઉત્તમ કે કનિષ્ઠ છે, વર્ણવું ધરી વિચાર.
શાસ્ત્રભેદ અતિ છે ગહન, આધિક સમુદાય,
અર્થ સહિત વર્ણન કરૂં, સમજતા સંસાર.

વહાલા બંધુઓ!!!

દાન શબ્દ સંસ્કૃતના દા (દી) ઉપરથી થયો છે. દા એટલે દેવું કે-આપવું-તે સાથે ન આવવાથી વિધું ભાગે-સાર્થ કરવાની-સત્પાત્રે શ્રદ્ધા સહિત આપવું એમ થાય છે.

દાન એ શબ્દ આપણે ધારીએ છીએ તેટલો સહેલો નથી. પણ એ બે અક્ષરના એક રૂપમાં અનેક ચમત્કારિક ભેદો સમાએલા છે.

દાન આપનારે દાન લેનારની યોગ્યતા પૂર્ણ પણે તપાસવી જોઇએ. નહિ તો દેનાર અને લેનાર બંનેની અસદ્દગતિ થઇ દીધેલા દાનનું ફળ પાપ સ્વરૂપે ફરી જાય છે. માટેજ સમજુ મનુષ્યનું કર્તવ્ય છે કે-"દાન આપવાની વિધિ જાણ્યા પછી જ દાન આપવું" આજ વિષયને સંપૂર્ણપણે સમજાવવા આ વિષય લખાયો છે.

દાનના પ્રકાર.

૧ આહારદાન, ૨ શાસ્ત્ર દાન, ૩ અભયદાન ૪ ઔષધદાન. દાન આપનારે પાત્રનો વિચાર કરવો જોઇએ.

પાત્રના પ્રકાર.

૧ ધર્મપાત્ર ૨ ભોગપાત્ર ૩ યશપાત્ર ૪ સેવાપાત્ર.

ધર્મપાત્રના ભેદ.

૧ ઉત્તમ ૨ મધ્યમ ૩ કનિષ્ટ.

ઉત્તમ પાત્ર કોને કહેવાય.

જે અઠ્ઠાવીસ મૂળ ગુણથી યુક્ત હોય, જેણે વ્રત પાળેલાં હોય, સર્વ પરિગ્રહ છોડેલા હોય, સર્વેને ક્ષમા કરેલી હોય, શીલ ધારણ કરેલું હોય, મિત્ર અને શત્રુને સરખા માનેલા હોય, ધ્યાન અને સ્વાધ્યાયમાં તત્પર હોય-અને રત્નત્રય ધારણ કરેલાં હોય તેજ મનુષ્ય ઉત્તમ પાત્ર ગણાય છે.

મધ્યમ પાત્રનાં લક્ષણ.

જેણે બ્રહ્મચર્ય ધારણ કર્યું હોય. જે ગૃહસ્થનાં વેપાર ખેતી આદિ કર્મોથી રહિત હોય, અને અલ્પ પરિગ્રહી હોય. તે મધ્યમ પાત્ર કહેવાય છે.

કનિષ્ટ પાત્ર કોને કહેવાય!

જે સમ્યગ્દર્શન સદાચાર શ્રાવકનો આચાર અને ગુરૂભક્તિ આદિથી યુક્ત હોય, અને ગર્વ રહિત હોય, તે દાન આપવાને કનિષ્ટ પાત્ર કહેવાય છે.

ભોગપાત્ર.

સ્ત્રી પુત્ર બહેન આદિ સગાંસંબંધી જન ભોગપાત્ર ગણાય છે.

સગાસંબંધી જન સંસારમાં એકમેકથી સંપમાં રહી સુખમાં વધારો કરનારાં હોય, તેમને શક્તિ મુજબ અલંકાર વસ્ત્રાદિનું ધર્મબુદ્ધિથી દાન કરવું તે ભોગપાત્ર દાન કહેવાય છે.

યશપાત્ર.

બ્રાંહ્મણ-ભાટ-ભોજક વર્તમાન સમયમાંના કેટલાક દ્રવ્ય પિપાસુ ભટ્ટાચાર્યો વિગેરે યશ પાત્ર ગણાય છે. તેઓ દાન આપનારની કીર્તિના ગાન કરે છે.

એટલેકની હરિફાઇમાં ઉતરી જ્યાં કીર્તિનાં ગાન થવાનાં હોય એવા ખાતાઓમાં દાન કરવું તે પનુ યશ દાનજ ગણાય છે.

કીર્તિ સિવાયના માણસનું જીવન વ્યર્થ છે ને મનુષ્ય માત્રને કીર્તિ મેળવવાનું દુઃખ થવા કરે છે. મન દુઃખી થવાથી આર્તધ્યાનનો બંધ થાય છે. જેથી સદ્‌ગતી પણ ઉચિત નથી, માટે દરી મનુષ્ય માત્રે કીર્તિ મેળવવા અવશ્ય પ્રયત્ન કરવું જોઇએ ?

પુતતો ગાયકો.

માટે દરી ગાય અને તેની સંતતિને શુદ્ધ ભાવે ઘાસ ચારો અવશ્ય કરી નાંખવો જોઇએ ?

'જ્યારે ભારત વર્ષમાં ગાયોનું સન્માન થશે. ત્યારેજ ભારતમાતાના વતુજો હિંદ માતાને અસલ હિંદત્વમાં લાવી શકશે ?'

દાનનું ફળ.

વર્તમાન કાળમાં વ્યવહારિક રિતે દાનનું ફળ કિર્તીજ મનાય છે. પણ શાસ્ત્રોમાં તેના જે જુદા જુદા ભેદ બતાવેલા છે. તે શ્રીમંત ભટ્ટારક શ્રી ૧૦૮ શ્રી સોમસેનજી કૃત ત્રિવર્ણા ચારના આધારે અહીં ટાંકી બતાવું છું.

—શાર્દૂલ—

पात्रे धर्मनिबन्धनं तदितरे श्रेष्ठं दयाख्यापकं।
मित्रे प्रीतिविवर्धनं रिपुजनेवैरापहारक्षमम् ॥
भृत्ये भक्तिसारावहं नरपतौ सन्मानसम्पादकं।
भट्टादौ तु यशस्करं वितरणं नक्वाप्य हो निष्फलम् ॥

કુદાન.

કન્યા, હાથી, સુવર્ણ, ઘોડો, ગાય, દાસી, તલ, રથ, ભૂમિ, ઓષિનું ઘર, એટલાં કનિષ્ટ પ્રકારના દાન કહેવાય છે. તે મનુષ્યોએ નહિ કરવાં જોઇએ. વ્યવહારમાં કનિષ્ટ પાત્રને કનિષ્ટદાન દેતી વખતે યોગ્યાયોગ્યનો સંપૂર્ણ પણે વિચાર કરવો જોઇએ.

કેટલાંક કુદાન તે સુદાનજ ગણાય છે? જીન-મંદિરની સ્થાપના કરતાં એટલે કે તૈયાર કરતાં કરોડો જીવોની હિંસા થવા સંભવ છે. પણ તે તૈયાર થએલા મંદિરમાં પ્રતિષ્ઠા કર્યા પછી તે મંદિરનો લાભ કેટલા જીવો લઇ ધર્મ સાધન કરશે! તે વાત કલ્પના બહાર છે, માટે તેમાં વપરાએલું દ્રવ્ય સુદાનજ ગણાય છે. મંદિરની પ્રતિષ્ઠા કરાવવી, આવેલા લોકોને દ્રવ્યાદિથી સંતોષિત કરવા, મંદિરની પૂજા નિત્ય નિર્વિઘ્ને ચાલે માટે જમીન-ગામ વિગેરે આપવાં, દુધથી અભિષેક કરવા ગાય આપવી, વિગેરે કાર્યો સુદાનમાં અપવાદ કર્તાજ ગણી શકાય પણ તત્વજ્ઞાનની દ્રષ્ટિએ જોતાં પાપના અંશ કરતાં પુન્યનો અંશ વધારે પ્રમાણમાં બંધાવા સંભવ હોવાથી તે સુદાનજ ગણાય છે.

ધર્મ પર શ્રદ્ધા રાખનારા, પાપથી રહિત એવા શ્રાવકના પુત્રને તેનો ધર્મ ચાલવા માટે તેના ગૃહસ્થાશ્રમને ચલાવવા માટે કન્યાદાન આપવું. કેમકે પતિ પત્નિનાં જોડકા સિવાય ગૃહસ્થ ધર્મ ચાલે નહિ, અને પાછળ સંતતિ પણ થાય નહિ, માટેજ તેની પૂજા કરી તેને કન્યા અર્પણ કરવી જેથી કરી આવી રીતે અપેલી કન્યા તે સુદાનજ ગણાય છે.

श्रावकाय निष्ठोऽपि दरिद्रो कर्मयोगतः ।
सुवर्णदानमाख्यातं तस्मायाचार हेतवे ॥
त्रि० अ० ६ श्लोक १२९

કોઇ શ્રાવક નિત્ય ક્રિયામાં ઉત્સુક હોય પરંતુ પૂર્વ કર્મના ઉદયથી તે દરિદ્ર હોય તેમજ તેનો વહેવાર બંધ થઇ ગયો હોય તો તેને તેનો વહેવાર ચલાવવા માટે કન્યાદાન કરવુંજ જોઇએ, અને તે મહાદાનજ લેખાય છે.

વહેવાર શબ્દથી કોઇ ગરીબાઇથી કન્યા સિવાય રહી જતો હોય, કોઇ ગરીબાઇથી જ્ઞાતિ વહેવારથી બાતલ પડ્યો હોય તો તેને કન્યા આપી વહેવાર ચાલતો કરી આપવો તે મહાદાન ગણાય છે. વળી

निराधाराय निस्स्वाय श्रावकाचार रक्षिणे ।
पूजादानादिकं कर्तुं गृहदानं प्रकीर्तितम् ॥
त्रि० अ० ६ श्लोक १२०

કોઇ શ્રાવકને રહેવાને ઘર ન હોય, પણ ધર્મ કાર્ય કરવામાં ઉત્સુક દરિદ્રી જો શ્રાવકોના આચાર પાળતો હોય તો તેની પૂજાદિક ક્રિયા સારી રીતે ચાલવા માટે તેને ગૃહદાન કરવું તે પણ યોગ્ય દાનજ ગણાય છે. વળી

पद्भ्यां गन्तुमशक्ताय पूजामंत्र विधायिने ।
तीर्थक्षेत्रमुपयाये रथाश्व दानमुच्यते ॥
त्रि० अ० ६ श्लो० १२१

જે પગે ચાલવાને અસમર્થ હોય પણ તીર્થ યાત્રા કરવી હોય, પૂજા સામગ્રી હોય તો તેને તે કામ માટે રથ, અશ્વ વિગેરેનું દાન કરવું તે પણ યોગ્ય દાનજ ગણાય છે, વળી–

दुर्घटे विकटे मार्गे जलाश्रयविवर्जिते ।
प्रपास्थानं परं कुर्याच्छोधितेन सुवारिणा ॥
त्रि० अ० ६ श्लो० १२५

જે જગાએ પાણી ન મળતું હોય એવા કઠિન અને જંગલના માર્ગ પર ગાળેલા પાણીની પરબ બેસાડવી તે પણ યોગ્ય દાનજ ગણાય છે. વળી

अन्नसत्रं यथाशक्ति प्रतिग्रामं निवेशयेत् ।
शीतकाले सुपात्राय वस्त्रदानं मतूलकम् ॥
त्रि० अ० ६ श्लोक १२९

પ્રત્યેક ગામમાં પોતાની શક્તિ પ્રમાણે અન્નક્ષેત્ર અગર સદાવ્રત બેસાડવાં અને ઠંડીની ઋતુમાં સુપાત્ર જોઇ વસ્ત્રનું દાન કરવું તે પણ સુદાનજ ગણાય છે. ઉપરનાં કેટલાંક દાનો નિષેધ દાનમાં લખેલાં છે છતાં તે દાનોને ઉપરની રીત પ્રમાણે અપાય, તો તે સત્પાત્રે દાન અને ઉત્તમ દાનજ ગણાય છે.

देवपूजा गुरोपास्ति स्वाध्याय संयम स्तपः
दानं चेति गृहस्थानां षट् कर्माणि दिनेदिने ॥

પ્રભુ પૂજન, ગુરૂ ભક્તિ, સ્વાધ્યાય, મનોનિગ્રહ (વ્રતાદિક), તપ (સામાયક) અને દાન એ ૭ કર્મો દરેક શ્રાવકે પ્રતિદિન કરવાં જોઇએ. જે માણસ પ્રતિદિન વ્યાપારિક પ્રવર્તિમાં મંડયો રહી અસંખ્ય લાભો મેળવવા છતાં દરરોજના કર્તવ્યમાં એક પણ ક્રિયા કરી શકતો નથી, તે મનુષ્ય નહિ પણ મનુષ્ય પર્યાયમાં જન્મેલો વાંદરોજ છે.

વાંચકો! દાનનું વર્ણન પુરે પુરૂં કરવા બેસીએ તો પોથાંના પોથાં ભરાઇ જાય, જેથી સંપાદકજી જગ્યા આપવાં પણ અચકાય જેથી અહિંથીજ બંધ કરવું પડે છે. પરંતુ મારી તબીયત સારી હશે તો હવે ફરીથી દાન આપવાથી પંચમ કાલમાં કોણ કયા દાનથી સુખી થયા છે તેનાં રસભર્યાં દ્રષ્ટાંતો રજુ કરીશ. લખાણ જો કે-તૈયાર છે પણ તબીયત નાદુરસ્ત હોવાને લીધે લખી શકાતું નહિ હોવાથી આ સાથેજ લખી શકયો નથી. પણ મારા આ લખાણથી જો કંઇક પ્રભાવ પડેલો જણાશે યા મારૂં લખાણ વાંચકોને રસભર્યું લાગ્યું છે એમ જાણી શકીશ, તોજ અનેકો સુંગારરસ, હાસ્યરસ, વૈરાગ્યરસ ઉપરાંત જુદાં જુદાં રસમય કાવ્યોથી શણગારેલ દ્રષ્ટાંતરૂપી સુંદર નવલ કથાઓ આજ પત્રદ્વારા રજુ કરીશ. હાલ તો પ્રભુ આપને શુભમાર્ગમાં પ્રવૃત્તિ કરો। એમ ઇચ્છી આ લખાણ બંધ કરૂં છું. ૐ શાંતિ! શાંતિ! શાંતિ!

લી૦ હું છું દાનેશ્વરીનો ભક્ત.
એક દુઃખી હૃદય.

व्याख्यान—

बाबू फतेहचन्दजी ओसवाल जैन,

सभापति—

स्वागत समिति भारत दि० जैन महासभा २८वां अधिवेशन—लखनऊ।

जैन धर्म प्रतिपालक और प्रचारक ब्रह्मचारीगण, विद्वद्मण्डल प्रतिष्ठित श्रेणी वर्ग, भ्रातृवर्ग तथा महिला मंडली।

इस भारत वर्षीय दिगम्बर जैन महासभाकी २६ वर्षकी अवस्थामें यह पहला अवसर है कि इसने अवध देश और उसकी राज्यधानी लक्ष्मणपुरीमें पदार्पण किया है। अवध देशके महत्वसे जैन शास्त्र परिपूर्ण हैं। मैं तुच्छ बुद्धि उस पवित्र भूमिका गौरवगान किन शब्दोंमें कर सकता हूं! यहां वर्तमान चौवीस तीर्थंकरोंमेंसे सात तीर्थंकरोंने अपने पवित्र जन्मसे इस क्षेत्रको पावन किया है। श्री ऋषभदेव प्रथम, अजितनाथ द्वितीय, श्री अभिनन्दननाथ चतुर्थ, श्री सुमतिनाथ पंचम तथा श्री अनंतनाथ चौदम, इन पांच तीर्थंकरोंने श्री अयोध्याजीमें, श्री संभवनाथ तीसरे तीर्थंकरने बहराइच जिलेकी श्रावस्ती नगरी उर्फ सहेठ महेठमें तथा श्री धर्मनाथ पंद्रह तीर्थंकरने फैजाबादके निकट श्री रत्नपुरीमें जन्म प्राप्त किया है। ये सातों ही तीर्थंकर क्षत्रिय कुलकी रीतिके अनुसार न्याय मार्गसे प्रजाका पालन कर, अन्तमें संसार असारसे वैराग्यवान हो परम निर्ग्रन्थ दिगंबरी दीक्षा धारण कर आत्मध्यान रूपी तपके द्वारा कर्मबन्ध काट केवलज्ञान प्राप्त करके परम स्वाधीन परमात्मा हुए हैं, उन महान आत्माओंकी स्तुतिसे यह-

क्षेत्र जगमगा रहा है। श्री अयोध्याजीका क्षेत्र तो ऐसा पवित्र है कि इस क्षेत्रको हरएक उत्सर्पिणी अवसर्पिणीके चौवीसों तीर्थंकर रहते सदा ही अपने जन्मसे सफल करते हैं। अनेक अवसर्पिणी कालके पीछे जब हुंडावसर्पिणी काल आता है तब ही कुछ तीर्थंकरोंका अन्यत्र जन्म होता है जैसा कि वर्तमान हुंडावसर्पिणी कालमें हुआ।

यह अवध प्रांत इक्ष्वाकु कुलके प्रसिद्ध जैन क्षत्रीय राजाओंसे अति दीर्घकाल तक शासित रहा है। भरत चक्रवर्ती जिनके नामसे यह भारतवर्ष प्रसिद्ध है इसी स्थानमें अपना मुख्य राज्यस्थान रखते थे। रघुवंश तिलक श्रीरामचंद्रजी और उनकी जन्ममान्य पतिव्रता स्त्री सीताने इस भूमिको सम्मानित किया था—रामके परम स्नेही बंधु आठवें नारायण श्रीलक्ष्मणजीके नामसे अवधकी राजधानी यह लक्ष्मणपुरी प्रसिद्ध है। आज भी इस लखनऊमें गोमती नदीके तट पर लक्ष्मणटीला अपनी प्राचीनताको चमका रहा है।

आप लखनौमें पदार्पण इस समय जिस नगरमें हुआ है यह नगर भारतवर्षमें बहुत प्रसिद्ध है। हरएक स्वदेशी या विदेशी प्रवासी जब भारतवर्षमें आता है तब इस लखनऊ शहरका अवश्य निरीक्षण करता है। मुसलमानी समयमें यहां बड़े २ उदार चित्त नवाब-शाह शासक हो गए हैं। उनमें नवाब आसिफुद्दौला बहुत मशहूर हैं जिन्होंने दुष्कालके समय प्रजाको सहायता पहुंचानेके लिये गोमती तट पर अपनी शिल्पकलासे बड़े २ यूरोपीय इंजिनियरोंको चकित करनेवाले इमामबाड़ेको बनवाया था। उस समय प्रतिदिन जितना मनुष्य जितनी राशिकी मिट्टी ढुवा देता उतना दाम दे देता था। हुसैनाबाद मसजिद, नमक आदि कई स्थान ऐसे ही दर्शनीय हैं। यहांके अजायबघरमें मथुराके कंकाली टीलेसे लाई हुई २००० वर्षकी प्राचीन मूर्तियोंके खंडित भाग हैं। यह नगर चिकन, गोटे किनारी, सलमे, सितारे, मिट्टीके खिलौने, चांदीके बर्तन आदि कारीगरीके लिए मशहूर है। घर घरमें शिल्पकलाका प्रचार है। यद्यपि विलायतके चतुर व्यापारियोंकी बदौलत यहांकी नकलके विलायती मालका प्रचार होनेसे यहांकी कारीगरोंको बहुत धक्का पहुंचा है। जैनियोंमें भी यहां प्रसिद्ध २ व्यक्ति होगए हैं—एक लाला बद्रीदासजी अग्रवाल हो गए हैं जो बादशाही समयमें सेना रखते हुए शासन करते थे और धर्मात्मा इतने थे कि भ्रमणमें भी नित्य पूजा प्रक्षाल, स्वाध्याय, धर्म चर्चा करते रहते थे। आप अपने साथ जिनेन्द्रकी मूर्ति रखते थे। इनके साथ पं० मनरंगलालजी कवि रहते थे जिन्होंने अपनी मनोहर अध्यात्म रससे रसीली कविताके द्वारा बहुत उपकार किया है—उनका रचित चौबीसी पाठ जो सत्यार्थ यज्ञके नामसे हमारे धर्मप्रेमी भाई अजितप्रसाद वकीलने प्रसिद्ध किया है, बहुत ही ललित और वैराग्य तथा भक्तिपूर्ण हिन्दी काव्यसे अलंकृत है। बादशाही समयमें यहां बहुतसे जिन मंदिर थे—समयके फेरसे उनकी मूर्तियोंको चौकके मंदिरजीमें विराजमान किया गया है—अब यहां ९ मंदिर व १ चैत्यालय है। चौकके मंदिरका सरस्वती भण्डार दर्शनीय है। जिसमें १०० व २०० वर्षके लिखित ग्रन्थ मौजूद हैं।

यद्यपि यह नगर दर्शनीय है, तथापि हम जैनियोंकी संख्या यहां अब बहुत थोड़ी है। कारके

प्रभावसे यहां अब न कोई विशेष धनाढ्य हैं और न कोई जैन विद्वान् है। अग्रवाल व खंडेलवाल जातिके करीब १०० घर दि० जैनी हैं। ओसवाल जातिका एक मेरा घर दिगम्बरी है शेष ४० घर श्वेताम्बर हैं। जैनीयोंमें धर्म व जातिकी उन्नतिका विशेष ध्यान न होते हुए भी यहां एक जैन पाठशाला, एक जैन औषधालय, एक जैन पब्लीक लाइब्रेरी चल रही है। जैन धर्म प्रवर्द्धिनी सभा बहुत वर्षोंसे स्थापित है जिसके स्वर्गवासी सुयोग्य मंत्री लाला दामोदरदासके उद्योगसे व उनके पीछे उनसे उत्साही पुत्र बरातीलालके प्रयत्नसे आतसबाजी, फुलवाड़ी अश्लील गीत, कन्द-मूल व मिष्ठका सेवन, वेश्यानृत्य आदि कुरीतियां बंद हैं। यज्ञोपवीतका प्रचार हुआ है व जैन पद्धतिसे विवाहकी तरफ भी लोगोंका झुकाव हो चला है। खंडेलवाल भाइयोंने खण्डेलवाल जातिय सभा भी स्थापित की है जिससे कुछ कुरीतियां टल गई हैं।

यहांकी जैन जाति तो बहुत पीछे पड़ी है तथा इस अवध प्रांतके २००० भाई अविद्याके घोर अन्धकारमें लिप्त हैं, अपनी उन्नतिकी ओर बहुत कम उत्साही हैं- इन सबको उन्नति पथपर आरूढ़ होनेके लिये इस बातकी बहुत आवश्यक्ता थी कि यहां एक दफे भी भारत वर्षीय दिगम्बर जैन महासभाका शुभागमन हो। यद्यपि पहले एक दफे उद्योग किया गया था परन्तु वह किसी कारणवश सफल नहीं हुआ--क्योंकि यह अवधप्रांत नेपाल व गोरखपुरके नीचे तक है और दि० जैनी इधर उधर छिटके हुए हैं उन सबको महासभा द्वारा धर्म जागृति प्राप्त हो इसीसे गत वर्ष कानपुर में निमंत्रण दिया गया—हर्ष है कि आप सज्जनोंने हमारा मान रखकर हमारी तुच्छ प्रार्थनाको स्वीकार किया और आज हमें यह सौभाग्य प्राप्त है कि हम महासभके सभासदों व प्रतिनिधियोंके दर्शन करके अपने जीवनको सफल मान रहे हैं।

आप सज्जनोंने जो अनेक दूरवर्ती स्थानोंसे यात्राके अनेक खेद सहनकर यहां पधारनेका कष्ट उठाया है उसके लिये हम आपके हरतरह कृतज्ञ हैं। हम लखनऊ निवासी अल्प संख्यक भाई आपका स्वागत, विनय, भक्ति व सेवाकरनेके लिये सर्वदा असमर्थ हैं। हमको खेद है कि हमारे यथोचित प्रबन्ध न कर सकनेके कारण आप भाई व बहनोंको बहुत कष्ट हो रहा होगा। शीत ऋतुमें जंगलमें वास वास्तवमें दुःखप्रद होगा। परन्तु हम लोग इससे अधिक कुछ न कर सके, जिससे हम आप लोगोंके सामने क्षमाके प्रार्थी हैं। आशा है आप सज्जन हमारी त्रुटियोंको ध्यानमें न लाकर ३-४ दिन उपस्थित रहकर धर्म व जातिकी उन्नतिका मार्ग शोधन करेंगे और अवध वासियोंको भी मार्गप्रदर्शनका परम उपकार करेंगे।

हमको बहुत बड़ी आशा है कि आप सज्जन गण एकचित्त हो धर्म व समाजकी उन्नतिको ही मुख्य ध्यानमें रखते हुए परस्पर सम्मतिसे ऐसी २ योजनाएं करेंगे जिनसे यह दिगम्बर जैन समाज उन्नतिके मार्गपर आगे बढ़े और इस पवित्र जिन धर्मका प्रचार हो तथा अहिंसा तत्व जगतमें फैले।

आप विद्वान, विचारवान, शिरोमणि पुरुषोंके सन्मुख हम कुछ अपने विचार दर्शावें यह बात शोभाजनक न होगी तथापि अब हम आपकी

सेवामें खड़े हैं तब दो चार शब्द कहना अनुचित न होगा—

श्री अयोध्याजीका सुप्रबन्ध !

प्रथम मैं आपका ध्यान श्री अयोध्याजीके गौरवपूर्ण क्षेत्रपर दिलाता हूं-यद्यपि यह स्थान तीर्थंकरोंकी सब जन्म नगरियोंसे शिरोमणि है तथापि वर्तमानमें यहांकी व्यवस्था बहुत शोचनीय है। यह क्षेत्र उन्नतिमें आवे इस लिए हम भारतवर्षीय दि० जैन तीर्थक्षेत्र कमेटीको जिसने अबतक इधर लक्ष नहीं दिया है तथा सर्व जैन समाजको भी जो इस क्षेत्रपर बिल्कुल ध्यान नहीं देते हैं, इस ओर विशेष प्रयत्नशील होनेके लिये आग्रह करते हैं—हमअवध वासी अकेले इस क्षेत्रकी यथोचित व्यवस्था नहीं कर सके जिसका हमको खेद है।

समाजमें विद्या प्रचार।

जैन समाजमें विद्याका प्रचार बहुत ही कम है। जैन विद्वानोंकी कमी अभी भी बहुत है। पूर्वीय और पश्चिमीय विद्याओंके मिश्रीत ज्ञाताओंकी आवश्यकता है जो कि वर्तमानकी एक विषयकी मिल सकनेवाली आवश्यकताओंको एकत्र कर जैन शास्त्रोंमें भरे हुए गूढ़ तत्वोंको दुनियाके सामने विज्ञानकी रीतिसे दिखलाकर जैन धर्मके गौरवको प्रगट कर सकें। जिस धर्मके उपदेश दाता बहु संख्यामें नहीं होते उस धर्मकी रक्षा बहुत कठिन है। जैन धर्मके उपदेशकर्ता उंगलियोंमें गिननेके समान हैं। जब कि मकानत इतनी है कि प्रति ग्राम ग्राममें एक एक पाठशाला बना योग्य होना चाहिये-विद्वान अध्यापकोंकी कमीसे जैन पाठशालाओंकी संख्या बहुत थोड़ी है। कन्याशाला भी जैन अध्यापकोंके अभावसे नहीं खुल सकती हैं-समाजके हरएक बालक व बालिकाको पढ़ा लिखा धर्मज्ञ व अपने कर्तव्यका जानकार होना उचित है। इसकी पूर्ति जैन शिक्षकों द्वारा प्रत्येक स्थानमें जैनशालाओंके चलनेसे ही हो सक्ती है। महासभाके सभासदोंको इस प्रश्न पर विचार करना चाहिये।

समाजमें ऐसे परोपकारी जनताके सेवक भी बहुत ही कम क्या नहीं हैं जिनकी मान्यता पारसियोंके दादाभाई नौरोजी, महाराष्ट्रोंके माननीय गोखले व लोकमान्य तिलक व पंजाबीयोंके लाला लाजपतराय व गुजरातियोंके महात्मा गांधीके तुल्य हो—यही कारण है कि साधारण जनताका जहां कहीं नाम लिया जाता है तब पारसी, सिख यहूदी आदिके साथ जैनी गिने जाते हैं क्योंकि धमरक्षारिक विद्वान् नहीं है। जाति व देशकी सेवा जैन धर्माभिमानी विद्वानोंके लिये मैं आवश्यक समझता हूं कि एक जैन जातिय कालेज अवश्य होना चाहिये। मैं महासभाके विचारके लिये यह विषय छोड़ता हूं। मेरा भाव यही है कि जैन समाजके श्री और पुरुष विद्यालंकृत हों। इसकी कोई योजना महासभा काममें लावे तो दिगम्बर जैन समाजकी उन्नतिका अवसर आपका है।

एकताकी जरूरत।

समाजमें एकताका बना रहना विद्या प्रचारके आधीन है। ज्ञानके निर्मल न होनेसे ही बात बातमें लोग बिगड़ जाते हैं और समाजमें दो धड़ बन लेते हैं—ग्राम २ में ऐसी धड़े देखनेमें आती हैं जिनसे धर्मके कामोंमें बहुत बाधाएं पड़ती हैं। दुनियामें सब जीव आहत २ रहें तब इसके

विचार सब विषयोंमें एकसे हो जावें ऐसा होना कठिन है—कुछ मतभेद हो सकता है—ऐसा होने पर हमें परस्पर अनैक्य न कर लेना चाहिए किन्तु मिलकर धर्म व जातिकी उन्नतिकी तरफ उद्यम करना चाहिये। जैनजातिमें फूट और द्वेष बहुत दीखनेमें आता है। इसमें कारण सहनशीलताका व योग्य नम्र वर्तावका न होना है। एकता बिना जैसे तिनकोंके बने रस्से टूट जाते हैं, वैसे ही समाजके लोग अनैक्यतासे टूट टूट कर छिन्न भिन्न हो जाते हैं तब समाज अति निर्बल हो जाती है और तब उसे विरोधी समाजोंके आक्रमणोंसे कुचलना पड़ता है तथा एक दिन वह समाज मृत्युकी शय्यापर सो जाती है इसलिए हमारी नम्र भावना है कि जैन समाज एकताके सूत्रमें बंधी रहे इसका योग्य उपाय अवश्य यह महासभा विचार करेगी।

जैसे दिगम्बर जैन समाजमें एकताकी जरूरत है वैसे दिगम्बर श्वेताम्बर सब जैन समाजमें एकताकी आवश्यकता है—हमारी आम्नायोंमें भेद होनेपर भी हम परस्पर एक दिल होकर रहना चाहिये तब ही जैन समाज अन्य समाजोंके सामने अन्य लोगोंके द्वारा पहुंचाए हुए धर्म व जाति पर आक्रमणको निवारण कर सकती है और दुनियामें अपनी सत्ता कायम रख सकती है। जिन तीर्थों पर हमारे तीर्थंकरोंने मोक्ष प्राप्त की है व जिन क्षेत्रको दिगम्बर श्वेताम्बर दोनों पूजते हैं उनके सम्बन्धमें परस्पर प्रेम न रखना व परस्पर युद्ध कर धन खोना व कष्ट सहना देखकर हमें बड़ा दुःख होता है। ये क्षेत्र उन्हीं महात्माओंके स्मारकचिन्ह हैं जिन्होंने उनको पावन किया था हम अब दोनों पूजक हैं तब परस्पर एक दूसरेकी भक्तिमें विघ्न करना व हम बड़े तुम छोटेके प्रश्नको लाना केवल रागद्वेष बढ़ाकर कर्म बंद करना है। हम सर्व जैन समाजके मुखिया भाइयोंसे कहेंगे कि वे इस वर्तमान युगमें जब मुसल्मान हिन्दू भी मिल गये हैं, जब उनमें भी गोरक्षकके सम्बन्धमें एकता हो गई है तब क्या वे वीतराग अरहंत भगवानके उपासक होकर परस्पर एकता नहीं कर सकते? हम आशा करते हैं, कि महासभा इस प्रश्न पर भी ध्यान देगी।

कुरीति और व्यर्थव्ययका निषेध।

वास्तवमें ज्ञानकी निर्मलताके बिना अपना भला या बुरा मनुष्यको नहीं सूझता है। यही कारण है जो बहुत आन्दोलन होने पर भी बाल वृद्ध अनमेल विवाह कन्याविक्रय वेश्यानृत्य विवाहादिकोंमें बहु खर्चकी प्रथाएं अभी तक बंद नहीं हुई हैं। इन कुरीतियों और व्यर्थ व्ययोंके कारण समाज दिन पर दिन संख्यामें, बल वीर्यमें, धनमें व धर्माचरणमें गिरती हुई चली जाती है। यह देखकर जो जैन धर्मका प्रेमी होगा उसके दिलको घोर कष्ट होगा। किसीको मरते हुए देखना जैसा शोकदायक है वैसे जैन समाजको मरणके सन्मुख देखना शोकदायक है। यदि मेरा अनुमान ठीक है तो महासभाका कर्तव्य है कि हम जैन समाजके लिए ऐसे प्रौढ उपाय ढूंढ निकाले जिससे इसकी दशा जो आज मृत्युकी ओर हो रही है वह बन्द होकर समीचिन रहनेकी अवस्थाकी तरफ होती चली जावे।

आर्थिक उन्नति।

कोई समय ऐसा था कि भारतमें जैन जाति ही व्यापार और धनमें शिरोमणि थी। परन्तु अब

इसकी बहुत हीन दशा होगई है। कारण यही है कि वाणिज्य कलाको हम खो बैठे। पहले हम अपने देशमें पैदा होनेवाली रुई, सन आदिसे स्वयं भारतीय शिल्पकारोंसे वस्त्रादि बनवाकर स्वदेश और परदेशमें बिक्री करते थे इसीको ही वाणिज्य कर्म कहते हैं—आज हम परदेशी मालको व्यवहार कर करके आर्थिक अवनतिके घोर गर्तमें पहुंच गए। हमारे श्री सोनागिरजी, जंबूस्वामी, चौरासी, मथुरा, श्री गिरनारजी, श्री केशरियाजी धुलेव, धर्मपुरा दिहली, जैपुर व सांगानेरके विशाल दि० जैन मंदिर व अति प्राचीन एलोरा और धाराशिवकी प्रसिद्ध गुफाओंके दि० जैन मंदिर तथा आबूके जैन मंदिर इस बातके प्रमाण हैं कि अनेक कोटधनके धनी जैन लोग थे। हम जैनियोंको चाहिए कि अपने देशके प्राचीन वाणिज्यको उत्तेजित करें—स्वदेशमें बर्तने योग्य माल बनवायें और स्वदेशी वस्त्रादि वस्तुओंका ही व्यवहार करें। स्वदेशी कलाकौशल्यकी वृद्धि करें—और ऐसा उद्योग करें कि यहांके निवासी स्वदेशी हाथके बने वस्त्रोंसे ही अपने तनको ढकें। इससे हम कलोंके चलानेमें जो पशुओंकी चरबी आदि काममें आती है उस हिंसासे भी बच सकेंगे। इस वाणिज्य वृद्धि पर हम महासभाका ध्यान दिलाते हैं।

डा० गौड़का असत्य लेख।

अन्तमें हम आप सज्जनोंको डा० गौड़के असत्य लेखका प्रतिवाद करनेकी तरफ झुकाते हैं। डाक्टर साहबने आधुनिक बड़े २ नामी पूर्वीय और पश्चिमीय विद्वानोंकी सम्मतिका कुछ भी विचार न कर, जैनियोंको स्वतन्त्र प्राचीन धर्मधारी न लिख कर व उनके भी दायभागके ग्रन्थ हैं ऐसा न स्वीकार कर जो जैनियोंके साथ अयोग्य व्यवहार किया है उसका घोर प्रतिवाद करके उस असत्य लेखको जिस तरह हो कटवाना चाहिये और सब जैनियोंका एक दायभाग मान्य करना चाहिये। जिससे जैनियोंके धनका विभाग उनके दायभागके ग्रन्थोंके अनुसार हो। ऐसा महासभाको करना उचित है।

महासभाका योग्य संगठन।

हमें यह भी कहना चाहिये कि जो सभासद और प्रतिनिधिगण यहां उपस्थित हैं उनको इस महासभाको वास्तविक भारतवर्षीय दि० जैन महासभा बनाना चाहिये। यह सर्व भारतके दि० जैन भाइयोंकी श्रद्धास्पद और माननीय हो जावे, सर्व जैन संस्थायें प्रांतिक सभायें स्थानीय सभायें इसके संगठनमें होजावें, इसका कार्यालय वास्तविक कार्यालय हो, उससे अहर्निश प्रयत्न जारी रहे, इसके सभासद और प्रबन्धक बराबर साहसपर काम करते रहें इसकी प्रबंध कारिणी सभा वर्षमें कई दफे बैठकर इसके संचालन पर विचार करती रहे, इसकी नियमावली संशोधित हो इत्यादि बातोंका ऐसा योग्य प्रबन्ध किया जाय जिससे यह सभा उन्नतिके मार्ग पर सदा गमन करती रहे।

मैंने कुछ अपने विचार आप सज्जनोंकी सेवामें आदर पूर्वक रख दिए हैं—इनमेंसे जो योग्य मालूम हों उन पर आप ध्यान देंगे ऐसी आशा है।

मैं अवधर भी व साथ ही लखनऊ वासी भाइयोंकी तरफसे आपका यथोचित स्वागत व सन्मान न कर सकनेके कारण सादर प्रार्थना करता हूं। माननीय भाई चम्पतरायजी बारिस्टर [illegible] विलायतके लिये जिनका नाम जैन हलकोंमें प्रसिद्ध है व जो जैन धर्मकी प्रभावना

सनीय उद्योग कर रहे हैं प्रार्थना करता हूं कि वे सभापतिके पदको सुशोभित करें। आपको यहांकी स्वागत समने तथा महासभाकी प्रबन्धकारिणी सभाने अन्य सभाओं व प्रतिष्ठित महोदयोंकी सम्मतिके अनुसार सभापति निर्वाचन किया है। आपके शुभ आसन ग्रहणसे हम सबोंका चित्त प्रफुल्लित और आनन्दित होगा।

श्री लाला प्यारेलालजी जौहरी नसीराबाद
" " लखमीचंदजी बमराना
प्रस्तावक-सभापति।
सर्व सम्मतिसे पास।

प्रस्ताव नं० ४-विषय निर्धारिणी सभा द्वारा निश्चित प्रस्तावोंको स्वीकार करना न करना व किसी प्रकारके परिवर्तन करनेका अधिकार साधारण सभाको होगा।

प्रस्तावक-बा० अजितप्रसादजी।
समर्थक-पं० स्वरूपचंदजी कानपुर।
बहु सम्मतिसे पास।

लखनऊ महासभाके प्रस्ताव।

लखनऊमें भारत दि० जैन महासभाके १९वें अधिवेशनमें नीचे लिखे प्रस्ताव पास हुए हैं-

प्रस्ताव १-भा० दि० जैन महासभा प्रस्ताव करती है कि वीर सं० २४४७ का रिपोर्ट और हिसाब जो अभी सुनाया गया है पासकिया जाय।

प्र० सभापति। सर्वसम्मतिसे पास।

प्रस्ताव नं० २ भा०दि० जैनमहासभा प्रस्ताव करती है कि लखनौ अधिवेशनके लिये ११ महाशयोंकी सबजेक्ट कमेटी चुनी जावे।

प्र० सभापति।

प्रस्ताव नं० ३-श्री भारतवर्षीय दि० जैन महासभा नीचे लिखे महानुभावोंकी असामयिक मृत्यु पर शोक प्रगट करती हुई उनके कुटुम्बियोंके प्रति संवेदना प्रगट करती है। इस प्रस्तावकी नकल इनके कुटुम्बियोंको भेजी जावे।

श्रीमान् ला० सोहनलालजी अंबाला
" " घमंडीलालजी मुजफ्फरनगर
" " हीरालालजी सर्राफ एटा
" " रामदयालजी कोटरमल
" " मुरारदास एटा

प्रस्ताव नं० ५-वर्तमान समयमें दि० जैन आगमानुसार जैन कानून प्रचलित होनेकी बड़ी आवश्यक्ता है इसलिये जैन कानूनको तैयार करने और सरकारसे पास करानेके लिये यह भा० दि० जैन महासभा प्रस्ताव करती है कि नीचे लिखे महाशयोंकी एक कमेटी नियत की जावे और कमेटीको प्रेरणा की जावे कि जितनी भी जल्दी हो सके जैन कानून जिसमें श्वेतांबर और स्थानकवासी संप्रदाय संबंधी प्रमाण भी सम्मिलित हों, तैयार करके सरकारसे पास करावे और इसकी रिपोर्ट महासभाको भेजती रहे।

बाबू चम्पतरायजी बै० हरदोई
जयकुमार देवीदास चवरे वकील कारंजा
पं० वासुदेव शास्त्री बारामती
पं० वंशीधरजी शास्त्री सोलापुर
पं० पन्नालालजी कासलीवाल बम्बई
बा० जुगमंदरलाल बैरिस्टर सहारनपुर, मंत्री
बा० रूपचन्द वकील मेरठ
बा० अजितप्रसादजी वकील लखनौ

ए० पी० चौगुले वकील बेलगाम
बा० प्यारेलालजी वकील देहली
पं० नरसिंहदासजी चावली
पं० नानूलालजी जयपुर
पं० माणेकचन्दजी न्यायाचार्य मोरेना
पं० दौर्बली जिनदास शास्त्री श्रवणबेलगोला
पं० प्यारेलालजी अलीगढ़
पं० मेवारामजी खुर्जा
पं० पन्नालाल न्यायदिवाकर फिरोजाबाद
ला० जम्बूप्रसादजी सहारनपुर
ज्योतिषरत्न पं० जियालालजी फरुखनगर
बा० प्यारेलाल बेरिस्टर मेरठ
पं० लालारामजी शास्त्री देहली, सहायक मंत्री
ला० नानकचन्दजी देहली, सहायक मंत्री

नोट—मंत्रियोंको अधिकार है कि वे आवश्यकतानुसार सभासद बढ़ा सकते हैं।

प्रस्तावक—पं० गौरीलालजी शास्त्री
स०—जैन धर्मभू० ब्र० शीतलप्रसादजी सा०
सर्व सम्मतिसे पास।

प्रस्ताव नं० ६—भा० दि० जैन महासभा प्रस्ताव करती है कि भाद्रवा सुदी १४ (अनंत चतुर्दशी) का दिन दिगंबर जैनियोंका त्यौहार (पर्व) है। इस दिन सर्व दिगंबर जैनी व्रत और उपवास करते हैं। और अपने कारबारको छोड़कर धर्मध्यानमें रहते हैं। यद्यपि किसी २ प्रांतमें इस दिनकी छुट्टी रहती है परंतु सब जगह नहीं होती। अतएव महासभा भारत गवर्नमेंटसे [illegible] इस दिनकी पब्लिक छुट्टीके करनेके लिये प्रार्थना करती है। इसके लिये गवर्नमेंटसे पत्र व्यवहार किया जावे।

प्रस्तावक—ला० जम्बूप्रसादजी रईस, सहारनपुर
समर्थक— ,, हुलासरायजी रईस ,,
अनुमोदक—,, जग्गीमलजी दिल्ली
सर्वानुमतसे पास।

प्रस्ताव नं० ७—ईडर नागौर आदिके सरस्वती भंडारोंमें बड़े २ प्राचीन दि० जैन ग्रन्थ बंद हैं, जिनके स्वाध्याय दर्शनसे हम वंचित हो रहे हैं। और उनकी अवस्था बहुत जीर्ण हो रही है अतएव महासभा प्रस्ताव करती है कि उन ग्रन्थों की रक्षा करनेके लिये उचित प्रबन्ध किया जावे, और उन ग्रन्थोंका जीर्णोद्धार किया जावे। इस कार्यके संपादनके लिये ला० जम्बूप्रसादजी सा० और ला० देवीसहायजी सा० नियत किये जाते हैं।

प्रस्तावक—सी० मुसद्दीलालजी अमृतसर।
समर्थक—ला० जग्गीमलजी देहली।
सर्व सम्मतिसे पास।

नोट:—हर्ष है कि आपने (ला० जम्बूप्रसादजी सा० व ला० देवीसहायजी सा० फीरोजपुर)ने इस कार्यको करना सहर्ष स्वीकार भी कर लिया है।

प्रस्ताव नं० ८—किसी२ प्रांतके जैनी ब्राह्मणादिके मार्फत अपने धर्मानुकूल विवाहादि संस्कार नहीं करा सकते अतः उस प्रांतके जैनियोंमें विवाहादि संस्कार जैन पद्धति अनुसार करानेके लिये उस प्रांतके जैनियोंको भेजा भी जावे।

प्रस्तावक—पं० लालारामजी शास्त्री
समर्थक—पं० माणिकचन्दजी शास्त्री मोरेना
२ विरोध मतसे पास।

प्रस्ताव नं० ९—भा० दि० जैन महासभा प्रस्ताव करती है कि निम्नलिखित विद्वानको पास की जावें।

म०—सभापति।

प्रस्ताव नं० १०-यह भा० दि० जैन महा-सभा संकट, निवारण ट्रष्ट फंडके मंत्री महोदयसे प्रेरणा करती है कि वे २१०) जैन छात्रालयके खर्चके लिये जैनमित्र मंडल देहलीको दे देवे।

प्रस्तावक-सभापति

प्रस्ताव नं० ११-भा० दि० जैन महासभा प्रस्ताव करती है कि महासभा प्रबंधकारिणीके ५१ सभासद व कार्यकर्ता नीचे लिखे अनुसार नियत किये जायें-

१ बाबू चंपतरायजी बेरिस्टर हरदोई सभापति
२ रा०ब० सर सेठ हुकमचंदजी इन्दौर उप,,
३ रा०रा०ब० सेठ कल्याणमलजी ,, ,,
४ जैनभू० श्रीमंत सेठ मोहनलालजी खुरई ,,
५ ला० जम्बूप्रसादजी सहारनपुर ,,
६ रा० ब० सेठ टीकमचंदजी अजमेर ,,
७ जैनजातिभूषण ला० भगवानदासजी मड़नगर महामंत्री
८ पं० अमोलकचंदजी इन्दौर स० महामंत्री
९ पं० लालारामजी शास्त्री देहली सहायक महामंत्री व सहायक संपादक जैन गजट
१० बाबू निर्मलकुमारजी रईस आरा कोषाध्यक्ष
११ सेठ गोवाजी रूपचंद बड़नगर कोषाध्यक्ष बालुकंड
१२ पं० रघुनाथदासजी सरनौ संपादक जैनगजट
१३ पं० गौरीलालजी दिल्ली-मंत्री विद्या विभाग (परीक्षालय)
१४ ब्र० ज्ञानानंदजी-मंत्री जीवदया विभाग
१५ ला० मुंशीलालजी हाथरस-मंत्री-उपदेशक खाता
१६ बाबू मिश्रीलालजी सोगानी हाथरस धर्ममंत्री उपदेशक वि०
१७ ला० जोरावरमलजी हाथरस मंत्री महाविद्यालय
१८ पं० कन्हैयालालजी वैद्य कानपुर मंत्री पुरातत्व विभाग
१९ ला० रामस्वरूपजी रईस रानपुर मंत्री शाखा सभा विभाग
२० पं० प्यारेलालजी अलीगढ़ मंत्री स्वाध्यायवि०
२१ ला० हुलासरायजी रईस सहारनपुर मंत्री सरस्वती भंडार
२२ सेठ चुन्नीलाल हेमचंदजी महामंत्री, तीर्थक्षेत्र कमेटी
२३ पं० दुर्गाप्रसादजी कानपुर मंत्री संयुक्त प्रांत
२४ ला० गोविंदप्रसादजी गोटेवाले लखनौ मंत्री अवध प्रां० सभा
२५ रा० माणिकचंदजी बैनाडा मंत्री बम्बई प्रान्त
२६ ,, मुरारीलालजी अंबाला ,, पंजाबप्रान्त
२७ मास्टर पांचूलालजी कोठा जयपुर मंत्री राजपूताना प्रां० सभा
२८ सेठ भवछुभार देवीदास चवरे वकील अकोला मंत्री, मध्य वराड प्रान्त
२९ सेठ वर्धमानैयाजी मैसुर मंत्री मैसुर प्रांत
३० सेठ सुंदरलालजी मंत्री हाड़ौती प्रांत
३१-५१ तक २१ समासद, इनमें जैनधर्म भू० ब्र० शीतलप्रसादजी, सेठ हीराचंद नेमचंद सोलापुर, सेठ मूलचंद किसनदास कापड़िया आदिके नाम हैं।

प्रस्तावक-बा० निर्मलकुमारजी आरा
समर्थक-ला० जग्गीमलजी दिहली
,, रा०ब० बाबू द्वारकाप्रसादजी

प्रस्ताव नं० १२–जैनियोंके आचरण दि० जैन धर्मानुसार ही होने चाहिये और उसीकी दृढ़ताके लिये दिगम्बर जैन धर्ममें वर्ण व्यवस्था स्पर्शास्पर्श विषयका पूर्ण रीतिसे विचार रक्खा है। स्पर्श अस्पर्शके भेदको मिटाना जैन धर्मसे सर्वथा विरुद्ध है।

अहमदाबादकी कांग्रेसमें जो स्वयंसेवकोंके प्रतिज्ञापत्रमें आठ नियम नियत हुए हैं, उसमें ५ वा नियम यह है।

"यदि मैं जैनी हूं तो मैं मानता हूं कि छूताछूतकी बुराईको दूर करना आवश्यक और न्याय युक्त है और जब जब अवसर आवेगा मैं अंत्यज जातियोंके साथ मिलूं जुलूंगा तथा उनकी सेवा करनेका प्रयत्न करूंगा।"

स्वयं सेवकोंका यह नियम जातीयता तथा धार्मिक सिद्धान्तके बिलकुल विरुद्ध है इस लिये यह भा० दि० जैन महासभा प्रस्ताव करती है कि कांग्रेसके स्वयंसेवकोंके आठ नियमोंमेसे ५ वां नियम जैन धर्मके विरुद्ध है इसलिये कोई भी जैनी स्वयं सेवक इस विषय पर मंजूरी न देवे क्योंकि इस नियमको मंजूर करना धर्मको मेट देना है और कांग्रेससे भी अनुरोध करती है कि कांग्रेसका उद्देश धार्मिक विषयका नहीं है। ऐसे नियमोंसे प्रजाके धार्मिक विषय बाधे जाते हैं और अनैक्यताका बीज उग जाता है इस लिये ५ वें नियमको बिलकुल लोपा निकाल दें।

प्रस्तावक–पं० धन्नालालजी बंबई।
समर्थक–पं० श्रीलालजी।

प्रस्ताव १३–श्री अयोध्याजी इस बारमें भी महासभा सरकारको धन्यवाद देती है जो
ऋषभ प्रभृति ५ तीर्थंकरोंकी जन्म भूमिके सिवाय हुंडावसर्पिणीमें अन्य कालमें इसही पर होनेवाले

अनंतानंत तीर्थंकरोंकी नियत जन्म भूमि है तथापि इस क्षेत्रकी व्यवस्था बहुत शोचनीय है अतएव महासभा तीर्थक्षेत्र कमेटीका व अवध प्रांतिक सभा का ध्यान आकर्षित करती है कि इस क्षेत्रकी शीघ्र ही योग्य व्यवस्था कराई जावे।

प्रस्तावक–ब्र० शीतलप्रसादजी
समर्थक–ला० फतेहचंदजी लखनौ

प्रस्ताव १४–सिसवामें एक प्राचीन जैन मंदिर है जिसमें विशाल मनोज्ञ श्री प्रतिमाएं मौजूद हैं उनकी पूजा प्रक्षालका कुछ प्रबंध न देखकर श्री भा० दि० जैन महासभा प्रस्ताव करती है कि दि० जैन अवध प्रांतिक सभा शीघ्र इसकी सुव्यवस्था करें।

प्रस्तावक–हकीम कल्याणरायजी
समर्थक–ला० शिखरचंदजी लखनौ
सर्वानुमतसे पास।

प्रस्ताव नं० १५–भा० दि० जैन महासभा प्रस्ताव करती है कि भा० दि० जैन महासभाके ध्रौव्य फंडके द्रव्यकी रक्षा और सुव्यवस्थाके लिये एक ट्रस्ट कमेटी नीचे लिखे महाशयोंकी कायम की जावे।

१ श्री दा०रा०बा०सर सेठ हुकमचंदजी इंदौर
२ रा०सा० सेठ लुणकरणदासजी नजीबाबाद
३ ला० जम्बूप्रसादजी सहारनपुर
४ ला० नवलकिशोरजी वकील कानपुर
५ ला० निर्मलकुमारजी आरा, मंत्री ट्रस्ट क०

प्र० सभापति।

प्र० नं० १६–यह भा० दि० जैन

आदि पशुओंके वधको सदाके लिये बंद कर दिया जाना चाहिये, तथा जिन रजवाडोंमें अभी यह प्रथा जारी है उनसे प्रार्थना करती है कि वे भी इस निर्दय प्रथाको धार्मिक उत्सवमें बंद करें तथा इस प्रस्तावकी नकल उक्त महाराज सीकर व उन राजाओंकी सेवामें भेजी जावें जहां यह प्रथा बंद नहीं हुई है।

प्रस्तावक—ब्र० शीतलप्रसादजी
समर्थक—मिश्रीलालजी सोगानी
,, —भा० दीपचंदजी परवार

प्रस्ताव १७—भारतवर्षीय दि० जैन महासभा तीर्थक्षेत्र कमेटीको अधिकार देती है कि वह श्रीमान् सेठ परमेष्टीदासजीकी तरफ जो एक बड़ी रकम तीर्थक्षेत्र कमेटीकी बकाया लेनी निकल रही है उसको फौरन बाजाता कार्रवाई करके वसूल की जावे।

प्रस्तावक—बाबू हरनारायणजी, भागलपुर।
समर्थक—ला० हुलासरायजी, सहारनपुर।

प्रस्ताव १८—काशीपुरका श्री मंदिरजी बहुत जीर्ण होरहा है उसमें पूजा प्रक्षालनका कुछ प्रबंध नहीं है इस पर खेद प्रगट करती हुई यह भा० दि० जैन महासभा तीर्थक्षेत्र कमेटीको प्रेरणा करती है कि इसकी शीघ्र सुव्यवस्था कराई जावे।

प्र० ला० बुलाकीदासजी लखनौ।
स० पं० मक्खनलालजी देहली।

प्रस्ताव १९—भा० दि० जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटीके उस प्रस्ताव नं० २ को जो वीर सं० २४४४में हुआ है कि प्रत्येक स्थानकी पंचायतको अपने यहांसे प्रतिगृह -) पीछे, १) तीर्थ रक्षा-फंडके लिये वसूल करके प्रति वर्ष तीर्थक्षेत्र कमेटीमें दि० जैन महासभा उसको पुनः पुष्ट करती हुई प्रत्येक पंचायतसे अनुरोध करती है कि इस प्रस्तावकी अवश्य पाबंदी की जावे।

प्र० सेठ हरनारायणजी,
स०ला० मिश्रीलालजी सोगानी
,, पं० मक्खनलालजी देहली

प्रस्ताव २०—भारतवर्षकी आर्थिक उन्नतिके हेतु यह भा० दि० जैन महासभा अपने कानपुर अधिवेशनके स्वदेशी वस्तु व्यवहारके प्रस्ताव नं० २ को पुनः पुष्ट करती हुई संपूर्ण जैन समाजसे अनुरोध करती है कि स्वदेशी वस्त्र और स्वदेशी वस्तुओंको ही सर्वदा व्यवहारमें लाया जावे।

प्रस्तावक—वैद्य कन्हैयालालजी कानपुर
समर्थक—सेठ मूलचंद किसनदास कापड़िया सूरत
,, ब्र० शीतलप्रसादजी।

लखनऊमें महिला परिषद्।

भारत दि० जैन महिला परिषदका ११ वां वार्षिक अधिवेशन लखनऊमें जैन बागमें माघ सुदी ७-८को बड़े समारोहके साथ श्रीमती ललिताबाई (बम्बई) के सभापतित्वमें उत्साह पूर्वक हुआ था। २०० स्त्रियें उपस्थित होती थीं। पं० चंदाबाई, पं० मगनबाई, प्रभावतीबाई आदि खास पधारे थे और ९००)का चंदा भी हुआ था तथा स्त्रियोंका एक मासिक पत्र प्रकट करना निश्चित हुआ था और नीचे लिखे प्रस्ताव पास हुये थे।

प्रस्ताव १—चूंकि जैन स्त्री समाजमें शिक्षा और विद्याकी अत्यन्त कमी है अतएव यह भा० व० दि० जैन महिला परिषद प्रस्ताव करती है कि

जैन जनितायुक्त प्रत्येक नगरमें एक २ कन्या पाठशालायें अवश्य खोली जांय। और प्रत्येक प्रान्तमें एक २ आश्रम स्थापित किए जांय जिनमें पढ़कर बहिनें योग्य गृहचारिणी एवं योग्य अध्यापिकाएं बन सकें।

प्र० सौ० सरलादेवी लखनऊ।
स० कस्तूरीबाई आरा।

प्रस्ताव २–भा० दि० जैन म० परिषद् प्रस्ताव करती है कि एक उपदेशक विभाग स्थापित किया जाय जिससे दो तीन उपदेशिकाएं घूम २ कर देश २ की बहिनोंको धार्मिक एवं लौकिक उपदेश दें, उपदेशिकाओंको परिषद्की ओरसे ही वेतन दिया जाय तथा ये लोग जो चन्दा करें वह परिषद् फंडमें ही जमा हो जाय। इस एकत्रित हुए द्रव्यको परिषद्के वार्षिक अधिवेशनमें विभाग करके अन्यान्य संस्थाओंमें दे सकती है।

प्र०–पं० चंदाबाई आरा, स० राजुबाई सोलापुर

प्रस्ताव ३–भा० दि० जैन म० परिषद् प्रस्ताव करती है और सानुरोध प्रार्थना करती है कि सब बहिनें स्वदेशी वस्त्रोंको काममें लावें। एवं विदेशी वस्त्रोंका सर्वथा हृदयसे त्याग करें। गाढ़ा और चरखेका सूतका बना हुआ कपड़ा पहनें, जिससे देशका धन बचे और अपने नेताओंकी आज्ञाका पालन हो।

प्र०–सौ० जिनवंतीदेवी बाराबंकी।
स०–कस्तूरबाई आरा।

प्रस्ताव ४–भा० दि० जैन म० परिषद् प्रस्ताव करती है और सानुरोध प्रार्थना करती है कि एक ग्रन्थ प्रकाशन विभाग खोला जाय, जिसके द्वारा यह छोटी २ स्त्रीशिक्षा सम्बन्धी पुस्तकें छपाकर लागतके मूल्य पर सर्व साधारणमें प्रकाशित करें, और स्त्रीशिक्षाका प्रचार करें। इस विभागके लिए श्रीमती प्रभावतीबाई मन्त्रिणी नियत की जाय जिनका कार्य होगा कि वर्षभर अपने कार्यको योग्य रीतिसे संचालन करके अधिवेशन पर रिपोर्ट सुनावें और हिसाब साफ करें।

प्र०–कस्तूरीबाई सोलापुर।
सं०–पं० मगनबाई बम्बई।
सं०–प्रभावतीबाई बम्बई।

प्र० ६–यह महिला परिषद् प्रस्ताव करती है कि जैनसमाजकी स्त्रियोंमें अपनी धार्मिक और लौकिक उन्नतिकी ओर उत्तेजित करनेके लिये एक मासिक पत्र निकाला जाय व सम्पादिकाका काम श्रीमती पंडिता चन्दाबाई और उपसम्पादिकाका काम श्रीमती ललिताबाईजी करें और प्रकाशक सेठ मूलचन्द किसनदास कापड़िया–सूरत रहें। यह पत्र महिला परिषद्की सभासदोंको २।।) तथा ग्राहकोंको ३) वार्षिक मूल्य पर दिया जाय।

प्र० सरलादेवी लखनऊ स० रामप्यारीबाई देहली

जातीय गान ।

(महासभा के २६ वें लखनऊ अधिवेशन में पठित पद्य नं० १)

नमहुँ प्रथमहिं पारस परमेश ।

भव-भय भंजन नाथ निरंजन, संत साधु सुर नर मन रंजन ।
कर्म कष्ट कारक के गंजन, अमर अजर अखिलेश ॥ १ ॥
नमहुँ प्रथमहिं पारस परमेश ।

अटल अचल हो पूरण ज्ञाता, साता दाता सुखद विधाता ।
तुम ही जग जीवन के त्राता, ब्रह्मा विष्णु महेश ॥ २ ॥
नमहुँ प्रथमहिं पारस परमेश ।

अकथ अनुपम तुम्हरी माया, अमर हुआ जो शरणे आया ।
पशुओं तक को स्वर्ग पठाया, दे कर सत उपदेश ॥ ३ ॥
नमहुँ प्रथमहिं पारस परमेश ।

सर्व जाति के जन हरियाने, हम जाते दिन दिन मुरझाने ।
हम में हो गये नाना बाने, काटो सारे क्लेश ॥ ४ ॥
नमहुँ प्रथमहिं पारस परमेश ।

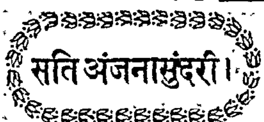
सबने निज निज राष्ट्र बनाये, हम उल्टे नीचे को आये ।
हो कर के वीरों के जाये, क्यों हैं कायर भेष ॥ ५ ॥
नमहुँ प्रथमहिं पारस परमेश ।

फूट हृदय से दूर हटावें, क्षीर नीर सम सब मिल जावें ।
नाम पूर्वजों का चमकावें, रहे द्वेष नहिं लेश ॥ ६ ॥
नमहुँ प्रथमहिं पारस परमेश ।

शीघ्र समय सतयुग का आवे, अटल अहिंसा चहुँदिशि छावे ।
जैन ध्वजा फिर से फहरावे, चकित होय विदेश ॥ ७ ॥
नमहुँ प्रथमहिं पारस परमेश ।

धर्म जाति उन्नति पथ पावे, सुधा ऐक्य वंशी मन भावे ।
'शिखर नंद' नित यही मनावे, हो स्वतंत्र यह देश ॥ ८ ॥

पं० शिखरचन्द्रात्मज स्वरूपचन्द्र जैन 'सरोज' कानपुर ।



सति अंजनासुंदरी।

(નાટકનો એક ભાગ-હનુમંત જન્મ.)

(સ્થળ-એક ભયાનક ગુફા.)

પાત્રો-અંજના (હનુમંતની માતા-પવનંજયની સ્ત્રી.)

વસંત-અંજનાની સખી (પવનંજયના મિત્ર પ્રહસિતની પ્રેમ જ્યોતમાં ખેંચાએલી સુશીલ સ્ત્રી.

વરવજનું જન્મેલું બાળક (હનુમંત.)

અંજના—સખી, હવે મારૂં શું થશે, શું દૈવે મને આમ દુઃખી કરવાજ જન્મ આપ્યો હશે, હાય, મારૂં શું થશે.

(મુર્છા ખાય છે.)

વસંત—(સાવધ કરી) બ્હેન, ગભરાઓ નહિ, પરમાત્મા દરેક જંતુને સહાય કરેજ જાય છે. નહી તેણે આ પગલું કંઇક લાભ કર્તાજ ભર્યું હશે; બ્હેન, ધીરજ રાખો.

અંજના—સખી, ધીરજ તો કેટલી રાખું! પરણતાંજ પતિએ ત્યાગ કરી, બાવીસ વર્ષે વિચારી, ટે આમ ગુપ્તપણે અને કલંકિત કરવા! હાય! હું શું સુખ ભગવીશ! ભગવંત મારાથી આ ભયાનક રંગમાં ધીરજથી રહી શકાતું નથી? હાય! સખી!

વસંત—સાંભળો! કોઇક આવતું હોય તેમ જણાય છે!

અંજના—આ અભાગીઓ પુત્ર તેના પિતાને ઘેર ઉત્પન્ન થયો હોત તો કેવો ઉત્સવ થઇ રહ્યો હોત! હાય, પુત્ર! અત્યારે તેમનું કશું મારાથી થઇ શકતું નથી. તું કોઇ ભાગ્યવંતીની કુખે જન્મ્યો હોત, તો શું થાત?

નારદમુનિ—(પ્રવેશ કરી) પુત્રી! તે અભાગીઓ નથી, પણ ચરમ શરીરી, પુણ્યવાન-અને કુલ ઉદ્ધારક નરરત્ન છે. તું તેને યત્નપૂર્વક સંભાળ?

અંજના—મહાત્મન! નમસ્કાર કરું છું.

નારદ—પુત્રી, સૌભાગ્યવતી રહે!

અંજના—ધર્મ સ્વરૂપ મહાત્મન! આ અભાગ્યવતીને કઇ તરફથી પધારી દર્શન આપ્યાં છે. પ્રભુ! મારાં કયાં દુઃકર્મોના પ્રતાપે, મારે પતિ-વિરહે ઝુરાવું પડે છે. વળી મારાં કયાં કર્મોને લઇ મારે સમાજમાં કલંકિત થવું પડયું?

નારદ—પુત્રી! અધીરી ન થા? તારા પૂર્વ કર્મના કંઇક શુભોદયથીજ તું પવનંજય જેવા પતિને મેળવવા ભાગ્યશાળી થઇ છું. પૂર્વ જન્મમાં તારે હાથે જે ઘોર અત્યાચાર થઇ ગએલો છે, તે તું સાંભળ?

રાગ મનહર.

પ્રથમના જનમમાં હતી તું રાજાની રાણી,
અભિમાને ચઢી તેં તો પ્રતિમાને ડારી છે.
દ્વાર પાસ વાપી એક તેહમાં પછાડી તેં તો,
દ્વાદશ ઘડીમાં તેને બહાર તો નિકાળી છે.
તુજ પાસ આવી એક ચતુર ભક્તાણી બાઇ,
ઉપદેશ તેણે તને વિધ વિધ દીધા છે.
પૂર્વના પુણ્યોએ કરી રાજની તું રાણી બની,
રૂપ પણ અધિકું તેં પ્રાપ્ત તો કીધું છે.
સંસાર સમુદ્રમાં જીવ સહુ થાય તેમાં,
ચોરાશી જે ગતિ પ્રભુ આગમે તો કહી છે.
સંસારમાં દુઃખ જે દેખાય છે માનવીમાં,
પાપનું છે ફળ સહુ એમાં નહિ ફેર છે.
સુખ અને શાન્તિ જેહ દરશ પડે જન મહી,
પુણ્યના સંચય તણી તેહ તો નિશાની છે.
માટેજ હે બેન સુજ કામ ન તું કર ભાવું,
ઝીણી આંખે પડે જેમ દીવો લઇ કુવે તું.
દેવ ગુરુ શાસ્ત્ર તણો વિનય જે નાશ પામે,
દુઃખ ઘણું પામી તેથી નર્કમાં જવાય છે.
ઉપદેશ સુણી તેં તો ધર્મ ધન ધાર્યું હરે,
પુણ્યનો સંચય કરી સ્વર્ગ તો સિધાઇ છે.
સુખ પણ ભોગી પછી આવી તું આ અવનિમાં,
મહેન્દ્ર નૃપ ગેહે કન્યાના વેશમાં.
પુણ્યના ઉદયે કરી પવનંજય સમ પતિ,
શીલવાન-ગુણવાન-વાણાગો પમાયો છે.
પ્રતિમા વાપીમાં હતી દ્વાદશ ઘડી તો જેથી,
તેથીજ વર્ષ બાર વિયોગ તો આવ્યો છે.

પ્રભુતણી પ્રતિમાનો અવિનય કરવાથી,
પુલકિત બની બ્હેન સામુએ નસાડી છે;
આજે, હે બ્હેન ધરે ધરમે વરદ્દ પ્રેમ,
સંસારમાં તેહનાથી સુખે ઘણું પામશો.

અંજના—પ્રભુ? ત્યારે મારા શરીરથી ઉત્પન્ન થએલો આ જીવ કોણ છે? અને તે કેવો થશે તે કૃપા કરી જણાવો?

નારદ—પુત્રી! તેનાં પૂર્વસંચિત કર્મ કથા સાંભળ.

રાગ. મનહર.

જંબુ નામ દ્વીપમહી શોભીતો છે સારો એક,
ભરતનો ક્ષેત્ર જહાં વિજ્યારધ ગિરી છે;
નગર છે અદ્દન જેની શોભાનો તો પાર નહિ,
નૃપ સુકંઠ નામે તેહનો તો ધણી છે;
કનકમાલિકા નામે રાણી તેની સુખદાઇ,
ઉપજ્યો કુંપ તેની સિંહવાહન નામ છે;
ખુબસુરત ગુણવંત કળાવંત ધર્મવંત,
કીમતનો પાર નહિ જસ ખુબ લીધો છે;
રાજ્ય કીધું ખૂબ દીન રાજાને વૈરાગ્ય થયો,
પુત્રને તો રાજ્ય અર્પી સમાધિને ધારી છે;
મુનિ એક ધારવીર લક્ષ્મી તિલક નામ,
શિષ્ય બની તેમના ને જ્ઞાન દાન લીધો છે;
પર્ણ નિજ દેહ રહી તપ તો વિચાર્યું બહુ,
સ્વર્ગમાં તે દેવ થયો સુખ ઘણું પામ્યો છે;
મોક્ષ સુખ ઇચ્છી કરી અંજનાની કુખે આવી,
સુખનો સમુદ્ર તેણે હામોહામ રેડ્યો છે;
પુન્યવંત ઘણો જેથી આ તે આર્જ આનતારે,
શિવનારી પર ભારી દિવ્ય સુખ પામશે;
અતુલ સંપત્તિ પામી રામચંદ્ર શિષ્ય બની;
માત તાત ઉભયના કુળને તો તારશે;
બ્હેન નિશ્ચિંત થા એના દ્વારાજ તારો ઉદય થશે.

અંજના—પ્રભુ! મારો અપરાધ ક્યારે માફ થશે? અને હું સ્વામી જનને ક્યારે મળીશ?

નારદ—પુત્રી! થોડાકજ સમયમાં તને તારા એક સંબંધીનો મેળાપ થશે, તે તને તથા તારા પુત્રરત્નને આશ્રય આપશે. તેમના દ્વારાજ તારો બાલ્યેશ્વર સાથે થશ તું પરતંત્રમાંથી પ્રેમપાત્રી બની જઇશ!

(નારદ મુનિ અંતર્ધાન થાય છે)

અંજના—અહો! દુનિયા પર આ શરીર પાપ અને પુણ્યનો સંગ્રહ કરવાનું મૌક્ષસ્થાન છે, તે મેં આજેજ સાંભળ્યું. દુઃખનું વાદળ મનુષ્યમાત્રને શિર ઝઝુમી રહે છે તે તો હું પ્રથમથીજ જાણી ચુકી હતી. પણ ખબર નહોતી કે મેં આવા અપરાધ કર્યા હશે, પ્રભુજીમાં પ્રભુના બાધ્ય કાર્યોજ તેમના તરફ પૂજ્યભાવ ઉત્પન્ન કરાવે છે. મારા એવા મોટા અપરાધોને પણ માફ કરી મારા પરિસંચિત પુન્યના કે પતિદેવના પુણ્યના પ્રભાવે કરી પણ હું એના પૂજ્ય સરધારને પામી છું, તે એક મહદ્ ભાગ્યતાજ છે. સખી! હવે મારાથી આ વિરહ વ્યથા અને ભયનક પ્રાણીઓ યુક્ત આ અરણ્યવાસ સહન થઇ શકતો નથી. હવે તો ઝટપટ પતિદેવથી મેળાપ થાય તોજ આ ક્ષોભિત બનેલું હૃદય શાંતિ પામે?

વસંત— બ્હેન! પ્રભુ કૃપાએ સહુ સારૂંજ થશે. જો દુનિયાપર પાપ અને પુણ્યનો બદલો ન મળતો હોય તો કોઇ એક વસ્તુનો સ્વીકાર કરેજ નહિ. વાસ્તવિક રીતે કુદરત તરફથી મનુષ્યને શિર બે મુખ્ય ફરજો નાખેલી હોય છે. જેવી કે—(૧) પોતાનું પોતાના આત્મા તરફનું કર્તવ્ય (૨) બીજા આત્માઓ તરફનું કર્તવ્ય. આ બે કર્તવ્યોને મુકી મનુષ્ય જે કંઇ કામ કરે તેજ તેના પાપ. અને જે કંઇ તે કર્તવ્યોને ધારણ કરી કરે તેજ તેનાં પુન્ય.

બ્હેન! પુન્ય અને પાપ એ શરીર મય પુતળાં નથી પણ કુદરતથીજ યોજાએલાં વિશેષ્યો છે. વ્યવહારમાં પુન્ય અને પાપ કર્યું હાથ દે અને ફસે દાય સે' એ મહાવાક્યને ખરૂં પાડતા મનુષ્ય માત્રના સ્થુલ દેહ સાથે જોડાએલાં રહે છે. તે નથી કદી ભિન્ન થતાં કે નથી કદી દ્રશ્યમાન થતાં પરંતુ તે કોઇ એક વસ્તુ તરફ મનુષ્ય ઝુકી પડે છે. જો તે પાપ તરફ ઝુકે છે તો લોકો તેને નીચ નજરથી નિહાળે છે—પોતે ઉદ્વિગ્ન રહે છે, અને દેખીતી રીતે દુષ્ટ છે એવો કુતોં ઘણું કરી બેસે છે તેથી કરી તેનામાં નિર્લજ્જતા કલંકિતતા દુષ્ટતા અને નીચતા આવે છે. તેજ તેને નરકની સીડી તરફ લઇ જનારી મોરચકાર

વસંત-બ્હેન ! પ્રભુ મર્મનો ભેદી છે; કુદરતનાં સર્વે કાર્યો વિચાર પૂર્વકજ થાય છે. હવે આપણે જલ્દીથી મામાની સધાયે જવું જોઇએ ?

(વિમાનમાં સર્વે બેસે છે)

(થોડેક દુર ગયા પછી પુત્ર નીચે પડી જાય છે)

(એક શીલાપર પડતાં શિલાના ટુકડે ટુકડા થઇ જાય છે)

(વિમાન નીચે ઉતારી પ્રતિસૂર્ય પુત્રને ઉંચકી ચુંબન કરી અંજનાને આપે છે.

પ્રતિસૂર્ય—બ્હેન, આ રત્ન તો કોઇ ચરમ શરીરીજ માલમ પડે છે; તેના વજ્રમય શરીરથી આ શિલાના સહસ્રો ટુકડા થઇ ગયા-પણ ભાણેજનો વાળ સરખો વાંકો થયો નથી વ હું; ભાણેજ હનુમંત.

વસંત—મામાથી, બાપ તેવા બેટા હોય એમાં શું આશ્ચર્ય છે.

(અંજના શરમથી નીચું જુવે છે)

(વિમાન ચાલે છે)

પાઠકગણ—આ એક વિભાગ માત્ર આપ્યો છે, પણ પ્રસંગવશાત આખું અંજનાસુંદરી નાટક આપની સેવામાં રજુ કરીશ. આટલા થોડા વિભાગમાંથી પણ સજ્જન વાંચકો સાર ગ્રહણ કરી દોષને ત્યાગ કરી પોતાના જીવન-વ્યવહારને ધર્મમાર્ગે સ્થાપશે, એમ આશા રાખતો લખનાર હું છું. આપ સર્વેને દિવ્ય સ્નેહસાગરમાં ઝુલતા જોવાને ઉત્સુક-

મોહનલાલ મથુરાદાસ શાહ-કરણીસા.

खांड, केशर अने विलायती कापडमां वपराती अपवित्र वस्तुओ.

(માણસા તાલુકાના રહેવાસીઓના મુંબઇની મંડળી (મુંબાઇ કોટ એપોલો સ્ટ્રીટ, હાઉ બીલ્ડીંગના સેક્રેટરી મી૦ કેશવલાલ નગીનદાસ શાહે નીચે પ્રમાણેની એક ધર્મપ્રેમી બાબુની સહીની છાપેલી પત્રિકા પ્રકટ કરવાની વિનંતિ સાથે મોકલી આપી છે. એમાં દર્શાવેલી હકીકતની સચ્ચાઇ માટે રા. રા. કેશવલાલ અને ધર્મપ્રેમી જોખમદાર છે.)

ખાંડ શા માટે ન વાપરવી—જાનવરોના હાડકા જેવાં કે ગાય, બળદ, સુઅર, માણસ ઇત્યાદિ પ્રાણીઓના હાડકાઓના કોયલાથી વિલાયતી ખાંડને સાફ કરી સફેદ દુધ જેવા રંગની સાફ બનાવવામાં આવે છે, એ વાત ઘણી ભાગ્યે કોઇના જાણવા બહાર નથી. તે સિવાય લોહી (બ્લડ એલ્બુમેન) થી વિદેશી ખાંડને સાફ કરવામાં આવે છે.

વિલાયતમાં દુધ ઘણુંજ મોંઘું વેચાય છે. એક બાટલી દુધની દોઢ રૂપીઆથી ઓછી કીંમતે મળી શકતી નથી. આપણા દેશમાં મીઠાઇ બનાવનારાઓ ક'દોઇઓ અને હલવાઇઓ ખાંડ સાફ કરવા માટે તેની ચાસણી ચઢાવી તેમાં દુધનો છંટકાવ કરે છે, જેથી ખાંડની અંદરનો મેલ છુટો પડી ચાસણી ઉપર તરી આવે છે, તેને ઝારી વડે જુદો કાઢે છે-વિલાયતમાં ખાંડ સાફ કરવા માટે તેવીજ રીતે ચાસણી ચઢાવી દુધને બદલે લોહીનો છંટકાવ કરવા કસાઇખાનાઓમાંથી તાજું લોહી મંગાવી ચાસણીમાં છાંટવામાં આવે છે. ને ઉપર તરી આવેલો મેલ અલગ કરી ખાંડને સાફ કરે છે. આ રીતે ગાય અને ડુક્કરના લોહીથી સાફ થએલી ખાંડ કુલદેવ મંદિરોમાં, નાત જાતના જમણવારોમાં, બ્રહ્મભોજનમાં, દેવપિતૃકાર્યમાં અને ઓલીઆઓની દરગાહોમાં, લાણી વહેંચવામાં તથા ખાવામાં નહી અડકવા લાયક અપવિત્ર વિલાયતી ખાંડનો આપણે હિન્દુ મુસલમાન ભાઇઓ છુટથી ઉપયોગ કરીએ છીએ જે ઘણું શોચનીય છે. આ સૌના ધર્મનું રસાતલ જવા બેઠું છે, તેનો ધર્મની અને દયાની આકાંક્ષા ધરાવનારે તુરતજ વિચાર કરવો જોઇએ અને જેમ બને તેમ જલદીથી અપવિત્ર ખાંડનો ત્યાગ કરી પાવન થવું જોઇએ ને બેદશા માટેજ ખાંડ વાપરવી એ કોઇપણ હિન્દીનો ધર્મ નથી. એનસાઇક્લોપીડિયા બ્રિટાનિયામાં ખાંડને સાફ કરવાની રીત નીચે પ્રમાણે આપી છે જે અમો અક્ષરશઃ નીચે આપીએ છીએ જેથી ઉપરની દરેક ખાત્રી થઇ જશે.

તૈયાર થતી નથી? તેના 'ખુલાસાવાર કારણોનું' ઉપર જણાવેલા છઠ્ઠા પ્રકરણના ૧૪ મા પેજમાં અને તે સિવાયના ઘણા પેજોમાં જુદી જુદી જગોએ વિસ્તાર પૂર્વક વિવેચન કરેલું છે. "Talow is the concrete fats of animals its composition being solid fat and oil." વિલાયતી કાપડની બનાવટને લગતી અપવિત્ર પદ્ધતિનું ટુંક આપ્યા પછી વિલાયતી કાપડનો ત્યાગ કરવા દરેક ધર્મપ્રેમી હીન્દીને પ્રાર્થના કરી અત્રે વીરમીએ છીએ.

ધર્મ ગુરૂઓને-શેઠોને મુઝવણમાં નાખી દેનારી મોટી મોટી વાતો કરવાનો હવે વખત ગયો છે, તો ઉપરની બાબતો કે જે મનુષ્ય જીવનને ખાસ ઉપયોગની છે તેનો સ્વીકાર કરી તમારા ઉપર આધાર રાખતા સમુદાયને સન્માર્ગે વાળવાની ફરજ અદા કરવા અમેથી પ્રાર્થના કરવામાં આવે છે.

"ગુજરાતી" તા૦ ૫-૨-૨૨.

નોટ-અહિંસા ધર્મનું પાલનનો દાવો કરનારા અમારા જૈન બંધુઓ ઉપરનો લેખ વાંચ્યા પછી હવે પણ વિલાયતી ભ્રષ્ટ ખાંડ, જેલસેલવાળું અશુદ્ધ વિલાયતી કેશર અને અસ્પર્શ્ય વસ્તુઓના સંસર્ગથી તૈયાર થતું વિલાયતી કાપડ વાપરવાનું છોડશે કે નહીં? આ લેખકને તો એમ લાગે છે કે ન વાપરવાની વસ્તુઓ ઘણી અતિવાર છે અને તેથી સારી રીતે ચાલી શકે છે. સ્વદેશી ખાંડ અને પવિત્ર કાશ્મીરી કેશર વિલાયતીથી કેટલીક રીતે મોંઘા જણાય છે પણ દેશી ખાંડ ગળપણમાં વધુ હોવાથી તેમજ કાશ્મીરી કેશર-ગુણ ને રંગોમાં વિલાયતીથી અતિ અધિક હોવાથી આખરે તો સસ્તુંજ પડે છે તેમજ સ્વદેશી કાપડ તો પુરતા જથ્થામાં વિલાયતી કરતાં ટકાઉ હવે હિંદમાં મળે છે માટે વિલાયતી કાપડને તો હવે પૂર્ણ તિલાંજલી આપી સ્વદેશી કાપડજ વાપરવુંજ જોઈએ અને તેમાં પણ જ્યાં સુધી બને ત્યાં સુધી હાથે કાંતેલું ને હાથે વણેલું અત્યંત શુદ્ધ અને ટકાઉ કાપડજ વાપરવાની પ્રતિજ્ઞા લેવી જોઈએ તોજ ધર્મ અને દેશનો ઉદ્ધાર થઈ શકશે.

સં૦

हमारी जाति दशा।

(लेखक-दीवाननंद जैन-रावलपिंडी।)

१

फाल्गुन चैतका मास है। मोसममें तबदीली हो गई है। वसंतका मेला भी होगया। वृक्षों और लताओंने भी अपनी गहरी निद्राको त्यागा। और अपने आपको सब्ज मखमलके भूषण पहरनेकी ठानी। बागोंमें भी एक नई बहार आने लगी। फूलोंने भी सर्दऋतुको जाते हुए देख कर खुशी मनाई। और फलने फूलने लगे। बाग कट प्रातःकालकी पवन भी क्या अजब बहार देती है। दमागोंको तर व ताजा करती है। इस वसंती बहारने लोगोंके दिलोंको भी लुभाया। और प्रातःकाल हवाखोरी (सैर) के लिये आमादा किया अर्थात् तैयार किया इस लिये सूर्य निकलनेसे पहले ही धर्मस्वरूप और रामलाल नामके दो मित्र अपने २ घरोंसे निकले-और सैरके लिये बागकी ओर जा रहे हैं। आगे २ राम है और पीछे २ धर्म स्वरूप। धर्मस्वरूपने निकट आकर रामलालको आवाज दी।

धर्मस्वरूप-क्यों भाई, सोते ही रहोगे या कभी जागोगे भी?

रामलाल-आइये साहिब,-धन्य भाग्य जो आपके दर्शन हुए। मैं तो आपका दास हूं लूटनेकी आपने भली सुनाई।

धर्मस्वरूप-मित्रवर, यदि आप सोते न होते, तो प्रतिदिन मुझे भी तो अपने साथ सैरके लिये बुला लिया करते। कहीं आपको दूर जाना पड़ता है।

रामलाल—क्षमा कीजिये, आगेको अवश्य पुछा लिया करूंगा।

धर्मस्वरूप—(बागमें पहुंचकर) देखिये न ! क्या बहार है। बाग नहीं यह तो स्वर्गका नमूना है। कहीं चमेलीके सुहावने फूल हैं तो कहीं मोतियाकी बहार है, कहीं गुलाबकी सुगंधि आ रही है तो कहीं गेंदा खिला हुआ है, कहीं नारंगीके पेड़ हैं तो कहीं अनार खूब बहार दे रहा है। वाह २ ! आज तो पवन भी खूब धीमी धीमी चल रही है। और लोगोंको बागकी सैर करनेके लिए शौक दिला रही है। अर्थात सैरका खूब ही मजा है। आओ भाई कहीं बैठ चलें और लुत्फ उठायें।

रामलाल—जैसे आपकी मर्जी चलिये। यह स्थल पड़ा है वहां बैठिये।

धर्मस्वरूप—(वहां आकर) अच्छा साहिब, फर्माये आज क्या ताजा खबर है।

रामलाल—और तो कुछ नहीं। अभी रास्तेमें मेरे मित्र बा० महावीरप्रसाद मिले थे। उन्होंने कहा है कि आज रातके ८ बजे बिरादरीकी मीटिंग इन्द्रके अखाड़ेमें होगी। और कौमकी उन्नतिके प्रस्ताव पास किये जावेंगे।

धर्मस्वरूप—क्योंजी समयके सम्बन्धमें उन्होंने क्या कहा है—कि समय देशी होगा कि अंग्रेजी !

राम—यह भी क्या समय भी दो प्रकारका होता है !

धर्म—जी हां, अंग्रेजी समयका यह मतलब है कि जब नियत समय पर काम शुरू किया जावे और देशी समय वह कहा जाता है—कि नियत समयसे १ घंटा १½ घंटा पीछे काम शुरू होता है।

राम—आपने जो कुछ कहा है—ठीक है। अंग्रेजी समय हो भी कैसे सकता है। समयकी पाबंदी दो प्रकारसे ही हो सकती है—एक शौकसे और दूसरे डरसे।

धर्म—हैं यह कैसे ? जरा साफ २ तो बताइये।

राम—एक लड़का फुटबालका बड़ा खिलाड़ी है। यदि उसको यह पता लग जावे—कि फलां जगह पर और फलां समय फुटबालका मैच होगा तो वह लड़का पहला लड़का होगा जो नियत समयसे भी पहले वहां हाजर हो जावेगा। यह क्यों ! केवल इस लिए कि उसका दिल उन कामोंमें ही लगा हुआ है। उसको उन कामोंका ही शौक है। क्यों जी आप ला० धनीरामजी साहूकारके पुत्र खोरचंदको भूल गये हैं। जो हमारे महल्लेमें रहता है। प्रातःकाल—शाम दो पहर जिस समय देखो—खेलते ही देखोगे। इसी भांति धार्मिक कार्योंको भी समझिये। कई भाइयोंको धार्मिक कार्योंमें हिस्सा लेनेका बड़ा शौक है। जिस स्थान ठेकदार हुआ करे, जहां सतसंगत हो वहां सबसे पहले और दूसरे समय पर ध्यान हो सकता है—डरसे। डर भी तीन प्रकारका विद्वानोंने फर्माया है—१ आत्मिक डर (२) बादशाह अर्थात हाकमका डर (३) बिरादरीका डर। विद्यार्थियोंका हाल आप जानते हैं। यदि पाठशाला दस बजे प्रारम्भ होती हो—तो उनके अध्यापकके डरके मारे दस बजेसे पहले पहुंच जावेंगे। कचहरीमें हाकमके डरके मारे भी लोग नियत समय पर पहले कोर्टमें चले जाते हैं। आत्मिक डर भी बड़ा-

रहा है और बिरादरीके डरसे लोग डरते रहते हैं।

धर्मस्वरूप–शाबाश रामलाल शाबाश। तुमने बड़ी अच्छी तरह देशी और अंगरेजी समयका मतलब बतलाया और जो कुछ कहा है वो भी ठीक कहा, आज हम जरूर देखेंगे–कि बिरादरीकी मीटिंग किस तरह होती है परन्तु हमें समयकी पाबंदी लाजमी है–ऐसा न हो कि वहां अंगरेजी समय हो जावे–और हम देशी समयके ख्यालमें रहकर मीटिंगकी कार्रवाई न देख सकें।

रामलाल–अच्छा साहिब, मैं ठीक पौने नौ बजे आपको बुला लूंगा–और नौ बजे पंडितके नियत स्थानपर पहुंच जावेंगे।

धर्मस्वरूप–आओ। अब देर हो गई है।

दोनों उठकर अपने घर जाते हैं–और सुबह होते समय जय जिनेन्द्र करते हैं।

२

शामका समय है। सूर्य छुपनेको है। लोग शामका खाना खाने जा रहे हैं। ऐ लो! धर्मस्वरूप और रामलाल भी अपना कामकाज छोड़कर रोटी खाने आ रहे हैं। घड़ीने ८ बजा दिये परन्तु अभी दोनोंमेंसे एक भी घर नहीं आया। जरा धीरज धरिये–एलो–वह दोनों रोटी खा रहे हैं–और इसके बाद मंडपकी ओर पांव उठाये जा रहे हैं।

मंडपका आहाता खूब सजा हुआ है। एक बड़ा भारी शामियाना खड़ा है। भांति २ के मार्टोज (mottos) लगे हुए हैं। फर्शपर रंगबिरंगी दरियें बिछी हुई हैं। एक ओर मेज कुर्सी लगी है मेजपर एक मेजपोश है–जिसपर तिल्लेका काम हो रहा है, डोरीका हाशिया खूब बहार दे रहा है। उसपर दो सुंदर गुलदस्तोंसे दान पड़े हैं–जिनमें गुलाब और भांति २ के फूल अपनी बहार दे रहे हैं–और सारे मंडपको सुगन्धित कर रहे हैं–शामियानेके चारों कोनों पर चार गैस लगे हुए हैं–और इस कदर रोशनी (उजाला) हो रही है–कि सुई भी गिरी हुई ढूंढी जा सकती है। एक तर्फ एक बड़ा क्लोक लगा हुआ है। रामलाल और धर्मस्वरूप यहां पहुंचते हैं।

धर्मस्वरूप–वाह भाई! खूब आनंदकी जगा है। मंडप सजानेवालेने कमाल कर दिखाया है। घड़ीने ९ बजा दिये परन्तु यहां मनुष्य तो कहां चिड़िया भी पर नहीं मारती।

रामलाल–दिखाई देता है कि देशी समय होगा। जरा ठहरिये शायद पांच दस मिनट घड़ी आगे हो।

धर्मस्वरूप और रामलाल दोनों मंडपमें फिरते हैं और हरेक मार्टोजको पढ़ते हैं–किसी पर अंगरेजीमें लिखा है "Be Punctual" समयके पाबंद बनो। किसी पर यह लिखा था–"धर्मके कामसें गर जान भी जाय तो जाने दो" किसीपर यह उपदेश लिखा था "श्री महावीरके सपूतो! गरीबोंकी मदद करो और गिरे हुएको ऊपर उठाओ–और किसीपर यह लिखा है कि "सब पर दया करो और परोपकारी बनो" यह मोटोज पढ़ते जाते हैं और इनकी प्रशंसा करते जाते हैं, इतनेमें रामलालने घड़ी देखी और कहा कि यह तो साढ़े नौ बज गये हैं कोई भी नहीं आया।

या में नफा नहीं तिल मान,
प्रगट हानि है शैल समान ॥
यह विवेक बुद्धि हिरदे धरो;
ऐसी मान भूल मत करो ॥
इतनी विनती पै हठ गहे,
मोह उदय त्याग न कहे ॥
तासों मेरी कछुय नसाय,
लेरी लेय न मारो जाय ॥

दोहा।

सरलचित्त सुनि भेद यह, तजे आप सों आप।
हठग्राही हठ गहि रहे, जिनके पोता पाप ॥
हठी पुरुष प्रति यह बचन, सर्वे अकारथ जाय।
ज्यों कपूरको मेलिये, कूकरके मुख मांय ॥
भुवंदास मन सों कही, यही यथारथ बात।
सुहित जान हिरदे धरो, कोप करो मत भ्रात ॥
सबहीको हित सीख है, जाति भेद नहीं कोय।
अमृत पान जो कोई करे, ताहीको सुख होय ॥

(रतनलाल जैन कुलेराद्वारा 'अहिंसा' में प्रकाशित)

शिक्षा समस्या।

(लेखक-श्रीयुत धन्यकुमार जैन 'सिंह', उत्तरपाड़ा।)

गरीबकी बात बासी होने पर फलती है। मगर यह फलती ही है; तब इसमें अविश्वास करना वृथा है। परंतु आश्चर्य है, तब भी लोग इसे मानना नहीं चाहते ! लोग चाहे माने या न मानें, बात तो सच्ची है—इसमें कुछ संदेह नहीं। जब उसकी बात फलेगी; तब तो इच्छा न होने पर भी, वह माननी ही पड़ेगी। अग्निको यदि अग्नि न मानें; तो वह छोड़ नहीं देती उसे हाथ देते ही वह अपना स्वरूप जता ही देती है।

* * *

स्कूल कहो कालेज कहो, मदर्सा, व विद्यालय कहो, ब्रह्मचर्याश्रम कहो, ऐसे ही जो जीमें आवे; वह कहो, अपने शिक्षालयका जो कुछ नाम रक्खो, उसमें जो कुछ विषय सिखाओ, जैसे मनें वैसे उसे चलाओ, कोई भी बाधा नहीं। परंतु एक बात तुम्हें सबसे पहिले याद रखनी चाहिये कि, विद्यार्थियोंको तुम अपनी समस्त शिक्षाएं देकर उन्हें कौनसे आदर्शमें गढ़ना चाहते हो; मान लो, वह गृहस्थ बन कर रहना चाहते हैं; तो उनको कौनसी शिक्षा प्रणालीसे शिक्षा देंगे, वैसा बननेके लिए तुम उनको किस बातका अभ्यास कराओगे ?

* * *

इसका उत्तर एक ही बातमें दिया जा सकता है, और आचार्योंने दिया भी है। वे ऐसे होने

दूसरेके लक्षणोंका निरूपण किये हम उनका दोषादि नहीं बतला सके अतः उनके द्रव्यकी अप्रमाणता विन सिद्ध किये हम अपनी ही द्रव्यकी सर्वथा प्रमाणता है यह भी नहीं कह सके, तथा।

हते तमांसि द्युमणिर्मणिर्वा विना न काचैः स्वगुणं व्यनक्ति।

अन्धकारके विना सूर्य और काचके विना मणि अपने गुणको प्रगट नहीं करती है उसी प्रकार विना असत (झूठे) द्रव्य लक्षणके हमारा सम्यक द्रव्यलक्षण भी अपने विशद लक्षणकी महत्ताद्योतक नही। इसी आशयका आश्रय लेकर परिकरितर कुछ द्रव्योंका लक्षण और साथ रही उनकी अप्रमाणता भी बताते हैं।

'क्रियावत् गुणवत् समवायि कारणं द्रव्यलक्षणं' यानी क्रिया और गुण युक्त जो समवायी कारण हो उसे द्रव्य कहते हैं। यह द्रव्यका लक्षण वैशेषिक, योग मानते हैं किन्तु इनका यह मानना भी ठीक नहीं है।

क्योंकि वैशेषिक लोगोंने लक्षणका लक्षण असाधारण धर्म वचनं, असाधारण (विशेष) धर्मका जो कहना उसे लक्षण कहते हैं ऐसा माना है।

और इस लक्षणके लक्षणानुसार उक्त द्रव्यका लक्षण घटित नहीं होता क्योंकि ये द्रव्यका लक्षण पृथिव्यादिकों नौ ही में जाता है अतः असाधारण नहीं कहा जा सकता। असाधारण एक ही जगह रहता है यदि असाधारण बहुत जगह रह निकले तो असाधारणत्व की हानि होती है तथा ऐसे असाधारण और साधारणमें कुछ भेद भी नहीं कहा जासकता जब कि असाधारणत्वका नाश होनेसे असाधारण कुछ चीज ही सिद्ध नहीं होगा तो 'यह गो है सींगशाली होनेसे' ऐसे साधारण हो हेतु दिये जायंगे और इस तरह साधारण हेतु देनेसे अतिव्याप्ति दोष होवेगा अतः किसी भी पदार्थकी व्यवस्था नहीं बनेगी यदि यही दोष जैनियोंके यहां भी दिया जाय यानी जैनियोंने जैसे 'सद्द्रव्यलक्षणं' ये द्रव्यका लक्षण माना है और जीवादि द्रव्योंमें वे उस द्रव्य लक्षणकी अनुवृति करते हैं अतः उनके यहां भी तो द्रव्य लक्षण नहीं बनसकता ऐसा आरोप नहीं कर सकते क्योंकि जैन दर्शनानुसार लक्षणका लक्षण असाधारण धर्म वचन नहीं है युक्ति बाधित होनेसे। लकडीके सम्बन्धसे मनुष्यको भी कभी २ लकडी कह दिया करते हैं लेकिन लकडी यह मनुष्यका असाधारण धर्म न होनेपर लक्षण माना जाता है अतः जैन दार्शनिक असाधारण धर्मको लक्षण नहीं मानते अतएव उक्त दोष उनके ऊपर नहीं आसकता बल्कि उन्हींके ऊपर आता है जो कि असाधारण धर्मको लक्षण मानते हैं। दूसरे, जैनियोंके द्वारा स्वीकृत द्रव्यका लक्षण जहां जहां पाया जायगा वहां वहां द्रव्यत्वका निश्चय कर देगा।

(क्रमशः)

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः ।
संबोधयत्यनमिदं प्रवर्त्तताम्, दैगम्बर जैन समाज-मात्रम् ॥

वर्ष १५ वाँ. || वीर संवत् २४४८. चैत्र विक्रम सं० १९७८. || अंक ६वां

विवाहिक कष्ट ।

(ले० पं० गोरेलाल पवाहन)

भाईयो, इस वक्त हमको एकता की चाह है ।
किन्तु हमरे बुजर्गोंको कुछ नहीं परवाह है ॥
वे तो पुरानी रूढियोंके बने पक्के दास हैं ।
किन्तु हम उन रूढियोंसे भोगते अति त्रास हैं ॥ १ ॥
हमको हमारे बाप दादोंने बताया है यही ।
जो करे अपराध कुछ वह जाति खारिज हो सही ॥
यह खारजीय प्रस्ताव हमरे बाप दादोंने किया ।
और उसे स्वीकार हमने अमल उसपर कर लिया ॥
किन्तु अब वह अमलदारी कष्टप्रद हमको बनी ।
जो कभी अमृतमयी थी आज वह विषधर बनी ॥
अतएव यह कुछ लोग जो खारिज हुए हैं जातिसे ।
उन भाईयोंने स्वयं इक फिरका किया दर जातिसे ॥
जाति बहुरीमेन उस फिरकेका सार्थक नाम है ।
मानो हुई तैयार एक नवीन जाति विराम है ॥
यह जाति उत्पत्ति मार्ग पर बढ़ती गई उत्साहसे ।
है मुख्य कारन एक इसका जो बताऊँ अपने ॥
जातिके धनवान पुरुषोंने मनाया है इसे ।
देखिये कैसा रसातलमें पठाया है हमें ॥
जिन धनिकों पुरुषोंने अपनी स्वार्थताके वस्ते ।
जातिमें उत्पन्न कर दी रूढियां बहु तावसे ॥
इस समय हमरे सिंघईजीका पुत्र है दश सालका ।
पढ़ना लिखाना दूर है है सोच उसके ब्याहका ॥
सभ्यजन इस जालमें फंसते नहीं हैं जानकर ।
जो ब्याहदे पुत्री इन्होंके पुत्रको अज्ञान घर ॥
इनके बराबर जो धनी यदि होय इनके भावका ।
तो ब्याह पुत्री देय इनके पुत्रको यदि चावका ॥
यदि हो न ऐसा तो इन्हें फिर खोलना हैं तिजोड़ियां
निर्धनोंके निकट रूपयोंकी लगावें ढेरियां ॥
कुछ लोग ऐसे हैं बने जो रोटियोंके दास हैं ।
दललाळै उनका नाम इसमें करें पूर्ण प्रयास हैं ॥
पानसौ या हजार अपनी जेबमें पहिले धरें ।
फिर दश सहस्र थैलियां ले निर्धनोंका घर भरें ॥
निर्धनी कप लोभसे दिलसे नहीं कुछ सोचते ।
पास रूपयोंकी निरखकर धर्मसे दिल मोचते ॥
हे ! लोभ तेरा हो बुरा तूने इन्हें अंधा किया ।
हम पुत्रियोंको बेचते हैं यों न सोचा अपना किया ॥
इस तरह धनवान पुरुषोंने विवाहे पुत्र हैं ।
यह रूढि बाल विवाहकी धनकोंने की सर्वत्र है ॥
अब और भी धनवान पुरुषोंकी कथा कुछ कह रही ।
जिसके कथन करनेको मेरी लेखनी अति डर रही ॥
पर धीर कर साहस निडर हो लेखनी तैयार है ।

लिख रही अब और धनियोंकी कथाका सार है॥
इन धनी पुरुषोंके यदि पुत्री विवाहिक योग है।
तो धनीके ही घर विवाही जाय महँ सुख भोग है॥
धनवानका यदि पुत्र चाहे मूर्ख पौरुष हीन हो।
पुत्री विवाहेंगे उसे वह देहसे भी हीन हो॥
निर्धनोंके पुत्र चाहे सर्व गुण सम्पन्न हों।
सुन्दर स्वरूप शरीरवत अरु हृदय महान हों॥
किन्तु उनके वास्ते कोई न देवे पुत्रियां।
धनवान कैसे व्याह दे उन निर्धनोंको पुत्रियां॥
यदि निर्धनोंसे यह यहँ पुत्रियां तुम व्याह दो।
तो कहेंगे प्रथम हमरी थैलियां तुम व्याह दो॥
पांचसौ या हजार कोई मांगते दिल खोलके।
कोई मानो मांगते हैं लड़कियोंके तौलके॥
निर्धनोंके पास नाही भरी है तीजोड़ियां।
जो खोलकर देवें उन्हें अरु व्याह लेवें लड़कियां॥
इस हेतु ही सुत निर्धनोंके व्याहसे वंचित रहें।
अरु व्याहसे मुख मोड़कर वे ब्रह्मचारी ही रहें॥
बहुतसे इस जाति ही को त्याग देते अंतमें।
जाति लहुरीसेनमें निज व्याह करते अंतमें॥
सन्तोष धर संयम गहेंगे वृद्ध भी अति हर्षमें॥
फिर न कोई पुरुष लहुरीसेनमें घुस पायेंगे।
जातिकी संख्या दिनोंदिन वे बढ़ाते जायेंगे।
जाति च्युत होंगे न कोई, पाप भाग जायेंगे।
धर्मसे कर प्रीत वोही सद्गृहस्थ कहायेंगे॥
हे! भाईयों अपने हृदयकी भावना तुमसे कही।
अब बंद करता लेख यह मम लेखनी भी थक रही॥
बांचकर यह लेख मेरा जातिकी जय बोलदो।
कहैं "गोरेलाल" सहायक फंड जल्दी खोल दो॥

—⊙—



श्रुतपंचमी आती है।

आगामी ज्येष्ठ सुदी ५को हमारा श्रुतपंचमी पर्व आ रहा है। यदि हमारे शास्त्रोंकी सम्हाल और विनय करनेका कोई पवित्र दिन है तो यही श्री श्रुतपंचमी पर्व है। श्री भूतबलि और अर्हद्बलिने जिनवाणीकी कैसी भक्ति की थी सो पाठक याद करेंगे तो मालूम होगा कि जिनवाणीका महत्व और उपयोगिता कितनी है परंतु वर्षोंसे विराजते रहनेपर भी हमारे अनेक शास्त्र भंडार ताळोंमें बंद पड़े हैं, उनके उद्धारका कोई निमित्त कारण है तो वह यही श्रुतपंचमी पर्व है। हरएक स्थानमें यह पर्व मानना चाहिये अर्थात् हरएक मंदिरके शास्त्र ... ... शुद्धि ... चौकी पर विराजमान करके पूजा पढ़नी चाहिये, ... होने ...

यथाशक्ति शास्त्रदान भी करना चाहिये। वेष्टनों में शुद्ध गाढ़ेका ही उपयोग होना चाहिये।

* * *

देवेन्द्र प्रेस कंपनी।

हमारे पाठक जानते होंगे कि मदरासके श्रीयुत सी० एम० मल्लिनाथजी एक उत्साही धर्मप्रेमी युवक हैं जो आजकल अंग्रेजी 'जैन गेझेट' मासिकका कार्य उत्तमतासे संपादन कर रहे हैं और इससे विशेष आपने एक प्रेस कंपनी निकालनेका प्रबंध किया है। स्वर्गीय कुमार देवेंद्र प्रसादजीकी स्मृतिमें प्रेसका नाम 'देवेंद्र प्रिंटिंग एन्ड पब्लीशिंग कंपनी' रक्खा है। १०) के १०००० शेर निकाले हैं जिससे १००००) की रकम होगी। शेरके दश रुपये भी पांच हप्तेसे भरनेका है। प्रेसका उद्देश जैन साहित्यके ग्रन्थ, पत्रादि छापकर प्रकट करनेका तथा प्राचीन जैन ग्रंथोंकी रक्षा व उद्धार करनेका है। सबको एक २ शेर लेना चाहिये।

पत्रव्यवहारका पता—सी० एम० मल्लीनाथ, मैनेजर जैन गेझेट २१ पेरीश वेंकट चाल मोपर स्ट्रीट—मद्रास।

* * *

ઇડરની પચને સુચના.

ગુજરાતની જગઅગ્રીસીમે ચડેલા ઇડરની ગાદીના કહેવાતા ભ. વિજયકીર્તિ (ઉર્ફે મોતીલાલજી) આ- મદાવાદથી પલાયમાન કરી વડનગરમાં રહેલા અને ચિરદોદક વગેરે રોગથી એક માસ થયાં કાળને વશ થયા છે એવી ખાતરી અમને શેઠ લલ્લુભાઇ પ્રેમીચંદ દ્વારા મળી હતી, પણ આ બાબત ઇડર થી કાયમ લખતા છતાં કંઇ સમાચાર ન મળ- વાથી એ બાબત શંકા ઉભી થવાથી અમે પોસ્ટ- કાર્ડ પત્ર લખેલો જેનો ઉત્તર શા. રેવચંદ હેમચંદ તરફથી એવો મળ્યો છે કે "ભ. વિજયકીર્તિ વડનગર છે પણ તેઓ મરણ પામ્યા નથી, કારણ કે તેઓ એકાદ અઠવાડીઆ ઉપર ગામ જંત્રાલ- ના આપણી ગામના ભાઇઓના જોવામાં આવ્યા હતા એમ તેઓ કહેતા હતા" આથી અમોને હજુપણ એ બાબત શંકા રહે છે માટે કોઇ ભાઇ ચોક્કસ સમાચાર લખી મોકલશે તો આભાર થશે.

હવે ઇડરના ભાઇઓને અમારે એજ નિવેદન કરવનું કે તમે તો એને પદભ્રષ્ટ કરી ચુક્યા છો પણ હવે પછી કોઇ બીજાના લોભમાં વળી ફસાશો નહિ અને સૌથી પ્રથમ કર્તવ્ય ઇડરના શાસ્ત્ર ભંડારનો ઉદ્ધાર કરવાનુંજ કરજો. બ્રહ્મચારીજી શીતલપ્રસાદજી અમને લખે છે કે આ વર્ષે જો ઇડર કે નાગોરના ભાઇઓ શાસ્ત્ર ભંડારનો ઉદ્ધાર કરવાની કબૂલાત સાથે આમંત્રણ કરે તો એ બેમાંથી એક સ્થળે મારો વિચાર ચાતુર્માસ કરવાનો છે તો આ સોનેરી તક ઇડરના ભાઇ- ઓએ જવા દેવી જોઇએ નહિ અને તરતજ પંચે એકત્ર થઇ બ્રહ્મચારી શીતલપ્રસાદજીને ઇડરમાં ચોમાસું કરવાને આમંત્રણ કરવું જોઇએ. આમં- ત્રણમાં શાસ્ત્ર ભંડારનો ઉદ્ધાર કરવાની કબૂલાત તો લખવીજ જોઇએ. અમે ખાત્રીપૂર્વક કહીયે છીએ કે બ્રહ્મચારી શીતલપ્રસાદજી જો ઇડરમાં ચાતુર્માસ કરે તો ઇડરના ભાઇઓને અને શાસ્ત્ર ભંડારને અપૂર્વ લાભ થયા વગર રહેશે નહિ.

* * *

સોજીત્રાની લગ્નસરા.

અમારા ગુજરાતના વીશાનેવાડા બંધુઓનો લગ્નગાળો સોજીત્રામાં બારસે છે અને એક દિવસે નહિ પણ વૈ૦ સુદી પુનેમ સુધી જુદા જુદા લગ્નો થનાર છે એ જાણી અમો ખુશી થયા છીએ પણ વિશેષ ખુશી તો ત્યારેજ થાય કે જ્યારે એ બધા લગ્નો મિથ્યાતી રૂઢીથી ન થતા જૈન વિધિથી થય. જૈન લગ્ન વિધિનું ગુજરાતી પુસ્તક પણ મોહન-

લાલ રુઘુરદાસ કાણીસાવાળાએ પ્રકટ કરેલું છે તે એવું છે કે સામાન્ય માણસ પણ આ વિધિ કરાવી શકશે. વળી આ લગ્નગાળા પ્રસંગે બીજું કંઇ નહિ બની શકે તો એટલું તો અવશ્ય થવુંજ જોઇએ કે પંચે મળી બાળ સગાઈ અટકાવવાનો ફરજ્યાત ઠરાવ કરવો જોઇએ અર્થાત્ નાની ઉમરમાં છોકરા છોકરીઓની સગાઇ કરી દેવાનો રિવાજ ફરજયાત બંધ કરવો જોઇએ. એમાં ઓછામાં ઓછા ૧૨ વર્ષની ઉમર થયા વગર છોકરીની અને ઓછામાં ઓછા ૧૪ વર્ષની ઉમર થયા વગર છોકરાની સગાઇ ન કરવી અને જો કોઇ કરે તો તેને માટે ઘણો ભારે અંકુશ મુકવો જોઇએ. ગુજરાતમાં મેવાડા કોમ કેળવણીમાં આગળ પડતો ભાગ લઇ રહી છે તો બાળસગાઇનો હાનિકારક રિવાજ શું હજુ પણ નહીં બંધ કરે! આશા છે કે આ લગ્નગાળા પ્રસંગે આ ભાઇઓ ન્યાતિ સુધારનાઉપયોગી ઠરાવો જરૂર કરશે.

भारतके हस्तलिखित जैन ग्रन्थकी सूची।

मान्यवर सद्धर्मी बंधुगण !

कलकत्तेकी श्री जैन साहित्योद्धार समिति समस्त भारतवर्षके हस्तलिखित जैनग्रंथोंकी सूची तैयार कर रही है। अनेक स्थानोंकी सूचियां प्राप्त हो गई हैं। आपके स्थानके हस्तलिखित जैन शास्त्रोंकी सूचीकी अति आवश्यकता है। आशा है आप शीघ्र अपने यहांकी सूची तैयार करके मेजनेकी कृपाकर धर्मके कार्यमें सहायता पहुंचायेंगे। आपके थोड़ेसे परिश्रमसे नीचे लिखे अनेक लाभ होंगे—

(१) आप जानते हैं कि किसी स्थानमें एक ही ग्रंथकी १०—२० प्रतियां हैं और दूसरे स्थानमें उसी ग्रंथकी एक भी प्रति नहीं है। वह सब जगहकी सूची एक साथ लिख जानेसे मालूम हो जायगा।

(२) कहीं कहीं ऐसे ग्रन्थ भी हैं जिनकी प्रतियां बहुत ही अल्प हैं।

(३) किसी किसी स्थानमें ऐसे भी ग्रंथ हैं जो और कहीं भी नहीं हैं।

(४) कहीं २ अति प्राचीन ग्रन्थ हैं जिनकी प्राचीनता सुनने मात्रसे मनुष्योंको दर्शन करनेकी इच्छा होती है।

(५) कितने ही ग्रन्थोंके नाम तो मिलते हैं पर ग्रन्थ नहीं मिलते ऐसे ग्रन्थोंके भी दर्शन हो सकते हैं।

(६) कितने ही ग्रंथ जैनियोंके अजैनोंने चोरी करके कर्ताका और ग्रंथका नाम बदलकर अपना लिये हैं वे पकड़े जा सकते हैं।

(७) कितने ही शास्त्र जो अभी तक अपूर्ण हैं वे पूर्ण हो सकेंगे।

(८) हमारी शिथिलताके कारण हमारे लाखों शास्त्र म्लेच्छोंके हाथमें चले गये।

(९) *सारा संसार इस बातको मानता है कि* जिस जातिका साहित्य बड़ा (बहुत) है वह जाति दिनोंदिन उन्नति करती है।

(१०) हमारे जैन साहित्यसे बढ़कर संसारमें और कोई भी साहित्य बराबरी नहीं कर सकता।

(११) हमारे जैन आचार्य आज्ञा दे गये हैं कि जैनसाहित्यकी रक्षा तथा प्रचार, तन मन धनसे करो। जो जैनसाहित्यकी प्रभावना करता है शास्त्रमें वही धर्मात्मा है। अभी हमारे जैनी भाई शास्त्रदान करते हैं पर जहां एक शास्त्रकी

१० प्रतियां मौजूद हैं वहां एक प्रति और दान करनेसे इतना लाभ नहीं हो सकता जितना कि उस जगह देनेसे, जहां उस ग्रन्थकी एक भी प्रति मौजूद नहीं है।

हमारे पास जरमनी, इटाली, फ्रांस, अमेरिका, लंदन आदिके हस्तलिखित ग्रन्थोंकी सूची है जिसे देखकर हृदय दुःखित होता है पर उपाय कुछ भी नहीं है। अब हम लोग यह बंदोबस्त करना चाहते हैं कि उन पुस्तकोंमें जो अलभ्य पुस्तक हैं उनकी नकल करवाकर मंगवा ली जाय।

हमारा साहित्य (शास्त्र) अनेक तो लोप हो गया और अनेक होता जाता है अब हम जैनियोंका कर्तव्य है कि जिस तरह हो हमको अपने बचे हुए साहित्यकी रक्षा करनी चाहिये जिससे हमारे सत्य धर्मकी भी रक्षा हो सके।

जो सूची हम बना रहे हैं इससे सारे जैन भाईयोंका लाभ होगा। हमारे धर्मकी रक्षा भी होगी, हमारे शास्त्र नष्ट होनेसे बच जायगें इत्यादि।

अतएव आपका कर्तव्य है कि इस कामको जितना जल्दी हो सके आप पूराकर हमारे पास सूची बना कर भेज देवें।

सूची इस प्रकार बनानी चाहिये—

ग्रन्थका नाम, ग्रंथ कर्ता या टीकाकारका नाम, अध्याय संख्या, विषय, भाषा, लिपि, ताडपत्र या कागज पत्रसंख्या, श्लोकसंख्या और ग्रन्थका संवत, उपर्युक्त सब बातोंका पता ग्रन्थके अंतिम पत्रमें मिल जायगा।

सूची भेजनेका पता—छोटेलाल जैन।
पोस्टबक्स नं ६७१६ कलकत्ता।

समाचार–सूचनाएँ।

महावीर केवलज्ञान जयंती हमारे परम पूज्य अंतीम तीर्थंकर श्री महावीर प्रभुको वैशाख शुक्ल १०को केवलज्ञान हुआ था तब उस समयके लोगोंको उनके ज्ञानसे बहुत लाभ हुआ था तो ऐसे शुभ दिवसको स्मरणमें रखनेके लिये महावीर केवलज्ञान जयंती वैशाख सुदी १०को माननेके लिये पूजन भजन करनेका नियम लेना चाहिये और सभा करके केवलज्ञानके विषय पर व्याख्यान होनेकी आवश्यकता है।

हीराचंद मलूकचंद कक–पोलपुर।

रोहतकमें वेदी प्रतिष्ठा—देहलीकी प्रतिष्ठामें रोहतकसे एक चांदीकी प्रतिमा प्रतिष्ठाके लिये भेजी गई है उनको वेदी पर विराजमान करनेके लिये रोहतकमें वैशाख सुद १३से १५ तक रथोत्सव होगा जिसमें बडे २ विद्वान व उपदेशक भी पधारेंगे।

दिगंबर जैन पुस्तकालय–सूरतका नवीन सूचीपत्र अभी ही तैयार हुआ है जिसके ४८ पृष्ठोंमें हिन्दी, गुजराती, अंग्रेजी तथा संस्कृत भाषाके जैन तथा सामान्य करीब ५०० ग्रन्थोंका मूल्य सहित परिचय है। यह सूचीपत्र कार्ड लिखनेपर बिना मूल्य मिलता है।

मैनेजर, दि० जैन पुस्तकालय–सूरत।

યાત્રાનો સંઘ અને ધર્મ પ્રભાવના— પેટલાદ નિવાસી સંઘવી છગનભાઈ હરિભાઈની વિધવા ચંચળબાઈએ બ્ર. સુરેન્દ્રકીર્તિ સાથે ગિરનાર પાલીતાણાની યાત્રાનો સંઘ કાઢ્યો હતો, તે દરમ્યાન સુદે પાલીતાણામાં મોટો રથોત્સવ કર્યો હતો. તે

પછી ફાગણવદ ૧ ને દિને સંઘ ભાવનગર આવતાં પંચે ઉત્તમ સ્વાગત કર્યું હતું. ત્યાં વદ ૪ને દિને સંતોકબ્હેન જૈન પાઠશાળામાં મેલાવડો કરવામા આવ્યો હતો જે સમયે ચંચળબાઇએ પોતાના પતિની યાદમાં ચૈત્ર સુદ ૩ ને દિને મેલાવડો કરી બાળકોને ઇનામ વેંચવા રૂ. ૭૫) સ્થાયી તરીકે આપ્યા હતા તથા ભાવનગર ઘોવામા કમાનું લ્હાણું કર્યું હતુ. તેમજ મઢોલીવાળા પરશોતમ-દાસ તરફથી લ્હાણું થયું હતું તેમજ સંઘના ભાઇઓએ પણ રૂ. ૪૦) ઇનામ ફંડમાં ભર્યા હતા. વળી સર્વે સંઘને શેઠ ભગવાન છગને જમણ આપ્યું હતું. ઘોઘામા પણ સંઘને સારો સત્કાર મળ્યો હતો.

લલ્લુભાઈ નરોતમદાસ ધામી.

महासभा-के मथुरा विद्यालयकी प्रबंधक कमेटी चौरासी मथुरामें आषाढ वदी १ को मिलनेवाली है।

ब्यावरमें-वेदी प्रतिष्ठा और भारत० दि० जैन खण्डेलवाल महासभाका दूसरा अधिवेशन ज्येष्ठ सुदी ५को होगा। यह स्थान अजमेरके पास ही है।

स्या० महाविद्यालय-काशीमें वैशाख सुदी १से डेढ माहकी छुट्टी हुई है और आषाढ बदी २ को विद्यालय खुलेगा। नवीन प्रवेश होनेवाले छात्र हमसे फार्म मंगा लेवें।

सुमतिलाल, मंत्री।

मैयालालजी चौधरी-का स्वर्गवास हो गया। आपके वियोगसे परवार समाज और छिंदवाड़ा दमोहकी जनताको बड़ी क्षति पहुंची है। आपके स्मरणमें दमोहके पंचोंने ता. १९-४-२२को निश्चय प्रस्ताव किया है कि हम लोग अपने स्वर्गीय नेता श्री० मैयालालजी चौधरीकी यादगारमें यह प्रण करते हैं कि जब तक रा० महात्माजी हुक्म न देंगे विदेशी कपड़ा नहीं मगावेंगे। कोई मंगायगा तो उनसे १०१) या विशेष दंड लिया जायगा।

शोकजनक मृत्यु-पं० उदयलाल काश-लीवालको जैन समाज अच्छी तरहसे जानती है क्योंकि आपने बहुतसे संस्कृत ग्रन्थका हिन्दी अनुवाद करके प्रगट किया है तथा बम्बई जैन साहित्य प्रचारक कार्यालय भी निकाला है तथा अभी गांधी हिन्दी पुस्तक भंडार भी निकाला है और हिन्दी साहित्यके कई ग्रंथ निकाले हैं। प्रथम आपकी प्रतिष्ठा जैन समाजमें बहुत थी परंतु जबसे आपने विधवा विवाह कर लिया आपकी प्रतिष्ठा जैन समाजमेंसे घट गई थी यहां तककि आप जातिच्युत किये गये थे व बम्बईमें मंदिर व्यवहार भी बंद (जो कि अनुचित था) किया गया था और अभी खबर मिली है कि आपका देहांत हो गया जिससे साहित्य संसारको बडी क्षति पहुंची है। हम आपके आत्माको शांति चाहते हैं।

दायभागके ग्रंथ चाहिये-जैन दायभाग तैयार करनेके लिये दायभागके ग्रन्थोंकी आव-श्यकता है। १ भद्रबाहु संहिता, २ अर्हन्नीति, ३ वर्द्धमान नीति, ४ इंद्रनंदि जिन संहिता, ५ एक संधि संहिता इन ग्रन्थोंकी आवश्यकता है। जहां जिनके भंडारमें ये सब या कोई भी ग्रंथ होवे उसकी सूचना हमें देना चाहिये। हमारा पता-चम्पतरायदास जैन मु० सरनऊ पो० नोई (एटा)

स्या० महाविद्यालय काशी-का १६ वां वार्षिकोत्सव मं० गणेशप्रसादजी न्यायाचार्यके

सभापतित्वमें ता० २५–२६ अप्रैलको होगया। ब्र० शीतलप्रसादजी खास पधारे थे, और काशीके बहुतसे अगुए व विद्वान पधारे थे। विद्यार्थियोंने संस्कृत व हिंदीमें स्याद्वाद, पुरुषार्थ, परोपकार, षट्द्रव्य आदि पर मनोहर व्याख्यान दिये थे। रिपोर्टमें बताया गया कि छात्राश्रम १०००) की लागतका बन गया है जिसमें २०००)की घटी है। दूसरे दिन ता० ब० द्वारकाप्रसादजीके सभापतित्वमें आम सभा हुई थी जिसमें पं० सतीशचन्द्रने संस्कृतमें 'जैन धर्मकी महिमा' पर, अन्य छात्रोंने धर्म, सुख, एकता, तथा जैन इतिहास पर व्याख्यान दिये, बादमें पं० राजकुमार शास्त्री ने 'अहिंसा' पर कहा, वर्णी गणेशप्रसादजीने जैन सिद्धांतपर कहा और ब्र० शीतलप्रसादजीने आत्म धर्म व प्रचार, देश सेवा व स्वदेशी वस्तु व्यवहारपर प्रभावशाली व्याख्यान दिया था। इन व्याख्यानोंका काशीमें बहुत प्रभाव पड़ा है। विद्यालयको १८६) की सहायता भी मिली थी।

देवबन्द–में जैठके समय कोन्फरेंस सभा तथा स्त्री सभा हुई थी जिसका हाल आगे प्रकट होगा।

बम्बईमें सरस्वति भवन–झालरापाटनके ऐलक पन्नालाल जैन सरस्वति भवनकी शाखारूप इस नगरका बड़ा भारी सरस्वति भवन बम्बईमें सेठ सुखानंदजीकी धर्मशालामें ज्येष्ठ सुदी ५को प्रात काल विधिपूर्वक खुलेगा।

कंपिलाजी–में दि० जैन बुंदेलखंड सभाका अधिवेशन हो गया। रेशमी वस्त्रका बहिष्कार आदि प्रस्ताव हुए तथा मैनपुरीका जैन नाटक भी हुआ था।

जिन मंदिर व्यवस्था फंड–बम्बईमें ता० २–३ अप्रैलको भारत दि० जैन तीर्थक्षेत्र कमेटीकी जनरल मीटिंग हुई थी जिसमें श्वे० जैन भाइयोंकी सूचनानुसार तीर्थोंके झगड़ेका निपटेरा करनेके लिये अपनी ओरके २० महाशय नियुक्त किये गये थे तथा मंदिर और प्रतिमाओंकी अविनय रोकनेके लिये "श्री जिन मंदिर व्यवस्था फंड" खोलनेका प्रस्ताव हुआ और उसमें तुर्त ही १५०१) ला० देवीसहायजी फिरोजपुरने और १५०१) ला० जम्बूप्रसादजी सहारनपुरने देना स्वीकार किया है। अन्य श्रीमानोंको भी इस फंडमें सहायता भेजनी चाहिये।

आवश्यकता–तीर्थक्षेत्र कमेटीको इन्सपेक्टरों, मुनीमों और पुजारियोंकी आवश्यकता है। प्रार्थनापत्र–चुन्नीलाल हेमचन्द, महामंत्री, हीराबाग, बम्बई ४ को भेजना चाहिये।

बम्बई श्राविकाश्रम–में ता० २४–४–२२ से ता० ६–६–२२ तक गर्मीकी छुट्टी हुई है।

त्यागी मन्नालालजीका स्वर्गवास–हमारे पाठक त्यागी मन्नालालजीको अच्छी तरह से जानते हैं। प्रथम दिनोंमें आप क्षुल्लक वेषमें रहे थे और आपकी मान्यता खूब थी परन्तु पीछे पांच सात वर्षोंमें आपकी मान्यता इस लिये घट गई थी कि आप परिग्रह रखते थे और आपने खंडवेमें अपनेको दर्शन प्रतिमाधारी बनाया था। खेद है कि आपकी ६० वर्षकी आयुमें कटकमें गत मासमें स्वर्गवास हो,

गया। आप महारौनी (झांसी) के निवासी थे और आपके कुटुंबी भी धर्मी हैं। हम आपके आत्माको शांति चाहते हैं।

कुंथलगिरी-के कुलभूषण ब्र० आश्रममें आजकल ७९ छात्र शिक्षा पा रहे हैं। रहने, भोजन आदिका उत्तम प्रबंध है।

बड़नगर अनाथालय-दि० जैन समाजके असहाय अनाथ बालकोंकी रक्षा शिक्षाका उचित प्रबन्ध करनेके उद्देश्यसे दि० जैन मालवा प्रां० सभाकी ओरसे बड़नगर (मालवा) में इस परोपकारी संस्थाकी स्थापना हुई है। अभीतक १८ अनाथ प्रवेश हो चुके हैं।

प्रवेश समय अनाथोंकी दशा अति शोचनीय थी, कई धर्मका नाम भी नहीं जानते थे, कई पेट रहित पहिने रुक्ष शरीर, अक्षर विहीन, रोगोंसे अत्यन्त दुखी थे। स्नान और चिकित्सा द्वारा उनका शरीर निरोग किया और खानपान, कपड़ोंका उत्तम प्रबंध किया गया। धार्मिक और लौकिक शिक्षा का प्रबंध इस खूबीसे किया गया है

विनामूल्य पवित्र औषधियां-यहांसे हैजा, प्लेग, इन्फ्लुएंजा, पक्षाघात, मृगी, सर्प विष आदि कठिन व अनेक साधारण रोगोंकी औषधियां पोस्ट पेकिंग खर्च मात्रसे विनामूल्य भेजी जाती हैं। भारतमें १८२२ शाखाएं खुल चुकी हैं। आफ्रिका आदि देशोंमें भी प्रचार हो रहा है। यहांकी औषधियोंसे की सदी ९० के हिसाबसे हजारों रोगियोंको फायदा पहुंचा है जिनके अनेक प्रशंसापत्र मौजूद हैं। ऐसी उपयोगी औषधियोंका प्रचार घर २ में करके सर्व साधारणके प्राण धन धर्मकी रक्षा करना चाहिये और बन सके जिस प्रकार सहायता पहुंचा कर इस महत्व पुण्य कार्यमें सर्व बन्धुओंको भाग लेना चाहिये।

मैनेजर, शुद्ध औषधालय-बड़नगर (मालवा)

महावीर जयंती-कारंजामें श्री बलीटके सभापतित्वमें उत्सव हुआ था। महाजन वकीलने व्याख्यान दिया था और ९००-१०० आदमियोंको फलाहार कराया था। बोदनाने पूजन, भजन, रथयात्रा, रौशनी आदि [illegible]

षट्द्रव्यकी आवश्यकता और सिद्धि । (गतांकसे आगे)

प्रतिपक्षी (शङ्काकार)—जैनियोंके यहां जैसे जहां २ द्रव्यका लक्षण रहेगा वहां वहां द्रव्यत्वका निश्चय करा देगा उसी तरह हमारा भी द्रव्य लक्षण जहां २ रहेगा द्रव्यत्वका निश्चय करा देगा।

(जैनी)—आप ऐसा नहीं कह सकते क्योंकि आप तो द्रव्यका लक्षण द्रव्यसे सर्वथा भिन्न मानते हैं; यदि अभिन्न मानेंगे तो स्वसिद्धान्त हानि होगी।

(प्रतिपक्षी) द्रव्यत्वके योगसे हम द्रव्य सिद्ध कर देंगे।

(जैनी) ऐसा करनेसे तो उपचारसे ही द्रव्यको सिद्धि होगी क्योंकि—" मुख्याभावे सतिप्रयोजने उपचारः प्रवर्तते " मुख्यके न रहनेपर और प्रयोजनके होनेपर उपचारकी प्रवृत्ति होती है।

अस्तु तुष्यतु दुर्जनः न्यायसे आपका द्रव्यलक्षण सिद्ध भी मान लिया जाय तथापि पृथ्वी, अप, तेज, वायु, मनमें ही उपर्युक्त द्रव्यका लक्षण जाता है। आकाश, काल, दिशा आत्मामें नहीं जाता अतः पक्षाव्यापक होनेसे द्रव्य लक्षण आदरणीय नहीं कहा जा सकता।

(प्रतिपक्षी) आकाश, काल, दिशा, आत्मामें गुणवत् समवायिकारणं यह द्रव्यका लक्षण संघटित हो जायगा अतः हेतु पक्षाव्याप नहीं हुआ।

(जैनी) ऐसा कहनेसे दो लक्षण द्रव्यके सिद्ध हो गये एक " क्रियावत् गुणवत्समवायि कारणं" दूसरा 'गुणवत समवायिकारणं'।

जब दो लक्षण सिद्ध हो गये तो द्रव्य पदार्थोंकी इन दो लक्षणोंसे सिद्धि होनी चाहिये अतः पुनः द्रव्यका लक्षण निर्दोष नहीं कहा जा सकता, जिससे कि पृथ्वी आदि नव द्रव्योंकी सिद्धि हो सके और फिर—" समवायसम्बन्धावच्छिन्न गन्धत्वावच्छिन्न येयता निरूपिताधिकरण तावत्वं गन्धवत्वं" इत्यादि पृथ्वीका लक्षण नहीं बन सकता। क्योंकि लक्ष्य द्रव्यकी विना सिद्धि किये लक्षण नहीं बन सकता।

सांख्य अर्थ क्रिया कारित्व ही वस्तुका लक्षण मानते हैं—

इनका कहना भी ठीक नहीं है क्योंकि मुक्तजीव नोकर्म भावावरणसे सर्वथा मुक्त हो गये हैं उनके क्रियाके अभावसे अवस्तुताका प्रसंग आता है। कोई कहे कि हम मुक्तोंमें भी क्रिया मान लेंगे तो उसके मतमें मुक्त जीवको कर्मापनका ही उच्छेद हो जायगा क्योंकि संसारी क्रियावान् है सकर्मक होनेसे। जो जो सकर्मक होते हैं वे ही क्रियावाले होते हैं जैसे कि स्पन्दादुर्ध्व। इस अनुमानमें सकर्मक और क्रियावान्का आपसमें अविनाभाव सम्बन्ध बतलाया है। मुक्तोंमें सकर्मकत्व हेतु न रहनेसे क्रिया नहीं मानी जा सकती, यदि

कोई ऐसी शंका करे कि मरण पश्चात् जीव दुसरी गतिको जाता है उस समय इसके कोई कर्म नहीं होते हैं तथापि दुसरी गतिके लिए गमनरूप क्रिया करता ही है, यह भी ठीक नहीं क्योंकि विग्रह गतिमें जीवके कार्माणकाययोग रहता ही है। क्रिया उत्क्षेपण अवक्षेपण, आकुञ्चन, प्रसारण, गमन इस तरह पांच प्रकार बतलाई गई है। मुक्तोंमें उक्त पांच क्रियाओंमेंसे कोई भी क्रिया नहीं देखी जाती अतः मुक्त सक्रिय नहीं हो सक्ते हैं और निष्क्रिय होनेसे अवस्तुताकी आपत्ति आती है अतः वस्तुका लक्षण अर्थक्रियाकारित्व भी नहीं मानना चाहिये। वैशेषिक 'वस्तुका लक्षण सत्तारूप है' ऐसा ही मानते हैं, उनका यह लक्षण मानना भी समुचित नहीं है क्योंकि सत्तासे उनने महासत्ता मानी है और उस महासत्ताको वे नित्य ही मानते हैं अतः सिद्ध नहीं हो सक्ती।

सभ्य महोदय! पूर्वोक्त कथनमें द्रव्यके लक्षणकी परीक्षा करनेके लिए द्रव्यका लक्षण अच्छी तरह तर्क कसौटी पर चढ़ाया गया है। अब अगाड़ी मुझे आपके सामने यह और पेश करना है कि द्रव्य कितनी हैं और किस किसने कितनी मानी हैं।

यह बात भली भांति विदित होगी कि पदार्थको प्रत्यक्षगत करके ही तुलना की जाती है। उससे पदार्थका जितना विशद ज्ञान होता है उतना अनुमानादिसे नहीं होता। तुलनाको हमें कमसेकम द्विष्ठ अवश्य मानना चाहिये क्योंकि तुलना विना पदार्थान्तरके नहीं होती, जैसे कि काले रूपके रहनेसे ही शुक्ल रूपकी महत्ता या अन्धकारके रहनेसे प्रकाशकी, रात्रिके होनेसे दिनकी, मूर्खसे विद्वान्की, तथैव द्रव्यके सम्यक् लक्षणकी भी द्रव्यलक्षण मासोंसे महत्ता है और द्रव्यसंख्याकी महत्ता भी तभी प्रमाणता को प्राप्त होती है जब कि द्रव्यसंख्याभास (झूंठी द्रव्यकी संख्या) हो अतः दार्शनिकों पर कल्पित द्रव्यसंख्याको लिखकर और उसका खण्डन करके स्वयं उनी जैनियोंके द्वारा कल्पित संख्याके सिद्ध करनेमें यही तात्पर्य है।

जिस तरह दर्शनोंके द्वारा स्वीकृत द्रव्यके लक्षण भिन्न २ होने पर भी सुलक्षणताको नहीं प्राप्त होते हैं उसी तरह अन्य महाशयों द्वारा निर्धारित द्रव्यकी संख्या भी ठीक २ प्रतीत नहीं होती। किन्ही २ की मानी हुई संख्या किसी न किसी भेद करके रहित और किन्हीं २ किन्हीने उस द्रव्यकी संख्या वृद्धिके लिए पुनरुक्तको भी दोष नहीं माना है।

"द्रव्यादि रणवृत्ति सत्ताभिन्न मादिमत्संसृष्टस्यैव लक्षणं" इस द्रव्यके लक्षणको स्वीकार करने वाले वैशेषिक सात पदार्थ द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय और अभाव मानते हैं। यहां उनका स्वतन्त्र सिद्धान्त बताकर पुनः मैं जैनियोंके द्वारा कल्पित संख्याकी तुलना करता हुआ वैशेषिकोंकी अभिमत द्रव्य संख्याकी निरर्थकता बताऊं।।

वैशिषिक; संसारमें पदार्थ ढूंढते हम देखते हैं तो हमें सात पदार्थ ही ज्ञात होते हैं जो कि ऊपर वर्णित हैं।

शङ्काकार—आप लोग शक्तिको आठवां पदार्थ क्यों नहीं मानते यदि आप कहें कि शक्ति वस्तुभूत नहीं है तो परीक्षा प्रधानी हम आपके वचन मात्रसे यह नहीं मानसक्ते, शक्तिके साधक प्रमाण निर्दोष और सबल हैं अतः शक्तिको आठवां पदार्थ मानना चाहिये। हम देखते हैं कि अग्निका प्रतिबन्धक कोई कारण जबतक नहीं समीप आता अग्नि बराबर अपना दहन करना कार्य जारी रखती है। प्रतिबन्धक मणि आदिके आजाने पर उसकी शक्ति विनष्ट हो जाती है और फिर वह दाह नहीं करती अतः यह बात सुगम या मान्य है, कि शक्ति पदार्थान्तर है। यह शङ्काकारकी शङ्का भी अविचारित ही है, क्योंकि दाहकत्व कार्यके लिए अग्नि कारण है लेकिन कारणान्तर रहित या किसीके द्वारा बाधित सामर्थ कारण कार्योत्पत्तिके लिए मजबूर नहीं किया जा सकता ?। यहां जो मणिके सद्भावसे अग्निकी दाहकत्वका अभाव हुआ तो यहां अग्निके दाहकत्व कार्यके लिए उत्तेजकाभाव विशिष्ट मण्यभाव कारण है जब कि मणिके सद्भाव होने पर उत्तेजकके अभावसे विशिष्ट मणि अभाव रूप कारण ही नहीं तो कार्य कैसे हो सकता है। अतः शक्ति कोई पदार्थान्तर नहीं है।

(शङ्काकार) अस्तु, शक्ति पदार्थान्तर नहीं है ऐसा हम भी मानते हैं किन्तु आपने जो द्रव्यके पृथ्वी, अप (जल), तेज (अग्नि), वायु (हवा), आकाश, काल, दिशा, आत्मा, मन ये ९ भेद माने हैं उनमें आपको अन्धकार भी एक १० वीं द्रव्य मानना चाहिये क्योंकि "नीलं तमः चलति" यहां पर अन्धकारमें आपकी द्रव्यकी लक्षण अच्छी तरह घटित हो जाता है। आपने द्रव्यका लक्षण "क्रियावत् गुणवत् समवायि कारणं द्रव्य लक्षणं" ऐसा किया है। चलति (चलता है) इस क्रियाका आधार होनेसे अन्धकारमें क्रियावत् विशेषण रह ही जाता है तथा नीलं तमः (नीला अन्धकार —अन्धकारकी बहुसमुन्नतदशा)। ऐसा कहनेसे गुणवत् विशेषण भी घटित होही जाता है अतः अन्धकारको द्रव्य मानना ही चाहिये और उक्त ९ द्रव्योंमें इसका अन्तर्भाव भी नहीं है। आकाश, काल, दिशा, आत्मा, मन, ये रूप रहित और अन्धकार सरूप हैं। अतः इनमें उसका (अन्धकारका) अंतर्भाव नहीं किया जासका। अन्धकार गन्ध रहित है अतः गन्धवाली पृथ्वीमें अन्तर्भावित नहीं हो सकता तथा अन्धकार शीत गुण विशिष्ट भी नहीं है अतः जल, उष्णगुणसे भी रहित है अतः तेजमें नहीं घट सक्ता"। अब जब कि अन्धकार उक्त नौ द्रव्योंमें अंतर्भूत भी नहीं होता, और

द्रव्यका लक्षण इसमें घट ही जाता है फिर भी अन्धकारको द्रव्य न माननेमें सिवाय तीव्र मोहके और कोई कारण नहीं कहा जासकता।"

यह सब उक्त शङ्काकारका बगूलाल मात्र ही है। क्योंकि अन्धकार तेजके अभावके सिवाय कोई भावान्तर नहीं है।

(शङ्काकार) यदि ऐसा ही है तो फिर अन्धकारका अभाव ही तेज द्रव्य हो जायगा। अन्धकार ही को मान लीजिए। तमको तेजका अभाव होनेसे न मानना और तेजको तमका अभाव होने पर भी मानना यहां विद्वेषातिरिक्त क्या कारण कहा जासक्ता है?

(उत्तर दाता) यदि तेज द्रव्यको अन्धकारका अभाव मान लिया जाय तो अभावमें सर्वानुभूत उष्णत्व नहीं रह सक्ता, और फिर उस उष्णत्वकी आधार रूप कोई अन्य द्रव्य माननी पड़ेगी।

द्वितीय, अन्धकार चलता है यहां द्रव्यका लक्षण भी संघटित नहीं होता। क्योंकि नील रूपको जो यहां प्रतीति होती है वह भ्रांत रूप ही है। अतः द्रव्य ९ ही माननी चाहिये न अधिक और न कम। इस सबके माननेवाले वैशेषिकके मतमें द्रव्यकी एकता सिद्ध नहीं हो सक्ती क्योंकि द्रव्यको ९ भेदवाला माना है और द्रव्यको एकता न बननेसे सात पदार्थोंकी सिद्धि नहीं हो सकती, क्योंकि स्वतंत्र नौ द्रव्योंको एक द्रव्य सिद्धि होनेपर द्रव्य रूप, रस, गंध, स्पर्श, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, गुरुत्व, द्रवत्व, स्नेह, शब्द, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म, अधर्म और संस्कार इन २४ गुणोंमें ऐक्य सिद्ध होनेसे एक गुण, उत्क्षेपादि पूर्वोक्त पांच क्रियाओंमें एकता सिद्ध होनेसे एक क्रिया, पर-अपर दो सामान्योंमें तथा नित्य द्रव्यमें रहनेवाले अनन्त विशेषोंमें एकत्व सिद्ध होने पर एक सामान्य व एक विशेष, प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव, अत्यंताभाव, अन्योन्याभाव इन चार अभावोंमें एकता सिद्ध होनेसे एक अभाव, एक समवायके समान सिद्ध होवे तो सात पदार्थोंकी सिद्धि होती लेकिन उक्त द्रव्य गुण कर्मादिकोंमें एकता सिद्ध नहीं हो सकती अतः पदार्थ सात हैं यह कहना भ्रममात्र है। द्रव्यत्वके योगसे एक द्रव्य मानें तो उपचारसे ही एकता सिद्ध होगी पारमार्थतः सिद्ध नहीं हो सकती।

(शङ्काकार)—द्रव्य एक पदकी सामर्थ्यसे द्रव्यके सब भेद, प्रभेद ग्रहण कर लिये जावेंगे अतः द्रव्यमें एकता और गुण कर्मादिमें भी इसी तरह एकता आनेसे सात पदार्थकी सिद्धि हो जायगी, उक्तं च—

> विस्तरेणोपदिष्टानामर्थानां तत्त्वसिद्धये।
> समासेनाभिधानं यत्सङ्ग्रहं तं विदुर्बुधाः॥

अर्थ—विस्तारपूर्वक भिन्न पदार्थोंका तत्त्वनिश्चयके लिए उपदेश दिया जाता है

उनका जो संक्षेपसे कहना है उसे संग्रह कहते हैं। अतः संग्रहनयकी अपेक्षासे एकता सिद्ध हो जायगी अतः सात पदार्थ मानना चाहिये।

उक्त कथन भी समुचित नहीं है क्योंकि एक पद वाच्य होनेसे एकता की ही प्रतीति होती है, ऐसा नियम नहीं है क्योंकि सेना वन आदि एक पद वाच्य अनेक पदार्थ देखे जाते हैं। यहां ऐसी शंका करना कि सेना वनादि एक पाद वाच्यसे संबंध विशेषयुक्त एक की ही प्रतीति होती है। वह सम्बंध संयुक्त संयोगाल्पीयस्त्व लक्षणवाला कहा जाता है।

संयुक्तका जो नैरन्तर्य सम्बन्ध यानी संयुक्तका जो निकटवर्तित्व सम्बन्ध उसे संयुक्त संयोगाल्पीयस्त्व कहते हैं। यह कहना भी युक्ति सम्मत नहीं है। क्योंकि सेना वन आदि शब्दसे सबका ज्ञान मनुष्य घोड़ा आदिमें ही होता है। वन शब्दके कहनेसे प्रथक् २ पेड़ोंमें ही होता है। सम्बन्ध विशेषमें जो आप ज्ञान बताते हैं सो नहीं होता अतः एक पद वाच्य होनेसे एकताकी सिद्धि नहीं होसक्ती। अन्यच्च एक पद वाच्य होनेसे यदि एकताकी सिद्धि की जाय तो एक गोके द्वारा वाच्य जो ११ शब्द हैं उन सभीकी एकता माननी चाहिये।

उक्तंच-वाचि, वारि, पशौ, भूमौ, दिशि, लोम्नि, पवौ, दिवि।
विशिखे, दीधितौ, दृष्टावेकादशसु गोमतः॥

गोशब्द वचन, पानी, पशु, भूमि, दिशा, रोम, वज्र, आकाश, बाण, किरण और किरण इन ११ अभिधेयोंमें हैं।

एवं एक य शब्दके वाच्य त्याग, नियम, यम, वायु, धाता, पाता रक्षक इन छहोंमें भी एकता होनी चाहिये।

(शङ्काकार) वचन पशु आदिका वाचक गोशब्द, त्याग, नियम, यम आदिका वाचक य शब्द भिन्न भिन्न ही हैं फिर एक पद वाच्यत्व ही यहां नहीं रहता तो एकता कैसे।

(उत्तर) यह भी आपका कहना ठीक नहीं, ऐसे हम भी कहसक्ते हैं कि पृथ्वी जल आदिका वाचक अलग अलग ही द्रव्य शब्द हैं अतः एक पद वाच्य न होनेसे एकता नहीं हो सकती।

संग्रह किये जांय अनेक पदार्थ जिस शब्दसे ऐसा शब्दात्मक संग्रह और एक प्रत्ययसे अनेक पदार्थ ग्रहण किये जाय ऐसा प्रत्ययात्मक संग्रह और अर्थात्मक इन तीनों संग्रहोंसे द्रव्यकी एकता सिद्ध नहीं की जासक्ती। द्रव्यकी ९ संख्या मानना भी संख्याभास है क्योंकि इन ९ द्रव्योंका जीव पुद्गलमें अन्तर्भाव हो जाता है।

पृथ्वी, अप, तेज, वायु, मनका स्पर्श, रस, गन्ध, रूपवाले होनेसे पुद्गल द्रव्यमें अन्तर्भाव हो जाता है क्योंकि जो जो स्पर्श रूप रस गन्धवाले होते हैं वे पौद्गलिक होते हैं जैसे आंख।

वायु और मनमें रूप न मानना भी न्यायसंगत नहीं है क्योंकि वायु रूप युक्त है स्पर्शवाली होनेसे। इस अनुमानसे वायुको रूपता सिद्ध ही है। वायुका रूप देखनेमें नहीं आता अतः उसे मानना भी नहीं चाहिये, यह कहना भी न्यायमान्य नहीं है क्योंकि जो जो देखनेमें नहीं आवे उन उनका अभाव, यदि आप ऐसा कहेंगे तो तुम्हारे देखनेमें परमाणु नहीं आसकता अतः उसका भी अभाव कहना चाहिये। या तुम्हारे देखनेमें अपने बाबा परबाबा आदि भी देखनेमें नहीं आते अतः वे हैं ही नहीं ऐसा ही कहना चाहिये।

(शङ्काकार)—परमाणु परबाबा आदि यद्यपि प्रत्यक्ष नहीं है तथापि कार्यसे कारणका अनुमान होता है। इस न्यायसिद्धांतानुसार कार्य जो मकान आदि उनसे कारण परमाणु आदिका और पिता हैं अतः परबाबाका हम ज्ञानकरलेंगे। लेकिन वायुके रूपका कोई कार्य नहीं जिससे कि कारण स्वरूप रूपका ज्ञान किया जाय।

(उत्तर)—ऐसा भी नहीं कहसक्ते क्योंकि स्पर्शवत्की रूपवत्त्वके साथ व्याप्ति प्रसिद्ध है अतः जहां जहां स्पर्शवत्त्व होगा रूपवत्त्व वहां अवश्य मानना पड़ेगा।

मन दो प्रकारका होता है द्रव्यमन और भावमन। द्रव्यमन अष्टकमलदलमें रहता है और तदाकार जो आत्माके प्रदेश हैं उसे भावमन कहते हैं। चक्षुकी तरह ज्ञान और उपयोगका कारण होनेसे मन भी रूपादिवाला है, भावमनका अन्तर्भाव आत्मामें हो जाता है।

(शंका) आपने जो ज्ञानोपयोगवत्त्व हेतुसे मूर्तिमत्त्वकी सिद्धि की सो ठीक नहीं है क्योंकि ज्ञानोपयोगवत्त्व हेतु शब्दमें भी रहजाता है जो कि विपक्ष है। यानी मूर्तिमत्त्व साध्यसे विरुद्ध है अतः अनैकान्तिक दोषसे दुष्ट हेतु होनेके कारण साध्य सिद्धि नहीं कर सका।

(उत्तर) यह आपकी शंका सर्वथा आपहीसे मान्य हो सकती है क्योंकि शब्दको पौद्गलिक होनेसे हम मूर्तिमान् मानते ही हैं।

(शङ्काकार) यदि शब्द पौद्गलिक होता तो अन्य २ पुद्गलके समान दिखाई देता लेकिन जब शब्द दिखलाई ही नहीं देता तो मूर्तिमान कैसे सिद्ध हो सकता है।

यह शङ्का भी नहीं करनी चाहिये क्योंकि बालकके मुखके निकट बैठी मनुष्य प्रायससे और दूर देश स्थित पुरुष अनुमान कर यानी मुख पर रुई आदि हलकी वस्तु

स्वीकार मान सकते हैं। दूसरे, यदि शब्द पौद्गलिक न होता तो इसका पौद्गलिक वस्तुके द्वारा व्याघात नहीं हो सकता था लेकिन व्याघात होता हुआ देखते हैं। तथा शब्द पौद्गलिक है तभी तो मनुष्य जो कि ज्यादा ठोकापीटीका काम किया करता है बहिरा या कुछ कम सुननेवाला होजाता है। भरी शब्दको सुनकर गर्भिणियोंका गर्भ गिर जाता है। यदि शब्द पौद्गलिक न होता तो मूर्तिमान् कान भी आदिको व्याघात न पहुँचाता। इससे ज्ञात होता है कि शब्द पौद्गलिक है और पौद्गलिक होनेसे मूर्तिमान् है, यदि शब्द पौद्गलिक न होता तो हवासे इधर उधर भी नहीं उड़ सकता। दिशाका आकाशमें अन्तर्भाव हो जाता है अतः द्रव्यकी ९ संख्या मानना संख्याभास है। क्योंकि इन नौमेंसे ही जीव-पुद्गल इन दो द्रव्योंमें अन्तर्भाव हो जाता है अतः ९की अपेक्षा जीव-पुद्गल ये दो ही द्रव्य मानना चाहिये किन्तु इतना माननेपर भी धर्म अधर्म आकाश काल ये ४ और द्रव्य माननी चाहिये क्योंकि इनका उक्त जीव पुद्गल दोमें अन्तर्भाव नहीं है अतः इस प्रकरणसे यह सबक लेना यह समझना चाहिये कि आपकी काल आकाशके सिवाय जीव- पुद्गलमें सभी द्रव्यसंख्या अन्तर्भूत हो जाती है लेकिन तो भी लोकगत सभी पदार्थ उसमें नहीं आते। धर्म अधर्म ये दो द्रव्य बाकी बच ही जाती हैं और जीव अजीवमें तो आपकी तथा धर्म अधर्म ये भी सब अन्तर्भूत होजाती हैं अतः आपकी द्रव्य संख्या सम्यक् नहीं मानी जा सकती क्योंकि तदाभास होनेसे।

अब नैयायिकोंने कितने पदार्थ माने हैं यह संक्षेपतः कहेंगे। नैयायिक उक्त ७ पदार्थोंके अतिरिक्त और भी सोलह पदार्थ मानता है। वे ये हैं-प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, सिद्धान्त, अवयव, तर्क, निर्णय, वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास, छल, निग्रह, जाति, किन्तु यह भी पदार्थ संख्या ठीक नहीं है क्योंकि प्रमाण प्रमेय इन दोमें ही सबका अन्तर्भाव हो जाता है।

सांख्यमतवाले प्रकृति, महान्, अहंकार, पांच तन्मात्रा (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध) पांच इन्द्रियां (श्रोत्र, त्वक, चक्षु, जिह्वा, घ्राण) पांच कर्मेन्द्रिय (वाक्, पाणि, पाद पायु, उपस्थ) पांच भूत (आकाश, वायु, तेज, अप, पृथ्वी) एक पुरुष इस तरह २५ पदार्थ मानते हैं। सांख्यके विषयमें बहु वक्तव्य है लेकिन लेख वृद्धि भयसे इतना ही कहूंगा उक्त जो पदार्थोंकी व्यवस्था है वह भी ठीक नहीं है क्योंकि जब कापिलिक प्रधान (प्रकृति) को ज्ञाता कर्ता मानते हैं तो फिर पुरुषके माननेकी क्या आवश्यकता है।

(कापिलिक) कर्ता ज्ञाता प्रकृतिको मानकर भी भोक्ता पुरुष अवश्य मानना चाहिये।

(जैन) प्रकृति करने वाली नहीं हो सकती, भोगनेवाली न होनेसे। जो जो भोगनेवाली नहीं है वह करनेवाली भी नहीं है जैसे मुक्तात्मा कर्मके अभावसे कुछ भोगने वाले नहीं है अतः वे कर्ता भी नहीं हैं। प्रकृतिको आपने न भोगनेवाला माना ही है अतः उसे कार्य कर्तृ भी नहीं माननी चाहिये क्योंकि भोक्तृत्वके अभावकी कर्तृत्वके अभावके साथ व्याप्ति है।"

यहां कोई मनचला आदमी यह कहे कि रसोइया कर्ता है लेकिन भोक्ता नहीं है, भोक्ता मालिक है यह उसका कहना केवल हास्यके लिए ही हो सकता है क्योंकि पाचक जो कुछ प्रयत्न करता है उसका फल यानी भोग रुपया आदि लेकर अवश्य करता है।" अवैतनिक काम करनेवाले भी यश आदि स्वरूप करके स्वकृत कार्यके फल भोग ही लिया करते हैं और यदि कर्ताको भोक्तासे सर्वथा भिन्न मानेंगे तो भुज धातुसे कर्तामें प्रत्यय होकर जो भोक्ता शब्दकी सिद्धि होती है वह नहीं हो सकती।

हास्योत्पादक बात तो यह है कि प्रकृतिको तो सांख्योंने मुक्तदाता माना है और इस उपकारके लिए पुरुषको मोक्ष इच्छुक पूजते हैं। यह सिद्धान्त इस बातकी सिद्धिके लिए पुष्ट साधक होगा कि "भोजन अन्य ही करे और पेट दूसरेका ही भरे" अतः सांख्यके द्वारा स्वीकृत अर्थ संख्या भी ठीक नहीं है क्योंकि उनके स्वीकृत चौवीसों पदार्थोंका जीव अजीवके अन्दर ही अन्तर्भाव हो जाता है।

अब कुछ बौद्धोंके विषयमें और कहके मैं इस प्रकरणको समाप्त करता हूं। बौद्धके चार भेद हैं—१ माध्यमिक, २ योगाचार, ३ सौत्रान्तिक, ४ वैभाषिक, इन चारों भेदोंका प्रथक् २ सिद्धान्त बतला देनेसे बौद्धमतका पदार्थ मंतव्य कैसा होता है यह अच्छी तरह ध्यानमें आ जावेगा।

मुख्यो माध्यमिको विवर्तमखिलं शून्यस्य मेने जगत्।
योगाचारमते तु सन्ति मतयः तासां विवर्तोऽखिलाः॥
अर्थोऽस्ति क्षणिकस्त्वसावनुमितो बुद्धयेति सौत्रान्तिकः।
प्रत्यक्षं क्षणभंगुरं च सकलं वैभाषिको भाषते॥

प्रत्यक्षके द्वारा अनुमित पदार्थको ही मानता है और वह पदार्थ क्षणस्थिरति शीघ्र (क्षणिक) है ऐसा कहता है।

"सौत्रान्तिकेन प्रत्यक्ष ग्राह्योऽर्थो न बहिर्मतः" सौत्रांतिका (नास्तिक) केवल प्रत्यक्ष वस्तु ही को मानता है।

यद्यपि बौद्ध सामान्य पनेसे प्रत्यक्ष अनुमान दो प्रमाण मानते हैं किन्तु बौद्ध भेदान्तर्गत सौत्रान्तिक केवल प्रत्यक्ष पदार्थको ही मानता है। वैभाषिक संपूर्ण पदार्थोंको प्रत्यक्ष और क्षणभङ्गुर मानते हैं।

"अर्थोज्ञानान्वितः वैभाषिकेण बहुमन्यते" वैभाषिक ज्ञानान्वित पदार्थको बहु ज्ञान मानते हैं" यह सूक्ष्मतः बौद्धोंकी पदार्थ कल्पना है।

बौद्ध पदार्थको क्षणिक मानते हैं। वे कहते हैं कि "सर्वं क्षणिकं सत्वात्" सब पदार्थ क्षणविनश्वर हैं सत होनेसे। यह अनुमान ठीक नहीं है। क्योंकि सत्वरूप जो हेतु है उसे यदि आप स्वभाव हेतु मानेंगे तथापि नहीं बन सकता। क्षणिकके विनश्वर होनेसे हेतुकी ही प्रवृत्ति ही नहीं होती। क्योंकि प्रत्यक्षगोचर पदार्थमें ही हेतुकी प्रवृत्ति होती है। पदार्थोंका क्षणभंगुरता स्वभाव भी नहीं है।

(शङ्काकार) सब ही पदार्थ एक क्षणतक रहनेवाले हैं। विनाशके लिए दूसरोंकी अपेक्षा न करनेसे, जैसे कि कार्योत्पादके ठीक एक समय पहिलेकी सामग्री कार्योत्पत्तिमें किसीकी आवश्यकता नहीं रखती है।

दुनियामें घटादिकका मुद्गरादिकसे नाश होता है, ऐसा कथन सिर्फ स्थूल बुद्धि-वालोंका ही है। पदार्थ स्वविनाशी हैं। मुद्गरादिक उसका विनाश नहीं करते।

कल्पना कीजिए कि यदि मुद्गरने घटका विनाश किया तो घटसे भिन्न किया अभिन्न। यदि भिन्न कहेंगे तो घटकी स्थिति बनी ही रहनी चाहिये। यदि अभिन्न नाश किया तो मुद्गरने घटको बना दिया।

सत्वरूप हेतुकी विपक्षवृत्ति नहीं है अतः साधु है, क्योंकि सत्व अर्थ क्रियासे व्याप्त है, अर्थ क्रियाक्रम यौगपद्यसे व्याप्त है, नित्यमें क्रम यौगपद्य नहीं रहते अतः अर्थ क्रिया भी नहीं रहेगी और अर्थ क्रियाके न रहनेसे नित्यमें सत्व भी नहीं रह सकते अतः निर्दोष सत्व हेतु क्षणिक पदार्थकी सिद्धि करता ही है।

यह बौद्धोंका कहना भी शोभाको प्राप्त नहीं होता, क्योंकि क्षणिक सिद्धिके लिए जो हेतु दिया था वह सर्वथा सदोष है। घटपटादि पदार्थ विनाशके लिए दूसरोंकी अपेक्षा रखते ही हैं और पदार्थोंको विनाश स्वभावता क्षणिक रूपसे नहीं मानी जासकती। उपक्र-

समुदेति विलयमृच्छतिभावो नियमेन पर्ययनयस्य।
नो देति नो विनश्यति भावनया लिङ्गितो नित्यम्॥

अर्थ—पदार्थ पर्यायनयकी अपेक्षासे उत्पाद विनाशको प्राप्त होता है। द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा पदार्थ नित्य ही है।

दूसरे जो यह हेतु दिया था कि सत्व अर्थ क्रियासे व्याप्त अर्थ क्रियाक्रम योगपद्यसे क्रम योगपद्य नित्यमें रहते नहीं अतः सत्व रूप हेतु विपक्षमें न रहनेसे साधु है सो हम इसका उल्टा भी कह सकते हैं यानी सत्व अर्थ क्रियासे व्याप्त है, अर्थ क्रियाक्रम योगपद्यसे व्याप्त है और क्रमयोगपद्य क्षणिकमें रहता नहीं अतः विपक्षके समान पक्षमें भी हेतु नहीं रहता। इस लिए हेतु असिद्ध दोषसे दूषित है क्योंकि "असत्सत्ता निश्चितोऽसिद्धः" यानी जिसकी सत्ताका अभाव हो या सत्ताका निश्चय न हो उसे असिद्ध कहते हैं सो यहां सत्व हेतु पक्षमें न रहनेसे असिद्ध है।

इस प्रकार वैशेषिक, नैयायिक, सांख्य, बौद्ध, इनकी पदार्थ संख्याका खंडन किया। अब जैनियोंके स्वीकृत जीवादि ६ पदार्थोंका क्या क्या सामान्य विशेष स्वरूप है और कैसे सिद्धि है यह बतलाते हैं।

युगलात्मक संसारमें निरपेक्ष दृष्टिसे हम देखते हैं तो संसारका सार युग्म ही दिखलाई देता है। जहां देखते हैं युग्मकी ही भरमार है। गौण या मुख्य, स्त्री—पुरुष, पुत्र—पुत्री, लड़का—लड़की, सम्यक्त्व—मिथ्यात्व, एकान्तवादी—अनेकान्तवादी, उल्टा—सीधा, भला—बुरा, ऊंच—नीच जिस तरह इन युग्मोंका आविर्भाव है उसी तरह संसार दो ही पदार्थ दिखलाई एक जीव है और दूसरा अजीव। इसी युग्ममें संसारके सभी युग्म आकर मिल जाते हैं।

"जीव शब्दकी व्युत्पत्ति 'जीवति—प्राणान् धारयति' जो प्राणोंको धारण करे इस प्रकार की गई है। जिस तरह जीवद्रव्य संसारी मुक्तात्मा इन दो भेदवाला है उसी तरह अजीवके पांच भेद हैं—१ पुद्गल, २ धर्म, ३ अधर्म, ४ आकाश, ५ काल।

अब सबसे पहिले जीवकी सिद्धि करते हुए पुद्गलादिकी आवश्यकता और सिद्धिका निरूपण करेंगे"।

जीवद्रव्यकी आवश्यक्ता और सिद्धिः।

जीवके पूर्वोक्त दो भेदोंके अतिरिक्त और भी एकेन्द्री, दोइंद्री, तेइन्द्री, चौइन्द्री, पंचेंद्री ये पांच भेद हैं। एकेन्द्रीके पृथ्वीकाय, अप्काय, वायुकाय, तेजकाय, वनस्पतिकाय भेद हैं। वनस्पतिके दो भेद हैं—साधारण०, प्रत्येक०, प्रत्येकके भदतिहित

प्रत्येक० अप्रतिष्ठित प्रत्ये० ये दो भेद हैं। पृथ्वीके १ पृथ्वी, २ पृथ्वीकाय, ३ पृथ्वीकायिक, ४ पृथ्वीजीव इस प्रकार ४ भेद हैं इसी तरह अप् आदिके भी भेद जानने चाहिये।

सभी जीवतत्वको स्वीकार करते हैं किन्तु कुछ आधुनिक सुसभ्य कोटिमें अपनेको सर्वोत्तम माननेवाले जीवके कुछ भेदोंको नहीं मानते यानी मनुष्य पशु आदिमें जीव मानते हैं, पृथ्वी जल आदिको जीवरूप नहीं मानते और इनसे भी बड़ी बड़ी सभ्यतावाले चार्वाक जीवतत्वको ही नहीं मानते, पृथ्वी जल आदिमें जीव न माननेवाले महाशय वनस्पतिमें भी अभी तक जीव नहीं मानते थे लेकिन कुछ दिनों पहिले डाक्टर वसुने बहुत प्रसन्न होकर और अपने श्रमकी सफलता मानते हुए यह प्रकाशित किया था कि वनस्पतिमें भी जीव है। डाक्टर वसुका कहना था कि जिस वनस्पतिमें जीव सिद्ध करनेके लिए मुझे अपनी सारी शक्ति लगानी पड़ी और बहुत समय व्यय करना पड़ा उस जीव सिद्धिको जैनाचार्य हजारों वर्ष पहिले अपने ग्रंथोंमें लिख गये हैं और इतना ही नहीं बल्कि उस जीवकी आयु वर्ण जाति आदि सूक्ष्म २ बातोंका भी वर्णन कर चुके हैं जिसको सिद्ध करनेके लिए बड़े बड़े विज्ञानवेत्ताओंको भी बहुतसा समय शक्ति तथा जीवन समर्पण कर देनेकी आवश्यकता है। यह जैनाचार्योंके क्षयोपशम, ज्ञानशक्ति, तथा सदाचारका ही फल है।

जब कि भूततत्व वादियोंकी दृष्टि भी जीवसिद्धिकी तरफ झुकती जाती है और सफलता भी प्राप्त होती जाती है तो आशा होती है कि यदि और अधिक सूक्ष्म रीतिसे गवेषणा की जाय तो पृथ्वी अप आदिमें भी जीवकी सिद्धि हो जायगी। चार्वाक मतानुयायी जीवको नहीं मानते हैं अतः उनके कुछ सिद्धांतका निदर्शन कराके मैं जीवसिद्धि करूंगा।

चार्वाक मतानुयायी कहता है कि पृथिव्यादि चार भूततत्वोंसे जो कि देहके आकारमें परिणत है चैतन्यकी उत्पत्ति होती है।

जैसे कि मदराके कारणोंसे मादक शक्ति उत्पन्न होती है और जब ये भूततत्व अलग २ हो जाते हैं तो पृथिव्यादि रूप जो चैतन्य वह विनष्ट हो जाता है। स्वतः सिद्ध अनादिकालीन कोई जीवतत्व नहीं है। क्योंकि हमारे मतमें एक प्रत्यक्ष प्रमाण ही मान्य है क्योंकि अनुमानादि असत्य तत्वको ग्रहण करते हैं, अतः उन्हें प्रमाणता नहीं।

वेदानुयायी ब्राह्मणोंमेंसे कोई कर्मकाण्डकी प्रशंसा करते हैं और कोई ज्ञानकांडकी, यह सब अपने २ स्वार्थवश कोई किसी तरहका कोई किसी तरहका अर्थ निकालते हैं सो ठीक नहीं है।

नरक, स्वर्ग, मोक्ष मानना युक्तिरहित्य होनेसे मूर्खता द्योतक है। क्योंकि प्रत्यक्षसे न नर्क ही दिखता है और न स्वर्गादि ही, फिर आश्चर्यकी बात है कि इस अंध-परंपरा पर लोगोंका क्यों विश्वास होता आ रहा है। उक्तञ्च—

अत्र चत्वारि भूतानि भूमिवार्यनलानिलाः।
चतुर्भ्यः खलु भूतेभ्यश्चैतन्यमुपजायते ॥

भूमि, वारि (जल), अनल (अग्निः), अनिल (वायुः) ये ४ ही पदार्थ हैं, इनसे ही जीवका निर्माण होता है।

किण्वादिभ्यः समेतेभ्यो द्रव्येभ्यो मद शक्तिवत्।
अहं स्थूलः कृशोऽस्मीति सामानाधिकरण्यतः ॥

अर्थः—जैसे किणु आदिक मदोत्पादक कारणोंसे मद शक्ति उत्पन्न होती है, उसी प्रकार चार भूतोंसे चैतन्यकी उत्पत्ति होती है। देह और चैतन्य भेद मानना सर्वथा मिथ्या है क्योंकि मनुष्य जो कुछ अधिक मोटा होता है कहता है कि मैं मोटा हूं और इससे जो प्रतिपक्षी है वह अपने आपको कहता है कि मैं बहुत पतला हूं, यहां मैं इन शब्दोंसे मोटा शरीर और पतला शरीर इसका ही ग्रहण होता है। देहके सिवाय किसी अन्यका ग्रहण नहीं होता जिससे अदृश्य जीवकी कल्पना की जाय।

देहः स्थौल्यादि योगाच स एव आत्मा न चापरः।
मम देहोऽयमित्युक्तिः सम्भवे दौपचारिकी ॥

अर्थः—मेरा यह देह है, मेरा शरीर स्थूल या कृष है इत्यादि भेद प्रतिपादक वचन उपचरित ही हैं क्योंकि देहको छोड़कर आत्मा कोई देही नहीं है।

यावज्जीवं सुखं जीवेत् नास्ति मृत्योरगोचरः।
भस्मीभूतस्य जीवस्य पुनरागमनं कुतः ॥

अर्थ—जबतक कि जीवन है आनन्दसे जीना चाहिये क्योंकि सब ही नाश अवश्यंभावी है और नाश होनेके बाद पुनः जीव आना नहीं जिससे कि फिर दुःख भोग सके।

तथा जीव स्वर्ग मोक्ष आदि आदि किसीकी भी सिद्धि नहीं होती। पुनः जो ब्राह्मणादि जीवादिका उपदेश देते हैं वे अपने स्वार्थवश होकर ही देते हैं।

ततश्च जीवनोपाय ब्राह्मणैः विहितस्त्विह।
मृतानां प्रेतकार्याणि न त्वन्यद्विद्यते क्वचित् ॥

अर्थात्–धूर्त ब्राह्मण गणने अपने जीवनोपायके लिए नाना क्रियाओंका कथन केया है। यह उनका कथन है कि मनुष्यके मरनेके बाद प्रेतकार्य करने पड़ते हैं,-क्योंकि विना प्रेतकार्य किये मनुष्य स्वर्ग सुख कभी भी प्राप्त नहीं कर सकता।

त्रयो वेदस्य कर्तारो भण्डधूर्त निशाचरा।
जर्फरीतुर्फरीत्यादि पण्डितानां वचः स्मृताम्॥

अर्थः-वेदके तीन ही मुख्य कर्ता है–भण्ड, धूर्त, राक्षस, क्योंकि जर्फरीतुर्फरी आदि वचन धूर्त, भण्ड, राक्षस पण्डितोंके वचन ही हैं। इस तरह जब जीवकी ही सिद्धि नहीं होती तो फिर अजीव किस तरह सिद्ध होगा, क्योंकि जो जीव नहीं उसे अजीव कहते हैं। अजीव जीवका प्रतिषेध रूप है, प्रतिषेध हमेशह विधि पूर्वक होता है। जब कि मुख्य जीव अजीव ये पदार्थ ही सिद्ध नहीं होते तो जीव पुद्गलकी गति स्थितिके सहायक धर्म, अधर्म द्रव्य, अवगाह देनेवाला आकाश, तथा इनको वर्तानेवाला काल ये कैसे सिद्ध हो सकते हैं। और जीव अजीवके बन्ध निर्जरा मोक्षादि कैसे सिद्ध होंगे।

इस तरह जीव, धर्म, अधर्म, आकाशादि किसीके सिद्ध न होनेसे चार्वाकमत सिद्ध हो गया और उसीका सब लोगोंको आश्रय लेना चाहिये। सांख्य मतानुयायी जीवको मान करके भी कूटस्थ नित्य मानते हैं। मीमांसक अकिञ्चित्कर मानते हैं, नैयायिक जीवको जड़ रूप मानते हैं, और बुद्धानुयायी ज्ञान सन्तान रूप ही मानते हैं। इत्यादि सिद्धांत माननेवाले परमार्थतः सत्य सिद्धांतसे बहुत दूर पडे हुए हैं।

प्रथम चार्वाक मतका खण्डन किया जाता है–पृथ्वी, अप, वायु, और अग्निसे यदि जीव बनता होता तो पृथ्वी आदिके गुण उसमें अवश्य पाये जाने चाहिए क्योंकि कारणके धर्म कार्यमें अवश्य आया करते हैं, यदि ऐसा न हो तो मिष्ट गुणके द्वारा बनी हुई चीज़ कडुई भी लगनी चाहिये। और विषके द्वारा मनुष्यको नशा भी नहीं आना चाहिये इत्यादि तथा ऐसा होनेसे पदार्थ व्यवस्थाका व्याघात हो जायगा। अतः कार्यमें कारणके धर्म अवश्य आना चाहिये।

जब कि पृथ्वीका गन्धवत्त्व काठिन्य गुणात्मकत्व आदि गुण, जलका द्रवत्वादि, वायुका ईरणादि, अग्निका दाहकत्वादि गुण चैतन्यमें पाये ही नहीं जाते तो कभी भी यह बात मान्य नहीं हो सकती कि जीव चार भूतोंसे बना है। अन्यच्च जैसे कि कारणके धर्म कार्यमें अवश्य रहने चाहिये उसी तरह कार्यके धर्म भी उसके कारणमें अवश्य रहने चाहिये। नहीं तो यह कार्य इन्हीं कारणोंका है इसका निश्चय कैसे हो सकेगा।

चैतन्यका पृथ्वी आदिमें कोई धर्म भी नहीं पाया जाता। मनुष्यको जो ज्ञान होता

है, स्मृति होती है, प्रत्यभिज्ञान होता है, सुख दुःखका अनुभव होता है, यह सब पृथ्वी आदिमें नहीं पाये जाते।

(शङ्काकार)—अलग अलग पृथ्वी आदिमें ये धर्म नहीं पाये जाते किन्तु जब पृथ्वी आदि सब मिल जाते हैं तब इनमें इन सब धर्मोंका उत्पाद हो जाता है। जैसे कि मनसल (स्फोटक द्रव्यविशेष) को आप अलग चाहे जितनी बारीक पीस सक्ते हैं और उसी तरह पटासल (स्फोटक द्रव्यविशेष) को भी बहुत बारीक पीस सकते हैं लेकिन यदि आप उन दोनोंको एकत्रित करके पीसना चाहें तो पीसनेकी बात तो दूर रहे आप उस मिली हुई मनसल और पटासलकी धूलिके ऊपर स्वल्प आघात भी नहीं कर सक्ते क्योंकि उन दोनोंके मिलनेसे उनमें दाहकत्व शक्ति आ जाती है। यहां जिस तरह अलग २ दाहकत्व शक्ति नहीं भी थी लेकिन मिलाप होनेसे आगई। दूसरा दृष्टांत यह भी दिया जा सकता है कि जैसे ताजी दहीमें स्वतंत्र जीवके शीघ्र पैदा करनेकी शक्ति नहीं है और मिगोड़ों (दालके बने हुए) में भी स्वतंत्र शीघ्र जीव पैदा करनेकी शक्ति नहीं है, लेकिन उन दोनोंका मेल करनेसे कुछ समय बाद ही या मेल करके मुंह तक लेजाते ही जीव पड़ जाते हैं। उसी तरह यद्यपि पृथ्वी आदिमें अलग २ ज्ञानादि उद्घाटनकी शक्ति नहीं है किंतु संयोग होनेपर हो जाती है।

यह कहना भी अविचारितरम्य ही है क्योंकि आपने जो दृष्टांत दिये वे दोनों ही दृष्टांताभास हैं। आपने जो यह कहा कि जैसे अलग २ मनसल पटासलमें दाह करनेकी शक्ति नहीं है लेकिन मिलनेसे होजाती है यह सर्वथा असत्य है। आपको उन दोनोंमें प्रथक् २ भी अवश्य दाहकत्व शक्ति माननी पड़ेगी, क्योंकि जिनमें प्रथक् २ ही शक्ति नहीं होती उनमें इकट्ठे होने पर कैसे आ सकती है। जिस नींब, कनीर, विष, हलाहलमें प्रथक् २ माधुर्य शक्ति नहीं है तो मिलने पर भी नहीं आ सकती। यदि आप ऐसा कहें कि प्रथक् २ पृथ्वी आदिमें भी ज्ञानादि शक्तियां रहती हैं तो पृथ्वीसे निर्मित घर भी ज्ञानवान् होना चाहिये। जलके द्वारा बनी हुई बर्फ भी ज्ञानवती होनी चाहिये अतः पृथ्वी आदिमें ज्ञानादि शक्ति न होनेसे पृथ्वी आदिके द्वारा ज्ञानवान् जीवकी कदापि उत्पत्ति नहीं मानी जा सकेगी और जो आप (चार्वाक) यह कहते हैं कि "जीव नहीं है" सो यहां जो जीवको पक्ष बनाया है और नास्तित्वको साध्य बनाया है। पक्ष हमेशह प्रसिद्ध हुआ करता है लेकिन जीव जब आपके यहां माना ही नहीं जाता तो प्रसिद्ध नहीं हो सकता, और प्रसिद्ध न होनेसे जीव पक्ष कोटीमें नहीं लाया जा सकता फिर उसे पक्ष बनाना अन्याय है।

(शङ्काकार) आप जैनी लोग तो जीवको प्रसिद्ध ही मानते हैं अतः हम आपके द्वारा प्रसिद्ध जो जीव है उसका निषेध कर देंगे, अब आप यह नहीं कह सकेंगे कि

तुमने (चार्वाक) बिना प्रसिद्ध जीवको पक्ष बना लिया। इमने जीवकी प्रसिद्धता आपसे जानली और प्रसिद्ध होनेसे उसे पक्षकोटीमें रहकर नास्तित्व साध्य किया।

(जैन) आपने जो हमारे माने हुए प्रसिद्ध जीवको माना सो प्रमाण रूपसे या अप्रमाण रूपसे। यदि कहोगे कि प्रमाण रूपसे माना तो फिर नहीं कह सकते कि आप किस बुद्धिमत्ता से उसका खण्डन कर रहे हैं। यदि अप्रमाण रूपसे माना तो वह आपके लिए अप्रमाण ही है फिर आप उस अप्रमाणको अप्रसिद्ध होनेसे कैसे पक्ष बना सकते हैं।

यदि आप कहें कि हम अनुपलब्धि हेतुसे जीवका अभाव सिद्ध करेंगे सो आप ऐसा भी नहीं कह सकते हैं क्योंकि आप अनुमान तो मानते नहीं और साधनसे जो साध्यका ज्ञान करना है उसे ही अनुमान कहते हैं।

यदि आप कहे कि हम व्यवहारके लिए अनुमान मानते ही हैं तो हम आपसे यह पूछते हैं कि आपने जीवके अभावको अनुपलब्धिसे जाना तो आप कहें कि आपने अनुपलब्धिको किससे माना। यदि कहेंगे कि अभावसे तो अन्योन्याश्रय हो जायगा क्योंकि जीवका अभाव सिद्ध अनुपलब्धिसे हो और अनुपलब्धि अभावसे सिद्ध हो।

तीसरे अनुपलब्धि रूप हेतुकी अभावके साथ व्याप्ति ही नहीं है क्योंकि कारण आदानानुपलब्धि ' या ' स्वचक्षुषा प्रत्यक्षे उपलब्धि ' हाथसे ग्रहण करना उपलब्धि कहा जासकता है या अपनी चक्षुसे प्रत्यक्ष करना उपलब्धि कहा जा सकता है और उसको अनुपलब्धि किन्तु परमाणु न तो हाथसे ग्रहण किया जा सकता है और न चक्षुसे प्रत्यक्ष ही किया जासकता अतः अनुपलब्धरूप उक्त दोनो अर्थोंसे कोई एक अर्थ करनेसे या दोनो ही अर्थ करनेसे परमाणुमें अनुपलब्धि हेतु रह जाता है लेकिन परमाणुका अभाव तो है नहीं क्योंकि यदि परमाणुका अभाव हो जायगा तो परमाणुका समूह स्कंध नहीं मिल सकता और स्कन्ध न मिलनेसे संसारको सर्व शून्यताकी प्राप्ति आ जायगी।

चतुर्थ दोष यह है कि अनुपलब्धि रूप हेतु प्रत्यक्षसे ही असिद्ध है। क्योंकि जीवका स्वसंवेदनसे प्रत्यक्ष होता ही है। स्वसंवेदन भी सुख दुःखादि रूप संवेदनसे प्रसिद्ध ही है।

(शङ्का)—ज्ञान अन्यसे विदित होते हैं वेद्य होनेसे। जो जो वेद्य होते हैं वे वे अन्यसंविदित होते हैं। जैसे कि घट ज्ञानवेद्य है (उपनय) अतः अन्यसंविदित है (निगमन) और जब कि ज्ञान अन्य संवेदित है तो उसके द्वारा जीवकी किसतरह सिद्धि की जासकती है।

ऐसा कहना भी प्रलाप मात्र है क्योंकि ज्ञानकी स्वसंविदितता प्रमाणसे प्रसिद्ध है। ज्ञान स्वसंविदित है। अवभासकर्म अपनेसे अतिरिक्त कारणान्तरोंकी अपेक्षाका अभाव होनेसे यहां हेतुको असिद्ध कहनेवाला भी साहसी नहीं कह जा सका क्योंकि उक्त हेतु

सिद्ध ही है, कि ज्ञान अपने प्रकाशनके लिए अपनेसे भिन्न कारणान्तरोंकी अपेक्षासे रहित है। प्रत्यक्ष अर्थका गुण होते हुए अदृष्ट। अनुयायिकारण होनेसे प्रदीपके समान जैसे दीप अपने आपको तथा दूसरे पदार्थोंको प्रकाशित करता है।

दूसरे यदि ज्ञानको दूसरे ज्ञानसे वेद्य मानोगे तो दूसरा ज्ञान तीसरे ज्ञानसे वेद्य मानना पड़ेगा। ज्ञान होनेसे इसी प्रकार तृतीयादि ज्ञान अन्य अन्य ज्ञानोंके जाननेमें ही लगे रहेंगे तो प्रकृत पदार्थके जाननेसे वञ्चित ही रह जायंगे।

तृतीय दोष यह है कि परोक्षज्ञानके द्वारा पदार्थोंका प्रकाशन भी नहीं हो सकता। यदि परोक्षज्ञानके द्वारा भी पदार्थोंका प्रकाशन हुआ करे तो दूसरे व्यक्तिका ज्ञान भी हमारे लिए परोक्ष है अतः उस ज्ञानसे भी पदार्थोंका ज्ञान होना चाहिये।

अपने परोक्ष ज्ञानसे पदार्थोंका प्रकाशन होता क्योंकि वह ज्ञान समवाय सम्बन्धसे अपनी आत्मामें रहता है और दूसरेके परोक्ष ज्ञानसे पदार्थ प्रकाशन नहीं होसकता है क्योंकि वह ज्ञान अपनी आत्मामें नहीं रहता। यदि ऐसा कहेंगे तो यह आपका कहना भी विचारशून्य है क्योंकि आप ज्ञानको आत्मासे सर्वथा भिन्न मानते हैं।

चार्वाक तो उक्त कथन कदापि कर ही नहीं सकता क्योंकि वे आत्मा समवाय आदि कुछ नहीं मानते हैं सिवाय पृथ्वी आदि ४ भूतोंके।

उक्त सर्व कथनका सार यह है ज्ञान स्वसंवेदन मानना चाहिये और उस स्वसंवेदन ज्ञानसे जीवकी सिद्धि हो ही जायगी।

और भी देखा जाता है कि उसी समयका उत्पन्न बालक विना किसीके उपदेशसे अपनी माताके स्तनसे दूध पी निकलता है। बालकके दूध पीनेकी अभिलाषा विना प्रत्यभिज्ञानके हो नहीं सकती और प्रत्यभिज्ञान विना स्मरणके नहीं होता, अतः पूर्वानुभव अवश्य ही मानना चाहिये। कोई२ भूत आदि हो जाते ये किसी न किसी आदमीके ऊपर आकर अवश्य बोलते हैं कि मैं पहिले वह था "अब वहां हूं आदि तथा कोई कोई बचा वृद्ध युवा पुरुष भी अपने पूर्व भवकी सब बातें बतादिया करता है। यदि ४ भूतसे जीव बने होते तो शरीरके नष्ट होनेके साथ साथ ही जीव भी नष्ट हो जाता लेकिन दूसरे भव तक उसका सम्बन्ध जाता है तो ज्ञात होता है कि चार भूतसे जीव नहीं बना है।

उक्तं—

तदहर्जस्तनेहातो रक्षोदृष्टेः भवस्मृतेः।
भूतानन्वयनात्सिद्धः प्रकृतिज्ञः सनातनः॥

उसी दिनके उत्पन्न हुए बालककी स्तनमें स्वतः इच्छा होनेसे, राक्षस आदिमें किसीको देखनेसे, पूर्व भवकी स्मृति होनेसे और चारभूतोंका अन्वयन होनेके कारण जीव अनादिसिद्ध मानना ही चाहिये।

મુંબઈ પ્રાંતિક સભા અને ગુજરાતના ભાઇઓ

આપણા ગુજરાતમાં દિગંબર જૈનોમાં અનેક જાતિઓ છે જેવી કે દશાહુમડ, વીશાહુમડ, નરસીંહપરા, વીગેરે દરેક જ્ઞાતિના ભાઇઓ જાણતા હશે કે મુંબઇ દિગંબર જૈન પ્રાંતિક સભા શું છે ને શું કામ કરવા ધારે છે. તેની બેઠક લગભગ દરેક વરસે થાય છે, ઠરાવો થાય છે, તેના જૈન મિત્રમાં તથા દિગંબર જૈનમાં જ્ઞાતિ સુધાર વીગેરેના લેખો આવે છે. જૈનમિત્ર વખતે કેટલાક ગામોમાં નહિં આવતું હોય તો તે ગામવાળાએ એકેક કોપી બને પત્રની મદદ ખાતે તો અવશ્ય મંગાવવીજ જોઇએ. આ પત્રો દ્વારા ગુજરાત પ્રાંતના મંત્રી કેટલીક બાબતો ઉપર વિવેચન કરવા ઇચ્છા રાખે છે, માટે દરેક જ્ઞાતિના શુભ ચિંતકોએ પોતાની જ્ઞાતિમાં જે કંઇ ખરાબ રિવાજ ટીકાપાત્ર હોય તેવા મંત્રી ઉપર મોકલી આપવા કે જેથી તેના ઉપર લંબાણથી ટીકા કરી લોકમત કેળવવાનું કાર્ય સરળ થાય. ઘણા વખતથી એકની એક બાબત ઉપર વધારે ટીકા થાય છે, લોકમાં ચર્ચાય છે તો પછી લોકમત અનુકુળજ થઇ જાય છે માટે ગુજરાત પ્રાંતના મંત્રી તરીકે મારી ફરજ છે કે પ્રાંતિક સભાનો મહેશો દરેક દરેક દિ૦ જૈનના ઘેર પહોંચાડવો. એ કાર્યમાં સફળતાનો આધાર આપણા ભાઇઓની મદદ ઉપર છે માટે જેની ઇચ્છા હોય તેણે ખુલાસાવાર રીત રિવાજ, કંઇ જરૂરીઆત, વીગેરે બાબત ઉપર ,પત્ર વ્યવહાર કરવો.

હમણાં બે બાબતો ઉપર આપનું લક્ષ ખેંચવા માગું છું. એક નીરાધાર કુટુંબને મદદ પહોંચાડવાની યોજના માટે છે. બીજું નીરૂદ્યમી માણસોને ધંધામાં પૈસાની મદદ કરવા માટે છે

.શ્રી દિગમ્બર જૈન ગુપ્ત મદદ ફંડ.

. શ્રીમાન ધર્મવત્સલ બુદ્ધિસાગર દયાનિધાન પરદુઃખભંજન શેઠ સાહેબ,

સેવામાં વિનતી કે આપણ સર્વેને આપણા પાછલા ભવના મહાન પુણ્યે કરી જૈન ધર્મ મળ્યો છે. આપણા તીર્થંકર ભગવાને ગ્રહસ્થ દશામાં રાજપાટ, કરોડોની દોલત અને રાજવૈભવ પોતાના અને બીજાના કલ્યાણ માટે તજી દીધાં છે, આવા દયાના ભંડાર જીનેશ્વર ભગવાનના આપણે સેવક છીએ, આપણે સુક્ષ્મ જીવથી હાથી જેવા મોટા જીવ ઉપર દયા બતાવીએ છીએ. આપણે જૈનો પાંજરાપોળ, દવાખાનાં, બોર્ડિંગો, મંદિરો જેવાં ખાતા નભાવનારા તરીકે આખી દુનીઆમાં પ્રખ્યાત છીએ, પણ આપણી સમાજમાં એક બાબતની ખામી છે અને આ બાબત તરફ સખી ગૃહસ્થોનું ધ્યાન ખેંચવા રજા લઉં છું. આ દુષ્ટ કાળે કરી કેટલાંક કુટુમ્બમાંથી કમાનાર મુખ્ય પુરૂષ જ્યારે મરણ પામે છે ત્યારે પાછળ વિધવા અને નાનાં બચ્ચાં વિલાપ કરતાં રહે છે, સગાવ્હાલાં અલબત તેમની બરદાશ લે છે, પણ કેટલાંક કુટુમ્બ એવાં પણ હોય છે કે જેને કોઇનો પણ આધાર નથી. એ સિવાય આજની ભયંકર મોંઘવારીમાં કેટલાક ભાઇઓને પણ ઉદરપોષણ કરવું મુશ્કેલ થઇ પડયું હશે તેવા કુટુમ્બને મદદ કરવી એ જ્ઞાતિભાઇઓની પહેલી ફરજ છે. આપણે ઘરમાં મિષ્ટાન્ન ખાઇએ અને નિરાધાર કુટુમ્બના બચ્ચાંને ખાવા કણકી સરખી પણ ન મળે એ જાણી કોને દયા ન ઉપજે? બચ્ચાં અને મા ઘરમાં બેઠાં બેઠાં ડુસકાં ભરે એ જાણી કોની આંખમાંથી આંસુ નહીં આવે! આ વાત નજરે જોયલી છે. અરે એથી પણ વધારે દુઃખદાયક સ્થીતિ તમે કદાચ જોઇ કે સાંભળી હશે. જ્યાં સુધી આવાં નિરાધાર માટે મદદ ન થાય ત્યાં સુધી આપણે મિષ્ટાન્ન જમવું આપણને શોભા ભરેલું નથી. આપણા બૈરાં તેમજ પુરૂષ જાહેર મજુરી કરી શકતાં નથી તેમ કોઇને મોઢે દુઃખ જાહેર પણ કરતાં નથી એટલાજ માટે આવી ગુપ્ત મદદની અતીશય જરૂર છે એમ આપના ધ્યાનમાં જરૂર આવશે. આને માટે મોટા ફંડની કંઇ જરૂર નથી. નીચે લખેલી કલમો પ્રમાણે આ યોજના અમલમાં મુકાય તો કાર્ય સરળ થાય.

૧ જ્ઞાતિવારે જ્યાં વસ્તી વધારે હોય તે ગામમાં કમીટી નીમાઇ આ યોજના અમલમાં મુકવા તજવીજ કરે.

૨ દરેક ગામદીઠ નીરાધાર કુટુંબની જરૂરીઆતો નક્કી કરવી અને કેટલા પૈસાની જરૂર છે તેનો અડસટ્ટો કાઢવો.

૩ દર વરસે આપ કેટલી રકમ પ્રથમ પાંચ વરસ સુધી દર વરસે આપી શકશો તે નક્કી કરી મંત્રીને લખી મોકલવી.

૪ જે ઘેર મદદ પહોંચાડવાની હશે ત્યાં તે ગામના એક ગૃહસ્થને કમીટી લખી જણાવે એટલે તે પોતાના ગામમાંથી પૈસા ઉઘરાવી અનાજની ગુણ વીગેરે મજુર મારફતે ગુપ્ત રીતે પહોંચતી કરે અને કમીટીને લખી જણાવે.

૫ પોતાના ગામની મદદ પુરતી ન હોય તો કમીટીને લખ્યેથી બીજા કોઇ ગામની ફાજલ પડતી રકમ મોકલી આપશે.

૫ કમીટીએ પૈસા ગામદીઠ ઉઘરાવી એકઠા કરવાની જરૂર નથી પણ એકંદરે આંકડો નક્કી કરી તેની પત્રદ્વારા ગોઠવણ કરે એટલે નાણાંના જોખમદારી વેઠવી પડે નહિં. અનુભવે એ લાભ નહિં.

૬ પોતાના ગામમાં કોઇને મદદની જરૂર ન હોય તો કમીટી લખે ત્યાં પૈસા ઉઘરાવી પહોંચતા કરવા.

૭ દર વરસે મહા સુદી પુનેમ સુધીમાં આ વાર્ષિક રકમ આપી શકાય એવી સગવડ દરેકે

ખાદી અને ગુજરાત.

સમગ્ર ભારતનું ગૌરવ વધારનાર હિંદના વીર મહાત્મા મોહનદાસ કરમચંદ ગાંધી જેલજાત્રાએ જતાં સમગ્ર દેશને ખાદી પહેરવા અને રેંટીઓ ચલાવવાનો છેવટનો સંદેશો આપી ગયા છે. અને તે પછી દરેક ઠેકાણે મહાત્માજીના એ સંદેશાને ઘણા હર્ષથી વધાવી લીધો છે.

રાષ્ટ્રીય સપ્તાહમાં ખાદી પ્રચાર કરવા મોટા વેપારીઓ અને દેશ નેતાઓએ તન મન ધનથી અથાગ પરીશ્રમ કર્યો છે.

દેશબંધુ દાસ, લાલા લજપતરાય, પંડિત મોતીલાલ નહેરૂ જેઓ દેશ માટે જેલ જાત્રા કરી રહેલા છે તેઓએ પણ પવિત્ર ખાદી વાપરવા હંમેશાં કહેલું છે.

આપણા જૈનધર્મભૂષણ બ્ર૦ સીતલપ્રસાદજી તેમજ આપણી જૈન સભાઓ પણ આપણને પવિત્ર ખાદી વાપરવા ભલામણ કરે છે તેમ હિંદી રાષ્ટ્રીય કોંગ્રેસનો ઠરાવ પણ ખાદી પહેરવાનો છે અને સમગ્ર દેશનેતાઓ પણ ખાદી પહેરવાનો સંદેશો કહી રહેલા છે તેજ પ્રમાણે આપણે પવિત્ર ખાદી વાપરવી જોઇએ તેને બદલે આપણા ગુજરાતના કેટલાક જૈન બાઇઓ લગ્ન જેવા શુભ પ્રસંગોમાં વાપરવા સારૂ પરદેશી કાપડ ખરીદ કરે છે!

હમારા કેટલાક જૈન ભાઇઓ પરદેશી કાપડ પહેરી આખા ગુજરાતના નામને કલંકિત કરવા તૈયાર થાય તેનાથી બીજું વધુ પાપકૃત્ય હોઇ શકે ?

આપણે આપણા દેશ પ્રત્યેનો આપણો ધર્મ સમજી પરદેશી કાપડ ખરીદ કરી આપણા પૈસાનું પાણી કરવામાં (આબરૂ અને શ્રીમતાઇ બતાવવા ક્રતા) અને પરદેશી કાપડ પહેરવામાં પાપ સમજવું જોઇએ અને ગુજરાતનું ગૌરવ વધારવા અમે તેવા સારા પ્રસંગોમાં પણ ખાદી સિવાય બીજા કાપડનો ઉપયોગ કરવો જોઇએ નહી પણ પવિત્ર ખાદી વાપરી આપણી પવિત્રતા સાબીત કરવી જોઈએ. આપણા પવિત્ર જૈન મંદિરોમાં ચંદરવા તેમ શાસ્ત્રો બાંધવામાં રેશમી કપડાં-નો ઉપયોગ કરતા હતા પણ આપણે રેશમ વાપરી મહાન હિંસાના ભાગી બનીએ છીએ કારણકે રેશમ કીડાઓમાંથી ઉત્પન્ન કરવામા આવે છે અને તે કીડાઓને મારી નાખીને રેશમ કાઢે છે માટે એ રેશમ વાપરીએ તે તો મહાન હિંસા ગણાય ત્યારે આપણા મંદિરોમા પણ ખાદી વાપરવાથી હિંસા કરેલી અપવિત્ર વસ્તુ હમેશ માટે નાબુદ થશે. તેમ વિલાયતી કાપડમાં મોટે ભાગે કાંજીમાં હાડકા જેવી અપવિત્ર વસ્તુ વાપરવામાં આવે છે એટલે આપણે અહિંસા વાદીએ અપવિત્ર વસ્તુ વાપરી દોષિત થવા કરતા પવિત્ર ખાદી વાપરવામા આપણો ધર્મ સમજવો જોઇએ

ગુજરાતના ગામડાઓમા આપણા જૈન ભાઇઓ વ્યાપારમાં અગ્રસ્થાન ધરાવે છે અને આપણે ખાદી પહેરવી તે કંઇ નવી વાત નથી. આપણને ખાદીનો પ્રથમથી સહવાસ છે તેમ ખાદીનો ઉપાડ પણ સારો થાય તેમ છે એટલે આપણા ગુજરાતના જૈન ભાઇ પોતાને ઘેર સાળો રાખી ખાદી બનાવવા લક્ષ રાખે તો દેશને ઘણો લાભ આપી શકે અને હાથવણાટના ઉદ્યોગને ખીલવવા ઉત્તેજન આપે તેનો દાખલો દાખલો હાલ સલાલ (પ્રાંતીજ) ગામમાં આપણા દિ૦ જૈન ભાઇઓ ભાઇચંદ ગુલાબચંદ ગાંધી, વીરચંદ ગુલાબચંદ ગાંધી અને છગનલાલ લાભચંદ શાહ એઓ ખંત અને મહેનતથી પોતાને ઘેર છ સાળો રાખી હાથવણાટની ખાદી બનાવે છે અને તેઓ પોતે ખતીલા હોવાથી મજબુત અને સફાઇદાર બનાવી શકે છે. ગુજરાતના દિ૦ જૈનોમા ઘેર સાળ રાખી હાથ વણાટના ઉદ્યોગને ખીલવવા બદલ તેમને ધન્યવાદ ઘટે છે અને તેઓશ્રીનું અનુકરણ કરી હાથવણાટ ખીલવવા આપણા બીજા ભાઇઓ લક્ષ આપશે, એવી આશા રાખીશું.

છેવટે આપણા ગુજરાતના એકેએક ભાઇ-ની ફરજ છે કે આપણા દેશ માટે આપણા દેશના હમારા ભાઇઓ જેલ મહેલ નિવાસી થયા છે તેમને છોડાવવા અને ગુજરાતને કલંકિત થતા અટકાવવા આપણે ખાદી પહેરીશું. આજે આપણા દેશમાં હજારો વોલંટિયરો દેશનું કામ વગર પગારે કરી રહ્યા છે તો આપણે આપણા ગામના દરેક ભાઇને ખાદી પહેરવાને વીનવવા જેટલો પ્રયાસ શું નહી કરી શકીએ?

લી૦ સેવક-ગુજરાતી જૈનબંધુ.



वनस्पति.

બીજની ઉત્પત્તિ-ઝાડ ઉપર કળી આવે છે. તે કળીની ઉપર લીલી છાલ હોય છે. તે છાલને વજ કહે છે અને તે કળીની નીચે ફુલ હોય છે. તે ફુલને આપણે પાખડીઓ અથવા ફુલમણી કહીએ છીએ. તે પાખડીની અંદર પુંકેશર અને સ્ત્રી કેશર હોય છે. તેમા સ્ત્રી કેશર ચોટી હોય છે. અને પુંકેશર મોટુ હોતુ નથી, તેના ઉપર પરાગકોશ હોય છે. તે પરાગ કોશને હવા લાગવાથી અથવા ભમરા, માખ વગેરે તેના ઉપર બેસવાથી તે પરાગકોશ સ્ત્રીકેશરના બીજાશય અથવા ગર્ભાશયમા જઇ તેનું બીજ થાય છે. તે બીજ પાકુ થાય છે, એટલે તે વાવવાના કામમા આવે છે.

વનસ્પતિનાં કારણો-હવા, પાણી અને

ખાતર. જો હવા ન હોય તો વનસ્પતિ પીળી પડે છે, અને સુકાઇ જાય છે. વળી જો પાણી ન હોય તો પણ વનસ્પતિ સુકાઇ જાય છે. અને જો ખાતર ન હોય તો વાવેલી વનસ્પતિ જોઇએ તેવી થઇ શકતિ નથી. માટે વનસ્પતિને હવા, પાણી, અને ખાતરની ખાસ જરૂર હોય છે. વળી કોઇ વનસ્પતિ તો હવા અને પાણીથી થાય છે. તેને ખાતરની જરૂર પડતી નથી, તે વેલા અથવા નાના છોડવા હોય છે. તે ઝાડ થઇ શકતું નથી.

ઝાડની ઉત્પત્તિ–કેવી રીતે થાય છે?

બીજને જમીનની અંદર વાવવાથી તેનો ફણગો થઇ ઉપર આવે છે. પછી તેને પવન લાગવાથી તે દિવસે દિવસે વધતો જાય છે. મોટો થાય ત્યારે તેને છોડ કહે છે, અને તે વધારે વધે તથા તેને ડાળીઓ આવે ત્યારે તેને ઝાડ કહે છે.

વનસ્પતિ ઉગવાનાં ત્રણ પ્રકાર છે.–છોડ, અને વૃક્ષ.

છોડ બે ત્રણ હાથનો હોય છે, તે પાતળો સાંઠા જેવો હોય છે, અને તેનાં મૂળીઆં જમીનની અંદર બહુ મોટાં હોતાં નથી. તે છોડ–કપાસ, ગુલાબ, હજારીગલ, તુળસી, ડમરો, ડાંગર અને ઘઉં વગેરે અનેક જાતના છોડ હોય છે. તેમાં કપાસના છોડ ઉપર કેરી આવે છે, અને તે કેરીની અંદરથી રૂ નીકળે છે, તે રૂની અંદરથી કપાસીઆ નીકળે છે. તે કપાસીઆ ઢોરને ખવરાવવામાં આવે છે, વળી એ રૂનું કાપડ વણાય છે. તે કપડાં માણસોને પહેરવાના કામમાં આવે છે.

વેલા જમીન ઉપર પથરાએલા હોય છે, અથવા તો કોઇ ઝાડ અને ઘરના આધારે ઉપર ચડે છે. પરંતુ ઝાડની માફક આપો આપ વધી શકતા નથી. તે વેલા કારેલાં, કકોડાં, ટીંડોળાં, તુરીયાં અને કાકડી, વગેરેના વેલા હોય છે. ઉપર જે ફળ ફુલ બેસે છે તે ફળ શાકભાજીના કામમાં આવે છે અને કોઇ કોઇ વેલા ઉપર ફુલ થાય છે તે ભગવાનને ચડાવવામાં આવે છે.

કોઇ બીજને જમીનની અંદર વાવીએ તો તેનો ફણગો થઇ ઉપર આવે છે. પછી તેને પાંદડાં આવે છે. અને તે ડાળીઓ ચારેતરફ ફેલાઇ મોટું વૃક્ષ બને છે. ફરી પાછાં તેને ફુલ આવે છે. તે ફળ ફુલને પક્ષીઓ જંગલ અથવા વગડાની અંદર લઇ જઇને ત્યાં બેસીને ખાય છે. તેનું બી ત્યાં પડી રહે છે. અને તેના ઉપર ચોમાસાની અંદર વરસાદ પડવાથી તે બી પાછું ઉગે છે. અને તેનું વૃક્ષ થાય છે. એવી રીતે જંગલ અથવા વગડામાં વૃક્ષ ઉગે છે. ત્યાં તેને કોઇ વાવતું નથી. વળી તે વૃક્ષ આંબો, મહુડો, લીંબડો, સાગ, સુખડ અને ચંપા વગેરે અનેક પ્રકારનાં વૃક્ષ હોય છે.

વનસ્પતિ બે પ્રકારની થાય છે. એક સપુષ્પ અને બીજી અપુષ્પ થાય છે. જેને ફળ ફુલ આવે તે સપુષ્પ વનસ્પતિ અને જેને ફળ ફુલ ન આવે તે અપુષ્પ વનસ્પતિ કહેવાય છે. જેમકે કાળો હંસરાજ, વિલાયતી ઘાસ, લીલ, સેવાળ, વગેરે અપુષ્પ વનસ્પતિ હોય છે. વળી લીંબડો, ચંપો, ગુલાબ અને આંબો વગેરે સપુષ્પ વનસ્પતિ હોય છે.

વનસ્પતિનો ઉપયોગ:

એ વનસ્પતિ શાશા કામમાં આવે છે. 1 અનાજ અને ઘાસ તે વનસ્પતિની અંદર થાય છે. અને તેના ઉપર પ્રાણી માત્રનું જીવતર છે. જો તે અનાજ અને ઘાસ ન હોય, તો પ્રાણી માત્ર જીવી શકે નહિ. વળી શાક, ભાજી, ફળ, ફુલ, વગેરે વનસ્પતિની અંદર થાય છે. બીજું વનસ્પતિ ઔષધના કામમાં આવે છે. વળી કોઇ કોઇ વનસ્પતિ ઉપર પુષ્પ થાય છે તે પુષ્પનું અતર બને છે. વળી તે વનસ્પતિ હવા શુદ્ધ કરે છે. અને તેનાં લાકડાં, કોલસા, ચંદન અને કેશર વગેરે થાય છે તે કેશર ભગવાનની પુજા કરવાના કામમાં આવે છે. અને લાકડાં, તથા કોલસા બાળવાના કામમાં આવે છે.

વનસ્પતિ બે પ્રકારની હોય છે. એક પ્રત્યેક અને બીજી સાધારણ. જે વનસ્પતિના આશ્રિત એક જીવ હોય તે પ્રત્યેક જેમકે કેરી, કાકડી,

લીંબુ, વગેરે અને જે વનસ્પતિના આશ્રે ઘણા જીવો હોય તેને સાધારણ વનસ્પતિ કહે છે જેમકે બટાકા, શકરીયાં, આદુ વગેરે. વળી તે પ્રત્યેક વનસ્પતિ બે પ્રકારની છે. એક સપ્રતિષ્ટ અને બીજી અપ્રતીષ્ટ તથા સાધારણ વનસ્પતિ પણ બે પ્રકારની છે. એક ઇતર નિગોદ અને બીજી નિત્ય નિગોદ. જે નિગોદની અંદરથી જીવો નિકળ્યા નથી તેને નિત્ય નિગોદ કહે છે, અને જે નિત્ય નિગોદમાંથી નીકળી પાછા નિગોદમાં પડે તેને ઇતર નિગોદ કહે છે. એ નિગોદીઆ જીવ ત્રણ લોકમાં અસંખ્યાત ભરેલા છે. માટે એ સાધારણ વનસ્પતિની અંદર અસંખ્યાત જીવ સમજી તેને તજવી જોઇએ. વળી એ વનસ્પતિમાં ૧૦ લાખ પ્રત્યેક અને ૧૪ લાખ સાધારણ વનસ્પતિ છે. અને બધી મળી ૨૪ લાખ વનસ્પતિ કાય છે. અને એને ચાર પ્રાણ હોય છે. ૧ સ્પર્શન ઇંદ્રિ, ૨ કાયબલ, ૩ આયુ અને ૪ શ્વાસોશ્વાસ. વળી તે વધે છે મરે છે, અને જીવે છે. તેને દુંખ સુખ માલમ પડે છે. વળી તેમાં મતિ અને શ્રુતિ એ બે જ્ઞાન હોય છે.

ઉપર કહ્યા પ્રમાણે બીજની ઉત્પત્તિ થાય છે અને બીજની અંદરથી વનસ્પત્તિ થાય છે, અને બીજની અંદરથી વનસ્પતિની ઉત્પત્તિ થાય છે.

નાનીબ્હેન ઉમરચંદ,
શ્રાવિકાશ્રમ-મુંબઇ.

प्रेम-पुष्प.

प्रेमी,

अर्ध रात्रिका समय है। पर टिमटिमाते तारे मुझे ईर्षा भरे नेत्रोंसे देख रहे हैं। रात्रि की अपूर्व शान्ति भी कभी २ चौकप कुत्तोंकी भौं भौंसे व्यथ हो उठती है। तो भी सुनिए।

सांसारिक ज्ञान परिमित है। ईर्षा-द्वेष, मान-मत्सर और मोह-मदका नाश बडा हुआ है। पर वह (ज्ञान) ज्ञातव्य है। और उस (ज्ञान) पर अमल करना भी योग्य है। परन्तु अफसोस! समय अति शीघ्रगामी है! वह किसी की भी प्रतीक्षा नहीं करता। हम क्यों जीवित हैं? क्या यह जीवन नीरस है? 'संसारकी संपूर्ण लक्ष्मी या सम्पदाका यदि मैं स्वामी होता तो उस अगाध रत्नराशिको भी दे डालता। मुझे कुछ वर्षोंकी-एक ही वर्षकी-अभी एक महीनेकी नहीं २ एक मिनटकी ही अधिक प्राप्ति हो जाती!' परन्तु यह अभिलाषा निराशामय, फलहीन प्रलाप मात्र है!

अतु 'सत्यकी खोज करना उत्तम है। उसको प्राप्त करना सुखद है। मनुष्य हृदयकी यह प्राचीनतम भावना है कि धनसे उत्कृष्ट-उत्तम एवं मूल्यवान ज्ञान है। और यह वास्तविकतया एवं पावनरूपमें यथार्थ है। गत कालमें मनुष्यके विषयाकांक्षाओंका अवलोकन करिए, राष्ट्रोंका उत्थान और पतन देखिए, प्रकाश और गर्मी और पवनका उल्लेख करिए, मनुष्यके स्वर्गीय एवं भौमिक आविष्कारोंका ज्ञान प्राप्त करिए, भूमिके पवित्र गर्भमेंसे अद्भुत ऐवं अलौकिक शक्ति राशिको निहारिए जिसको चतुर कारीगरने ढूंढ निकाला है, संसारके ऐसे २ स्थलोंका जहां प्रकाश अपने विद्युत्वेगसे चलते हुए भी नहीं पहुंच पाता है वर्णन सुनिए, प्रचुर सुगंधमय पद्यउद्यानमें विचरिए और प्राचीनकालके स्वतंत्र राज्योंके साहस पर्वको कृत्योंसे अपनेमें जीवन भरिए, किन्तु इन नव परिवर्तनोंके उलट फेरके मध्य यह ध्यान रखिए कि केवल एक दो वस्तु अर्थात सत्य, अजर, अमर, अचल, अविनाशी इस संसारमें हैं। अस्तु उसीकी उपासना करिए। शुद्ध हृदयसे उसको अपनाईए जिससे मिथ्याभ्रमका अंधकार मय परदा

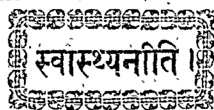
आंखोंके अगाड़ीसे हट जाए और वस्तुकी यथार्थता दर्श जाए।

मनुष्यका सर्व प्रथम जीवनोद्देश्य अपने आपको जानता है। और अपने आपका ज्ञान प्राप्त कर जनतामें आध्यात्मिक पवित्रताका प्रचार करना एवं जीवनके प्रत्येक कर्ममें उसकी छाप बैठाना है। संसार मिथ्या अविश्वासमें पड़ा हुआ है। संसारके साहसी वीर और उत्तम पुरुष सबकी भलाईके लिए अपनेको जातिके उद्धारके लिए समर्पण करेंगे। संसारको चरित्रकी आवश्यक्ता है। साहस पूर्ण शब्दों और उससे भी अधिक साहसी कार्योंकी आवश्यक्ता है। अस्तु जग जाए। संसार दुःखसे तप्त है। आप सो नहीं सक्ते हैं। इस प्रेम-मंत्रोंको रटिए जिससे स्वयम् देवता हमारे भीतरका पुनीति देव जागृत हो जावे। इससे जीवनमें और क्या है? तदवीर स्वयं आ जाती हैं। उनके बनानेकी आवश्यक्ता नहीं। बस निर्माद्देश्य प्राप्तिके मार्गमें रत हो जाइए।' अस्तु:—

"भटाईको न भूलेंगे, बुराईको न छोड़ेंगे।
हटिके प्राण खोदेंगे, प्रतिज्ञाको न तोड़ेंगे॥
बोयेंगे प्रेमके पौधे, दयाके फूल फूलेंगे।
भरे आनंदसे चारों, फलोंके साथ झूलेंगे॥"

बस प्रेम, प्रेम और फिर प्रेम ही एक शब्द है। तब उससे हिंसा हो ही नहीं सक्ती। धन्य है पावन पुनीति प्रेम! पवित्र मंत्रोंका अध्ययन एक विशिष्ट कर्तव्य है। उसको दृष्टिकोण करते हुए मन में प्रेम-पताका फहराते हुए निर्मोद्देश्यकी ओर बढ़ते जाइए। विशेष फिर।

आपका वही-प्रेम पुनारीका पापमक्त—
कामताप्रसाद जैन, परैली।



स्वास्थ्यनीति।

प्रत्येक सभ्य देशमें स्वास्थ्यरक्षा और रोगनिवारणार्थ स्वास्थ्यविभागका प्रबन्ध है। रोग उत्पन्न होनेके सामान्य कारणोंको दूर करना उक्त स्वास्थ्य विभागका कार्य है। नाली, नाले व सड़कोंकी सफाई, कूडा कर्कट आदि पदार्थोंको दूर करना दीन दुःखी व असमर्थ रोगियोंके लिए दातव्य चिकित्सालय स्थापित करना, संक्रामक रोगोंके समय उनसे बचनेके उपायोंको कार्यमें लाना, स्वास्थ्यको खराब करनेवाले कार्मोंको रोकनेके लिए स्वास्थ्य सम्बन्धी आईन वगैरह जारी करना भी स्वास्थ्य विभागका कार्य है। वर्तमान सभ्य जगतमें स्वास्थ्य विभागके द्वारा सर्व साधारणकी स्वास्थ्य रक्षा की जाती है। प्राचीन भारतमें स्वास्थ्य रक्षाका क्या प्रबन्ध था, यही बात इस लेखमें दिखायेंगे। हिन्दू सदा ही से धर्मभीरु हैं। यद्यपि पाश्चात्य सभ्यताके प्रकाशमें यह धर्मभीरुता कम होगई है तथापि इसी समाजमें इस समय भी बहुत कुछ वर्तमान है। इस समय कानूनकी कृपासे दलील, दस्तखत, साक्षी, रजिस्ट्री आदिके होनेपर भी सत्य असत्य होजाता है किन्तु पूर्वकालमें धर्मभीरुताके प्रभावसे केवल मुखसे कहदेनेसे ही सत्यकी रक्षा कीजातीथी। इसी प्रकार धर्मकी दुहाई देकर स्वास्थ्यरक्षा भी सहजमें होजाती थी। हमारी नित्य नैमित्तिक प्रत्येक क्रिया स्वास्थ्यके साथ अवलम्बित है। प्रातः मुहूर्तमें या रात्रि

के अन्तिम प्रहरसे हमारा प्रातःकृत्य आरम्भ होता है। इस समय ब्राह्मणादि चारों वर्ण ही निद्रा त्याग करके शय्याके उपर उत्तरमुख वा पूर्वमुख बैठकर अपने इष्टदेवका स्मरण करते हैं पश्चात अन्य प्रातःस्मरणीय महात्माओंके नामोच्चारण करके शय्याको त्याग करते हैं। यही हिन्दुशास्त्रकी विधि है। ब्राह्ममुहूर्तमें उठना वैद्यक दृष्टिसे स्वास्थ्यके लिए अत्यन्त हितकारी है। पाश्चात्य स्वास्थ्य विज्ञान और चिकित्सा शास्त्रमें भी ब्राह्ममुहूर्तमें उठना स्वास्थ्यके लिए अत्यन्त हितकर बताया गया है। इस प्रकार आह्निक क्रिया द्वारा स्वास्थ्य साधन केवल शारीर विज्ञानके ही आधार पर सगठित नहीं है किन्तु इसमें मनोविज्ञान भी सम्मिलित है। महात्माओंके नामोंका स्मरण और कीर्तन करनेसे मनुष्यके मनोभाव गठित होते हैं। मनके साथ शरीरका अत्यन्त घनिष्ट सम्बन्ध है। इस कारण मानसिक उत्कर्ष भी स्वास्थ्योन्नतिके लिए आवश्यक है।

निद्रासे उठनेके पश्चात मल-मूत्र त्यागकी विधि है। ग्राममें घरसे डेढ सौ हाथ दूर और शहरमें उससे चौगुनी दूर नैऋत्य कोणमें मल-त्याग करनेके लिए स्थान निर्वाचित करना शास्त्रकी आज्ञा है। इसका मुख्य उद्देश्य यह है कि निवास स्थानकी वायु जिससे दूषित न हो ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए। छोटे २ ग्रामोंकी अपेक्षा शहरमें मनुष्योंकी संख्या अधिक होती है। इस कारण वहां मलकी अधिकता होती है। अतएव उस समय ग्रामकी अपेक्षा शहरमें मलत्याग करनेकी व्यवस्था बहुत दूर थी। नैऋत्यकोणमें इस लिए मलत्याग करनेको स्थान निर्दिष्ट किया गया था कि नैऋत्य दिशाकी वायु बहुत कम बहती है और जो बहती है तो बहुत थोडी देर। मल-मूत्र त्यागके समय मौनावलम्बन होना अत्यावश्यक है। उस समय थूकना और श्वास लेना भी निषिद्ध है। मलत्यागके समय पहरे हुए वस्त्रको कमरके ऊपर करलेना चाहिए। खडाऊं पहन कर, खड़े हुए या चलते हुए मल-मूत्रका त्याग करना निषिद्ध है। यह सब रीतियां स्वास्थ्यके लिए कितनी हितकर हैं, यह स्पष्ट ही मालूम होता है। उस समय केवल मनुष्योंके स्वास्थ्यको ही उत्तम रखनेकी व्यवस्था नहींथी किन्तु पशुओंके स्वास्थ्य पर भी लक्ष्य रखनेका नियम था। यथा—"सदैव गोब्राह्मणवन्हिमार्गे न राजमार्गे न चतुष्पथे च। कुर्यान्नोत्सर्गमपीह गोष्ठ पूर्वा परा चैव समाश्रितां गाम्।" अर्थात् देवता, ब्राह्मण, और अग्निके सामने, राजमार्गमें चौराहेमें, पशुओंकी गोष्टीमें अथवा जिन स्थानोंमें गौयें विचरती हैं, उन स्थानोंमें मलत्याग करना निषिद्ध है।

मृत्तिका—दुर्गन्धनाशक है। और इसमें क्षारादि पदार्थोंके होनेसे यह शरीरके कलेद और मलादिको दूर करती है। एवं मकचर्मरोगको निवारण करती है। इस लिए यह हिंदुशास्त्रके मतसे शौचके लिये आवश्यक होती है। हिंदुधर्मके साथ स्वास्थ्यका इतना घनिष्ट सम्बन्ध है कि उस मृत्तिकाके भी शुद्ध होनेकी विशेष आव-

श्यक्ता है। इसके विषयमें शास्त्रकार कहते हैं कि—जलमेंसे निकाली हुई, चूहेके बिलकी, अग्राह्य दूसरेके शौच कर्मसे बची हुई और सांप की बाँबईकी मृत्तिका नहीं लेनी चाहिए।

इसके पश्चात् हिंदुशास्त्रमें प्रातः स्नानकी व्यवस्था है। प्रातःस्नानके नियम भी विधिबद्ध हैं। सूर्योदयसे पहले ही प्रातः स्नानका समय है। प्रातःस्नानके बिना देव साधनादि कार्य सम्पन्न नहीं होते। इस कारण धार्मिक हिंदुओंके लिये प्रातःस्नान करना परमावश्यक है। स्रोतके जलमें, स्रोतके सामने मुखकरके और बिना स्रोत वाले जलमें सूर्याभिमुख हो नाभिपर्यंत जलमें खड़े होकर दोनों हाथोंसे मुख, नासिका और कानोंके छिद्रोंको बन्द करके डूबकी लगाकर स्नान करे। जलाशय दूसरेका हो तो स्नान करनेसे पहले इसमेंसे तीन या पांच मृत्तिकाके पिण्ड निकालकर किनारे पर रखे और—"उत्तिष्ठोत्तिष्ठ पंकस्त्वयम पूर्ण्यं पास्य च। पापानि विलयं यांति शांति देहि सदा मम" इस मंत्रको पढ़े। यह भी स्वास्थ्य विधायक कार्य है। प्रत्येक मनुष्य यदि प्रतिदिन स्नान करनेके समय तीन या पाँच मृत्तिकाके पिण्ड जलाशय (तालाब नदी) मेंसे निकालकर फेंके तो उससे जलाशयकी कीचड़की सफाई सहजमें होसकती है।

आगे स्नानके समय मस्तक वक्षःस्थल आदि अङ्गोंको मृत्तिकासे मार्जन करने की भी विधि है इसका कारण पहलेही कहा जा चुका है। मृत्तिका दुर्गन्धनाशक, क्लेदोद्धारक और Disinfectant या कीटाणुओंको नाश करता है।

इसी प्रकार शयन, भोजन आदि प्रत्येक कार्यमें हिंदुधर्मशास्त्रकी जो क्रियायें हैं, वे सब ही उन्नति करने वाली हैं। स्वच्छता हिंदुधर्मका प्रधान अङ्ग है। रातके पहरे हुए या बिना धुले वस्त्रोंको पहर कर दैनिक पूजनादि क्रिया और भोजनादि करना हिंदुओंके लिये सर्वथा निषिद्ध है। यहाँतक कि बिना धुले वस्त्रोंको पहनकर भोजन बनाना भी ठीक नहीं कहा गया है।

तिथि, वार, मास और ऋतुविशेषमें जो भिन्न भिन्न प्रकारके खाद्य पदार्थोंका निषेध किया गया है, उनकी संरक्षाके लिये ब्रह्महत्यादि महापातकों की दुहाई दीगई है। विरुद्ध भोजनके सम्बन्धमें भी ऐसा ही आदेश है।

जिससे घरमें कूड़ा—कचरा या मैला इकट्ठा न हो ऐसा उपदेश दिया गया है। घरको स्वच्छ रखना महापुण्यका कार्य बताया गया है। यह विधि भी स्वास्थ्यरक्षाके लिए उत्तम है।

इस प्रकार हिंदुओंकी प्रत्येक क्रिया—कलापमें शारीरिक व स्वास्थ्य साधनके लिए धर्मकी व्यवस्था की गई है।

"वैद्य" से उद्धृत।

॥श्रीवीतरागाय नमः ॥

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः ।
संबोधयत्पत्रमिदं प्रवर्त्तताम्, दैगम्बर जैन समाज मात्रम् ॥

वर्ष १५ वाँ. ‖ वीर संवत् २४४८. वैशाख विक्रम सं० १९७८. ‖ अंक ७वां



श्रुतपंचमी आ गई।

हमारी परम पूज्य जिनवाणीका माताका पूज्य आदर करनेका यदि कोई खास पर्व हो तो वह " श्री श्रुत पंचमी पर्व " है। इस पवित्र दिनको ही श्रीमद् भूतबलि और अर्हद्बलि आचार्योंने बड़ी भक्तिसे जिनवाणीकी पूजा की गई थी। और तबसे यह पर्व मनाने लगा है। और अभी हो ज्येष्ठ सुदी ५ के दिन आ पहुंचा है।

यह निश्चय है कि निमित्त कारण विना कार्यकी उत्पत्ति नहीं होती इसी प्रकार श्रुतपंचमी पर्वके निमित्तसे हमें जिनवाणी माताकी विनय पूजा करनेका मौका मिल जाता है। वर्षोंसे उपदेशकों, वर्तमानपत्रों, व्याख्यानकारों चिल्लाते २ थक गये तो भी अभीतक हमारे हजारों जैन ग्रन्थ अनेक भंडारोंमें नष्टप्राय हो रहे हैं और उनको कभी पुस्तक नहीं दिखाई जाती यह कितने बड़े खेदकी बात है। अब तो पंडितोंकी भरमार हो रही है तब ऐसे समयमें भी शास्त्रोंका जीर्णोद्धार नहीं होगा तो कब होगा। हमारी महासभाने भी अभी ही लखनऊमें इसके लिए (नागोर ईडर, आदिके भंडारोंका उद्धार करनेके लिये) प्रस्ताव किया है और लाला जम्बूप्रसादजी व लाला देवसहायजीने इस कार्यको अपने तन मन धनसे करना स्वीकार किया है। परन्तु अभीतक उन्होंने इस विषयमें क्या किया है कुछ प्रकट नहीं हुआ। अब इस श्रुतपंचमीके दिनसे तो उनका कर्तव्य है कि इस कार्यको प्रारम्भ कर दें।

यह श्रुतपंचमी पर्व हमें किस प्रकार मनाना चाहिये उसका कुछ दिग्दर्शन यहां कियाजाता है—

(१) दो चार दिन पहिलेसे हरएक मंदिरका शास्त्र भंडार खोलना चाहिये और सब शास्त्रोंको खोलकर धूपमें रखना चाहिये। जिस किसीको गत्ते नहीं हो तो गत्ते बनालेने चाहिये, और वेष्टन तो यदि हरएक स्थान होंगे तो वेह रेशमी ही होंगे परन्तु अब हम रे भाई अच्छी तरहसे जान गये हैं कि हजारों जीवोंकी हत्यासे उत्पन्न होता हुआ अतीव अशुद्ध रेशमका व्यवहार

हमें नहीं करना चाहिये इसलिये सभी रेशमी वेष्टनों, रेशमी चंदोवा, रेशमी तोरण आदि हो तो बदलकर सब विशुद्ध गाढ़ेका बना देवे। सुफेद गाढेको पीला रंगकर कांममें लेनेसे ये बहुत सुंदर लगते हैं। आशा है कि इस वर्ष यह सुधार अवश्य होगा।

(२) पुस्तकाकार ग्रंथके पन्ने अलग हो गये हो तो उनको भी ठीक करालेवें।

(३) श्रुतपंचमी अर्थात् ज्येष्ठ सुदी ५ के दिन सुबह हरएक मंदिरके छोटे बड़े सभी शास्त्रोंको ऊंचे आसनपर विनयके साथ विराजमान करना चाहिये और फिर सब भाइयों बहिनोंको मिलकर 'श्रुतस्कंध विधान' पूजा अर्थात् जिनवाणीकी पूजन गाजेबाजेके साथ पढ़नी चाहिये। यदि विधानकी पुस्तक न हो तो सरस्वति पूजा करनी चाहिये।

(४) शामको अथवा रात्रिको शहरके सब भाइयोंको इकत्र करके मंदिरमें या तो कोई बड़ी जगयामें व्याख्यान सभा करनी चाहिये और उसमें विद्वान वक्ताओंके पास श्रुत पंचमी पर्व और हमारा आधुनिक कर्तव्य पर व्याख्यान दिलाना चाहिये तथा जो २ शास्त्र अपने मंदिरमें न हो उनको मंगानेका प्रबंध करना चाहिये। हस्त लिखित व मुद्रित हरएक जैन ग्रन्थकी एक २ नकल तो अवश्य हरएक मंदिरमें होना चाहिये परन्तु अनेकों मंदिरोंमें हैं जहां के भंडारोंमें तो हजारों ग्रन्थोंकी लिखित है परन्तु शास्त्रभंडार देखो तो उनमें गिनती शास्त्र ही हैं इस लिये ही हम लिखते हैं भंडारोंके द्वारा लाभ उपयोग जैन ग्रंथोंमें लाभ करते करना चाहिये। श्री गोम्मटसार ग्रंथकी बड़ी टीका (६ खंड मू० रु० ९१) तथा माणिकचंद सुलभ ग्रन्थमालाके प्रकट हुए सभी संस्कृत ग्रंथ तो हरएक मंदिरमें अवश्य मगाकर विराजमान करना चाहिये। जो मुद्रित नहीं मिलते हों वे हस्त लिखित मगानेका प्रबंध महासभा ऑफिस बड़नगरसे करना चाहिये तथा मुद्रित तो हमारे दि० जैन पुस्तकालयसे या अन्य पुस्तकालयोंसे मिल सकते हैं।

(५) जहांका शास्त्र भंडार बिल्कुल बंद पड़ा है उनको खोलनेका प्रबन्ध करनेके लिये एक कमेटी नियुक्त करना चाहिये तथा उस कार्यके लिये कुछ चंदा भी करना चाहिये।

(६) ज्ञान दान समान पुण्य दूसरा नहीं है इस लिये ज्ञानके लिये जहां कहीं पाठशाला नहीं हो अथवा बंद पड़ी हो तो वहां पाठशाला चालु करनेका पक्का प्रबंध करना चाहिये और शास्त्र दानकी प्रभावना करनी चाहिये, अर्थात् कोई भी छोटी बड़ी पुस्तक सब भाईयोंको भेंट बांटनी चाहिये।

(७) इस श्रुतपंचमी पर्व हरएक स्थानै पर किस प्रकार मनाया गया उसका समाचार आगामी अंकमें प्रकट करनेके लिये हमें शीघ्र ही लिख भेजना चाहिये। आशा है हमारे इस निवेदन पर समाज अवश्य ध्यान देगी।

* * *

सोनागिरि में घोर अन्याय।

सोनागिरि सिद्ध क्षेत्रपर भट्टारक हरेन्द्रभूषणजी रहते हैं। वे वहां उनके गुरु परंपरासे और ... पना इसके सिवाय क्षेत्रका प्रबंध कुछ नहीं करते और भट्टारकके ढ़ालो मरते सारा

कर गये थे इससे हमारी भारत० दि० जैन क्षेत्र कमेटीने चार वर्षसे वहां अलग दफ्तर स्थापन किया है और भट्टारक जितना भी कष्ट देते हैं उनको सहन करके आपसे विशेष खर्च करके भी अपना कार्य चला रही है। दूसरी ओर भट्टारकने नई कमेटी बनाकर अपनी जाल फैलाई थी तौ भी बहुत लोक कमेटीके दफ्तरमें ही मेहसपट्टी देते थे। कईबार भट्टारकने कमेटीके मुनीमपर फौजदारी दावे भी किये थे उसका भी पूरा २ सामना किया गया था। परन्तु इससे बढ़ कर अभी इस भट्टारकने अपनी कमेटीके सभापति लाला भरोसेलालजी आगराकी बिना सम्मति तथा तार चिट्ठिद्वारा उनका अटकाव होनेपर भी तीर्थक्षेत्र कमेटीके ऊपर एक मुकद्दमा चलाया है जिसमें आपने कमेटीपर मिथ्या दोषारोपण करके महाराज दतियाकी नजरसे कमेटीकी महत्ताको गिरानेका (दफ्तर हटवा देनेका) निंद्य प्रयत्न किया है। इसकी दो पेशी हो चुकी हैं। और मुकदमा चालू ही है परन्तु जैन समाजका इस मौकेपर कर्तव्य है कि वह दतिया नरेशके ध्यानमें यह बात लावे कि यह क्षेत्र भट्टारककी मालकीका नहीं है परन्तु सारी जैन समाजका धर्मतीर्थ है। इसके लिये एक अर्जी हरएक पंचायतीकी ओरसे दीवान, दतिया स्टेट-दतियाकी सेवामें इस आशयकी भेजनी चाहिये कि भट्टारक हरेन्द्रभूषणने सोनागिरी तीर्थक्षेत्र कमेटीपर जो मुकदमा दायर किया है वह बिल्कुल झूठा है। तीर्थक्षेत्र कमेटी, सरकारमें रजिस्टर्ड समाजकी माननीय संस्था है और उसपर समाजका पूर्ण विश्वास है इससे कमेटीका दफ्तर क्षेत्रसे हटवाना नहीं चाहिये और भट्टारकका दावा रद्द करना चाहिये आदि। आशा है कि हरएक पंचायती आलस्य छोडकर ऐसी अर्जी अवश्य भेजेंगी।

* * *

जैन साहित्य-का महत्व। जैन साहित्यका महत्व प्रकट करनेके लिये लखनऊमें गत महासभाके साथ २ लखनऊके धर्मप्रेमी भाईयोंने जैन साहित्य सभा करनेका खास प्रबंध किया था और (१) षट्द्रव्यकी आवश्यकता और सिद्धि तथा (२) जैन काव्योंका महत्व, ऐसे दो इनामी निबंध विद्वान पंडितोंसे लिखवाये थे और ऐसे ६ लेख भेजनेवाले विद्वान पंडितोंको सब मिलकर २००) इनाम भी दिया गया था। परंतु समयाभावसे साहित्य सभामें इन लेखोंमेंसे सब तो क्या एक दो भी पूरे २ नहीं पढ़े गये थे इससे इन लेखोंमें विद्वान् लेखकोंने क्या २ बताया है वह सबके जाननेमें नहीं आया था तथा ऐसे महत्वपूर्ण लेख छपकर अवश्य प्रकट होने चाहिये परंतु अभीतक ऐसी व्यवस्था न हो सकनेसे पूज्य ब्र० शीतलप्रसादजीने हमको आग्रह किया कि आप इन लेखोंको अपने मासिकपत्रमें क्रमशः प्रकट करदो तथा कुछ कापी अलग भी निकालोगे तो जैन समाजका बहुत कल्याण होगा और नवीन लेखकोंका उत्साह भी बढ़ेगा आदि। हमने इस बातको स्वीकार किया, सब लेख प्राप्त किये और क्रमशः प्रकट करनेका प्रारंभ किया है उसमें "षट्द्रव्यकी आवश्यकता व सिद्धि" के तीन लेखोंमें पं० मथुरादासजी मोरेनाका प्रथम लेख इस अंकमें पूर्ण हुआ है

और दूसरा लेख आगामी अंकसे प्रारम्भ होगा। हरएक पाठकको हम आग्रह करते हैं कि वे इन लेखोंको अवश्यमेव पढ़ें और संग्रह करकर रखें।

* * *

હાલમાં કેટલાક વર્ષોથી આબૂજીની યાત્રાએ જવાને જે અગવડ પડતી હતી આબુજીની તે ત્યા જનારજ જાણે છે. યાત્રામાં સગવડ. એટલે કે આબૂરોડથી તો પહાડ પર જવાને મોટર મળે છે પણ ઉપર કેમ્પ પાસે જતાંજ યાત્રાળુઓને કેમ્પમા થઇને જવાનો હુકમ ન હોવાથી મોટરવાળા ઉતારી દે છે જેથી પછી પગે ચાલતા આડેઅવળે જંગલી રસ્તે મજૂરો પાસે બોજા ઉંચકાવી આશરે ૨ માઇલ સુધી જવું પડે છે જેથી યાત્રાળુઓને અતિશય હાડમારી પડતી હતી તે માટે જૈન સંઘે પ્રયાસ કરવાથી રજપૂતાના એજન્ટ ટુ ધી ગવર્નર જનરલને આપણું ડેપ્યુટેશન તા० ૧૨-૪-૨૨ને દિને આબુ મળેલુ તે પર વિચાર કરી તા० ૪-૫-૨૨ના રોજ માઉંટ આબુના ડિસ્ટ્રીક્ટ મેજીસ્ટ્રેટ તરફથી નીચે મુજબ નોટિશ પ્રગટ કરવામાં આવી છેઃ—

નોટીશ.

આ જાહેર ખબરથી દેલવાડા જનાર સર્વે યાત્રાળુઓને ખબર આપવામા આવે છે કે દેલવાડા જવા માટે આબુ રોડમાં ડાકટરી તપાસ ચોકી આગળ તેઓની મરજી મુજબ બે પાસમાંથી ગમે તે પાસ તેઓને આપવામાં આવશે. એક પાસ ભુરા રંગનો, ટુંકાઇ ચોકી પાસે થઇ યાત્રાળુઓને રસ્તે બારોબાર દેલવાડા જવાની ઇચ્છાવાળાઓને આપવામાં આવશે, અને બીજો પાસ પીળા રંગનો માઉન્ટ આબુમા થઇ જવાની જેઓની ઇચ્છા હશે તેમને આપવામાં આવશે, પરંતુ પીળો પાસ લેનારાએ એ ધ્યાન રાખવું કે જો તેઓ માઉન્ટ આબુની હદમાં, રહેશે તો જ્યા સુધી તેઓ સ્ટેશ-નમાં રહે ત્યા સુધી તેમને દરરોજ ૧૦ દીવસ સુધી એડમસ હોસ્પીટાલમા ડાકટરી તપાસ માટે જવું પડશે. પોતાને ખરચે હી આપવાથી ઘેર પણ મદદ તપાસ કરવાનો બંદોબસ્ત થઇ શકશે. ભુરા રંગનો પાસ લેનારને માઉન્ટ આબુમાં થઇ જવા દેવામા આવશે નહી.

જી० બી० વોડર મેજર.
ડીસ્ટ્રીકટ મેજીસ્ટ્રેટ, માઉન્ટ આબુ.

આથી હવે આબૂ કેમ્પમાં થઇને મોટર દ્વારા આપણા મંદિરો સુધી જઇ શકાશે અને આ બાબત વિશેષ પત્રવ્યવહાર હજુ ચાલુ છે.

गरीबोंके विवाह कैसे हों ?

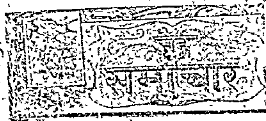
क्योंकर गरीब भाई अपना विवाह करलें ?
हमको बताये कोई हम भी सलाह करलें ॥टेक
धनवान भाइयोंको देते हैं पुत्रियाँ सब ।
है क्या मजाल ! कोई निर्धन विवाह करले ॥१
इसही गरजसे निर्धन फिरते हैं मारेमारे ।
रुपयों विना विचारे किस विध विवाह करले ॥२
धनवान भाइयोंने सब पुत्रियाँ खरीदीं ।
रुप्या हजारों देकर सुविधासे व्याह करले ॥
इस ही सबबसे निर्धन बहुतक फिरें कुँवारे ।
करते हैं ख्वार जीवन कैसे सुधार करलें ॥
इसपर विचार करना है फर्ज सबका "प्रेमी"
जिससे विचारे निर्धन अपना विवाह करले ॥

पं० गौरेलाल पंचरत्न "प्रेमी"

चार दान।

यह चंचल लक्ष्मी पाय गर्व नहि कीजे।
मन वच तन प्यारे चार दान शुभ दीजे ॥ टेक॥
यह पूर्व पुन्यके तरुवरका फल सारा।
जो आकर तुमको प्राप्त हुआ इस वारा ॥
चक्राधीशोंने इससे मोह निवारा।
यह लक्ष्मी चंचल इसका कौन पतियारा ॥
सुन प्यारे मत इससे कीजे यारी।
सुन प्यारे यह लक्ष्मी चंचल मारी ॥
सुन प्यारे तज लोभ महा दुखकारी।
सुन प्यारे करले सन्तोषसे यारी ॥
यह सीख सुगुरुकी हृदयमें धरलीजे ॥ १ ॥
मुनि त्यागी क्षुल्लक और ब्रह्मचारी हैं।
अंधे अपंग जो निर्धन दुखयारी हैं ॥
अथवा समाजकी जो विधवा नारी है।
जिनका दुख देखत नयन नीर जारी है ॥
सुन प्यारे इन आदि और जो होवें।
सुन प्यारे जो भूखे निशदिन रोवें ॥
सुन प्यारे उनकी सहायता कीजे।
इससे जगमें यश लीजे ॥
यह पहिला **भोजन दान** इसे दे लीजे ॥२॥
इस समय देशमें रोग अनेकों छाये।
जिनके कारण मन बहुतक प्रान गमाये ॥
कोई पैसे विन हैं रोग ग्रसत घबडाये।
है औषधकी दरकार वैद्य दिग आये ॥
सुन पैसे विन वैद्य न आवें।
सुन प्यारे नहि उनको दवा दिलावें ॥
सुन प्यारे उनकी सहायता कीजे।
सुन प्यारे पैसा विन औषध दीजे ॥
यह दूजा **औषधदान** इसे देलीजे ॥ ३ ॥
इस जगमें सब जन निर्भय रहना चहते।
नहि किसी तरहकी विपतिमें परना चहते ॥
जिस तरह बने उनकी विपत्तिको हरना।
यह **अभयदान** भी मनवच वितरन करना ॥
सुन प्यारे यह अभयदान नित दीजे।
सुन प्यारे यासे निर्भय पद लीजे ॥
सुन प्यारे जो परको निर्भय करता।
सुन प्यारे वह जगमें निर्भय रहता ॥
यह तीजा **निर्भयदान** इसे देलीजे ॥ ४ ॥
है ज्ञान जगतमें जीवनका हित करता।
इसके विन आतम चारों गतिमें भ्रमता ॥
विन ज्ञान देखलो कार्य न कोई सरता।
ज्ञानी सर्वथा सुखका अनभव करता ॥
सुन प्यारे कर **ज्ञानदान** सुख लीजे।
सुन प्यारे नहीं इसमें संशय कीजे ॥
सुन प्यारे जो ज्ञानदान देता है।
सुन प्यारे वह ज्ञान स्वयं लेता है ॥
यह "गोरेलाल" की विनय पास कर लीजे ५

पं० गोरेलाल पंचरत्न।



अकाल मृत्युसे सभा व प्रतिष्ठा बंद–ब्यावरमें ज्येठ सुदी १ से ९ तक वेदी प्रतिष्ठा व भारत० दि० जैन खंडेलवाल महासभाका दूसरा अधिवेशन होनेवाला था परंतु खुद प्रतिष्ठाकारक श्रीमान् सेठ मोतीलालजी कासलीवालका बंबईसे ब्यावर जाते हुए गत ता० १९ की रात्रिको ८ बजे सेन्दरा स्टेशन पर रेल गाडीके नीचे आकर असमयमें अकस्मात् देहोत्सर्ग हो गया इससे प्रतिष्ठा व सभा दोनों बंद रखा गया है। इस अकाल मरणमें हम सेठ मोतीलालजीकी आत्माको शांति चाहते हैं। –

श्राविकाश्रम–बम्बई गर्मीकी छुट्टीके बाद ता० १–६–२२ ज्येठ सुद ६ को खुलेगा। जिनको दाखिल होना हो फार्म भरकर भेज देवें। मगनव्हेन।

अजमेर–में जेठ वद ९ को रा० बा० सेठ टीकमचंदजीके सभापतित्वमें छहों धडोंके समस्त दि० जैन खंडेलवाल भाइयोंकी एक विराट सभा हुई थी जिसमें सेठ मोतीलालजी ब्यावरके अकाल मरणपर शोक प्रकट किया गया और मेला बंद रखनेका प्रस्ताव पास हुआ। तथा खं० महासभा व अजमेर प्रां० दि० जैन खं० सभाके लिये प्रतिनिधियोंका चुनाव करनेके लिये सभापतिने अपील की परंतु बहुत लोगोंने कहा कि हम अपनी सत्ता चंद आदमियोंके हाथमें क्यों देवे आदि, इसपर बहुत बहस होकर अंतमें प्रतिनिधि चुनना बंद रहा परंतु सभापतिजीने कहा कि प्रतिनिधि न चुनो तो न सही लेकिन यहां भी तो कुछ काम करके दिखाओ, इससे लग्न मृत्यु आदिके अवसरोंपर होते हुए जीमन व रीतिरिवाजोंमें बहुत कुछ सुधार करनेके प्रस्ताव पास हुए थे। सेठ टीकमचंदजीका यह प्रयत्न उत्तम है।

पानीपत–की जैन उपदेशक सभाके उपदेशक पं० जोतिप्रसादजीका देहांत हो गया। आप बडे सज्जन थे। ४० ग्रामोंमें भ्रमण करके आपने बहुत धर्म उद्योत किया था। अब यहां विद्वान् उपदेशककी आवश्यकता है। यहांपर चिरस्थायी कार्य है। लिखो–जियालाल जैन, जैन उपदेशक सभा–पानीपत (करनाल)

पहाडी धीरज–देहली–की हीरालाल जैन हाईस्कूलसे इस वर्ष ११ विद्यार्थी पंजाब यूनिवर्सिटीकी परीक्षामें बैठे थे उनमेंसे १० पास हुए हैं। इनमें २ तो प्रथम डिवीझनमें पास हैं।

मेला देवरान–देवरान (ललितपुर,) में चै० वदी १४ से सुदी–२ तक पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव हो गया। अंतिम दिन जैन जैनेतरकी ९०००० तक संख्या होगई थी जिसमें २०००० जैनी होंगे। त्यागी गोकुलप्रसादजी, पं० बंसीधरजी शास्त्री, पं० देवकीनंदनजी, त्यागी ठाकुरदासजी, उपदेशक कस्तूरचंदजी आदि बहुत विद्वान पधारे थे। व्याख्यान सभायें भी खूब हुईं थीं। संस्थाओंको

२१०) की सहायता मिली थी। गोलालारीय दि० जैन सभाका भी जल्सा त्यागी गोकुलप्रसादजीके सभापतित्वमें हुआ था जिसमें प्रथम उपदेशक मौजीलालजीने सभाके ऊपर २००) लेकर विवाह करा देनेका दोषारोपण किया था उसके लिये उन्होंने क्षमा मांगी और पं० देवकीनंदनजीने २००) के प्रस्तावका खुलासा प्रकट किया था। पावके ४ प्रस्ताव फिर [illegible]से दुहराये गये और विवाहमें लडकेकी [illegible]का तथा होती हुई सदर जीमनवार बंद करने [illegible]से सभा सोनागिरी तीर्थकी भट्टारक कमे[illegible] तीर्थक्षेत्र कमे अपसन्न है इससे क्षेत्रका प्रबंध [illegible]स्ताव पास हुए टीको ही सौंपनेका ऐसे दो प्र[illegible]ने वृद्ध विवाह, थे। अंतमें बडगांवके छात्रों [illegible]किया था।

जुआ और बीडीपर ड्रामा दि[illegible] लिये नीचे लिखे

जैन लॉ—तैयार करनेके [illegible]कता है। भद्रबाहु दायभागके ग्रन्थोंकी आवश्[illegible] संहिता, एक संधी संहिता, इंद्रनंदि जिन[illegible] बृहत संधी संहिता, संहिता (भट्टारककी बनाई [illegible]र्णिका, अर्हन्नीति नीति, वाक्यामृत, त्रिव[illegible] और कोई संहितामें यह आदि। इनके अतिरिक्त ग्र[illegible]। पत्ता—नन्नूमल जैन विषय हो तो वह भी भेजें [illegible]दरीबाकलाँ। देहली। मंत्री जैन मित्र मंडल, [illegible]

बंगाल आसाम [illegible]-प्रांतीय खं० सभाका नैमित्तिक अधिवेशन सेठ [illegible] शिवनारायण छाव[illegible]डाके सभापतित्वमें लालग[illegible] मेला (बंगाल) में जेठ सुदी ११ से होगा।

ऋषभ ब्र० आश्रम [illegible]—जयपुरमें—हस्ती[illegible]नापुरकी जलवायु दूषित होने[illegible]से ब्र० आश्रम के छात्रोंको वारवार तकलीफ [illegible] हुआ करती थी तथा रेल्वे स्टेशनसे हस्तिनापुर बहुत दूर था इस लिये आश्रमकी कमेटी स्थान परिवर्तनके लिये कई वर्षोंसे विचार कर [illegible] थी और अर्थ हर्षके साथ प्रकट करते [illegible] कि ब्र० ज्ञानानंदजी [illegible]में सफल हुए और आश्रमको अधिष्ठाताजी [illegible] भाईयोंने अपनाया अर्थात् अक्षय [illegible]या (वै० सु० ३) को यह आश्रम हस्तिनापुरसे उठाकर जयपुरमें सेठ सर्वसुखदासजी खजानश्रीकी नशियामें लाया गया। यह स्थान चांदपोल दरवाजेके बहार शहर और स्टेशनके मध्यमें है। साथमें मंदिर भी है जलवायू भी बहुत अच्छी है। जयपुरमें दि० जैनियोंके १७५तो मंदिर हैं और करीब ६००० जैन संख्या है इसलिये इस जैनपुरीमें आश्रमकी उन्नति अब अवश्य होगी। अब सब भाई सब प्रकारका पत्र व्यवहार हस्तिनापुर न करके जयपुर ही करें।

यात्रा और दान—सर सेठ हुकमचंदजीने चैत्र मासमें बडवानीकी यात्रा करके इस प्रकार दान किया—पहाडकी धर्मशालामें चार कमरे बनानेको ४०००) तथा १०००) चौकमें फर्श लगानेको दिये। पंचने आपको मानपत्र दिया तथा सेठजीने बडवाणी राणा बहादुरको १९ गिनी भेंट की थी।

१६०००)का दान—डेहरीके सेठ मिश्रीलालजीने ६०००) सुकृतमें खर्च करनेको इस साल निकाले हैं तथा सुसारीके सेठ रोडमलजी मेघराजजीने नेमिचंदजीकी बीमारीके समय १००००) सुकृतमें खर्च करनेको निकाले हैं जिसका चार प्रकारके दानोंमें व्यय होगा, और

भी १४ वें गुणस्थानतक रहता है। अन्तके द्विचरममें साताकी व्युच्छित्ति हो जाती है और अन्त समयमें असाताकी भी सत्त्व व्युच्छित्ति हो जाती है।

मुक्त जीव जब गुणस्थानातीत यानी गुणस्थानसे रहित हैं तो जब कि साता असाताका बन्ध, उदय, सत्त्वका भाव गुणस्थानोंमें ही पाया जाता है, सिद्ध अवस्थामें किसी भी कर्मका बन्धादि कुछ भी नहीं पाया जाता तो वहां सुखदुःखकी कल्पना किसीतरह भी नहीं हो सकती।

अब यदि आप द्वितीय पक्ष आत्मीय सुखका लेंगे तो निरपेक्ष दृष्टिसे आत्मीय सुखका कारण ज्ञान है वह ज्ञान मुक्त अवस्थामें सर्वथा निरावरण हो जाता है अतः वहां अनन्त सुख हो जाता है। दुःखका कोई कारण वहां उपलब्ध नहीं है जिससे कि सुखकी तरह दुःख भी माना जाय। उक्त युक्तिसे सुख दुःखका मोक्षमें भी प्रसंग देकर अपना मनोरथ सिद्ध नहीं कर सके अतः जीवको सर्वथा नित्य मानना सर्वथा भ्रम मात्र है।

सांख्य लोग भी जीव मानते हैं लेकिन अकिञ्चित्कर मानते हैं यह उनका मानना भी युक्तिसंमत नहीं है क्योंकि संसारी अवस्थामें जीव कर्मका बन्ध करता ही है और जब कर्मका बन्ध करता है तो उसका फल भी अनेक प्रकारसे भोगता ही है तथा सांख्य जो प्रकृतिको कर्ता और पुरुषको भोक्ता मानता है वह पहिले दिखाया जा चुका है।

अतः सांख्य सिद्धान्त भी मान्य नहीं कहा जा सकता।

अब कोई जो बौद्धकी सन्तानको ही जीव मानते हैं उन्हें विचारना चाहिये कि संतान विना सन्तानीके नहीं रह सकती अतः सन्तानी अवश्य मानना चाहिये। सन्तानीसे संतानको पृथक् मानेंगे तो बहुतसे दोष आवेंगे। आत्माको जो व्यापक मानते हैं उनका मत भी परीक्षासह नहीं है।

(शङ्काकार) व्यापक आत्माको सिद्ध करनेके लिए यह अनुमान जब निर्दोष है तो आत्माको व्यापक क्यों नहीं मानना चाहिये। आत्मा व्यापक है। द्रव्य होते हुए अमूर्त होनेसे, जो जो द्रव्य होते हुए अमूर्त है वह व्यापक है जैसे आकाश द्रव्य होनेपर अमूर्त आत्मा है अतः व्यापक मानना चाहिये, यह अनुमान भी ठीक नहीं है क्योंकि अमूर्त होनेसे यहांपर अमूर्तका क्या अर्थ है। रूपादि जिसमें हो उसे मूर्त, और तद्विरुद्ध अमूर्त। यदि यह अमूर्तका अर्थ करोगे तो मनमें भी हेतु चला जायगा क्योंकि मन द्रव्य होकर रूपादि रहित है ही अतः मनको भी व्यापक मानना चाहिये अतः उक्त हेतु अनैकान्तिक होनेसे अनुमानी नहीं है। यदि आप सब जगह न रहना मूर्त और सब जगह रहना अमूर्त मानते हैं तो हेतु भी व्यापकतारूप है और साध्य भी व्यापकतारूप है अतः साध्यसम होनेसे पुनः भी हेतु माना नहीं कहा जा सकता। व्यापकता बहुत ...

किया जा सकता है लेकिन यह प्रकरण प्रसंगगत है प्रधान नहीं अतः इस विषयमें इतना ही कहता हूं। कोई कोई महाशय आत्मा वटकीणका (वटीका फल) के समान मानते हैं उनका यह मानना न्याययुक्त नहीं है। क्योंकि सुखका सर्वाङ्गरूपसे अनुभव होता है। आत्मा छोटी होती तो जहां २ पर आत्मा रहती वहीं वहीं आनन्द होता लेकिन सुख सम्पूर्ण सम्पूर्णमें होता है। कोई २ महाशय आत्माकी आशुवृत्ति (शीघ्रगति) बताकर उक्तशङ्का निराकरण करदिया करते हैं लेकिन यदि आत्मकी शीघ्र गति होगी तो भी एक समयमें आत्मा एक ही जगह रहेगी अतः जब एक स्थानपर आत्मा हो तो उस जगह और दूसरी जगहपर जब आत्मा पहुंच जाय तो दूसरी जगह सुख होना चाहिये अतः सुखके व्यवधानका दोष आता है इस लिए आत्मा छोटी भी नहीं माननी चाहिये किंतु अपने २ शरीरके परिमाण मानना चाहिये। श्री नेमिचन्द्राचार्यने आत्माका स्वरूप ऐसा कहा है कि—

अट्ठविहकम्म वियला सीदीभूदा णिरञ्जणाणिचा।
अट्ठगुणाकिद किचा लोयग्गणि वासिणो सिद्धाः॥

शुद्ध आत्मा आठ प्रकारके कर्मों (ज्ञान, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र, अन्तराय) से रहित है। शान्तिस्वरूप (वीतराग) है क्योंकि आत्माकी शान्तिको रागद्वेष सहित अवस्था भी भंग करती है; मिथ्या दर्शनादिसे रहित है नित्य है। अष्ट गुण (ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य, अव्याबाध, अवगाहन, सूक्ष्मत्व, अगुरुलघु) कर सहित है। कृतकृत्य यानी कुछ कार्य करनेको बाकी नहीं है। और लोकके अग्रभागमें स्थित है तथा सिद्ध है।

यहां जो आत्माके आठ कर्मोंसे रहित आदि विशेषण दिये हैं वे दूसरोंकी परिकल्पित तथाविध आत्माके निराकरणके लिए हैं क्योंकि विशेषण हमेशह व्यवच्छेद रूप होता है जैसे कि काला घोडा। यहां जो घोडेका काला विशेषण है वह अन्य लाल पीले भूरे चितकबर आदि रंगोंसे युक्त घोडोंसे काले घोडेको अलग बतलाता है।

दूसरे लोग शुद्ध आत्माका ऐसा ऐसा स्वरूप मानते हैं—

सदाशिव सदामुक्तः साध्यो मुक्त सुखोज्झितं।
मस्करी किलमुक्तानां मन्यते पुनरागतिम्॥
क्षणिकं निर्गुणं चैव बुद्धो योगश्च मन्यते।
कृतकृत्यं तमीशानो मण्डली चोर्ध्वगामिनां॥

अर्थ—भावार्थ—सदाशिव आत्माको हमेशह कर्मरहित अनुपायसिद्ध मानते हैं उनका स्वरूप सिद्धान्त यही है कि आत्मा कर्मोंका भेदक नहीं है सदामुक्त होनेसे, यह (आत्मा) सदामुक्त है, अनुपाय सिद्ध होनेसे, आत्मा बिना उपायसे सिद्ध है आदि सिद्ध होनेसे, यह

अनादि सिद्ध है तनुकरण भुवनादिके बनानेका निमित्त होनेसे, तनुकरण भुवनादि ईश्वर हेतुक हैं कार्य होनेसे, इस अनुमान मात्रासे वे आत्माको सदा मुक्त सिद्ध करते हैं लेकिन जिस तरह मकानकी कमजोर भीत खुद ही नहीं गिरती है बल्कि और अपने ऊपरके मकानको भी लेकर गिरती है उसी तरह कार्यत्व हेतु असिद्ध होकर आत्माके कर्मरहितत्वका पतन करा देता है क्योंकि कार्यत्वका आपको क्या अर्थ अभीष्ट है। १. स्वकारण सत्ता समवाय, २ अभूत्वाभावित्व, ३ अक्रियादर्शिनोऽपिकृतबुद्ध्युत्पादकत्व, ४ कारणान्तरानुविधायित्व; इन चार विकल्पोंके और भी उत्तरविकल्प बहुतसे होते हैं। विशेषतया प्रमेयकमलमार्तण्डमें खण्डन किया है। यहां लेख वृद्धिके भयसे नहीं लिखा जाता है अतः आत्माको अकर्मकताकी सिद्धि नहीं होती। सांख्य मुक्तात्माको सुख रहित मानते हैं। पहिले इसका खंडन किया जा चुका है इसीलिए आचार्यने शुद्ध जीवके लक्षण प्रतिपादन करते समय शीतीभूत विशेषण दिया है। मस्करी मुक्त जीवका पुनः आगमन मानते इसीका निषेध करनेके लिए आचार्यने निरञ्जन विशेषण दिया है। बुद्ध व योगानुमती आत्मको क्षणिक तथा निर्गुण मानता है इसीको निषेध करनेके लिए आचार्यने नित्य विशेषण दिया है। ईश्वरवादी ईश्वरको कर्तृत्व मानते हैं इसके निषेधके लिए कृतकृत्य विशेषण दिया है। मण्डली मतवाले जीवकी हमेशह ऊर्ध्वगति ही मानते हैं इसके निषेधके लिए आचार्यने लोकाग्र निवासी ऐसा विशेषण दिया है।

इस उक्त प्रकरणमें जीवकी सिद्धि परमतानुयायियोंके असत्य कल्पित लक्षणके खण्डन पूर्वक की गई है और आवश्यकता भी बतलाई है।

पुद्गलकी आवश्यकता और सिद्धिः

अब अजीवका वर्णन क्रमप्राप्त है अतः उसका वर्णन करना चाहिये।

अजीवके पांच भेद हैं–१ पुद्गल, २ धर्म, ३ अधर्म, ४ आकाश, ५ काल। अब प्रत्येकका वर्णन करते हैं। इन पांच भेदोंका पृथक् पृथक् वर्णन करना ही अजीवका वर्णन होगा क्योंकि अवयवके वर्णनसे अवयवीका वर्णन हो जाता है जैसे तना, शाखा, टहनी, पत्ता आदि वृक्ष सम्बन्धी अवयवोंका वर्णन करना ही वृक्षका वर्णन है।

पुद्गल द्रव्यका लक्षण "स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तः पुद्गलाः" ऐसा किया है। जो स्पर्श, रस, गन्ध, वर्णसे सहित हो उसे पुद्गल कहते हैं।

पूरयन्ति गलयन्ति इति पुद्गलाः यह पुद्गल शब्दकी निरुक्ति है।

स्पर्शादिकी निरुक्ति निम्न प्रकार है। "स्पृश्यते स्पर्शः, यानी जो छुआ जाय, रसी

प्रकार रस्यते रसनमात्रं वा रसः, गन्ध्यते गन्धमात्रं वा गन्धः, वर्ण्यते वर्णनमात्रं वा वर्णः" की निरुक्ति है।

पुद्गल द्रव्य अनन्तगुण समूह स्वरूप है। यहां भी जीव द्रव्यकी तरह उत्पाद व्यय ध्रौव्यकी सिद्धि होनेसे द्रव्यका लक्षण अच्छी तरह घटित होता है। जीव तथा पुद्गल द्रव्य का अनादिकालसे आपसमें सम्बन्ध होता चला आ रहा है जैसे कि सुवर्ण जो कि खानसे तुरन्त निकाला जाता है, किट्टिमा कालिमा अंतरङ्ग मलसे लिप्त होता है और अग्नि आदिके संसर्गसे वह मैल दूर कर दिया जाता है उसी प्रकार जब इस जीवके पूर्वोक्त कर्मोंकी निर्जरा होने लगती है और संवरके बलसे आनेवाले कर्मोंका आना रुक जाता है तब सम्पूर्ण कर्मका क्षय होजानेसे जीवकी मुक्ति होजाती है तो संसारी अवस्थामें जीवकी पूर्व पर्यायका विनाश होनेसे व्यय, नवीन पर्यायके उत्पन्न होने उत्पाद और जीवत्व सदा ही रहता है अतः ध्रौव्य, ये तीनों ही गुण जीव द्रव्यमें अच्छी तरहसे घटित हो जाता है अतः द्रव्यका लक्षण जीव द्रव्यमें सिद्ध होता है।

(शङ्काकार) जब कि कर्मोंके अभाव होनेसे मुक्त जीवोंके शरीर रहता ही नहीं है तब फिर मुक्त जीवमें उत्पादादि कैसे होंगे।

यह भी ठीक नहीं है क्योंकि मुक्त जीवोंके अगुरुलघु गुणके द्वारा षट् स्थान पतित हानि वृद्धिसे उत्पादादि बन जावेंगे।

संसारी जीवोंमें इस तरह भी उत्पाद व्यय ध्रौव्य बन सके हैं।

पुद्गलोंमें पूर्वपर्यायके विनाशसे और उत्तर पर्यायके प्रादुर्भावसे उत्पाद व्यय बन जाते हैं। कभी भी पुद्गलका सर्वथा विनाश नहीं होता अतः ध्रौव्यता भी रहती ही है।

दूसरे जो पुद्गलमें स्पर्श रस गन्ध वर्ण गुण पाये जाते हैं वे सर्वथा एकसे नहीं रहते, स्पर्श कभी कोमलता, कभी कठिनता, उष्णता, शीतता, लघुता, गुरुता, स्निग्धता, रूक्षता इन आठ तरहसे परिणत होता रहता है। रसमें चिरपरा, कडुआ, खट्टा, मीठा, कषायला ये पांच भेद हैं तथा गन्धमें दुर्गन्ध सुगन्ध इस तरह दो। वर्णमें नील, पीत, श्वेत, श्याम, लाल ये पांच भेद हैं। इन बीस भेदोंके सिवाय विस्तारसे उत्तर भेद संख्यात असंख्यात अनन्त भी हो सकते हैं।

(शंका) जब कि लोक असंख्यातप्रदेशी है तो उसमें अनन्त प्रदेशवाला पुद्गल स्कंध कैसे आ सकता है।

ऐसी शंका नहीं करनी चाहिये क्योंकि एक एक आकाशके प्रदेशमें भी सूक्ष्म परिमाणसे परिणत अनन्तानन्त प्रदेशी स्कन्ध आ सकता है ऐसा आगममें कहा है। पुद्गल द्रव्यकी शब्द, बन्ध, सौक्ष्म्य, स्थौल्य, संस्थान, भेद, तम, छाया, आतप, उद्योत ये १०

मुख्य पर्याय हैं। भाषात्मक और अभाषात्मक इस तरह शब्द दो तरहके होते हैं। भाषात्मक भी दो भेद वाला १ अक्षरात्मक दूसरा अनक्षरात्मक। अक्षरात्मकके प्राकृत संस्कृत देशभाषा आदि अनेक भेद हैं। अनक्षरात्मक भाषा द्वीन्द्रियादिकोंमें और अर्हन्त देवकी दिव्य-ध्वनिमें पाई जाती है। भाषात्मकके सभी भेद परके प्रयोगसे होते है अतः प्रायोगिक है। अभाषात्मक शब्द दो प्रकारके होते हैं। एक प्रायोगिक दूसरे स्वाभाविक। मेघादिककी ध्वनि स्वाभाविक होती है और प्रायोगिकके १ तत २ वितत ३ घन ४ शौषिर ये चार भेद हैं। विस्तृत चर्मके शब्दकोतत, सितार, सारङ्गी आदिकी आवाज़को वितत, घंटा आदिकी ध्वनिको घन, और हवासे जो शंख आदिककी आवाज़ होती है उसे शौषिर कहते हैं।

बन्ध दो प्रकारका है—एक स्वाभाविक दूसरा प्रायोगिक। सूक्ष्मता भी दो तरहकी होती है— एक अनन्त दूसरी आपेक्षिक। स्थूलताके भी यही दो भेद समझना। संस्थान (आकृति) नियत स्वरूप, अनियत स्वरूपसे दो भेद वाला है। भेद पृथक् भावको कहते हैं और वह उत्करपूर्णादि भेदसे ६ प्रकारका है। तम अन्धकारको कहते हैं। छाया आवरणको कहते। जिसकी उष्ण प्रभा हो उसे आतप कहते हैं और यह सूर्य या अग्निसे उत्पन्न होता है। जिसकी प्रभा उष्ण नहीं होती है उसे उद्योत कहते हैं, यह चन्द्रसे उत्पन्न होती है। कहा भी है कि—" आदावो होदि उण्ह सहियपहा "

" उण्हूण वहाहु उज्जो ओ "

अर्थात् उष्णप्रभा सहित आतप और उष्णप्रभा रहित उद्योत होता है, ये पुद्गलके १० भेद हैं।

पुद्गलके इस प्रकारसे भी भेद किये जासके हैं। मूलमें पुद्गल दो प्रकारका है—एक स्कंध दूसरा अणु।

जिसमें उठाना रखना आदि क्रियाओंका व्यवहार हो और स्थूल हो उसे स्कंध कहते। द्वयणुक आदिमें रूढ़िके वशसे लक्षण विना घटित होते हुए भी स्कंधता मानी गई है। जो सिर्फ एक प्रदेशवाला हो उसे अणु कहते हैं। यह अणु अस्मदादि प्रत्यक्षगोचर नहीं है। सर्वज्ञ भगवान् ही इसे जानते हैं। प्रत्येक अणु छ कोण वाला है और आकाशके एक प्रदेशमें रहनेवाला है। इसमें अत्यन्त सूक्ष्मता होनेसे आदि और मध्यकी व्यवस्था नहीं की जा सकती क्योंकि जो ही इसका आदि है वही मध्य और अन्त है जैसे कि किसीके एक पुत्र हो तो उससे पूछा जाय कि तुम्हारा सबसे बड़ा पुत्र कौन है तो वह उसे ही बड़ा छोटा और मध्यम पुत्र बतलावेगा। पुद्गल द्रव्यकी सिद्धिके लिए सर्वतः प्रथम यह उचित है कि अणुकी सिद्धि कर ली जाय। अणुकी सिद्धि हो जाने पर फिर बड़ासे बड़ा भी स्कंध सिद्ध किया जा सकता है। अणु यद्यपि प्रत्यक्षसे नहीं दिखलाई देता तथापि

उसका अभाव भी नहीं कहा जासकता, क्योंकि बहुतसे पदार्थ कालान्तरित (जो वर्तमान कालमें नहीं पाये जाय) हैं जैसे राम सीता लक्ष्मण रावणादि देशान्तरित (जिस देशमें जाननेवाला मोजूद हो उस देशमें न पाये जाय) जैसे सुमेरु हिमालय आदि, इन पदार्थोंकी जैसे अनुमान व आगम प्रमाणके द्वारा सिद्धि की जाती है। अणुकी भी उसी तरह अनुमानसे व आगमसे सिद्धि की जासकती है, अणु है क्योंकि यदि अणु नहीं होता तो संसारमें स्थित अणु पिण्ड स्वरूप ये पदार्थ देखनेमें नहीं आते। इस अन्यथानुपपत्ति रूप हेतुसे अणुकी सिद्धि की जाती है। आगम तो इसके लिए साक्षी है ही।

कोई कोई परमाणुको सिर्फ कारण ही मानते है यह उनका मानना अनुचित ही है क्योंकि "भेदादणु" अर्थात् पदार्थोंमें भेद करनेसे अणु होता है। किसी मिले हुए पदार्थका यहा तक भेद हो जाय कि जिससे फिर उसके भेद न हो सकें तो वह जो अन्त दशावन्त पदार्थ होगा, वह ही परमाणु बोला जायगा अत भेदके द्वारा अणुके उत्पन्न होनेसे अणुको कार्यता भी है। परमाणुमें उत्पाद व्यय ध्रौव्य भी संघटित हैं क्योंकि उसमें स्निग्धादि गुणोंका उत्पाद और व्यय होता रहता है। द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षासे परमाणुकी न कभी उत्पत्ति होती है न कभी नाश होता है, अत परमाणुमें द्रव्यका लक्षण अच्छी तरह घटित हो जाता है। स्पर्श रस आदि गुणोंका समुदाय ही परमाणु है अत परमाणुमें स्पर्श आदिके भेद होनेसे भेद भी हैं और परमाणु फिर विभाग नहीं होता अत, परमाणु अभेद स्वरूप भी है। परमाणु सूक्ष्म परिमाणवाला है इस लिए कथंचित सूक्ष्म है और द्वयणुकादिसम्बन्ध होनेसे स्थूल स्कन्ध रूप होजाता इस लिए कथंचित स्थूल भी है। परमाणुका द्रव्य रूपसे कभी विनाश नहीं होता अत नित्य है और स्कन्ध रूपमें अनेक प्रकार इसका परिवर्तन होता रहता है अत कथंचित अनित्य है। कार्यरूप अनुमान से परमाणु माना जाता है अत कार्यलिङ्ग है और प्रत्यक्ष ज्ञान विषय बनेकी अपेक्षा कार्यलिङ्ग नहीं हैं अत मानना चाहिये कि —

अणुमें भी अनेकान्तताका अच्छा साम्राज्य है।
स्कन्धके विषयमें कुछ विशेष कहना नहीं है ॥

स्कन्धके स्कन्ध, स्कन्धदेश, स्कन्ध प्रदेश इस तरह तीन भेद हैं।

स्कन्धके पृथ्वी, जल, तेज, वायु ये चार भेद भी हैं।

नैयायिक लोग पृथ्वी, जल, वायु, अनल (अग्नि) को अलग २ स्वतन्त्र पदार्थ मानते हैं। पृथ्वीमें स्पर्श रस गन्ध और वर्ण ये ४ गुण मानते है और पृथ्वीका लक्षण गंधवती यानी गन्धयुक्त है ऐसा मानते हैं। जलमें स्पर्श रस वर्ण ये तीन ही गुण मानते हैं और शीतस्पर्शवान् याने शीत स्पर्शवाला जल है यह जलका लक्षण मानते है। अग्निमें वर्ण और

स्पर्श ये दो गुण मानते हैं और लक्षण उष्णस्पर्शवत्तेजः ऐसा मानते हैं। वायुमें रूप भी नहीं मानते सिर्फ स्पर्श ही गुण मानते हैं और रूप रहित स्पर्शवान् वायु ऐसा वायुका लक्षण कहते हैं। यह इनका मानना अविचारित ही है क्योंकि पृथ्वी आदि अलग पुद्गलसे भिन्न पदार्थ नहीं है। हम देखते हैं कि पृथ्वी रूप जो काठ है वह जलकर अग्नि रूप हो जाता है तथा बारूद दियासलाई आदिमें अग्निका उष्ण स्पर्शवत् लक्षण नहीं भी है तथापि ये जलकर अग्नि रूप ही होजाते हैं और अग्नि जल चुकनेके बादमें फिर पृथ्वी रूप हो जाती है। स्वाति नामक नक्षत्र विशेषमें वर्षा होते समय यदि जल बिन्दु सीपमें पड़ जाय तो वही पार्थिव रूप मोती बन जाती है। जिस आहार वातको हम ग्रहण करते हैं वही पित्तरूप (उदराग्नि) परिणत हो जाती है अतः पृथ्वी आदि स्वतंत्र पदार्थ नहीं माने जा सकते तथा जो अपने पृथ्वीमें स्पर्शादि चारों ही, जलमें गन्ध बिना तीन, अग्निमें रूपस्पर्श और वायुमें केवल स्पर्श माना था सो यह भी तुम्हारा मानना न्याय नहीं कहा जा सकता, क्योंकि जिनमें परस्पर अविनाभाव सम्बन्ध है वे एक दूसरेके बिना कभी नहीं रह सके, इनका अविनाभाव किस तरहसे हैं और पृथ्वी आदिका जीव पुद्गलादि किस किसमें अन्तर्भाव होता है यह हम पदार्थोंकी व्यवस्था जहां निर्णय की है वहां लिख आये हैं अतः यहां पुनरुक्ति, लेख वृद्धि, समयाभाव, और निरर्थक होनेसे नहीं लिखते हैं। आशा है कि इस प्रकरणके जिज्ञासु जहां यह विषय लिखा गया है उन पत्रोंमें देखनेका कष्ट उठावेंगे।

परमाणुकी तरह स्कन्धमें पूर्व अपर अवस्था विनाश उत्पाद होने द्रव्यका लक्षण अच्छी तरह घटित हो जाता है। ध्रौव्यता इनके सर्वथा नाश न होने सदा बनी ही रहती है।

पृथ्वी आदि पुद्गलत्वकी अपेक्षा आदि रहित हैं। उत्पत्तिकी अपेक्षा तो अनादि नहीं कह सके क्योंकि उत्पत्तिवाला सादि ही होता, इस तरह पुद्गल द्रव्यकी आवश्यकता और सिद्धिका विषय समाप्त किया।

सारांश—पुद्गल द्रव्य यदि नहीं होगी तो संसारकी प्राणभूत पदार्थ व्यवस्था नहीं बन सक्ते अतः पुद्गल द्रव्यकी आवश्यकता है। परमाणुके सिद्ध होनेसे पुद्गल द्रव्यकी सिद्धि है ही। अतः जीवद्रव्यवत् पुद्गलद्रव्यको भी मानना चाहिये।

धर्म अधर्मका निरूपण तथा आवश्यक्ता।

उक्त कथनमें पुद्गलकी अच्छी तरहसे सिद्धि की गई है। यहां धर्म अधर्मके विषयमें लिखते हैं—प्रथम धर्मद्रव्यका लक्षण श्री कुन्दकुन्दाचार्यने इस प्रकार किया है—

धम्मत्थि कायमरसं अवण्णगंधं असद्दमप्फासं।
लोगोगाढं पुट्ठं पिहुलमसंखादि य पदेसं ॥ १ ॥

अगुरुगलघुगेहिं सया ते हिं अणंते हि परिणदं णिच्चं ।
गादिकिरिया जुत्ताणं कारणभूदं सयमकज्जं ॥ २ ॥
उदयं जह मच्छाणं गमणाणुग्गहपरं हवदिलोये ।
तहजीव पुग्गलाणं धम्मं दव्वं वियाणे हि ॥ ३ ॥

भावार्थ—धर्मास्तिकाय स्पर्श रस गन्ध वर्ण और शब्दसे रहित हैं अतएव अमूर्त है, सकल लोकाकाशमें व्याप्त है, अखण्ड विस्तृत और असंख्यात प्रदेशी हैं, षट्स्थान पतित वृद्धिहानि द्वारा अगुरुलघु गुणके कारण अविभाग प्रतिच्छेदोंकी हीनाधिकतासे उत्पाद व्यय स्वरूप है। स्वरूपसे कदापि च्युत न होनेके कारण नित्य है। गति क्रिया युक्त जीव पुद्गलोंके गमनमें सहायक हैं। आप किसीसे उत्पन्न नहीं हुआ है अत अकार्य है। जल मत्स्यादिकोंके गमनमें स्वयं न चलकर जैसे सहकारी है उसी प्रकार जीव पुद्गलोंके साथ स्वयं न गमन करता हुआ उनके (जीव पुद्गलके) गमनमें सहकारी मात्र है। यहां यह लक्ष्य रखना चाहिये कि धर्म अधर्म शब्दका उपयोग दृष्ट अदृष्टमें भी आता है। लोकमें पुण्य पापको भी धर्म अधर्म कहते हैं जिसमें कि धरतीति धर्मः न धर्मः अधर्मः ये व्युत्पत्तियां हैं। ये धर्म अधर्म शब्द गुणवाचक हैं लेकिन इन कथनगत धर्म अधर्म शब्द द्रव्यवाची हैं।

धर्म द्रव्यका स्वरूप संक्षेपसे यह है कि जीव पुद्गलोंको गमनमें सहकारी मात्र हो वह धर्म, और जो ठहरानेमें जीव पुद्गलोंको सहकारी हो उसे अधर्म द्रव्य कहते हैं। जिस तरह पवन पताका उड़ाता है पाल्ली नावको चलाती है या मोटर मनुष्यको स्थानान्तरपर पहुंचाती है उसी प्रकार धर्म द्रव्य जीव पुद्गलोंके गमनमें सहकारी नहीं है क्योंकि "निष्क्रियाणि" इस सूत्रसे धर्मादि द्रव्योंको निष्क्रिय बतलाया हैं। जो स्वयं क्रियायुक्त नहीं वह दूसरोंको क्रिया नहीं करा सकती किन्तु धर्म द्रव्य उदासीन निमित्त कारण है। इसी तरह अधर्म द्रव्यकी बाबत भी समझना चाहिये। अधर्मको भी जीव पुद्गलोंकी स्थितिमें उदासीन निमित्त कारणता है।

शंका—जब कि धर्म अधर्म द्रव्य और आकाश द्रव्य क्रिया रहित है तो उत्पाद नहीं होना चाहिये, उत्पाद नहीं होगा तो व्यय भी नहीं होगा क्योंकि जो २ उत्पादवाले हैं वे ही व्ययवाले देखे गये हैं। घटादिक जो व्ययवाले नहीं हैं वे उत्पादवाले भी नहीं हैं जैसे कि आत्मा।

अन्यथा, उत्पादन होना ही व्ययके अभावका सूचक हैं क्योंकि "कार्योत्पाद क्षये हेतु" कार्यका उत्पाद है वही क्षयका कारण है। उत्पाद व्यय न होनेसे इनमें द्रव्यका लक्षण घटित नहीं हो सकता। यह कहना भी युक्त संगत नहीं है। यद्यपि क्रिया निमित्त उत्पाद यहां पर नहीं भी है तथापि स्वपर निमित्त उत्पाद पर्याय पदकी तरह घटित हो

जाता है। स्व निमित्त उत्पाद व्यय अगुरु लघु पूर्वक षट्गुण गुण हानिसे होता है पर निमित्त उत्पाद व्यय अश्वादिका गति स्थिति अवगाह देनेसे होता है। धर्म अधर्मका सद्भाव उनके कार्य द्वारा किया जाता है क्योंकि कार्यके सद्भावमें कारणका सद्भाव अवश्यंभावी है जैसे कि धूमके सद्भावमें अग्निका होना अवश्यंभावी है। जब कि जीव पुद्गलोंमें गति स्थिति देखते हैं तो उस गति स्थितिका कोई न कोई कारण अवश्य होगा और वह कारण अधर्म धर्म ही है यानी गतिका कारण धर्म और स्थितिका कारण अधर्म है।

शंका—जब कि गति स्थितिका कारण पृथ्वी भी हो सक्ती हैं तो अदृष्ट धर्माधर्मकी कल्पना नहीं करना चाहिये। ऐसा भी नहीं कहसके, क्योंकि पृथ्वी जल आदि आश्रय रूप है अतः गति स्थिति हेतुक विशेष कारण धर्म अधर्म मानना ही चाहिये।

शंका—आकाश द्रव्य सर्व व्यापक है अतः आकाश ही गति स्थितिमें साधारण निमित्त कारण हो सक्ता है। धर्म अधर्म माननेकी पुनरपि आवश्यक्ता नहीं है, ऐसा नहीं कह सक्ते क्योंकि आकाशका अवगाहन उपकार है अन्यका यानी धर्माधर्मका उपग्रह अन्य यानी आकाशका नहीं हो सक्ता अन्यथा किसी भी पदार्थकी सुव्यवस्थिति न हो सकेगी।

अन्यच्च— यदि आकाशको गति हेतुका कारण मानोगे, आकाश अलोकाकाशमें भी है। वहां पर भी इसको गति स्थिति हेतु। मानना होकर जीव पुद्गलोंका गमन हो जायगा तथा च लोकालोकका विभाग नहीं हो सकेगा। अतः मानना चाहिये कि धर्म अधर्म द्रव्य हैं। लोकालोक विभागकी धर्म अधर्मके विना उत्पत्ति न होनेसे यहां लोकालोक विभाग रूप हेतु असिद्ध नहीं है क्योंकि लोकालोक विभागका अनुमापक हेत्वन्तर उपस्थित है। लोक अलोकका विभाग है क्योंकि लोक सान्त है और अलोकाकाश अनन्त रूप है, कोई ऐसा कहे कि लोक सान्त रूप नहीं है सो भी ठीक नहीं है क्योंकि लोक सान्त है सान्त विशेष होनेसे मकानादिककी तरह।

इस तरह लोककी सान्तता सिद्ध हुई। सारांश यह है कि धर्म अधर्मकी सिद्धिके लिये लोकालोक विभागान्यथानुपपत्तिरूप हेतु है। लोकालोक विभागके लोकस्य सान्तता हेतु है और लोककी सान्तता सिद्ध करनेके लिये स्वता विशिष्टत्व हेतु है। स्वता विशिष्टत्व प्रत्यक्षगम्य ही है क्योंकि जो २ इतर विशेष विशिष्ट हैं वे २ सान्त हैं और जो २ सान्त हैं वे २ विभाग युक्त हैं। जबकि विभाग सिद्ध हो गया तो इस अनुमानसे धर्म अधर्म है। लोकालोकको अन्यथा (धर्म अधर्मके अभावमें उत्पत्ति न होनेसे) धर्म अधर्मकी सिद्धि हो ही जाती है। अतः धर्म अधर्मका सद्भाव स्वीकार करना ही चाहिये।

आकाश द्रव्यकी आवश्यक्ता और सिद्धिः।

आकाशका लक्षण जीवादिक द्रव्योंको अवगाहन देना है अर्थात् जो स्वप्रतिष्ठित और सबको अवकाश देनेका सामर्थ्य वाला है उसे आकाश कहते हैं।

कान्ते धर्माधर्म द्रव्यगण्यमानौ छोरः यानी जिसमें जीवादि पदार्थ देखे जाय उसे लोक कहते हैं। जहापर धर्माधर्म द्रव्य नहीं है वहांके आकाशको अलोकाकाश कहते हैं।

शंका–जिस तरह आप धर्माधर्मजीवादि द्रव्यका आधार आकाश मानते हैं तो आकाशका भी आधारान्तर (अन्य आधार) मानना चाहिये या आकाशके सदृश जीवादिकको भी स्व प्रतिष्ठित मानिये, ऐसी शंका नहीं कर सक्ते। क्योंकि आकाश सर्वतो अनन्त है अतः उसको कोई आधारान्तर कल्पित नहीं किया जा सक्ता।

शंका–आधार आधेयभाव पूर्व उत्तर वर्तियोंका होता है तो जब धर्मादिका आकाशमें आधार आधेय भाव है तो पूर्वोत्तर भाव भी पाया जाना चाहिये और ऐसा माननेसे द्रव्योंकी अनादिताका खंडन होता है ऐसी शंका नहीं करनी चाहिये क्योंकि पूर्वोत्तर वर्तियोंका ही आधार आधेय भाव होगा, यह कोई नियम नहीं है। आत्मामें ज्ञानदर्शनादि या घटमें रूप रसादिक इन समसमयवालोंमें भी आधार आधेय भाव देखा जाता है। आकाशमें " सद्द्रव्य लक्षणं " " गुणपर्ययवद् द्रव्य " आदि तीनों ही द्रव्यके लक्षण सम्यक् रीत्या संघटित होते हैं और वह कैसे सो अगाडी दिखावेंगे।

शंका–आकाशका जो अवगाह देना लक्षण किया सो अतिव्याप्तिदोष दूषित है क्योंकि " लक्ष्यतावच्छेदकावच्छिन्न प्रतियोगिताकभेदसामानाधिकरणं अतिव्याप्तिः " जिस धर्मसे सहित लक्ष्य होता है, उस धर्मको लक्ष्यतावच्छेदक नामसे कहते हैं और लक्ष्यतावच्छेदकसे अवच्छिन्न है उसे लक्ष्य कहते हैं। यहां लक्ष्यतावच्छेदक आकाशत्व है तथा लक्ष्यतावच्छेदकावच्छिन्न आकाश है और यत्स्वाभावः सप्रतियोगि इस नियमके अनुसार आकाशका प्रतियोगि (प्रतिपक्षी) मकान धर्म अधर्मादि भी जीव पुद्गलोंको अवगाह देते हैं फिर आकाश हीका यह लक्षण कैसे हो सकता।

उक्त शंका नहीं करनी चाहिये। प्रथम तो आपने जो अति व्याप्तिका लक्षण बताया वही ठीक नहीं है क्योंकि मानलीजिए अश्व (घोडे) का हमने सास्नादिमत्व यह लक्षण किया तो आपका उक्त अतिव्याप्तिका लक्षण यहां घट ही जाता है यानी लक्ष्यतावच्छेदकावच्छिन्न हुआ अश्व उसका जो प्रतियोगी गौ उसमें सास्नादिमत्व रह गया लेकिन अश्वका सास्नादिमत्व लक्षण करना यह असंभव दोष कहा है क्योंकि "लक्ष्यतावच्छेदक व्यापकीभूताभाव प्रतियोगित्वं" ऐसा असम्भवका लक्षण किया है। अश्वका सास्नादिमान् लक्षण करने पर लक्ष्यतावच्छेदक अश्वत्व तथा अश्वत्व व्यापकीभूत (यानी अश्वत्व जिनमें रहे) हुए सब अश्व, उनमें जिनका अभाव रूप प्रतियोगित्व हो सो सास्नादिमत्वका अभाव है अतः अश्वका सास्नादिमत्व लक्षण है वह नित धर्म। छोड अति व्याप्ति दोषसे अतिव्याप्त दूर्षि

धर्मका अवलम्बन करके असंभव दोषसे भी दुष्ट है अतः आपको अपने उक्त अति व्याप्तिके लक्षणमें लक्ष्यतावच्छेदक सामानाधिकरण्ये सति इतना विशेषण और मिलाना चाहिये। क्योंकि ऐसा करनेसे अति व्याप्ति और असम्भवमें ऐक्य नहीं आसकता। उक्त उदाहरणमें ही जिसमें कि अश्वका सास्नादिमत्व लक्षण कहा निर्दिशित अति व्याप्तिका लक्षण बनानेसे लक्षण ही नहीं जाता क्योंकि लक्ष्यतावच्छेदकका समानाधिकरण जो लक्ष्य उसमें रह कर फिर जो लक्ष्यतावच्छेदकावच्छिन्न प्रतियोगिमें जो लक्षणका रहना है उसे अतिव्याप्ति कहते हैं। लक्ष्यतावच्छेदक अश्वत्व इसका समानाधिकरणी जो अश्व उसमें सास्नादिमत्व रहकर फिर लक्ष्यतावच्छेदक समानाधिकरण प्रतियोगि गायमें रहता तो सास्नादिमत्व अतिव्याप्त होता लेकिन रहता ही नहीं हैं अतः यहां असम्भव दोष ही आवेगा।

और जब कि आपसे अतिव्याप्तिके लक्षणमें ही गल्ती होती है तो आप आकाशके अवगाहित्व लक्षण कैसे अतिव्याप्त सिद्ध करेंगे।

(**शङ्काकार**)—अस्तु, हमने आपके द्वारा स्मृत कराया ही अति व्याप्तिका लक्षण स्वीकार किया किन्तु महाशयजी क्या अति व्याप्तिके विस्मरणसे अशुद्ध लिखे हुए लक्षणको ही शुद्ध करके अति व्याप्ति दोषका निरावरण करना चाहते हैं। इस सबसे तो केवल एक लक्षण ही शुद्ध किया गया, अति व्याप्तिका निराकरण तो हुआ ही नहीं।

आकाशका अवगाहित्व लक्षण मकान धर्म अधर्ममें भी पाया जाता है इसलिए अति व्याप्त है। और दोष दुष्ट लक्षणसे कभी भी लक्ष्यकी सिद्धि नहीं हो सकती।

जैनी—आपका उक्त कटाक्ष भी आपकी आत्मदौर्बल्यका प्रदर्शक है। आकाशका अवगाहित्व लक्षण प्रधान है। पृथ्वी धर्म अधर्मादिके अन्य अन्य लक्षण हैं जैसे पृथ्वीका स्पर्श रस गन्ध वर्णवत्व, धर्मका गति हेतुत्व, अधर्मका स्थिति हेतुत्व।

अतः अवगाह देना लक्षण आकाशका ही है। धर्म, अधर्म, पृथ्वी आदि सभीको अवगाह नहीं देते। दूसरे अवगाह देना इनका लक्षण भी नहीं है अतः आकाशके अवगाहित्व लक्षणमें शंका नहीं करना चाहिये।

यदि आकाशका लक्षण अवगाह देना ही है तो अलोकाकाशमें तो अन्य द्रव्योंका अभाव है अतः वहां अलोकाकाश किसीको भी अवगाह नहीं देता अतः आकाशके लक्षणमें अव्याप्ति दोष आता है क्योंकि लक्ष्यतावच्छेदक समानाधिकरणात्यन्ताभावप्रतियोगित्वं ऐसा अव्याप्तिका लक्षण माना है सो यहां अच्छी तरहसे घटित होता है। यहां लक्ष्यतावच्छेदक आकाशत्व है तथा आकाशत्वका समानाधिकरणी हुआ आकाश, उसके अत्यन्ताभावका प्रतियोगि (यानी लक्ष्यका कुछ भाग) में लक्षणके रहनेसे अव्याप्ति दोष आता है सो यहां आकाशके कुछ भाग यानी लोकाकाशमें तो यह लक्षण जाता है,

अलोकाकाशमें नहीं जाता अतः अव्याप्ति दोष दुष्ट होनेसे द्रव्यका लक्षण अलोकाकाशमें द्रव्यत्व नहीं सिद्ध करसक्ता।

ऐसी शंका भी नहीं करना चाहिये क्योंकि अलोकाकाशमें अन्य द्रव्य ही नहीं है जिसको कि आकाश अवगाह दे। यदि किसी घड़ेमें पानी न रक्खा जाय तो घड़का जल धारण-धर्म नष्ट नहीं हो सकता उसी प्रकार यह दोष आकाशका नहीं है।

(शंका) जबकि अलोकाकाशमें काल द्रव्य ही नहीं है तो वहां वर्तना नहीं हो सक्ती। वर्तनाके विना उत्पाद व्ययका व्यवहार नहीं हो सक्ता और न नित्यताका ही व्यवहार हो सक्ता है अतः वहाँ द्रव्यका लक्षण ही संघटित नहीं होता. अतः यातो अलोकाकाशको द्रव्य श्रेणीसे अलग कर देना चाहिये नहीं तो द्रव्यका लक्षण अव्याप्ति दोष दुष्ट मानना चाहिये। अलोकाकाश द्रव्यकी श्रेणीसे अलग तो किया नहीं जा सक्ता क्योंकि आकाशका विशेष भेद है। विशेष विना सामान्य रह नहीं सक्ता। यदि अलोकाकाशको द्रव्यकी श्रेणीमेंसे अलग कर देंगे तो आकाशका भी अभाव हो जायगा, आकाशके अभाव होनेपर अवगाह देनेकी शक्ति युक्तद्रव्यका अभाव होवेगा फिर धर्म अधर्म-आदि कहांपर ठहरेंगे। तथा च सात नरक घनोदधिवलयके ऊपर हैं। घनोदधि वलय, घनवातवलयके ऊपर है और घनवातवलय आकाशके ऊपर है और आकाश स्वयं स्वप्रतिष्ठित है। इस सबका अन्य कारण आकाश ही है फिर आकाशका अभाव होनेसे यह सब व्यवस्था कैसे बनेगी।

ऐसी शंका नहीं करना चाहिये। क्योंकि आकाशमें द्रव्यका लक्षण सुघटित ही है जैसे एक बड़े बांसके सिरेपर कुछ आघात करनेसे सब बांसमें उसकी आवाजसे क्रिया हो जाती है। बांसके एक होनेसे तथैव आकाशमें भी कथञ्चित् एकत्व है अतः वहां भी एकदेशीय आकाशमें उत्पाद व्यय ध्रौव्य हो जायगा यानी लोकाकाशके आकाशमें काल द्वारा वर्तना है अतः उत्पादादि भी होंगे। उसी उत्पादादिका संबंध अलोकाशके आकाशमें भी हो जायगा। द्रव्य लक्षणके सुघटित होनेसे आकाशमें द्रव्यता सिद्ध हो गई अतः उक्त कोई दोष नहीं आसक्ता, आकाशके सद्भावका विनिश्चायक यही प्रमाण है कि सभी शब्दोंके वाच्य अवश्य हुवा करते हैं। अतः आकाश शब्द जब प्रसिद्ध है तो उसका अभिधेय अवश्य मानना चाहिये।

शंका—क्या जो २ शब्द हैं उन सभीके कुछ न कुछ वाच्य अवश्य हुआ करते हैं? यदि ऐसा है तो वन्ध्या पुत्र खरविषाण इनका भी कुछ न कुछ वाच्य होना ही चाहिये, ये कहना भी ठीक नहीं है क्योंकि वन्ध्या पुत्र इतना समस्त 'कोई पै नहीं है पृथक है और पृथक २ अभिधेयोंकी उपलब्धि भी होती है। अब कोई कहे कि आकाश तो सर्वव्यापक है उसमें उत्पाद व्यय ध्रौव्य ...

यह कहना भी अविचारीतरम्य ही है क्योंकि आकाश जब नित्य है तो ध्रौव्यता तो उसमें सदा बनी ही रहेगी। उत्पाद व्यय अगुरुलघुगुणकी अपेक्षासे हो जांयगे। द्रव्योंमें उत्पाद व्यय दो प्रकारसे होते हैं। एक स्व प्रत्यय और दूसरे पर प्रत्यय। अनन्त अगुरु लघु गुणोंके द्वारा षट् स्थान पतित वृद्धि हानिसे पूर्व अवस्थाके अभाव होजानेको स्वद्रव्य व्यय कहते हैं और पहिलेकी तरह आगेकी पर्यायका आविर्भाव होनेपर स्व प्रत्यय व्यय कहते हैं पर प्रत्यय उत्पाद व्यय तो सुलभ ही हैं। यानी आकाश बहुतसी आकाश रूप परिणत बहुतसे जीवादिकोंको अवकाश देता है जब कि द्रव्य जिनका कि आकाशमें अवगाह होता है अनेक रूप हैं तो आकाश भी अपनी प्रथक २ शक्तियों द्वारा उन अनेक रूपजीवादिकोंको अवकाश देता है अतः अनेक रूपता आकाशको सिद्ध ही हैं।

कोई २ " शब्द गुणकमीकाशं " यानी शब्द है गुण जिसका ऐसा आकाश है, ये आकाशका लक्षण मानते हैं। नैयायिक लोग शब्दको गुण मानते हैं। अपने चोवीस (२४) गुणोंकी संख्याके अन्दर शब्द नामक एक गुण है जिसका कि लक्षण " श्रोत्र ग्राह्यो गुणः " "श्रोत्र ग्राह्यत्वेन गुणवत्वं शब्दस्य लक्षणं" श्रोत्र ग्राह्यत्व विशेषण देते तो रूपरसादि गुण हैं अतः यहां अलक्ष्यमें शब्दका लक्षण जानेसे अति व्याप्ति दोष होता। और यदि श्रोत्र ग्राह्यत्व मात्र कहते तो शब्दत्व भी श्रोत्र ग्राह्य है किन्तु गुण न होनेसे शब्द नहीं कहा जासकता।

इस तरह शब्दका लक्षण मानकर नैयायिक शब्दगुणवाला आकाश है ऐसा कहते हैं किन्तु शब्द पौद्गलिक है यह हम पहिले सिद्ध कर आये हैं।

अतः जब कि शब्दको पुद्गलता है तो उसे गुण नहीं कह सकते। यदि द्रव्य भी गुण कहेंगे तो द्रव्य गुणमें संकर हो जायगा। इस लिए शब्द गुणवाला आकाश नहीं होसकता अतः जैनियोंका माना हुआ आकाशका लक्षण स्वीकार करना चाहिये सर्वत्र निर्विवाद होनेसे।

सारांश—वाच्यसे वाचककी सिद्धि होती है अतः आकाश वाच्यसे आकाश वाचककी सिद्धि हो ही जायगी और उपयोगीता उसकी अवगाह दानसे सिद्ध होती है। यदि आकाश माना जाय तो सभी द्रव्योंको निराश्रयताका प्रसङ्ग हो जायगा अतः आकाशको मानना ही चाहिये।

अब कालकी सिद्धि और आवश्यक्ता बतलाते हैं।

काल द्रव्यका स्वरूप पूर्वाचार्योंने यह दिखाया है कि जो सब द्रव्योंके वर्तनामें उदासीन कारण हो उसे काल द्रव्य कहते हैं। जैसे धर्म और अधर्म द्रव्य पुद्गलों और जीवोंकी गति स्थितिमें बलात्प्रेरक नहीं है उसी तरह काल भी बलात्कारसे किसी द्रव्यमें वर्तना

(परिणमन) नहीं करता जैसे कि गाड़ीके नीचे लगे हुवे पहिये स्वयं गाड़ीको नहीं खींच ले जाते बल्कि गाड़ी बैल आदिकोंसे खींची जाती है तो पहिले गाड़ीके चलनेमें उदासीन कारण हो जाते हैं । उसी प्रकार कालके वर्तनाकी दशा है । लोकाकाशके एक२ प्रदेशके ऊपर रत्नकी राशिके समान एक२ कालका अणु स्थित है ।

उक्तं च—लोयायास पदेसे इक्केक्के जे ठिया हु इक्केका ।
रयणाणं रासीमिव ते कालाणु असंख दव्वाणि ॥१॥

द्रव्यके जो दो या तीन लक्षण पहिले कहे थे वे दोनों ही काल द्रव्यमें अच्छी तरह घटित हो जाते हैं । काल द्रव्यमें अगुरु लघु गुणकी अपेक्षा षट् स्थान पतित और हानि वृद्धिसे उत्पाद और व्यय होते हैं । समय १ के अनन्तर कालमें-भूत भविष्यत् वर्तमानका व्यवहार होता है । कुछ समयके बीत जानेसे (विनाश हो जानेसे) भूत कालका व्यवहार होता है । और तात्कालिक उत्पाद होनेसे वर्तमानका व्यवहार होता है और अनागतकी अपेक्षा भविष्यत्का व्यवहार होता है । इस तरह उत्पाद व्यय हो जाते हैं और कालपनेका सभी कालोंमें व्यवहार होता है अतः ध्रौव्यता है ही इसलिये सद् द्रव्य लक्षण घटित हो ही जाता है । कालके साधारण गुण चेतनत्व मूर्तत्व आदि हैं और असाधारण वर्तना हेतुत्व है । भूत वर्तमान आदि ये सब कालकी पर्याय हैं अतः द्वितीय द्रव्यका लक्षण " गुणपर्ययवद्द्रव्यं " यह भी सुघटित ही है । कालमें भूत भविष्यत आदिका व्यवहार होता है अतः कालको अप्रदेशी और अनन्त समयवाला माना है ।

शंकाकार—जब कि आप वर्तना कराना कालका लक्षण मानते हैं तो कालको सक्रिय मानना चाहिये यह उनका कहना भी ठीक नहीं है । क्योंकि यहां निमित्त मात्रमें हेतु-कर्ताका व्यवहार है जैसे चश्मा मुझे दिखलाता है, या कण्डेकी अग्नि मुझे पढ़ाती है, इत्यादिमें कालका व्यवहार होता है । संसारमें भी मुलका समय मध्याह्न (दोपहर)का समय नास्य समय ऐक्यमैसका समय पैसिंजरका समय इत्यादि जो व्यवहार होता है वह कालके सद्भावमें ही मुख्यतया होता है । दूसरेके द्वारा अवगतया दूसरेको ज्ञान करानेवाली जो क्रिया विशेष उसको काल कहते हैं । जिस २ में कालका लक्षण जाय उसे २ द्रव्य मानना चाहिये इसलिये अनायास कालको द्रव्यता सिद्ध ही है । नैयायिकोंने कालका लक्षण " अतीतादि व्यवहार हेतुः कालः " ऐसा माना है ।

शंकाकार—अतीतादिका व्यवहार करानेवाला आकाश भी है अतः आकाशको भी कालका लक्षण मानना चाहिये । क्योंकि आकाशके विना अतीतादि शब्द नहीं बोले जा सके अतः उक्त काल द्रव्यका लक्षण अति व्याप्ति दोष दुष्ट होनेसे प्रमाणीक नहीं माना जा सका ऐसी शंका नहीं करनी चाहिये । व्यवहार हेतु शब्दका अर्थ निमित्त मात्र लेना चाहिये । कण्ठ तालु आदि जो अतीत आदि शब्दोंके अभिव्यंजक हैं उनसे भी अतिव्याप्ति

नहीं दे सक्के क्योंकि यहां अतीतादि व्यवहार हेतु शब्दका अर्थ निमित्त मात्र ही है, कालकी सिद्धिमें और भी बहुतसे प्रमाण दिये जा सक्के हैं। यह कालकी ही महिमा है कि नियत समयमें प्रकृतिका नियत कार्य होता है। चैत्र वैशाख ज्येष्ठमें ही आम आते हैं। मका सीमन मादोंमें ही पकती हैं आदि २।

यदि समय कुछ भी चीज न होती तो जो चीज जब चाहे उपज आती। समय न होता तो १० ही माह बाद स्त्रीके बालक नहीं पैदा होना चाहिये। वर्षा भी नियत समय पर नहीं होना चाहिये तथा जो आम्र, निम्बू, केला, जामुन, सेव, वेर आदि फल उत्पत्ति समयमें जैसे होते हैं उसी तरह हमेशाह रहना चाहिये। बच्चा भी जैसा उत्पत्ति समयमें होता है वैसा ही रहना चाहिये तथा वृक्ष आदि जितनी भी वस्तुयें उत्पत्ति अवस्थासे आगे २ वृद्धिको प्राप्त होती है वे सब पूर्व अवस्थामें ही रहनी चाहिये अतः ऐसी स्थिति होनेपर संसारके बहु भागका आघात हो जायगा इसलिये काल द्रव्य अवश्य मानना चाहिये। यह काल द्रव्यका व्यवहार सुर्य चन्द्र आदिकी गति हेतुक है। सूत्रकारजी ने भी कहा है " तत्कृतःकाल विभागः " यानी सुर्यनक्षत्र आदिकी गतिसे कालका विभाग होता है। संसारकी स्थिति जो प्रथम कालमें थी वह इस पंचम कालमें नहीं है और जो इस कालमें है या होगी वह षष्ठम कालमें नहीं होगी अतः इन सबमें भेद विनिश्चायक कालकी सिद्धि होती है। कालके दो भेद हैं व्यवहार काल और परमार्थ काल। व्यवहार कालके भूत वर्तमान भविष्य इस तरह तीन भेद होते हैं इस तरह कालकी प्रमाणता और सिद्धि जानना चाहिये। इस निबन्धके निर्माणका यही तात्पर्य है कि सम्यक् पदार्थ व्यवस्था सदा ही स्थितिको प्राप्त रहे।

इस प्रकार इन लेखमें निम्न रूपसे पदार्थ व्यवस्थाका निरूपण किया है। प्रथम १ दूसरोंके द्रव्य लक्षणकी सुचारुता अप्रमाणीक सिद्ध करके आर्हतमतानुयायियोंके द्रव्य लक्षणकी सिद्धि की है इसके पश्चात्तर स्वीकृत द्रव्य संख्याकी न्यूनाधिकता होनेसे संख्याभास बताकर जैनियोंद्वारा स्वीकृत संख्याकी प्रमाणता सिद्ध की है तदनन्तर अन्यमतानुयायियोंकी द्रव्योंका लक्षण सदोष सिद्धकर स्याद्वादियोंके इच्छित जीवादि षट्द्रव्योंका विषद निरूपण किया है।

यदि समाजका कुछ भी इस लेखसे उपकार हुआ तो मैं अपना श्रम सफल समझूंगा।

श्री सारसान अगार स्वामी वीनती हमरी यही।
शुभ ज्ञान हमको दीजिये अरु शान्तिमय कीजे मही॥
कर्तव्यमें निष्ठा सभीको होय श्रीमन् सर्वदा।
अन्याय अत्याचारका उत्पाद नहिं होवे कदा॥१॥
शान्तिका साम्राज्य हो अरु नाश अत्याचारका।
सबके दिलोंमें भाव हो सत् नीति धर्म प्रचारका॥२॥

बस, चहा चहा अने चहा !

"We thoroughly believe that more harm is done at the present time by Tabacco, Tea and Coffee, than by all forms of alcoholic drinks combined; and we deem it of greatest importance that the efforts of temperance workers shoud be turned in this direction. '

J. H. Kelloge, M. D.

મનુષ્ય પ્રાણીનો દેહસ્વભાવજ એવો છે કે તે પોતાની સામે બનતા બનાવોનું અનુકરણ કરતો રહે છે. એમાંય આપણા લોકોના જેવા અનુકરણ પ્રિય પ્રાણી ક્વચિતજ મળશે. એકે અમુક એક કાર્ય કર્યું કે બીજાએ આંખેલુંમ તેનાજ જેવી નકલ કરીજ સમજો. વિશેષતઃ એકાદ સન્માનનીય ગૃહસ્થે જો કંઇ બાબત કિંવા પ્રથાત પાડ્યો તો તે બાબત કિંવા પ્રથાતને ઉચકી લેવામાં કોઇજ વખત લાગતો નથી. અને એમાંય પણ જો એ બાબત કિંવા પ્રથાત પરદેશી લોકોએ, મુખ્યત્વે, કરીને યુરોપિયન લોકોએ અને તે સુદ્ધાં મોટા અધિકારી વર્ગે પાડ્યો હોય એટલે એ તેમનું કરવું તે સર્વાંગ સુંદર, ફાયદાવાળું અને ઉત્કૃષ્ટ એવું હોવુંજ જોઇએ, એવી કંઇ એકંદરે આપણા લોકોની માન્યતા થઇ ગઇ છે. અને એથી તે પ્રથાત કિંવા તે બાબત આપણા લોક આંમળાની પેઠે, માબાપને સ્મરીને પાળે છે. પરંતુ જે ધૂર્ત, ચકાસુ અને વિચારશીલ છે તેમના હાથે સહસા એવું વર્તન થતું નથી. આજસુધી પરદેશી લોકોનો અને હિંદુસ્થાનનો સંબંધ થયો તેને ઘણાં વરસો વીત્યાં. તથાપિ પરદેશીઓએ એકપણ બાબતમાં હિંદુ લોકોના રીવાજનું અનુકરણ કર્યું નથી એનું કારણ શોધવા જઇએ તો એમજ છે, અને તે સ્વદેશાભિમાન શિવાય કંઇ નથી. તેમને સ્વાભિમાન છે, સ્વદેશાભિમાન છે. પોતાના રીતરિવાજ પાળવામાં તેમને મોટું ગૌરવ લાગે છે. અને તેથીજ તેઓ જેવા પૂર્વે હતા તેવાજ આજે છે. પણ એથી ઉલટું હિંદી લોક માત્ર પરાવલંબી બન્યા. એટલુંજ નહીં પણ તેઓ હવે હિંદુ તરીકે સુદ્ધાં ઓળખાઇ આવતા નથી. તે માત્ર એકજ બાબતથી હિંદુ છે, એમ ઓળખી શકાય છે. અને તે બાબત તે એ કે તેમને વર્ણ છે. પશ્ચાત્યોની પાસેથી રંગ બદલવાની જો એકાદ નવી યુક્તિ શોધી કાઢી તો માત્ર તેમનાથી પૂર્ણ યુરોપિયન બની શકાશે અને જન્મ્યાનું સાર્થક થયું એમ તેમને લાગશે. આમ થવાનું કારણ શોધવા જતાં આપણને જાત્યાભિમાન નથી. સ્વદેશાભિમાન નથી એજ છે. નવું તેટલું સારૂં અને જુનું તેટલું ખરાબ અને મૂર્ખાવાળું, આવા પ્રકારની અહીં માન્યતા છે, ત્યાં કોઈ શું કરે ! મોરને માટે એમ કહેવાય છે કે, તે જ્યારે નાચવા લાગે છે ત્યારે તેને જોઇને ઢેલડી સુદ્ધાં નાચવા લાગે છે. પણ મજા શું થાય છે કે મોર નાચવા લાગતાની ક્ષણેજ તેના પીંછાની સુંદર કળા થાય છે. પણ ઢેલડીનો ગુહ્ય ભાગ બહાર દેખાય છે. અસ્તુ. આ પ્રમાણે ઘણા ખરા રીતરિવાજમાં આપણું થયું છે. એમાંથી ચહા-કાફીના પીણાનાં દુષ્પરિણામની બાબતમાં આપણે વિચાર કરીએ.

થોડા વર્ષ પહેલાં આપણે ચહા કાફીનાથી બિલકુલ અલિપ્ત હતા, એટલુંજ નહીં પણ ચહા પીવી એ અધર્મનું લક્ષણ છે એવી ઘણા લોકોની માન્યતા હતી અને કેટલાકની અદ્યપિ પણ છે. આજસુધી ચહા કાફીનું નામ સુદ્ધાં જે લોકોને માહિત નહોતું તેમને આશરે ૧૫-૨૦ વર્ષની ટેવથી તેણે પોતાના બીલકુલ નાદાન ગુલામ બનાવી મુક્યા છે. આ ટેવ આપણે પશ્ચાત્ય લોકોની પાસેથી લીધી. વચમાં કેટલાક લોક ચહા પરદેશી છે તેથી પીતા નહોતા. પણ હિંદુસ્થાનમાં ચહાનું વાવેતર થવા લાગ્યું ત્યારથી ચહાનું એટલું પ્રસ્થ જામ્યું છે કે, ખેડુત તેમજ મજુર વર્ગના લોકને જે સવારના પહોરમાં નાસ્તાને માટે બાજરી રોટલા અને ચટણીનો ગોળો કિંવા મરચાંનું અથાણું લાગતું હતું તેમને હવે આહારમાં ચહાનો કપ મળ્યા શિવાય ચાલ-

ધંધોજ સૂઝતો નથી. રાજાથી રંક સુધી સૌ કોઇને ચહાવિના ચાલતુંજ નથી. એકાદ બે દિવસ ખાવાનું ન મળે તો ચાલે પણ ચહા ન મળે તે કામનું નહીં. ચહા ન મળે તો તેમનો પ્રાણ આકુળવ્યાકુળ થાય છે........................

બે મહિનાના બાળકથી તે ઠેઠ ડોસો ડગરાં પર્યંત ચહા અત્યાવશ્યક થઇ પડી છે. આગગાડીનો પ્રવાસ કરતી વેળા હોટલની કે દરેક ચહા મળતી નથી તોપણ "ગરમાગરમ આ ઇંડિયા ચહા" ની બૂમો પાડનારા ચહાની ફેરી-વાળા પાસેથી લઇને ચહા પીનારા પુષ્કળ સભ્ય કેહવાતા પણ નજરે પડે છે એટલુંજ નહીં પણ લોકોને ધર્મભ્રષ્ટ કહીને બદનામ કરનારા ભ્રષ્ટ ભક્ષુને સ્હેજે ચહા શિવાય ચાલતુ નથી. તે ચહા માત્ર ચીનમાટીના કપ રકાબીમાં આપવી કામનું નહીં. સમજ્યા કે? પીતળના વાટકામાં માત્ર ચહા પીવામાં હરકત નહીં જુવાન વર્ગ તરફ નજર ફેંકીએ તો તેમને પોતને દુધ પચતું નથી, ચોકખું દુધ મળતું નથી. વગેરે બહાનાંઓથી ચહાપાન શરૂ કર્યું છે. આ બધી ઇમારતનો કળશ તો એ છે કે, નાના કુળમાં બે ચાર મહિનાના દુધ પીતાં બાળકથી તે બે ત્રણ વર્ષના બાળકનાં ગળાંમાં આ હાનિકારક પેય કેટલાક સુશિક્ષિત માબાપ કેવળ હોંસની ખાતર રેડતા હોય છે આ મૂર્ખપણાનો સંબંધ થઇ. પોતે પોતાનાં શરીરની તો ખરાબી કરી લેવી પણ એની બરાબરજ બીજાઓની પણ તેવીજ સ્થિતિ કરનારા લોકો કેવળ નરાધમ અને રાક્ષસ છે એમાં લેશમાત્ર પણ શંકા નથી. કેટલાક સુધારાવાળાઓ જૂના રીતરિવાજના લોકને અંધ શ્રદ્ધાળુ કહીને તેમની મજાક ઉડાવે છે. કારણ જૂના લોક પોતાના વડીલોની રીત પ્રમાણે વર્તે છે પણ આપણા સુધારક બહાદુર જે બાબતો તેમના બાપદાદાઓએ કદિ સ્વપ્નમાં સુદ્ધાં સાંભળી કે જોઇ નહીં હોય તે બાબતોનું, આચારવિચારોનું તેમજ રીતરિવાજનું અનુકરણ ખરેખર અંધશ્રદ્ધાથી કરે છે એમાં લેશમાત્ર પણ શંકા નથી. કારણ જેમના રીતરિવાજ આપણા આ બહાદુરો ગ્રહણ કરે છે એજ રીતરિવાજને માટે ખુદ પાશ્ચાત્ય લોકોનું શું કહેવુ છે એનું તેમને જરા જેટલું સુદ્ધાં જ્ઞાન હોતું નથી. આવી રીત તો ઘાણીએ જોડેલા બળદનીજ છે. ! અસ્તુ. ચહા-કાફીનાં પીણાંની બાબતમાં પાશ્ચાત્ય લોકોનુંજ શું કહેવું છે એ બાબતનો યત્કિંચિત વિચાર ચહા-કાફીપ્રિય કરે તો તેમની મોટી ભયંકર ભૂલ તેમની નજરે આવ્યા શિવાય રહેશે નહીં, એવી અમારી પૂર્ણ ખાત્રી છે પાશ્ચાત્ય લોક ચાહ-કાફી પીએ છે, સિગરેટ પીએ છે, તેથી આપણે પણ તેમ કરવું જોઇએ, પણ આજ બાબતોને માટે ત્યાંના શાસ્ત્ર-પ્રવીણ લોક શું કહે છે, એનો અવશ્ય વિચાર કરવો જોઇએ. હમણાંની સ્થિતિમાં આ બે પીણાંનાં ઘાતુક પરિણામની બાબતમાં પાશ્ચાત્ય દેશોમાં અને વિશેષતઃ અમેરિકામાં ખૂબ જોરથી ચર્ચા ચાલુ છે. અમેરિકાના આરોગ્યશાસ્ત્ર અને વિખ્યાત ગ્રંથકાર બરનાર મૅકફેડને આ વિષય સંબંધે પોતાના એક ગ્રંથમાં સવિસ્તર સાધાર વિવેચન કર્યું છે. તે પ્રત્યેક ચહા કાફી પ્રિય લોકોએ અવશ્ય કરીને જોવું. તે ચહા કાફી પાનની બાબતમાં શું કહે છે તે સંક્ષિપ્તમાં જણાવીએ છીએ.

લગભગ તમામ લોકોની એવી કંઇ માન્યતા થએલી છે કે, ચહા અને કાફીમાં શરીરને ભગવાન બનાવનારાં દ્રવ્યો છે. પણ આવા લોકોએ એટલુંજ લક્ષમાં રાખવું કે, દારૂ જેવા માદક પદાર્થમાં શરીરને પુષ્ટિ આપનારાં જેટલાં દ્રવ્યો છે તેટલાંજ

આ બે મોહક પદાર્થોમાં છે. ચહા અને કાફી એ સ્પષ્ટ ઉત્તેજક દ્રવ્ય છે. એમાં અન્નાંશ તરીકે જો કંઇ હોય તો દૂધ અને સાકરજ માત્ર છે. હવે ચહા-કાફીમાં નાંખવામાં આવતા દૂધ સાકરમાં અન્નાંશ તે કેટલો હોય ? એક કપમાં મોટો ચમચા ભર દૂધ સિવાય આપણે વધારે દૂધ નાંખતા નથી. તેથી દૂધ હોય ન હોયને સરખુંજ છે. ચહામાં દૂધ નાંખવાથી તેને ધોળો રંગ માત્ર આવે છે. હવે રહી સાકર. તે સુદ્ધાં બે અઢી ચમચાના કરતાં વધારે ઓગળતી નથી. અને પછી પછી તો ચહા તદ્દન સાધારણ ગળી લાગવા માંડે છે. એવંચ એમાં અન્નાંશ હોય છે એમ કહેવાને બીલકુલ આધાર નથી. હવે જો આ પદાર્થોમાં શરીરને બળવાન બનાવવાનું સામર્થ્ય છે તો આવા ખોરાક પદાર્થોને જે કસોટીએ ચઢાવીએ છીએ તે કસોટીએ આ પદાર્થોને પણ ચઢાવવા જોઇએ. જે પદાર્થ ખાવા યોગ્ય અને સારો હોય છે તેની સ્વાભાવિક રૂચિ મિષ્ટ હોય છે. આવા જે પદાર્થ હોય છે તેજ આરોગ્યકારક હોય છે. નિરોગી મનુષ્ય જો દારૂનો એક ઘુંટડો લે તો તે તેના ગળાને દાહ કરતો કરતોજ નીચે ઉતરશે. આ એ પદાર્થનો સ્વાભાવિક સ્વભાવ છે. ચહા અને કાફીમાં દૂધ સાકરનું મિશ્રણ કરવાથી આપણને તેની સ્વાભાવિક રૂચિ સમજાતી નથી. જો આ પદાર્થોની સ્વાભાવિક રૂચિ આપણે જોવી હોય તો દૂધ અને સાકર ન નાખતાં ચહા અને કાફી પીવી જોઇએ. એટલે તે અતિશય કડવી લાગ્યા સિવાય રહેશે નહીં. અને ફરીથી એવા પદાર્થ પીવાની ઇચ્છા પણ થશે નહીં. દારૂની પેઠે નવા શીખાઉને ચહા સુદ્ધાં મન પૂર્વક ગમતી નથી. પણ પછી ટેવથી જે પ્રમાણે દારૂની આસક્તિ વધતી જાય છે તે પ્રમાણે ચહા કાફીનું પણ થાય છે. અને ચહા કાફીનું દુષ્પરિણામ જો કે દારૂના જેટલું તાત્કાલિક દેખાઇ આવતું નથી તોપણ કાલાન્તરે તે દારૂના જેટલુંજ ભયંકર આવે છે એવું ઘણા અનુભવની અંતે જણાઇ આવ્યું છે. આ ઉપરે દારૂની પેઠેજ શરીરની હાનિ થાય છે. આ બે દ્રવ્યમાં ચહા બહુજ ખરાબ દ્રવ્ય છે. કારણ એમાં ટેનિન નામનો એક ઘાતુક વિકારી પદાર્થ મોટા પ્રમાણમાં હોય છે. ચહાને જે એક ઉત્તેજકપણું આવે છે તે આ ટેનિનને લીધેજ આવે છે. આ ટેનિનનો એવો ગુણ છે કે, તે કંઇક કાળ પર્યન્ત ઉત્તેજક કાર્ય કરે છે. પણ કેટલો કાળ ગયા પછી, દારૂનું જે દીર્ઘ કાળ અનિષ્ટ અને ઘાતુક પરિણામ થાય છે. તે સુદ્ધાં આનાથી થાય છે. બીજું એમ કે, વારંવાર ઉત્તેજકપણું વધારવા સારૂ દારૂની પેઠે ચહા લેવાનું પણ પ્રમાણ વધારવું પડે છે. એથી પુષ્કળ લોક દિવસ રાત્રીમાં ૧૦-૧૫ વખત ચહા પીવાને કમી કરતા નથી. પણ આ કૃત્યનું અનિષ્ટ પરિણામ ભોગવવાનું કારણ પણ ચુકતું નથી. આ પ્રમાણે ખાવા યોગ્ય પદાર્થને લગાડવાની કસોટીમાં પણ ચહા કાફી શરીરને શક્તિ આપનારા છે. આ સિદ્ધાંત લંગડોજ પડે છે.

કાફી, ચહાના જેટલી અપાયકારક નથી. તથાપિ તેમાં પણ વિકારી દ્રવ્યો હોવાને લીધે પરિણામે તે સુદ્ધાં ઘાતકજ થાય છે, એવું અનુભવાન્તે નક્કી થએલું છે. જેમને ચહા પીવાની ટેવ છે તેમને કયા કયા વિકાર થાય છે તે જાણી લઇએ. (૧) તેઓની ત્વચા પીળા રંગની થઇ જાય છે. (૨) ચહેરા ઉપરની તેજ ઉડી જઇ મોં ઉપર ફીકાશની ઝાંખ મારવા લાગે છે. (૩) પિત્ત વધે છે. (૪) પિત્ત વધવાને લીધે તેના સંસર્ગથી જુદા જુદા રોગ ઉત્પન્ન થાય છે. (૫) અગ્નિમાંદ્ય તેમજ મધુ મેહાદિ વિકાર ઉદ્ભવે છે. (૬) પાચનક્રિયા બગડે છે. (૭) પાચનક્રિયામાં દોષ ઉત્પન્ન થયો કે શરીરમાં રોગબીજોનું વાસ્તવ્ય શરૂ થાય છે. (૮) ધાતુ ક્ષીણ થાય છે. આ પ્રમાણે વિકારો થવાથી શરીર ખરાબ થઇ જાય છે. અને પુનઃ તે પૂર્વ સ્થિતિપર આવવું બહુજ કઠિણ કિંબહુના અશક્યજ થાય છે.

હવે ચહા પીવાથી કયા કયા વિકાર થાય છે એનો વિચાર કરીએ. હમેશા ચહા પીવાથી મુખ્યત્વે કરીને આહાર મંદ થાય છે. (૧) શરીરને

બળવાન બનાવવાને તો ઉત્તમ પ્રકારનો આહાર હોવો જોઇએ. અગ્નિમાંદ્યનો વિકાર કાયમનોજ થાય છે. (૨) પાચનક્રિયા બરોબર થતી નથી. (૩) અપચનને લીધે માથાનાં રોગ, (૪) ફેફર, (૫) મૂત્રાશયના રોગ, (૬) નાના પ્રકારના મેહ, (૭) વિશેષતઃ મધુમેહ વગેરે વિકાર થાય છે. (૮) વિર્ય પાતળું થાય છે. (૯) પેટમાં ઉષ્ણતા ઉત્પન્ન થાય છે. (૧૦) ગળું સળગી ઉઠે છે. (૧૧) ચહામાં રહેલા ટૅનિન નામનાં વિષારી તેમજ ઘાતુક દ્રવ્યથી દારૂનાં જેવાંજ અનિષ્ટ પરિણામ થાય છે. (૧૨) ચહા કાફીના પાનથી એક ઘણો ફાયદો તો તેનાથી દશગણું નુકસાન એ તો આવી બાબતો કરવામાં શહાણપણું તે શાનું ?

આપણામાં ચહા પીવાની ટેવ નહોતી; પરન્તુ પાશ્ચાત્યોના અનુષંગે તે આપણને લાગી. તથાપિ પાશ્ચાત્ય લોક પણ તે કયા ઉદ્દેશથી પીતા હતા એ બાબુએ થોડું લક્ષ આપવું ગેરવ્યાજબી થશે નહીં. પાશ્ચાત્ય લોક માંસાહારી છે અને માંસ એ જડાન્ન હોવાને લીધે તેને પચવામાં મદદ થાય એતદર્થ અને અંશતઃ મોજને ખાતર ચહા પીવાનો રિવાજ પડ્યો સિવાય તેમનો પ્રદેશ અતિશય ઠંડો હોવાથી તેમને જેટલો ઉષ્ણ પદાર્થ પેટમાં જાય તેટલો આવશ્યક હોય છે. પણ આ વસ્તુની અન્નપચનના કાર્યમાં મદદ ન થતાં ઉલટી તેનાથી શરીરની હાનિજ થાય છે. આવું અનુભવથી સિદ્ધ થએલું જોઇને ત્યાંના લોક સુદ્ધાં ચા કાફી, મદ્યપાન વગેરે બાબતોને પ્રતિબંધ કરવાનો પ્રયત્ન કરે છે. પણ આપણા કાર્યધુરંધર લોક આપણો દેશ ઉષ્ણકટિબંધમાં હોવા છતાં જ્યાંનું સેવન ન હોવા છતાં અને તે પીણું ઘાતુક તેમજ હાનિકારક હોવા છતાંએ ચહાકાફીના પીણીનો અટકાવ કરવાનો પ્રયત્ન ન કરતાં ઉલટાં એવાં વ્યસનો વધારવાનેજ તત્પર કે ઉત્તેજન આપે છે ! આ પ્રકાર ખીલકુલ હલનારૂપદ છે એમાં શંકા નથી ! બીજું પાશ્ચાત્ય લોક નરણા પેટે (કંઇ પણ ખાધા પહેલાં) કદિપણ ચહા પીતા નથી અને જ્યારે જ્યારે ચહા પીએ છે ત્યારે ત્યારે તેની સાથે કંઇને કંઇપણ ખાધા સિવાય રહેતા નથી. પણ આપણે ત્યાં જોઇએ તો બધોજ પ્રકાર ઉલટો ! ચહા નરણા પેટેજ પીવાની અને તેની બરોબર કંઇપણ ખાવાનું નહીં. આથી તે વધારેજ અપાયકારક થાય છે. અસ્તુ.

હવે એવો પણ પ્રશ્ન ઉદ્ભવે છે કે; ચહા પીવાથી બધાની પ્રકૃતિ ક્યાં બગડી છે ? પરન્તુ આ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપવો બહુ મુશ્કેલ નથી જેને ત્યાં ચહાને માટે ઘરનું ઉત્તમ દુધ હોય છે તેમને ચહા વિશેષ નુકશાન કરતી નથી. પણ હોટલમાંની ચહા તરફ કેવળ જોવા માત્રથી સુદ્ધાં ઓકારી આવે છે તો પછી પીવાની તો વાતજ શી ? સિવાય એકવાર ચહા તૈયાર કર્યા પછી તેને વધારે વાર રહેવા દેવાથી તેમાં અપાયકારક દ્રવ્યો ઉત્પન્ન થાય છે. જેમની પ્રકૃતિ મુળથીજ સુદૃઢ છે તેમને ચહા અપાયકારક થાય છે એમ લાગતું નહીં; તથાપિ એવાઓને સુદ્ધાં કેટલાક વર્ષ પછી તેનું સુખ અનુભવવાને મળે છેજ. સાધારણતઃ ચહા પીનારાની પ્રકૃતિ ક્વચિતજ સુદૃઢ હોય છે. સિવાય ચહા-કફીથી કેટલાં નુકશાન થાય છે એનું અનુભવ પરથી શાસ્ત્રપ્રવીણ તેમજ હોશિયાર ડાકટરોએ ઘણા ગ્રંથોમાં સવિસ્તર વિવેચન કર્યું છે, તેથી તે ન પીવી એજ સારૂં.

આપણી મુર્ખતાથી આપણે ચહા-કાફીના પીણાંથી શરીરની ખરાબી તો કરીજ લઇએ છીએ, પણ આપણી બરોબરજ આ વ્યસનને લીધે આપણા કેટલા પૈસા ખરાબ થાય છે એની કોઇને કલ્પના સુદ્ધાં છે શું ? નાનાથી મોટા પર્યન્ત અને રાવથી રંક પર્યન્ત સહું કોઇનેજ ચહાની ચાહ લાગી ગએલી છે. શ્રીમંતોની બાબતને છોડી દઇએ તો પણ મધ્યમ અને કનિષ્ટ લોકોનું આ ચહાપાનથી અપરિમિત નુકશાન થયું છે. પણ મદાંધ થએલા લોકોની આંખમાં સરૂં જ્ઞાનરૂપ અંજન આંજનારો કોઇ નીકળે ત્યારે ખરો ! આ વ્યસનમાં ખરાબ થતા પૈસાને જો એકઠા કરવામાં આવે તો આજ હજારો ગરીબ વિદ્યાર્થીઓને કેળવણીના ખરચ ઉપરાંત તેમને ઉત્તમ શિષ્યવૃત્તિ

લાભ સુદ્ધાં મળી શકે! પણ એટલી ગરજ છે કોને? સહુ કોઇનો પોતપોતાની રોટલી ઉપરજ ઘી નોખવાનો પ્રયત્ન? તો બીજાઓની આવશ્યકતા અને હાજતો પ્રત્યે લક્ષ જાય કેવી રીતે? વાસ્તવિક જોઇએ તો એમને આટલા પૈસા ખર્ચ કરવાનું સામર્થ્ય ક્યાં છે? પણ નાદાન વ્યસનને લીધે આ નંદીભેદ–આખલા–ને બીજું કંઇ સૂઝતું નથી. પોતાની ખાવાપીવાની ચેન થઇ, બીડી વગેરેમાં કંઇ કસર ન થાય એટલે થયું. પછી ઘરે બૈરાં છોકરાં ભલેને ઉપવાસી રહે. ભલેને તેમને અધ્ધે દિવસ અન્ન ન મળે! બાળબચ્ચાંને ભલેને શરીર ઢાંકવા પૂરતાં કપડાં પણ ન હોય! કેવી આ ખેદકર સ્થિતિ! હમણાં મધ્યમ અને કનિષ્ટ લોકોને પેટ પુરતું અન્ન મેળવાની સુદ્ધાં મારામાર થતી ચાલી છે. અનાજનો ભાવ બમણો તમણો વધ્યો છે. આથી તેના કુટુંબની બીજી વાસ્તવિક ગરજો તો રહી; પણ તેને અત્યંત આવશ્યક એવું પૌષ્ટિક અન્ન સુદ્ધાં મળતું નથી. પણ આવી સ્થિતિમાં સુદ્ધાં ચહા–કોફી, પાન–તંબાકુ વગેરેમાં પૈસા ઉડાવી પોતાના ઘરના માણસોને ભૂખે મારવા એ અધમપણાની સીમાજ થઇ! આવી રીતે નિરર્થક પૈસા ગુમાવી શરીરસામર્થ્યનો હ્રાસ કરી લેવાના કરતાં એજ પૈસા શરીરપોષણાર્થે આવશ્યક પદાર્થ લેવાના કામમાં ખરચીને તેટલાજ પ્રમાણમાં ઘરનાં માણસોનાં હાલ મટાડવા વધારે શ્રેયસ્કર છે એમાં લેશમાત્ર પણ શંકા નથી.

આ સાધારણ લોકોની હકીકત થઇ. પણ શ્રીમંત લોકોની અને જેમને ચહા અત્યાવશ્યક થઇ પડી છે તેમને ચહાપાનમાં વપરાતા પૈસામાં કંઇ પૌષ્ટિક પદાર્થ લઇને ખાઇ શકાશે કે નહીં એનો થોડામાં વિચાર કરીએ.

દરરોજ એક પ્યાલો (કપભર) ચહા લેવાની હોય એટલે તેને માણસે આશરે એક રૂપિયો માસિક ખરચ આવે છે. ઘરમાં જો ઘણા એટલે ૧૦–૧૨ માણસો હોય તો એ ખરચમાં કંઇક ઓછું થશે. સિવાય બે વખત ચહા પીનારા પણ ઘણાં છે. જેમને તો ઘણીવાર ચહા થાય છે કિંવા જે ક્વચિત પ્રસંગે ચહા પીએ છે એવા લોકોની બાબતમાં આપણે વિચાર કરવાનો નથી, પણ સર્વ સાધારણ થતા ચહાના ખર્ચમાં બીજા પૌષ્ટિક પદાર્થ ખાઇ શકાશે કે કેમ એનો આપણે વિચાર કરવાનો છે. સ્થૂળ પ્રમાણમાં જોતાં એક પ્યાલા ચહાનો રૂપિયાથી સવા રૂપિયો માસિક ખર્ચ આવે છે. આ સવા રૂપિયામાં આપણાથી શું શું કરી શકાય તે જણાવું છું.

આ પૈસામાં એક માણસથી પાશેર દુધ ઉત્તમ રીતે પી શકાશે. પાશેર દુધમાંથી પુજાના નૈવેદ્યની વાટકી જેટલું રક્ત તૈયાર થાય છે. દુધના જેવો રક્ત તૈયાર કરનારો બીજો પદાર્થ ક્વચિતજ હશે. એક વખત ચહા પીવાથી કેટલું નુકશાન થાય છે એ ઉપર જણાવ્યુંજ છે. આ બે બાબતો આપણા આગે હોવા છતાં જો આપણે દૂધના બદલે ચહા ઢીંચ્યાને માટે લોકોએ આપણને મૂર્ખ કહ્યા તો તેમાં ખોટું શા માટે લાગવું જોઇએ? મગનો કહો કે ચણાનો કહો એક લાડુ ચહાના ખર્ચમાંજ આપણાથી દરરોજ ખાઇ શકાશે. સવા રૂપિયામાં ખરેર કાગદી બદામ મળે છે, તે આપણાથી રોજ ૧૦ થી ૧૫ સુધી ખાઇ શકાશે. એટલાજ પૈસામાં દોઢ શેર ઉત્તમ માખણ મળે છે અને તે દરરોજ એક વાટકીભર ખાઇ શકાશે. ખારેક, પીસ્તા વગેરે પદાર્થોનું પણ એમજ છે. આ પ્રમાણે બધા પૌષ્ટિક પદાર્થોને જો ગણવા બેસું તો એક નાનો સરખો ગ્રંથજ થાય પણ આ ઉપરથી એટલું તો નજરે આવશે કે, ચહાના બદલે તેટલાજ ખર્ચમાં આપણાથી પૌષ્ટિક પદાર્થ ખાઇ શકાય છે અને બંને પદાર્થના ગુણધર્મ ઉપરથી જોતાં ચહા એક ગણો ફાયદો કરે છે. તો તેનાથી દશગણી હાની કરે છે. વસ્તુસ્થિતિ આવી હોવા છતાં આપણે ભ્રમથી મોહથી કે નાદાનપણાથી હીરાને ફેંકી દઇ ચકમકના પત્થરનેજ વળગી રહેવા લાગ્યા તો લોકોએ આપણને મૂર્ખ ન કહેવા તો શું કહેવું? હું તો કહું છું કે, ઠીક થયું કે લોક એટલાજ અ[illegible]પા નહીં તો મોઢાના મ્હેણાં કોણ બંધ કરે? આપણા ચહા

પીનારાઓને તેમણે બળદ ન કહ્યા એજ તેમની મહેરબાની!

આની ઉપર કોઇ એમ કહેશે કે, આટલા લાંબા વખતની ટેવ જાય કેવી રીતે? આનો ઉત્તર આપવો બહુ મુશ્કેલ નથી. જેઓ દૃઢ નિશ્ચયી છે તેઓ ઉપલી હકીકત જાણવામાં આવતાંની ક્ષણેજ ચહાથી અલિપ્ત રહેશે એવી મારી પૂર્ણ ખાત્રી છે, પણ જે એટલા ધૈર્યવાળા નથી તેમણે હમેશાં ચહાની વેળાએ ચહા થોડી થોડી ઓછી કરવી. એટલે એક કપનું પ્રમાણ પોણા કપ ઉપર આણવું. અને એમાં દુધ વધારે નાંખવું. આ પ્રમાણે કરતાં કરતાં ચહાની પાંદડી અથવા પાઉડર નાંખવાનું પ્રમાણ દરરોજ ઓછું ઓછું કરતાંજ જવું. આટલું થયા પછી ચહાને રજા આપી દઇને તેને બદલે ઉકળતાં પાણીમાં દુધ સાકર નાંખીને કેટલાક દિવસ પીવું. પણ આગળ જતાં તે સુદ્ધાં રજા આપી દેવી એટલે ચહાના બીલકુલ બંદેગુલામ બનેલા લોક સુદ્ધાં ચહા કાફીના પીણાથી વર્તન અક્ષિપ્ત થઇ જશે એમાં જરા જેટલી પણ શંકા નથી. જેમને તાજેતરની ટેવ પડી હોય તેમણે તો તાબડતોબ છોડી દેવી. એવીજ રીતે પોતાને ચહા જોઇએ છે તેથી પોતાના બચ્ચાં છોકરાને સુદ્ધાં ચહાનું વ્યસન પાડનારા કેટલાક નરાધમો છે. પણ આપણે છાણ ખાધું તો ખાધું પણ આગલી પેઢીએ તો એમ ન કરવું એટલો વિચાર તેમના દુર્બુદ્ધિ ભેજામાં આવે તો તેમણે સત્કૃત કર્યું એમ અમને લાગશે!

છેવટ એટલી વિનતી છે કે, પ્રત્યેકે ચહા કાફીના વ્યસનથી દૂર રહેવાનો પ્રયત્ન કરવો. ચહાજ શું પણ બીજી કોઇપણ બાબતનું સુદ્ધાં વ્યસન પાડી લેવું નહીં. આ વ્યસનને લીધે આપણું કેટલું નુકસાન થયું છે એનો હાજમર પણ વિચાર કરવાથી આટલા દિવસ આપણે આંધળાની પેઠે જે વ્યવહાર કર્યો એને માટે શરમ લાગ્યા શિવાય રહેશે નહીં. જેને જેને પોતાના સમાજનું કલ્યાણ કરવાનું છે તેણે તેણે સમાજને ઉપલા વ્યસનથી દૂર રાખવાનો પ્રયત્ન કરવો. એટલું જ નહીં પણ એ તેમનું એક પ્રમુખ કર્તવ્ય છે. "જિનવિજય જાગૃત" ઉપરથી.

दरिद्रता ही सब रोगोंका मूल है।

आजकल अनेक विपत्तियोंके साथ २ भारतमें रोगोंकी संख्या भी अत्यन्त तीव्रताके साथ बढ़रही है। प्लेग, हैजा, इन्फ्लुएन्ज़ा, मलेरिया आदि सैकड़ों भयंकर व्याधियों बड़ी भीषणतासे प्रतिवर्ष भारतका ध्वंस कररही हैं। वैज्ञानिक डाक्टर उक्त रोगोंके अनेक प्रकारके कारण निर्धारित कररहे हैं। किन्तु वास्तवमें देखाजाय तो सब रोगोंका एक मात्र कारण भारतकी दरिद्रता ही है। दरिद्रता हीके कारण देशमें आज इतने रोगोंकी विभीषिका फैलरही है, इसमें कुछ भी संदेह नहीं है। नीचे इस बातको वैज्ञानिक रीतिसे सिद्ध करते हैं।

हमारे खाद्य पदार्थोंके सारभाग से रक्त बनता है। रक्त ही हमारे शरीरका मुख्य पदार्थ है। रक्तके ही द्वारा हमारे समस्त शारीरिक यन्त्रोंका संचालन होता है और हम जीवन धारण करते हैं। रक्त ही हमारे शरीरका सारभाग है तो रक्तकी उन्नति और अवनतिके ऊपर ही हमारे शरीरकी एवं समस्त जीवनकी उन्नति और अवनति निर्भर है। वर्तमान डाक्टरोंके मतसे बीमाणुओंके द्वारा ही रोग उत्पन्न होते हैं, ये बीमाणु श्वास-वायुके साथ जलके साथ और अन्यान्य नाना प्रकारसे हमारे शरीरमें प्रविष्ट होते हैं। यद्यपि ये बीमाणु हमारे शरीरमें हर समय प्रवेश करते हैं तथापि हम हर समय रोगी रहते हों, ऐसा नहीं होता इसका कारण यह है कि वे रोगके बीमा-

णु जब हमारे शरीरमें प्रवेश करते हैं तब हमारे शरीरमें एक प्रकारकी क्रिया होती है-अर्थात हमारे रक्तस्थित बीजाणुओंके साथ इस आगन्तुक रोगके बीजाणुओंका एक प्रकारका युद्ध होता है। पहरेवाले सिपाहियों और चोर-डाकुओंमें जैसी लड़ाई होती है, इनमें भी प्रायः वैसे ही लड़ाई होती है। इस लड़ाईमें जो जीत जाते हैं, उन्हींका प्रभाव फैलजाता है। हमारे रक्तके बीजाणुओंके विजय प्राप्त कर लेने पर ही हमारा मंगल है कारण उनसे सम्पूर्ण रोगोंके बीजाणु पराजित होकर भागजाते हैं अथवा नष्ट होजाते हैं। यदि ऐसा न होकर यदि हमारे रुधिरके बीजाणु पराजित होजायँ तो हमारा विशेष अनिष्ट होनेकी सम्भावना है। ऐसा होनेसे शत्रुओंके द्वारा हमारा शरीर रूपी दुर्ग शत्रुओंके अधिकारमें आजाता है और हम रोगी हो जाते हैं। हमारे रुधिरके साथ स्वास्थ्यका घनिष्ट सम्बन्ध होनेसे रुधिरकी उन्नति करना हमारा प्रधान कर्तव्य है। हमारा रुधिर यदि शुद्ध और शक्तिशाली हो तो सहजमें कोई भी रोग हमारे ऊपर आक्रमण नहीं कर सकता। हम सदैव इसके उदाहरण देखते हैं। एक स्थानमें और एक ही अवस्थामें होने पर भी एक मनुष्य अस्वस्थ और दूसरा स्वस्थ पाया जाता है। उपर्युक्त कारणके विना ऐसा नहीं हो सकता। इससे स्पष्ट जाना जाता है कि जिसका रुधिर दूषित और तेजहीन होता है वह रोगी रहता है। जिसका रुधिर शुद्ध और बलवान होता है वह आरोग्य रहता है। रोगका आक्रमण और चोर-डाकुओंका आक्रमण एक ही प्रकारका होता है। जिसके पहरेदार सावधान हों और घरके किवाड आदि खूब मजबूत हों उस घरमें सहज ही चोर प्रवेश नहीं कर सकते। किंतु जिसके प्रहरी लोग कमजोर और शिथिल हों और घरके दरवाजे आदि टूटे फूटे हों उसके घरमें चोर सहज ही प्रवेश कर सकते हैं।

यह पहले कहा जा चुका है कि-आहारके सार भागसे हमारे शरीरमें रुधिर उत्पन्न होता है, इस कारण हमारे आहारके ऊपर ही रुधिरकी सब प्रकारकी उन्नति, अवनति अवलम्बित है। हमारा आहार उत्तम और पुष्टिकारक होने पर हमारा रुधिर भी शुद्ध और शक्तिशाली होगा और हमारा आहार यदि थोड़ा और बुरा हो तो हमारा रुधिर भी निकृष्ट और बलहीन होगा। उत्तम आहारका प्राप्त होना अर्थके ऊपर निर्भर है। यथेष्ट पैसेके न मिलनेसे मनुष्य उत्तम भोजन संग्रह नहीं करसकता। तृप्तिकर, स्वादिष्ट, और पुष्टिकारक भोजन करनेकी किसकी इच्छा नहीं होती किंतु विना अधिक आयके उसका प्राप्त होना असम्भव है। उत्तम और पुष्टिकारक भोजन प्राप्त करनेके लिये हमें अधिक धन उपार्जन करना चाहिए। किन्तु हमारा देश अतिशय दरिद्र है। इस देशके प्रत्येक मनुष्यकी दैनिक आय अन्यान्य सभी देशोंकी अपेक्षा बहुत कम है। इस दरिद्रताके कारण हमारे देशवासी पर्याप्त प्रमाणमें पुष्टिकर खाद्य नहीं खासकते। अल्प और बुरे भोजन करनेसे दिन दिन हमारा शरीर कृश और रुधिरकी अवनति होती है।

जिस तिस तरह पेट भरलेने को ही प्रकृताहार नहीं कहा जासक्ता। उससे सामयिक क्षुधाकी निवृत्ति हो सकती है किन्तु शरीरकी विशेष उन्नति नहीं हो सक्ती। भूखके समय पेट भरकर जल पीलेनेसे वा शाक-पातको उबाल कर खालेनेसे यद्यपि क्षुधाकी ज्वाला कुछ शान्त हो सक्ती है किन्तु उससे शरीरका पोषण नहीं हो सकता और न मनुष्य स्वास्थ्य-सुखका अनुभव ही कर सकता है। सुस्वादु और पुष्टिकर खाद्यके द्वारा क्षुधाकी निवृत्ति करना प्रकृत-आहार है। किन्तु इस समय निर्धन ही नहीं मध्यम श्रेणीके लोगोंको भी प्रायः ऐसा भोजन प्राप्त नहीं होता। अकृत्रिम साधारण और पुष्टिकर खाद्य मिलना भी आजकल कठिन है। बाजारमें इस समय सभी खाने पीनेकी चीजोंमें मिलावट कीजाती है। सभी जगह कृत्रिमता और प्रपंचकी उन्नति हो रही है। घीमें चर्बी, दूधमें पानी, मक्खन निकाला दूध, आटेमें मट्टी, खांडमें विलायती खांड आदि स्वास्थ्यनाशक पदार्थ मिलाये जाते हैं। अब बाजारसे इन सब चीजोंका असली मिलना कठिन है। ऐसे दूषित पदार्थोंको सेवन करनेसे हमारा स्वास्थ्य और भी खराब होता जाता है। विशेषकर साधारण और गरीब लोगोंको अच्छी चीजोंका प्राप्त होना और भी कठिन हो गया है। इत्यादि बातोंसे जानाजाता है कि वर्तमान रोगोंका कारण देशकी दारिद्रता ही है। अतएव जबतक इस देशकी दरिद्रता दूर न होगी तबतक रोगोंका दूर होना भी असम्भव है।

॥ वैद्य ॥



प्रेमका नसा

संसारमें प्रेम २की चिल्लाहट मचानेवाले लोग कुछ ऐसे हैं जो हेयाहेयका विचार न करते हुए अथवा हिताहितका मार्ग भूलते हुए प्रेमके अंधे होते दिखाई दे रहे हैं। वे इस बातका विचार नहीं करते कि संसारमें आकर हमें कौनसे मार्ग पर चलना अथवा कौनसे मार्गपर न चलना श्रेय है। प्रेम नशेमें विह्वल होनेकी उनकी लतसी पड़ गई है कारन उनके पीछे मोह पिशाच अनादि कालसे लगा हुआ उनके आपेको भुलाये हुए है इसीसे मोह ग्रस्त जीव प्रेमके प्यालेका पान कर मदमस्त हो जाते हैं।

तीव्र प्रेमका नसा उस शराबके नशेके सदृश है जिसका पान करनेसे मनुष्य अपने आपको भुलाता हुआ एक दूसरी ही दशामें परिवर्तित हो जाता है और उसकी बुद्धि विपरीतता धारण कर लेती है। जिससे वह कुछका कुछ बकझकता हुआ दूसरोंको गाली वा मंद वचन कहता नहीं डरता। शराबी मनुष्य अपने स्थानसे गिर जाता है। वह अपनी पत्नीको मा, और माको पत्नी समझने लगता है इत्यादि कुचेष्टायें वह शराबी मनुष्य करता हुआ नहीं सकुचता। इसी प्रकार प्रेमप्यालेको पीकर मनुष्य अपने आपेसे बाहर हो अपने प्रेमीके प्रेमका यहां तक पक्ष बन जाता है कि उसके लिये अपना सब कुछ अर्पण करनेमें किंचित् भी कसर नहीं रखता। प्रेमीका

॥श्रीवीतरागाय नमः॥

दिगंबर जैन:

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः ।
संबोधयत्सन्मिदं प्रवर्त्तताम्, दिगम्बर जैन समाज मासम् ॥

वर्ष १५ वाँ.	वीर संवत् २४४८. ज्येष्ठ विक्रम सं० १९७८.	अंक ८वां

धर्म-प्रेम ।

प्रेम मानो प्रेमियों को स्वर्गका मंदार है ।
प्रेम मानो प्रेमियोंका सब तरह श्रृंगार है ॥
प्रेम मानो प्रेमियोंके कंठका शुभ हार है ।
प्रेम मानो प्रेमियोंकी जिन्दगीका सार है ॥१॥
यदि न ऐसा होय तो फिर क्यों भुलाते हैं हमी।
प्रेमके वश हो जगत में क्यों ठगाते है हमी ॥
भूल कर निज रूपको परमें लुभाते है हमी ।
बस प्रेम द्वारा ही जगत वनमें भ्रमाते है हमी॥२॥
प्रेमके द्वारा किसीको मित्र अपना मानते ।
साथमें रहकर उसीके सुखख करना जानते ॥
क्षण मात्र भी नहि मित्रसे हम अलग होना चाहते।
देख सूरत मित्रकी संतोष दिलमें ठानते ॥३॥
यदि मित्रका कोई तरह वीयोग हो जावे कहीं ।
फिर विपतिका क्या ठिकाना चैन पड़ती है नहीं॥
मित्रके प्रेमार्थ अपने प्राण अर्पण कर दिये ।
प्रेमका फल क्या मिला बस जन्म खोकर चल दिये॥
भाइयो यदि आपको जो प्रेमकी दरकार है ।
तो धर्मको प्रेमी बनाओ जो सदा सुखकार है ॥
धर्म प्रेमीसे कभी वीयोग होनेका नहीं ।
तुम्हारे पास है यह सत्य प्रेमीने कही॥४॥

गोरेलाल पचरत्न ।



हमारी जिनवाणी माताका पूज्य आदर करनेका खास पर्व श्री श्रुतपंचमी पर्व ज्येष्ठ-सुदी ५ को निकल गया। इस वर्ष श्रुतपंचमी पर्वमें जो

श्रुतपंचमीमें मन्दता ।

मन्दता मालूम पड़ी है इससे दुःख होता है । क्योंकि इससाल इनेगिने पांच सात स्थानोंपर ही श्रुतपंचमी पर्वमें जिनवाणी पूजन व महोत्सव करनेके समाचार मिले हैं। हमारे दि० जैन भाईयोंमें सैंकडो ज्ञानभंडार हैं जहां हमारे शास्त्र उनकी अलमारियोंमें कैसे सुरक्षित रखे जाते हैं उससे हम अनभिज्ञ नहीं है और हमारे सैंकडों शास्त्र भंडारोंकी क्या दशा है उसको सब जानते हैं परन्तु खेद है कि हम इतने प्रमादी हो गये हैं कि हम हमारे धर्मको स्थिर रखनेवाले धर्म शास्त्रका उद्धार नहीं करते। श्रुतपंचमीके निमित्तसे भी यह कार्य सुगमता से हो सकता है परंतु वर्षमें एक दिन भी हम ऐसे कार्यके

लिये न निकाल सके यह हमारे लिये कितना लज्जास्पद है। आशा है हमारे भाई आगामी वर्ष ऐसा प्रमाद नहीं करेंगे।

* * *

चातुर्मास आ रहा है।

वर्षमें अवकाशका समय यदि कोई है तो वह वर्षाऋतु अर्थात् चौमासेके दिन हैं क्योंकि इन दिनोंमें सबको व्यापार धंदेसे फुरसद होती है तथा विवाह शादी प्रतिष्ठा आदिका कार्य भी इन दिनोंमें नहीं होता है तब ऐसे समयमें धर्मध्यान विशेष रूपसे होसकता है। वर्षाके कारण इन दिनोंमें पृथ्वी जन्तुमय होजानेसे त्यागी मुनि चार मास एक स्थानपर ही निवास करते हैं। सप्तम प्रतिमाधारी ब्रह्मचारियोंके लिये यद्यपि चातुर्मासमें एक ही स्थान पर ठहरनेका नियम नहीं है तौभी प्रायः ब्रह्मचारी गण चातुर्मासमें एक ही स्थान पर निवास करते हैं यह ठीक ही है। यद्यपि दि० जैन समाजमें ब्रह्मचारी तो बहुत हैं परन्तु समाजमें उपदेशका कार्य करनेवाले इनेगिने ही हैं जैसे कि ब्र० शीतलप्रसादजी, ब्र० ज्ञानानंदजी, ब्र० भागीरथजी, ब्र० पार्श्वसागरजी, ब्र० नेमीलालजी आदि। और त्यागियोंमें ऐलक पन्नालालजी महाराज यत्रतत्र विचरकर उपदेश तथा जिनवाणीके उद्धारका जो कार्य कर रहे हैं वह प्रशंसनीय है। जहांपर योग्य ब्रह्मचारी या त्यागीजीका चौमासा होगा वहां तो उपदेश और धर्म जागृति होगी परन्तु जहां ऐसा न हो वहांके भाइयोंको चार मास तो अवश्य नित्य सुबह शाम शास्त्र सभा करने और उसमें किसी भी भाई द्वारा शास्त्र बंचवाना चाहिये।

* * *

ગુજરાતની ફરજ.

આખા હિંદુસ્થાન તો શું દુનિયાભરની દ્રષ્ટિ સમક્ષ અહિંસા અને શાંતિનો મંત્ર રજુ કરનાર મહાત્મા ગાંધીના જેલ જવા પછી ગુજરાતે અપૂર્વ શાંતિ બતાવી હતી અને બતાવે છે જેથી કોઇને સ્વપ્ને પણ આશા નહોતી કે ગુજરાતમાં સરકારની સખ્તાઇ થશે પણ હાલ જે સમાચાર આવતા રહે છે તેથી તો એમ જણાય છે હવે ગુજરાતની જેલો સરકારે ભરવા માંડી છે. સુરતના એક નેતા જેલમાં ગયા છે, અમદાવાદમાં 'નવજીવન' વાળા ચાર ભાઇ પકડાયા છે અને અનેક પકડાવાની ને જેલ વાની વાતો ચાલ્યા કરે છે. આવે સમયે ગુજરાત જાગ્રત થઇ ગયું છે અને ઠામઠામ વિશેષ પ્રવૃત્તિ થતી જણાય છે. એ વિશેષ પ્રવૃત્તિઓમાં ખાસ પ્રવૃત્તિ ખાદી પ્રચારનીજ છે. આ પ્રવૃત્તિમાં આપણે જૈનો જેટલો ફાળો આપીએ તેટલો થોડો છે. ખાદીમાંજ ખાનદાની સમાયલી છે ને દેશના ઉદય થવાનો છે તો દરેક ભાઇ બ્હેને હાથે વણેલી ને હાથે કાંતેલી ખદીજ પોતે ધારણ કરવી જોઇએ અને બીજાને તે ધારણ કરવા સમજાવવા જોઇએ. મ० ગાંધીજી તેમજ તે પછી જેલ જનારાનો સંદેશો એજ હોય છે કે ખાદીનો પ્રચાર કરજો. તો હવે આપણે વિલાયતીના મોહમાં ન ફસાતાં શુદ્ધ ખાદીનો વપરાશ પોતાના ઘરમાં તેમજ મંદિરોના દરેક કામોમાં કરવો જોઇએ. મંદિરોમાં અતીવ અશુદ્ધ રેશમી વસ્ત્રનો એક ટુકડો પણ હવે આવવા દેવો જોઇએ નહિ.

* * *

પાદરા.

ગુજરાત તેમજ આખા હિંદના જાણે છે કે અહારા શ્રી સરસ્વતિ ભંડારનો શાસ્ત્ર ભાગાર્થના નિકામ રસ્તાન મંદર (ગુજરાત)માં મોટો ...

છે જેનું સૂચીપત્ર થવાની તથા અને સુરક્ષિતપણે રાખવાની સ્થાયી વ્યવસ્થા કરવાની વર્ષો થયાં ખુપો પડે છે પણ ભટ્ટારકોની આડખીલીથી અને જુઠાં આશ્વાસનોથી કંઇ થતું નથી તેમજ ઇડરની પંચના ભાઇઓ અત્યાર સુધી આશામાં ને આશામાં તેમજ રખેને કે છ લઇ જશે કે રખેને કોઇ જોઇ જશે એવી ભાવનાથી ખાસ શાસ્ત્રભંડારના દર્શન સરખા પણ કરાવતા નથી. અમો ત્રણ વર્ષપર ઇડર ગયેલા તે વખતે બહારનો શાસ્ત્રભંડારજ અમને બતાવેલો ને કહ્યું કે જે છે તે આજ છે વગેરે પણ જે ખાસ શાસ્ત્રભંડાર છે તે તો બતાવેલોજ નહિ. આવી સ્થિતિ હજી ક્યાં સુધી ચાલશે તે સમજાતું નથી છતાં પણ હાલમાજ ઇડરના એક ખાસ આગેવાન ગાંધી પુનેમચંદ સાકલચંદ સુરત પધારેલા હતા તેમની સાથે મુલાકાત થતાં તેમણે અમને કહ્યું કે હવે તો અમે ભટ્ટારકના લફરામાં પડવા માંગતાજ નથી અને ગમે તે રીતે શાસ્ત્રભંડારનોજ ઉદ્ધાર કરવો છે અને તે માટે એક વિદ્વાન પંડિત રાખી ખાસ દેખરેખથી શાસ્ત્રોની સાર સંભાલ કરી તેનું સૂચીપત્ર બનાવવુંજ છે અને તેના પંડિતની અમે શોધમાંજ છીએ. ઇડરના કેટલાક આગેવાનો હજુ આળસ અને વ્હેમ (શાસ્ત્રો જતા રહેવાનો) છોડતા નથી એજ વાંધો છે વગેરે.

આથી એમ તો જણાય છે કે હવે કેટલાક ઇડરના ભાઇઓ આધુનિક પરિગ્રહી ભટ્ટારકોની જાળમાં ફસાવા નથી માગતા છતાં પણ નિડરતા તો નથીજ આવી. પેલા કહેવાતા ભટ્ટારક વિજયકીર્તિ પદભ્રષ્ટ થઇ ચુકવા છતાં તે બાબત પોતાની સહી સાથે ખુલાસો કોણ જાણે શા કારણે બહાર પાડતા નથી એ અજબ જેવું છે. એ મહાશય તો અમદાવાદથી વડનગરમાં જઇ વસેલા છે ને હયાત છે એમ જેને તેને મોઢેથી ખબર સંભળાય છે પણ નિશ્ચિત ખબર કંઇ મળતી નથી. હશે, આપણને કંઇ તે સાથે લેવા દેવા નથી પણ આપણું તો હવે એજ કર્તવ્ય છે કે પત્રોમાં હવે દરેક મથોપર ઇડર વગેરેની પંચે મુખના બહાર પાડી દેવી જોઇએ કે જેથી ભવિષ્યમાં ભૂલચુકે કોઇ એનાથી ઠગાય નહિ કેમકે હજુ એણે લાલ વેશ તો કાયમ રાખ્યો છે ને બાકી બધું ઠીકઠાક છે.

આમ લખવાની મતલબ એજ છે કે ગુજરાતમાં અંધશ્રદ્ધાનો પાર નથી. મુંબઇમાં પેલા રત્નકીર્તિ ભટ્ટારક નામધારી છગનલાલ જે પુરા પરિગ્રહી થઇ બાલબચ્ચા સાથે મુંબાઇમાં મોજ કરે છે તે ચાર પાંચ વર્ષપર ભટ્ટારક બનીને દાણીલા ગયા હતા ને ચોમાસું કર્યું હતું ને તેમના સપાટામાં વીસા મેવાડા ભાઇયો કેટલા આવ્યા હતા તે સૌ કોઇ જાણે છે માટે અમે ગુજરાતના ભાઇયોને ચેતાવીએ છીએ કે એવા આધુનિક ઢોંગીઓથી ચેતીને ચાલજો અને એમ નમ્રે માનજો કે ગુજરાતનું દળદર હવે ભટ્ટારકોથી ફીટવાનું નથી પણ ગુજરાતની ઉન્નતિ તો દરેક સ્થળે પાઠશાળા ખોલી પંડિતો તૈયાર કરવાથીજ થઇ શકશે.



वीसा मेवाडा अने लग्नगाळो।

વીસામેવાડા ભાઇઓના કેંદ્રસ્થાન સોજીત્રામાં આ સાલે લગ્નગાળો ભરાયો હતો. એટલે કે મેવાડાભાઇઓ પોતાના ગામથી લગ્ન નિમિત્તે સોજીત્રા આવ્યા હતા. હિંદુસ્થાનની પ્રજાએ ઉપાડી લીધેલી અસહકારની પ્રવૃત્તિને લઇ સ્વદેશી વસ્ત્રો તરફ દરેક કોમ ખેંચાઇ છે, એ નિર્વિવાદ છે. તેવીજ રીતે આ ભાઇઓ પણ સેંકડે સાઠ જણ સ્વદેશી પોશાકમાં દ્રષ્ટિએ પડતા હતા, તેથી વધારે ખુશી થવાનું એ છે કે આ સાલે થએલા ચાલીસ લગ્નોમાં પંદરથી વીસ લગ્નોમાં વરરાજા સ્વદેશી પોશાકમાં સજ્જ થએલા હતા. જ્યારે ખેદ પામવાનું છે કે કન્યાઓ અપવિત્ર રેશમના વસ્ત્રોમાં જોવામાં આવતી હતી. વળી વધારે ખુશી થવા જેવું એ છે કે "દિગંબર જૈન પત્રના ઉત્સાહી સંપા-

ક સાહેબની સુચનાને માન આપી થોડાંક લગ્નો જૈન વિધિથી થયાં હતાં, તેમાં પણ મેવાડા કોમના એક જબરજસ્ત આગેવાન અને વડોદરાના દિગંબર જૈન સંઘના એક મુખી શેઠ લાલચંદ ભાઈને ત્યાં પણ લગ્ન જૈન વિધિથી થયું હતું. જ્યારે શેઠીયાઓ ઘોર નિંદ્રામાંથી જાગશે ત્યારેજ કોમનું ભલું થશે, માટે દરેક આગેવાનની ફરજ છે કે-કોમમાંથી જે જે કુધારા દુર કરવા હોય તે તે કુધારા પ્રથમ પોતાને ઘેરથી સુધારવા જોઈએ. કેમકે જબરાની પાછળ નબળાને ગાલ માં તમાચો મારીને પણ ખેંચાવું પડે છે.

જે બે લગ્નો જૈન વિધિથી થયાં હતાં, તેમાં હાજર રહેલો પ્રેક્ષક વર્ગ તે વિધિની પ્રશંસા કરતો હતો, પણ તે ત્યારે સાર્થક થાય કે જ્યારે પોતે પોતાને ત્યાં જૈન વિધિથી ક્રિયા કરાવવાની પ્રતિજ્ઞા લે ત્યારે.

વળી લાલચંદ શેઠની પણ ફરજ છે કે-તેમણે પોતાની ખટપટનો લાભ કોમને આપવા ખાતર કોમની સભામાં જૈન વિધીથી લગ્ન કરાવવાનો ઠરાવ પસાર કરે અને તેથી વિરૂદ્ધ ચાલનારને કંઈક શાસન કરાવે.

આ લોકો હજુ પણ જાહેર ઉન્નતિ તરફ ઝુકાતા નથી, તે તેમની પાપભાવી સ્પષ્ટ બતાવે છે, નહિતો આ સાલે તેમણે કંઈક પણ સુધારાના ઠરાવ કર્યા હોત.

૨ સીમંત સંસ્કાર કે-જે શાસ્ત્રમાં અતિ મહત્વવાળો માનેલો છે. તેને હાલ જે રિવાજ છે. તે નિંદનીય જણાય છે, માટે તેને જૈન વિધિ પ્રમાણે કરાવવો જોઈએ.

૩ કોમમાં નાતરાની માફક એકજ રાત્રે એકજ ગોર દ્વારા થતાં દશથી પંદર લગ્ન બંધ થઈ યોગ્ય ગૃહસ્થાચાર્ય દ્વારા જૈન વિધિથી થવા જોઈએ.

૪ દશ વર્ષથી નાની ઉમરના છોકરા કે છોકરીની સગાઈ નહિ કરવી જોઈએ.

૫ ચાલીશ વર્ષથી વધારે ઉમરના પુરૂષનાં આઠ દશ કે બાર વર્ષની કન્યા સાથે થતાં લગ્ન બંધ થવાં જોઈએ.

ઉપરની હકીકતનો વિચાર કરવાની ખાસ જરૂર છે. વળી સાથેજ જે જે ઠરાવો પ્રથમ થયા હોય તેનો અમલ કરવો જોઈએ યા તેનો નાશ કરવો જોઈએ, કારણકે આ સાલ તે સંબંધમાં વાતચિત થઈ હતી, ને કેટલાકનો વિચાર તે સંબંધમાં બહુ તીવ્ર હતો, માટે તેનો જે તે ખુલાસો કરી દેવાની જરૂર છે.

૬ ધર્મશાળા માટે કરેલા ફંડને ધર્મશાળામાં વાપરતાં વધે તો ધર્મશાળાને અંગે એક જૈન જ્ઞાન મંદિર અથવા જૈન લાયબ્રેરી ખોલી તેમાં જાતિના દરેક પુસ્તકો રીતસર ગોઠવી બીજાં નવિન જાતિ તરફથી ખરીદી તે જ્ઞાન મંદિરને મોટા રૂપમાં બનાવવું કે-જેનો લાભ આખ સમાજ પણ લઈ શકે,

તે આશા આકાશ કુસુમવત્ જણાઇ ગઇ છે.

હવે અમારે સ્વયં જાગ્યા સિવાય છુટકો નથી. હાલનો જમાનો યુવાન વર્ગને, આગળ આવી નિડરપણે કામ કરવાનો છે નહિ કે બિલ્લી બાઇની માફક વાટ જોઇ જુસકો મારવાનો.

ચાલુ સાલે મારા સ્નેહી શા૦ હીમતલાલ ભાઇએ ખાસ મહેનત લઇ મૃત્યુની શૈયામાં પડેલા મેવાડા યુવક મંડળને સજીવન કરવા પ્રયાસ કરવા માંડયો છે. હું તેમને મુબારકબાદી આપી ઇચ્છું છું. કે-કદાચ તેઓશ્રીને ફરીથી પ્રથમના કાર્યવાહકોની જેમ ડિગ્રીઓનાં પૂંછડાં ન વળગે ને તેમને એ કાર્ય છોડી દેવું ન પડે.

યુવક મંડળનું કર્તવ્ય છે. કે-પહેલાં જ્ઞાતિમાં જે કુધોરા જણાતા હોય. તેનો નાશ કરવા પંચને સુચવવું. તે પ્રમાણે પંચ ન કરે તો મંડળની મેનેજીંગ કમીટીએ તે રિવાજ તરફ સત્યાગ્રહ કરવા મંડળના સભાસદોને જાહેર કરવું.

હાલના જમાનામાં સત્યાગ્રહ સિવાય આપણી પાસે એકે હથીઆર નથી કે-જેથી વૃધ્ધોને તે રિવાજથી અટકાવી શકીએ.

યુવક મંડળની મેનેજીંગ કમીટી જે ઠરાવ પસાર કરે તે ઠરાવ દરેક સભાસદ સ્વીકાર કરતાં શીખશે તોજ મંડળ આદર્શ બની શકશે. મેનેજીંગ કમીટીના મેમ્બરોની પણ ફરજ છે. કે-તેમણે જે રિવાજને બંધ કરવો ધાર્યો હોય, તે રિવાજ તરફ પ્રથમ પોતે અણગમો બતાવવો. અને પછી તેના સંબંધમાં પત્રોમાં ચર્ચા કરવી. ત્યાર બાદ ઠરાવની નકલો દરેક સભાસદને પહોંચાડી તેમની સહી લઇ તે રિવાજ બંધ કરવા પંચને સુચવવું. તે પ્રમાણે પંચવાળા ન માને તો પછીજ સત્યાગ્રહ કરી પોતે તે રિવાજમાં ભાગ ન લેવો જોઇએ.

આ મેં સુચના માત્ર કરી છે. શું કરવું તે સુજ્ઞ જ્ઞાતિજનને સોંપું છું.

મારે એટલું તો સ્વિકારવું પડે છે ને સાથેજ ખુશી પણ થવું પડે છે કે-મારી જૈન લગ્નવિધિના રહસ્યને સમજનાર પુસ્તકના ખરીદનાર મળ્યા નથી, પણ વિધિને સમજનાર વિધિની શરૂઆત કરનાર શા૦ લાલચંદભાઇ જેવા મને મળ્યા છે. હું મને પુસ્તક લખવા માટે કૃતકૃત્ય માનું છું કે-મારી જ્ઞાતિમાં તે વિધિની શરૂઆત થવા લાગી છે. ને આવતા લગ્નગાળામાં દશથી પંદર લગ્ન જૈન વિધિથી થશે, એમ કેટલીક કન્યાના માતા પિતાના કહેવા ઉપરથી જણાઇ આવ્યું છે.

બંધુઓ, છેવટે એટલુંજ લખવું ઇષ્ટ માનું છું કે—તમો જૈન ધર્મને પાળો, અર્હંતદેવને માનો. ને તમારાં સંતાનોનાં પાણી ગ્રહણ મિથ્યાત્વી દેવોના પુજનથી ન કરાવો. ધિક્કાર છે તે અંધ શ્રદ્ધાને કે-જે તમોને ધર્મભ્રષ્ટ બનાવે છે. તમારા સમ્યક્ કહેતાં શ્રદ્ધાનને ઠગાવે છે. ધિક્કાર છે તે નરાધમોને કે-જે કન્યાનો વિક્રય કરે છે, વૃદ્ધ સાથે પરણાવે છે યા નાના સાથે મોટી કન્યાને વળાવે છે. મારી જ્ઞાતિમાંથી દરેક કુરિવાજ જલ્દી બંધ થાય એવી ભાવનાની અપેક્ષા પુર્વક વિરમતો લખનાર હું છું આપનો તાબેદાર—

મોહનલાલ મથુરાદાસ શાહ કોલીસા.

देहलीमें—हीरालाल जैन हाईस्कूल व जैन कन्या विद्यालय पहाडीधीरज देहलीका वार्षिकोत्सव रा० सा० बा० प्यारेलालजी वकीलके सभापतित्वमें ता० ३–४ जूनको हो गया। कन्या वि० की छात्राओंने माता पूजनका निषेध अच्छी युक्ति और अभिनयके साथ दिखलाया था। व अच्छे २ व्याख्यान व भजन छात्राओंके हुए थे। पारितोषक बांटा गया था उसमें धर्माध्यापिका सुनोदेवीने अपनी ओरसे ६०) के कटोरदान सब छात्राओंको दिये। स्कूलके छात्रोंने व्याख्यान भजन और अभिनय ऐसे उत्तम किये थे कि सभापतिने उनकी बहुत प्रशंसा कीथी। बा० जग्गीमलजीने रिपोर्ट पढकर सुनाई थी और सभापतिका व्याख्यान हुआ था।



श्रुतपंचमी उत्सव।

निम्न लिखित स्थानोंसे श्रुतपंचमी उत्सवके समाचार आये हैं जो इस साल बहुत कम हैं—

मनीपुर (आसाम) में—सब नरनारियोंने मिलकर बड़े समारोहके साथ जिनवाणीकी पूजा की थी।

वट्टकी (शीमोगा, म्हैसुर) में ब्र० श्रुतसागरजी पधारे थे आपके उपदेशसे श्रुतपंचमी पर्वमें पूजा व्याख्यान आदि हुए भोजन समारंभ भी हुआ तथा नेमीराज गौडाने श्रुतावतार कथा सुनाई थी।

"**फिरोजपुर**—में १९ दिन पहिलेसे सर्व शास्त्रोंकी संभाल की गई थी और चौथके दिन सबको सिलसिलेवार लगाकर पंचमीको जिनवाणी पूजा कीथी।

लखनऊ—में चूडीवाली गलीके मंदिरमें पूजन हुआ था शास्त्रोंकी सूची तैयार हो रही है।

झालरापाटनमें—श्रुतस्कंध विधान हुआ था।

बड़नगर—में अनाथालयके छात्रोंने पूजन भजन भक्तिभाव व गाजेबाजेसे किये थे। रात्रिको औषधालय भवनमें सभा हुई थी जिसमें लाल भगवानदासजीका जिनवाणी माताके उद्धार व प्रचारके विषयमें व्याख्यान हुआ था। इससे छात्रोंमें बड़ा उत्साह पैदा था।

गोहाना—में नवीन मंदिरमें सुबह पूजन हुई दुपहरको सब शास्त्रोंको धूप लगाई गई थी। रात्रिको सभा की गई जिसमें पं० जिनेश्वरदासजीने श्रुतपंचमी पर व्याख्यान दिया और कविता सुनाई थी।

बम्बई—में श्रुतपंचमीके दिन सुबह श्रीमान् त्यागी ऐलक पन्नालालजीके हस्तसे सेठ सुखानंदजीकी मनोहर धर्मशालाके खास भवनमें 'ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन'की स्थापना हो गई। यह झालरापाटनके भवनकी शाखा रूप रहेगा।

दान—टीकमगढ़के स० सिं० फूलचन्दजीने रोगाक्रांत होनेपर ५००) पपौरा पाठशाला तथा ५००)का मकान पपौराक्षेत्रको दिया है।

मुनि—चंद्रसागरजी, त्यागी पन्नालालजी आदि त्यागी ब्रह्मचारी कहां विराजमान हैं और कौन कहां चातुर्मास करेंगे इसकी सूचना जिनको मालूम हो हमें अवश्य लिखें क्योंकि आगामी अंकमें चातुर्मासके समाचार प्रकट करना है।

कुन्थलगिरि—के कुलभूषण ब्रह्मचर्य आश्रमका कार्य अधिष्ठाता ब्र० पार्श्वसागरजी द्वारा खूब बढ़ रहा है। ७६ ब्र० और अनाथ शिक्षा पा रहे हैं। १२००) मासिकका खर्च है। संस्थाओंको दान करते समय इस आश्रमको भी कुछ न कुछ दान अवश्य भेजना चाहिये।

दिग्विजयसिंहजी अभी नहीं छूटेंगे-फैजाबाद डि० जेलसे ब्र० कुंवर दिग्विजयसिंहका पत्र आया है कि इटावामें राष्ट्र सेवा करते हमें १॥ वर्ष सख्त्रिम कैद और २००) दंडकी शिक्षा हुई थी परंतु पीछेसे ६ मासकी सजा तर देनेकी हमें खबर मिली थी और उस प्रकार

हम ता० २१ जूनको छूटनेवाले थे परन्तु अभी अधिकारियोंने खबर दी है कि जुरमाना माफ नहीं हुआ है इससे २००) जुरमाना न दोगे तो ३ मास विशेष सजा भोगनी होगी और हम दंड तो देवेंगे ही नहीं इससे ता० २१ सप्टेम्बरको छूटेंगे।

आश्रम जयपुरमें-श्री ऋषभ ब्रह्मचर्याश्रम हस्तिनापुरसे जयपुरमें लाया गया है तबसे विशेष २ उन्नति कर रहा है। अधिष्ठाता ब्र० ज्ञानानंदजी तो वहां ही रहते हैं और ब्र० भागीरथजी वर्णी व ब्र० ठाकुरप्रसादजी भी वर्षा ऋतुमें यहां ही रहेंगे। जयपुर राज्य व जयपुरके जैन भाइयोंकी आश्रमकी तरफ सहानुभूति है। स्थान सेठ सर्वसुखदासजी खजानचीकी नशियां है।

पानीपतमें-जैन उपदेशक सभा तन मन धनसे उपदेशका खूब कार्य कर रही थी परंतु उसके उत्साही उपदेशक पं० जोतीप्रसादजीकी अभी मृत्यु होगई इससे उपदेशका कार्य बन्द पड़ा है और नवीन उपदेशककी आवश्यकता है।

अजमेर-में ज्येष्ठ वदी १३ को छठी पट्टीकी विराट् सभा रा० बा० सेठ टीकमचन्दजीके सभापतित्वमें हुई थी जिसमें ब्यावरके सिं० सेठ मोतीलालजीके वियोग पर दुःख प्रकट किया गया व जाति सुधार संबंधी प्रस्ताव पास हुआ कि मृत सम्बन्धी कढी खीचड़ी, तीसरा, बारहा, तेरवां व पंचायती इमानतसे चिट्ठी फाडकर जीमना करे उसके एक दिनके जीमनके सिवाय सब जीमन बंद रहेंगे। ब्याहके बक्तके सिवाय पहरावण के बक्तके और सब पंचायती पतासे बन्द हैं आदि। श्री० सेठ टीकमचन्दजी खुद हरएक प्रस्तावका बराबर अमल करते हैं।

उष्ण ऋतु

उष्ण ऋतुका आगमन जबसे हुआ देखो यहां।
तप रहा है देश सारा धूर पडती है महां ॥टेक॥
भाते नहीं कपडा हमें नहीं अग्निकी कुछ चाह है।
तेज गरमी पड रही अब भागकर जावें कहां ॥
देहसे देखो पसीना रात्रि दिन बहता रहे।
पोंछते रूमालसे ये हाथ थकि जाते अहा ॥२॥
क्षुधा व्याधा त्रास देती कुछ नहीं पड़ती हमें।
नीर ठंडेकी सदा दर[illegible]गी है यहां ॥ ३ ॥
करते पंखासे पव[illegible]स बैठे सदन।
नीर ठंडा पान करते किंतु व्याकुल हैं महा ॥४॥
कोई मिश्री घोल पीते कोई ठंडाई बना।
करते अनेकों यत्न गर्मीके बचानेका यहां ॥५॥
तेज पडती लू बहु बाहर निकलना है कठिन।
ताती २ वायु चलती जोरसे देखो जहां ॥ ६ ॥
भूमिकी रज उड चली आकाश मानो ढक दियो
मार्ग कंटक पूर्ण होगये वृक्ष कुम्हलाते महां ॥७॥
सरिता सरोवर सूखकर मानो हुए मैदान हैं।
दुःख रहे तकलीफ भारी रात्रि दिन प्राणी यहां ॥८॥
जंगली तिर्यंच मारे धूपके व्याकुल हुए।
दौडते फिरते पहुंचते वृक्षकी छाया जहां ॥ ९ ॥
इस तरहसे उष्ण ऋतुमें लोक जिय विह्वल हुए।
किंतु मुनिजन उष्ण ऋतुकी परीषह सहते महा॥
शैल सिखरारूढ हैं जहां रविकिरण पडती प्रखर।
आत्मबलसे जीतते हैं उष्णकी बाधा महा॥११॥
धन्य ऐसे साधु जिनने मोह छोडा देहसे।
उनके चरण हर्षी प्रेमी, उष्ण ऋतु व्यापै कहां॥१२॥

गोरेलाल पंचरत्न।

प्रकृत-पेय।

प्रकृत-पेय केवल दो जगमें,
प्रथम दूध पुन शीतल नीर।
किन्तु, आप पीते हैं कितने,
बने हुए पानी या क्षीर?
सभी बनावट पेय द्रव्यमें,
रहता है पानी का भाग।
मिले हुए जो अन्य पदारथ,
उनको दीजे बिलकुल त्याग॥
यदि वे पीने योग्य ठीक थे,
यदि करते वे स्वास्थ्य सुधार।
तो मंगलमय प्रकृति मातृ
करती उनका विपुल प्रचार॥
सोडावाटर, बरफ लेमनेट,
भाँति भाँतिकी बनी शराब!
छोड़ो, यह सब जीवननाशक,
छोड़ो, यह सब वस्तु खराब॥
दूध और पानीको तजका,
अन्य नहीं पीनेके योग्य।
चाहो रोग पिओ इन सबको,
छोड़ो यदि चाहो आरोग्य॥
वही साधु है शुद्ध हृदय है,
ताज़ा जल पीता जो छान।
वही आत्मिक शक्ति बढ़ाता,
वही प्राप्त कर सकता ज्ञान॥

वैद्य] नयन।

स्याद्वादकेसरी-प्रतिष्ठाकारक सिं० सेठ मोतीलालजीके अकस्मात वियोग होजानेसे मेढा प्रतिष्ठा व खंडेलवाल महासभा आदि सभी उत्सव बंद (स्थगित) रखा गया था।

उन्नतिका उपाय।

प्यारे सज्जनो, जैन जातिकी उन्नति करना प्रत्येक श्रावकका प्रथम धर्म है अतः प्रत्येक श्रावकको जैन जातिकी उन्नति करनेके लिए उत्तमोत्तम कार्य करने चाहिए। उत्तमोत्तम कार्यमें अपनी बुद्धि अनुसार आपके हितार्थ लिखता हूं सो ध्यान पूर्वक आप उन अत्युत्तम कार्योंको संसारमें प्रचार करेंगे ऐसी आप महाशयोंसे आशा रखता हूं।

(१) पहला कार्य यह है कि प्रत्येक ग्राम२में श्रावकगण पाठशालाएँ स्थापित करें कि जिससे श्रावकोंका अज्ञान रूपी अंधकार दूर हो।

(२) दूसरा कार्य यह है कि जैनी भाई कन्या विक्रयका कार्य शीघ्रमेव बंद कर दें। क्योंकि कन्या विक्रय करनेसे जैन धर्मका नाश हो जायगा क्योंकि जैन शास्त्रोंमें कहीं भी कन्या विक्रय करना नहीं लिखा है।

(३) कार्य यह है कि बाल विवाह और वृद्ध विवाह शीघ्रमेव बंद कर दें क्योंकि बाल विवाह और वृद्ध विवाह करनेसे विधवाओंकी तादाद बहुत बढ़ गई है और व्यभिचार बहुत ही बढ़ रहा है।

(४) चौथा कार्य यह है कि प्रत्येक जैनीमें एकता होनी चाहिए और एकता होनेपर खादीके कपड़ोंका कार्य अर्थात चाखे और स्वदेशी कपड़ेका व्यापार करना चाहिए जिससे कि रुपयेकी बचत रहे और जैन जातिकी उन्नति हो।

चांदमल जैन विद्यार्थी।
धानापुर, झाबुआ।

षट्द्रव्यकी आवश्यकता और उनकी सिद्धि।

जैन साहित्य सभा लखनऊका लेख नं० २

(लेखकः-पं० अजितकुमार शास्त्री-मुंबई)

इन्द्रवज्रा—ध्यानाग्निद्वारा विधिको नशाया, संसारका ताप सभी मिटाया ।
दुःखार्तप्राणी बहुवार तारे, मेटो प्रभो ! ये दुखपुंज सारे ॥

प्रियवर सज्जन समाज !

यह संसार एक महासागर है जिसके अगाध जलमें दृश्यमान नाना प्रकारके अनेक जन्तु क्षारजलकी क्षारतासे, बड़वानलकी तीव्र उष्णतासे तथा पारस्परिक कलहकी वेदनासे एवं भयावह महाकल्लोलोंके संघट्टसे असह्य पीडाको सहन करते हुए इधरउधर भटक रहे हैं किन्तु उस अपार पारावारकी शांतिदायिनी तटभूमिको न पानेसे उसी दुःखभारमें दबे हुए और भी अधिक छटपटा रहे हैं। अथवा यह जगत एक महाउपवन है जिसमें चेतन तथा अचेतन दो प्रकारके वृक्ष लगे हुए हैं। जिस प्रकार अचेतन पौधे अनेक प्रकारके हैं तथैव चेतन वृक्ष भी विविध प्रकारके लगे हुए हैं। कोई महा उन्नत हैं, कोई लघु आकारके हैं। एवं कोई रमणीय मनोहर हैं और कोई महा असुन्दर हैं।

सारांश यह है कि यह संसार एक विशाल आश्चर्यभवन या अजायबघर है जहां पर अनेक प्रकारके समस्त पदार्थ एकत्रित किये गये हैं। अस्तु।

अब विचार इस विषय पर करना है कि जिसको सभी लोग जगत कह रहे हैं वह जगत वस्तुतः क्या पदार्थ है ? और उसमें कितने प्रकारके पदार्थ विद्यमान हैं ?।

जिस समय परीक्षाभवनमें हम पहला प्रश्न उपस्थित करते हैं उस समय हमको चारों ओरसे एक स्वरमें यही उत्तर मिल जाता है कि "दृश्यमान तथा अनेक प्रकारसे ज्ञायमान नाना पदार्थोंका समुदाय ही जगत है" यद्यपि इस उत्तरके विशेष विशेष अंशोंमें पारस्परिक अनेक विवाद हैं किन्तु सामान्य उत्तर समस्त पुरुषोंका समान ही है। अस्तु।

परन्तु जिस समय द्वितीय प्रश्न उपस्थित किया जाता है उस समय हमको अनेक उत्तर नाना प्रकारसे प्राप्त होते हैं। इस कारण इस विषयका पता लगजाता है कि इन सभी उत्तरोंमें यानी मन्तव्योंमें सभी मंतव्य यथार्थ नहीं हैं किंतु यदि ठीक होगा भी; तो एक मंतव्य ही ठीक होगा। शेष सभी मत अयथार्थ (गलत) होंगे। अस्तु।

आज हम अपना अमूल्य समय इसी परीक्षामें व्यतीत करते हैं जिसका एक ऐसा मनोहारी फल निकालेंगे जो कि हमको अपूर्व, अनुपम तथा महा आनंद प्रमोद प्रदान करेगा जिससे कि हमारे समयकी बहुमूल्यता हमको अमूल्यता भेट करेगी।

हम सबसे प्रथम इस विषय पर ध्यान देते हैं कि जिन द्रव्योंके भेदोंका हमें निश्चय करना है उनका सामान्य स्वरूप तथा लक्षण क्या है ? तदनन्तर हम परीक्षक बनकर सारासारका विचार कर सकेंगे।

बहुत अनुसंधान करनेपर इन उपर्युक्त शंकाओंको दूर करनेके लिये हमको सारभूत द्रव्यका लक्षण यह प्राप्त हुआ है कि " जो गुण तथा पर्याय स्वरूप हो वही द्रव्य है " यानी गुण और पर्यायका जो आश्रय है वही द्रव्य है। यहां पर यह ध्यानमें रखना चाहिये कि गुण और पर्याय ऐसे नहीं हैं कि द्रव्यसे पृथक् रहकर उसमें फिर आ मिले हों किन्तु जैसे वृक्षमें शाखाएं हैं शरीरमें अंग तथा उपांग हैं तथैव द्रव्यमें गुण और पर्याय हैं। अथवा गुण, पर्यायके अतिरिक्त द्रव्य कोई भिन्न वस्तु नहीं है जैसे कि शाखा, पत्ते, फूल, फल आदिके विना वृक्ष कोई भिन्न पदार्थ नहीं है। इनमेंसे "द्रव्यकी सभी अवस्थाओंमें रहनेवाला और अन्य द्रव्योंसे भेद दिखलानेवाला 'गुण, है और उसी गुणकी नवीन २ जो दशाएं हैं वे 'पर्याय' कहलाती हैं। जैसे चेतन द्रव्यमें यदि ज्ञानगुण है तो वह ज्ञान बाल्य, यौवन, प्रौढ तथा कौमार आदि सभी दशाओंमें रहेगा किन्तु उस ज्ञानकी पर्याय प्रतिसमय नवीन नवीन ही होगी यानी किसी समय पुस्तकरूप वह ज्ञान है अन्य समय घटरूप है तदनन्तर जलरूप है। आदि। यानी ज्ञानगुण जिस जिस नवीन हालतमें होगा उसकी पर्याय भी उसी रूपमें होगी। इसी लिये सारांश यह निकला कि गुण द्रव्यके साथ सर्वत्र रहता है और पर्याय केवल एक ही समय तक रहती है।

यहां पर यह कह देना आवश्यक होगा कि प्रत्येक द्रव्यमें बहुतसे गुण रहते हैं जिनको किसी प्रकारसे गिन नहीं सके हैं अतएव उनकी संख्या अनंत शब्दसे ही कहेंगे। पर्यायोंकी संख्या भी द्रव्यमें ऐसी ही है। अब इस प्रकार द्रव्यकी परिभाषा हो गई कि "अनंत गुणोंका समुदाय एवं भूत, भविष्यत् तथा वर्तमानकाल संबंधी पर्यायोंका समूह ही द्रव्य है " क्योंकि एक समयमें एक गुणकी एक पर्याय और दूसरे समयमें उसी गुणकी दूसरी पर्याय हो जाती है। किन्तु यह बात ध्यानमें रहे कि गुणोंकी यद्यपि अनेक हालतें होंगी परन्तु उनका स्वरूप नहीं बदलेगा। जैसे मनुष्यकी यद्यपि बालक, युवा आदि अनेक दशा होंगी परन्तु वह उन सभी दशाओंमें मनुष्य ही रहेगा अन्य नहीं होगा।

हम इसीसे पता लगा सकते हैं कि द्रव्य क्या वस्तु है और गुण क्या है ?। अस्तु।

इसी द्रव्यका यदि अन्य प्रकारसे लक्षण बनाया जाय तो इस प्रकार बनता है कि " जो उत्पाद, व्यय तथा ध्रौव्य रूप है वही द्रव्य है " अर्थात् उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य जिसमें मिलें वह द्रव्य है।

नवीन पर्यायका उत्पन्न होना उत्पाद है। पहली पर्यायका नष्ट होना व्यय है और पूर्व स्वभावकी जो स्थिर दशा है वह ध्रौव्य है। ये तीनों सत्तानामक गुणकी हालतें हैं। और यही सतगुण द्रव्यका एक मुख्य लक्षण है। जिस प्रकार द्रव्यका पूर्वोक्त लक्षण प्रमाणिक है और इसीलिये यथार्थ है। उसी तरह यह लक्षण भी प्रमाणसिद्ध है क्योंकि द्रव्य जिस प्रकार किसी अपेक्षासे नित्य है तथैव किसी अपेक्षासे परिणामी यानी बदलनेवाली भी अवश्य है। यदि ऐसा न हो तो प्रत्येक वस्तु जैसी है हमेशा वैसी ही रहनी चाहिये बिलकुल न बदलनी चाहिये। किन्तु ऐसा कहीं भी नहीं देखा जाता है। हम देखते हैं— किसी समय खेतमें बीज था उसके दूसरे समय वहां अंकुरा हो गया है उसके पीछे छोटा पेड़ है तदनन्तर वहां बड़ा पेड़ होगया और फलोंसे परिपूर्ण बन गया। अन्तमें समय पाकर अपने आप सूख गया, यह एक वृक्षका दृष्टान्त है। किन्तु यह हालत सभी पदार्थोंकी है। प्रति समय नवीन २ हालतोंमें बदलती हुई ही वस्तुएं दृष्टिगोचर होती हैं। किन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि वे बिल्कुल ही बदल जाती हैं। क्योंकि यह नियम है कोई भी पदार्थ न तो बिल्कुल नष्ट ही होता है न सर्वथा नवीन ही उत्पन्न होता है। जिस समय पदार्थ नई अवस्थामें आता है उस समय यद्यपि अपनी पहली पर्यायसे नष्ट हो जाता है। किन्तु अपने स्वभावसे नष्ट नहीं होता है। आम यद्यपि हरे रंगसे पीले रंगका हो गया परन्तु उसमें रंग नामक गुण तब भी था और वह अब भी है। मनुष्यकी बाल्यदशा नष्ट होकर युवावस्था उत्पन्न हो गई किन्तु जो मनुष्यता पहले थी वह अब भी है। हां! पर्याय पलट गई है इससे सिद्ध होगया कि वस्तुमें प्रत्येक समय उत्पाद, व्यय तथा ध्रौव्य अवश्य रहते हैं जिससे कि नवीन परिणमन भी होता है और असली स्वभावका नाश भी नहीं होता है। इसलिये ऐसा नियम बन गया कि जो वस्तु उत्पन्न होती है वही नष्ट होती है और वही स्थिर भी रहती है। तथा जो पदार्थ नष्ट होता है, वही उत्पन्न होता है और वही स्थिर भी रहता है। एवं जो द्रव्य किसी प्रकार स्थिर है वही उत्पन्न होता है और नष्ट भी वही होता है।

यह नियम जब कि प्रत्यक्ष अनुमान आदि प्रमाणोंसे निर्बाध सिद्ध है तब परिभाषा इस रूपमें होगी कि जो पदार्थ उत्पन्न हुआ था वही उत्पन्न हो रहा है और वही उत्पन्न होगा तथा जो पहले नष्ट हुआ था, वही नष्ट हो रहा है और वही नष्ट होगा। इसी प्रकार जो वस्तु अपने स्वभावमें स्थिर थी, वही स्थिर है और वही स्थिर रहेगी।

सारांश यह है कि यह नियम त्रैकालिक है। इस लिये द्रव्य उत्पन्न होती हुई तथा नष्ट होती हुई भी अपने स्वभावमें स्थिर रहती है।

इसका अर्थ कुछ महाशय ऐसा लगाते हैं कि द्रव्य पर्यायकी अपेक्षा ही परिणामी

है, गुणोंकी अपेक्षा ध्रुव (अविनाशी) है। वे महाशय अपनी समझमें भूल करते हैं। क्योंकि द्रव्योंकी पर्यायें जैसे किसी कारण अनित्य अथवा उत्पाद व्ययवाली है उसी प्रकार वे ध्रौव्यवाली भी किसी अपेक्षासे हैं। और द्रव्योंके गुण जिस प्रकार ध्रौव्यात्मक यानी नित्य मालूम होते हैं। वे ही गुण किसी तरह अनित्य भी दीखते हैं अथवा इसको इस तरह कहना चाहिये कि उत्पादमें व्यय और ध्रौव्य निवास करते हैं। और व्ययमें भी उत्पाद उत्पाद तथा ध्रौव्य रहते हैं एवं ध्रौव्यमें भी उत्पाद, व्यय अवश्य पाये जाते हैं। यह बात इस तरह सिद्ध होती है कि यदि पर्यायमें कुछ भी नित्यता न हो तो वह क्षणभर भी न ठहर सकेगी और इस प्रकारसे पर्याय ही न रह सकेगी। पर्यायमें कुछ न कुछ नित्यता या स्थिरपन है तभी तो आम कभी हरा और कभी पीला दिखाई देता है। मनुष्य कभी बच्चा और कभी युवा दृष्टिगोचर होता है। अन्यथा किसी भी रूपमें न दीखेगा। इसी प्रकार गुण भी यद्यपि किसी अपेक्षासे ध्रौव्यात्मक हैं परन्तु किसी अपेक्षासे उत्पादव्यय स्वरूप परिणामी भी है क्योंकि यदि ऐसा न होवे तो गुणोंकी सदा एकसी ही हालत दीखनी चाहिये उसमें किसी भी प्रकार हेरफेर न होनी चहिये। आमका रूपगुण सर्वदा हरा या पीला ही रहना चाहिये, बदलना न चाहिये, रस भी खट्टा या मीठा ही सर्वदा रहना चाहिये किंतु ऐसा होना प्राकृतिक नियमके विरुद्ध है। अतएव गुण जिस प्रकार सामान्यतया अपरिणामी (नित्य) हैं। विशेषतया वे ही परिणामी भी अवश्य हैं।

इस सभी जंजालका यही सारांश है कि 'अनंत गुण तथा अनंत पर्यायवाली द्रव्य होती है। इसीको दूसरे ढंगसे ऐसा कह सके हैं कि उत्पत्ति, नाश तथा स्थिर दशाको धारण करनेवाला ही द्रव्य है।

अब द्रव्यका लक्षण तो पूर्णतया प्रमाणरूपी कांटेपर तुल चुका जिससे कि हमको प्रकृत विषयपर विचार करनेका अवसर मिल गया। हमको प्रकरणानुसार प्रथम ही यह विचारना है कि वे द्रव्य कितनी हैं। और कैसे हैं ?। तत्पश्चात् उसी प्रकरणकी अन्य शंका उपस्थित करके उनका निराकरण करेंगे।

जिस समय हम उपर्युक्त प्रश्नको हल करनेके लिये अपनी प्रतिमाको काममें लेते हैं, उस समय हमको ज्ञात हो जाता है कि इस विशाल संसारस्थलमें दो प्रकारके द्रव्य ही उपलब्ध होते हैं। अर्थात् संसारमें जितने भी अनंत पदार्थ हैं वे दो जातिके हैं—एक तो चेतन दूसरे अचेतन।

जिन पदार्थोंमें जानने देखनेकी शक्ति है उनको चैतन्यदशासे सहित होनेके कारण चेतन कहते हैं इनको ही 'जीव' शब्दसे पुकारते हैं। और जिनमें जानने, देखने,

पुद्गलके अनुभव आदि चैतन्य शक्तिका विकाश नहीं है वे पदार्थ अचेतन हैं जिनको जड़ या अजीव भी कहते हैं। अस्तु। इन दो प्रकारोंको छोड़कर पदार्थोंकी तीसरी और कोई जाति नहीं है। सभी पदार्थ इन्हीं दोनोंके अन्तर्भूत हैं।

किन्तु पदार्थोंकी ये जातियां भी जड़वादके इस मध्याह्नकालमें कहना असंभवत्व हो जाता है क्योंकि इस समय मनुष्योंका बहु भाग इस सिद्धान्तको अटल तथा वास्तविक मान बैठा है कि "संसारमें केवल एक अजीव द्रव्य ही है। जिसको हम लोग जीव कहते हैं वह भी जड़ द्रव्यकी पर्याय है" इसको सिद्ध करनेके लिये वे प्रत्यक्ष, परोक्ष कई प्रकारके प्रमाण तथा दृष्टान्त उपस्थित करते हैं। अस्तु।

कुछ भी हो। यहांपर यह निश्चय नहीं किया जा सक्ता है कि विचारक व्यक्तियोंकी अधिक संख्या जिस मंतव्यको निश्चित करे वही मत यथार्थ होगा और सिद्धान्त भी वही हो सकेगा। क्योंकि संभव है कि वे सब मूलपर होवें और मेढ़ियाधसानमें आकर उन मनुष्योंकी संख्या बढ़ गई हो। और उसके विरुद्ध कहनेवाला थोड़े मनुष्योंका समुदाय ही ठीक मार्गपर हो। क्योंकि परीक्षकोंका मार्ग यद्यपि आजकल चौड़ा हो गया है किन्तु कषाय और पक्षपातका भाव अभी तक मनुष्योंके हृदयसे विदा नहीं हुआ है। अन्यथा आर्यसमाज सरीखा कुतर्की जनसमुदाय भी 'सृष्टिकर्तृत्व' सरीखे स्थूल विषयपर न उलझा रहता। अस्तु।

इसलिये जब हमने अपना अनुपम तथा अमूल्य समय विचारनेके लिये प्रदान कर दिया है तब हमारा प्राथमिक कर्तव्य है कि हम इस कंटकको भी अलग कर दें अन्यथा आवागमनके प्रारम्भमें ही मक्षिका छींक देगी जिससे एक पैर भी आगे न चल सकेंगे।

जड़वादको माननेवाले महाशय अपना सिद्धान्त इस प्रकार जमाते हैं कि "संसारमें केवल जड़ द्रव्य ही है। जीव भी इन्हीं अचेतन द्रव्योंके संगसे उत्पन्न हो जाता है। जगतमें पृथ्वी, जल, अग्नि, तथा वायु इन चार द्रव्योंके चार प्रकारके परमाणु भरे हुए हैं। उन्हीं परमाणुओंके परस्पर मिल जानेपर जल, पृथ्वी आदि अनेक प्रकारके पदार्थ बन जाते हैं। जिस प्रकार गुड़, महुवा, धतूरा आदिके मिलापसे गहरा नशा या बेहोशी लानेवाली मदिरा बन जाती है, उसी प्रकार पृथिवी, जल, अग्नि, वायु इन चार भूतके संयोग (मिलाप) होनेसे चेतन शक्ति उत्पन्न हो जाती है जिसको जीव कहते हैं। वास्तवमें जीव नामक कोई पदार्थ अलग स्वतंत्र नहीं है। इसलिये संसार केवल जड़ पदार्थसे ही भरा है" ये लोग इसी कारण ऐसा कहते हैं कि परलोक कोई वस्तु नहीं है। अस्तु। 9

इस मतको युक्तिशून्य, असत्य सिद्ध करनेके प्रथम उससे संबन्ध रखनेवाला कुछ विषय कह देना आवश्यक होगा जो कि इस प्रकार है।

जिस प्रकारका कारण होता है कार्य भी उससे वैसा ही होता है। अर्थात् उपादान कारण जिस जातिका होगा कार्य भी उससे उसी जातिका उत्पन्न होगा। जैसे मनुष्यसे मनुष्य ही उत्पन्न होता है और घोड़ेसे घोड़ेकी ही उत्पत्ति होगी। तथैव चनेका बीज चनेका वृक्ष ही उत्पन्न करेगा और आमके पेड़पर आमका फल ही लगेगा उसपर केला कभी नहीं लगेगा। क्योंकि उस फलका कारण दूसरा ही है। इसलिये यह नियम बन गया कि चनेको चाहे जैसी भूमिमें बोदें और उसमें चाहे जैसा खाद दें किन्तु उससे गेंहू कभी नहीं होगा उससे चना ही होगा। आमके वृक्षपर हजारों प्रयत्न करने पर भी केला उत्पन्न न हो सकेगा।

इससे हमको यह सार मिल गया कि जिस जातिका कारण होगा कार्य भी उससे उसी जातिका उत्पन्न होगा। अन्यथा नहीं।

अब हम अपने प्रकरणपर आते हैं। जड़वादियोंका जो यह कहना है कि "गुड़ धतूरे आदिके मिलापसे जिस तरह शराब बन जाती है जीव भी उसी प्रकार पृथ्वी जलादिक चार भूतोंके मिलजानेपर बन जाता है। यह कोई अलग नया पदार्थ नहीं है" आदि। इस विषयमें हमको प्रथम ही यह देखना है कि शराबमें जो मादक (नशा) शक्ति है वह उसके कारणोंमें है या नहीं है ? । क्योंकि उसके कारणोंमें ही यदि वह शक्ति होगी तब तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं कि शराबसे बहुत गहरा नशा आता है क्योंकि वह नशा उसके कारणोंमें पहलेसे ही था। यदि उन कारणोंमें वह नशा नहीं होगा तो अवश्य ही एक आश्चर्यकी बात ठहरेगी।

शराब बननेके उपादानकारण महुआ, धतूरा, गुड़ तथा एक मादक फलका चून आदि हैं। इन वस्तुओंको यदि पृथक् पृथक् ही कोई मनुष्य खावे तो उसको थोड़ा बहुत अवश्य नशा आ जाता है। शिरकी पीड़ा, बुद्धिका बिगड़ जाना, स्वस्थ दशा न रहना ये सभी बातें केवल एक एक पदार्थको भक्षण करनेसे ही होजाती हैं। यदि इन सबको मिलाकर कोई पाक तयार किया जाय तब तो वह नशा और भी बढ़ जायगा क्योंकि ये सब एक स्थानपर मिल गये हैं। बस यही शराबकी हालत है। जो चीजें पृथक् २ कम नशा लाती थीं उन्होंको मिलाकर शराब बना लेनेपर उन वस्तुओंका मद तीव्र हो जाता है। और इसके सिवाय और कोई नवीन बात नहीं होती है। इससे यह सिद्ध हो गया कि शराबके कारण ही मादक हैं, उसमें यदि मादक शक्ति आगई तो कोई आश्चर्यकी बात नहीं। क्योंकि नशीले कारणोंसे जो पदार्थ उत्पन्न होगा वह नशीला अवश्य होगा। अस्तु।

इसलिये जड़वादियों द्वारा दिया हुआ मदिराका दृष्टान्त तो टूट गया। अब प्रधान विषयपर प्रकाश डालते हैं।

"पृथ्वी, जल, अग्नि और वायु इन चार भूतोंके द्वारा जीव उत्पन्न होता है अर्थात्

जीवके उपादानकारण पृथ्वी, जलादिक हैं " भूतवादी इसी सिद्धान्तपर अपना पसीना बहाते हैं। अस्तु।

यहांपर हमको दो प्रश्न उठते हैं। कि इन चार प्रकारके भूतोंमेंसे केवळ एक एक भूत ही जीवको उत्पन्न कर देता है। अथवा ये सभी मिलकर जीवको उत्पन्न करते हैं ?।

यदि भूतवादी जनता पहले पक्षको ग्रहण करके उत्तर दे अर्थात् केवळ अलग २ एक ही पृथ्वी आदिक भूतसे जीव उत्पन्न होजाता है। तो फिर यह बिना किसी कष्टसे सिद्ध हो गया कि जीव चार प्रकारके उत्पन्न होते हैं। पहले पार्थिव (पृथ्वीसे उत्पन्न) दूसरे जलीय, तीसरे आग्नेय और चौथे वायव्य (वायुसे उत्पन्न) क्योंकि जब कि कारण चार प्रकारके हैं उनके कार्य भी चार प्रकारके ही होंगे। किन्तु यह बात कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं होती है। जितने भी जीव प्रत्यक्ष होते हैं सभीमें जीवत्वगुण एक सरीखा मिलता है। यद्यपि मनुष्य, पशु, पक्षी आदि अनेक प्रकारके जीवोंका शरीर अनेक प्रकारका है किंतु उन सबमें ज्ञान या चैतन्यशक्ति सामान्यतया समान है। यह दूसरी बात है कि किसीमें ज्ञानकी मात्रा अधिक है और किसी जीवमें अल्प है किंतु इससे यह सिद्ध नहीं होता है कि " मनुष्यका जीव अमुक पदार्थसे बना है इस लिये उसमें ज्ञान सबसे अधिक है और हाथीका जीव अमुक भूतसे निकला है इस लिये उसमें मनुष्योंसे कम और पशुओंसे अधिक ज्ञान है। तथा गधा, ऊंट, बैल, उल्लू आदि अमुक भूतसे उत्पन्न हुए हैं इस लिये वे बुद्धिमें तथा समझनेमें गधा, उल्लू आदि ही हैं "।

क्योंकि एक जातिके जीवोंमें भी ज्ञानकी कमी वेशी मिलती है। मनुष्योंमें ही देख लीजिये, जितने मनुष्य हैं उनके ज्ञानमें उतने ही भेद हैं। सारांश यह है कि ज्ञान (चैतन्य) गुण सामान्यतया सभी जीवोंमें है। इसके अतिरिक्त जीवोंके शरीर भी चार प्रकारके नहीं मिलते हैं जिससे उपर्युक्त बात सिद्ध हो जावे किंतु जितने प्रकारके जीव जंतु है सभीके शरीर भिन्न २ प्रकारके हैं। इस लिये भावार्थ यही निकला कि पृथक् पृथक् केवल एक एक भूतसे ही जीव उत्पन्न नहीं होते हैं।

यदि कोई महाशय दूसरा पक्ष लें कि चारों भूत मिलकर जीवको उत्पन्न करते हैं। जैसे महुआ, गुड़ आदि मिलकर शराबको उत्पन्न कर देते हैं।

तो उनके लिये यह उत्तर तयार है कि जैसे उपादान कारणका धर्म कार्यमें आया करता है। जैसे घड़ेमें उसके उपादान कारण मिट्टीका धर्म आता है। महुआ आदि नशीले पदार्थोंका नशीला गुण उनसे बनी हुई शराबमें आजाता है। यह प्राकृतिक अटल नियम है। इसी प्रकार जीवमें जो चैतन्य गुण दीखता है वह उसके उपादान कारण जलादिकमें भी दीखना चाहिये। ज्ञानकी थोड़ी, अधिक मात्रा अवश्य दृष्टिगोचर होनी चाहिये।

किंतु ऐसा नहीं है। जल, पृथ्वी आदिमें अलग भी ज्ञानशक्ति नहीं मालूम होती है फिर उनसे बने हुए जीवमें वह शक्ति कहांसे आ सकती है ? । आवेगी भी कहांसे ? ये सब कारण तो अचेतन हैं। इस लिये यह सिद्ध हो गया कि ये चारों भूत जीवके सजातीय नहीं हैं किंतु विजातीय हैं। और यह नियम ही है कि जिस जातिका कारण होगा, कार्य भी उससे उसी जातिका उत्पन्न होगा।

इस लिये यह सिद्ध हो गया कि अचेतन भूतोंसे चेतन जीव कभी उत्पन्न न हो सकेगा। अन्यथा पृथ्वीसे जल और जलसे अग्नि भी पैदा हो सकेगी जिससे भूत चार प्रकारके ही हैं उनसे पदार्थ भी उसी जातिके उत्पन्न होते हैं, यह उनका सिद्धान्त बिगड़ जायगा। किन्तु होता ऐसा भी है, पार्थिव लकड़ीसे अग्नि, जलसे पार्थिव ओला और दीपककी अग्निसे पार्थिव काजल बन जाता है।

यहां यदि यह कहा जाय कि उन चार प्रकारके पदार्थोंसे शरीर बन जाता है और शरीरमें चेतनशक्ति अपने आप आजाती है अर्थात चेतन शक्ति शरीरका ही गुण है।

यह कहना भी पर्याप्त न होगा क्योंकि यदि ज्ञान शरीरका ही गुण होता तो शरीरके अनुसार ही उसमें कमी बेशी होती किन्तु ऐसा है नहीं, शरीर वैसा ही बना रहता है किन्तु जीवमें बहुतसे विकार हो जाते हैं। शरीर कभी मोटा हो जाता है कभी पतला। किन्तु ज्ञान उतना ही बना रहता है। मृतकका शरीर जैसेका तैसा बना रहता है किन्तु उसमेंसे चेतनशक्ति निकल जाती है। इसके अतिरिक्त जीव यदि शरीरका ही गुण-स्वरूप होता तो शरीरके अनेक खंड कर देने पर सबमें पृथक् पृथक् जीव मिलना चाहिये। जैसे कि घड़ेके अनेक खंड कर देनेपर सबमें मिट्टी तथा उसका गुण अवश्य मिलता है। शरीरके खंडोंमें ऐसी बात मिलती नहीं है।

इस लिये अनेक पुष्ट प्रमाणोंसे अच्छी तरह सिद्ध हो जाता है कि जीव शरीरादिक जड़ पदार्थोंसे भिन्न एक निराला ही पदार्थ है जिससे कि संसारमें केवल जीव तथा अजीव दो ही द्रव्य हैं यह अनायास सिद्ध हो गया।

यहां पर इतना कह देना आवश्यक होगा कि जीव द्रव्यका संक्षिप्त वर्णन भी अधिक समय तथा स्थान चाहता है अतएव उसको यहीं छोड़ देते हैं। इसके सिवाय उसके भेद प्रभेद भी असंख्यात तथा अनंत हैं। उनको भी हम यहां बतलानेमें सर्वथा असमर्थ हैं। अस्तु। किन्तु इतना ध्यानमें रखना चाहिये कि सर्व जीवोंमें गुण तथा शक्तियां समान विद्यमान हैं यह दूसरा विषय है। किसी विशेष कारणवश किन्हीं जीवोंमें कोई गुण थोड़े व्यक्त हैं और कुछ जीवोंमें अधिक प्रगट हैं। सामान्यतया सभी जीव समान हैं।

अब अजीव द्रव्य शेष रहा जिसका व्याख्यान आवश्यक तथा अनिवार्य है। अस्तु। जीव द्रव्यको छोड़कर शेष जो भी द्रव्य हैं वे सभी अजीव द्रव्य हैं क्योंकि उन सभीमें चेतनराहित्य अथवा, अजीवत्व भाव विद्यमान है। अतएव सामान्यतया उन सभीको एक जातिका कह दिया जाय तो भी अनुचित न होगा। किन्तु उनको विशेष विशेष, अनिवार्य भेदोंके कारण विभक्त करना ही चाहिये।

अब अपना मानसिक बल इसी पर लगाते हैं कि अजीव द्रव्य कितने प्रकारोंमें विभक्त है अथवा हो सकता है।

तब सबसे प्रथम जीव द्रव्यको छोड़ देनेपर जितना भी कुछ दिखलाई देता है वह सभी पुद्गल द्रव्य ही दृष्टिगोचर होता है जिसको कि मूर्तिक द्रव्य भी कहते हैं। संसारमें चर्मचक्षुओंसे तथा इतर द्रव्येन्द्रिय ज्ञानेन्द्रियोंसे जो कुछ उपलब्ध होता है सभी पुद्गल द्रव्य है। यहांतक कि यदि सूक्ष्म विचार न किया जाय तो पुद्गल द्रव्यको छोड़कर जीव द्रव्य भी सिद्ध नहीं होता है। अस्तु।

पृथ्वी, पर्वत, समुद्र आदि जितने भी पदार्थ हैं सभी पुद्गल द्रव्यकी पर्याय है। यहां तक कि जीवद्रव्य जिस घरमें निवास करता है वह शरीर भी पुद्गलमय है। इसलिये इस पुद्गल द्रव्यको सिद्ध करनेका परिश्रम नहीं करना पड़ेगा क्योंकि जन्मान्ध पुरुष भी अपने ज्ञाननेत्रोंसे अथवा अन्य इन्द्रियोंसे सहजमें ही इस द्रव्यसे पूर्ण परिचय हो जाता है।

हां! एक बात अवश्य कहना है जो कि प्रायः अस्पष्ट तथा विवादास्पद है। वह यह है कि जिस प्रकार पुद्गलमें रूप गुण है और वह पूर्णतया स्पष्ट है उसी प्रकार उसके अविनाभावी या साथ साथ रहनेवाले तीन गुण और भी हैं। जिनका ज्ञान नेत्रेन्द्रिय के सिवाय अन्य इन्द्रियोंसे होता है। वे गुण रस, गंध तथा स्पर्श हैं जो कि प्रत्येक पुद्गल पदार्थमें अवश्य विद्यमान हैं।

इसलिये पुद्गल द्रव्यका यह लक्षण बन गया कि, "जिसमें रूप, रस, गंध तथा स्पर्श ये चार गुण पाये जाय वह पुद्गल है"। इन चारों गुणोंमेंसे किसी पदार्थमें चारों गुण ही व्यक्त हैं और कुछ पदार्थोंमें कोई गुण ही व्यक्त है शेष अव्यक्त रूपसे रहते हैं। किन्तु यह नियम है कि जहां इन चारोंमेंसे कोई एक गुण होगा वहींपर शेषके तीन गुण भी अवश्य मिलेंगे। यह नियम हमको उन अनेक प्रकारके नाना पदार्थोंके अनुभवसे ज्ञात हो जाता है। जैसे आमको खानेसे उसका मीठा रस मालूम हुआ, सूंघनेपर सुगंध भी उपलब्ध हुई। कोमल, ठंडा, भारी, चिक्कण, स्पर्श भी पाया गया। इसी प्रकार गुलाबके इत्रमें जैसे सुगंधि उपलब्ध होती है उसका रंग तथा स्पर्श भी उसी प्रकार मिलता है और स्वाद लेनेपर उसमें किसी न किसी प्रकारका रस भी मालूम होता है। हमको जब कि

ऐसा नियम या इन गुणोंका साहचर्य प्रायः सभी अनुभूत पदार्थोंमें मिलता है तब इसी कांटेसे हम सभी पुद्गलीय पदार्थोंका स्वभाव बेरोकटोक यथार्थ जान सक्ते हैं।

अतएव कोई महाशय जो ऐसे सिद्धांत बनाते हैं कि "जलमें स्पर्श रस तथा रूप है, अग्निमें स्पर्श तथा रूप है। तथा वायुमें केवल स्पर्शगुण ही विद्यमान है"। उनका यह सिद्धान्त स्वयमेव फिसलकर धराशायी हो जायगा। क्योंकि जलमें जब कि रस रूप स्पर्श पाये जाते हैं तब उसका अविनाभावी गंध उसमें अवश्य रहेगा। अग्निमें कोई न कोई गंध तथा कोई न कोई रस अवश्य है क्योंकि उसमें स्पर्श तथा रूप मिलता है इसी प्रकार वायुमें भी जब कि शीत या उष्ण स्पर्श एवं वजन पाया जाता है तो उसमें गंध, रूप तथा रस भी अवश्य होने चाहिये। जैसे आमका फल।

बात केवल यही है कि इन पदार्थोंमें कोई कोई गुण मुख्य तथा व्यक्त हैं शेषके गुण उतने तीव्र नहीं हैं किंतु हैं अवश्य। जैसे हींगमें बेलाके तेलमें केवल गंध गुणकी तीव्रता है किन्तु उसमें रस भी अवश्य रहता है, यही दशा उपर्युक्त पदार्थोंकी भी है। इस लिये भले प्रकार यह सिद्ध हो गया कि प्रत्येक पौद्गलिक पदार्थमें स्पर्श, रस गंध तथा रूप ये चारों गुण अवश्य पाये जाते हैं। अतएव प्रत्येक स्थलमें इन गुणोंमेंसे किसी एक गुणके रहने पर अवशिष्टके इतर गुण भी अवश्य रहेंगे। इस पुद्गल द्रव्यका भी व्याख्यान शक्तिसे बहिर्भूत है। अतएव इसके विशेष परिचयसे विश्राम लेते हैं।

अजीव द्रव्यमें एक प्रकारकी द्रव्य तो सिद्ध हो गई जो कि पुद्गल है। अब उसी अजीव द्रव्यको इतर प्रकार भी खोजना चाहिये।

यह विषय सभीसे सुपरिचित है कि कार्यको देखकर उसके कारणका अनुमान होता है। जैसे वृक्षको देखकर जान लेते हैं कि इसको उत्पन्न करनेवाला प्रथम ही बीज अवश्य होगा। मिट्टीकी छोटी डलीको देखकर पता लगा लेते हैं कि इसको बनानेवाले सूक्ष्म पुद्गल परमाणु हैं। आदि। इसके प्रथम ही यह बात भी ध्यानमें रहे कि प्रत्येक कार्यको उत्पन्न करनेके लिये जिस प्रकार उपादान कारणका उपस्थित होना आवश्यक है उसी तरह निमित्त कारणका होना भी अनिवार्य है। क्योंकि सूत रक्खा भी रहे किन्तु जुलाहा तथा करघा उपस्थित न होगा तो वस्त्र कभी न बन सकेगा। अस्तु।

संसारवर्ती जीव तथा पौद्गलिक सभी पदार्थोंका एक साथ गमन होना किसी बड़े निमित्त कारणसे ही हो सक्ता है अन्यथा नहीं। जैसे तालाबमें एक साथ इधर उधर घूमनेवाले मछली, मेंढक आदि हजारों जलजंतुओंके आवागमनमें जल निमित्त कारण है उसके बिना उनका गमन नहीं हो सक्ता है। तथैव अनेक जीव पुद्गलोंका टहलना भी किसी निमित्तके बिना नहीं हो सक्ता है। इसलिये उस निमित्त कारणका होना भी अनि-

वार्य है। जैसे घड़ेमें जल रक्खा हुआ है वह विना घड़ेके न रह सकेगा, उसके ठहरनेके लिये कोई न कोई बाह्य कारण अवश्य चाहिये। इस तरह दो प्रकारके कार्य देखनेसे उनके दो कारणोंका अनुमान होता है जिनके विना उपर्युक्त दोनों कार्य कभी नहीं हो सकेंगे। इस लिये दो अजीव द्रव्य और भी विद्यमान हैं जो कि अमूर्तिक हैं, इस बातका पूर्णतया निश्चय होता है। इन दो द्रव्योंका नाम धर्म तथा अधर्म है। चलते हुए जीव तथा पुद्गलको साधारण कारण धर्म द्रव्य होता है। किन्तु बलपूर्वक चलाता नहीं है और जीव पुद्गलोंके ठहरनेमें साधारण कारण अधर्म द्रव्य होता है।

कोई महोदय यदि यह समाधान दें कि जीवोंके तथा पुद्गलोंके चलनेमें और ठहरनेमें जल, पृथ्वी, आदि निमित्त कारण होंगे धर्म अधर्म द्रव्य माननेकी क्या आवश्यकता है? । तो उन्हें यह बतलाना चाहिये कि आकाशमें उड़नेवाले पक्षको सहकारी कारण कौनसा होगा? । वहांके लिये जिस प्रकार धर्म द्रव्यका नाम लिया जायगा उसी तरह अन्यत्र भी उसीको कहना चाहिये। यहां कोई यदि यह कुतर्क करे कि "इस तरह तो खाने, पीने आदिके लिये भी एक कारण होना चाहिये तथा अन्य तरहकी सभी क्रियाओंके लिये पृथक् पृथक् निमित्तकारण होने चाहिये" तो इसके लिये यही उत्तर पर्याप्त होगा कि उन सभीके लिये अन्य पुद्गलादि पदार्थ विद्यमान हैं।

इस लिये यह सिद्ध हो गया कि पुद्गलके अतिरिक्त धर्म, अधर्म नामक भी दो अजीव द्रव्य विद्यमान हैं। ये दोनों सर्वव्यापक, अखंड हैं क्योंकि यदि ऐसा न होय तो सर्व देशवर्ती जीव पुद्गलोंके युगपत् चलने तथा ठहरनेमें सहकारी किस प्रकार होंगे। अस्तु।

इसके सिवाय अनुसंधान करनेके लिये और भी आगे बढ़ना चाहिये, शायद और भी कुछ हाथ आ जावे।

जिस समय द्रव्योंके आधारपदार्थोंका विचार जाता है उस समय ज्ञात होता है कि समस्त जीव पुद्गलादि द्रव्योंका आधारभूत कोई और द्रव्य भी विद्यमान है। क्योंकि मनुष्य, पशु, पक्षी, पर्वत आदि दृश्यमान सभी पदार्थ पृथ्वीके आधारपर हैं अर्थात् पृथ्वीपर स्थित हैं। और पृथ्वी भी वायुमंडलपर स्थित है किन्तु वह वायुमंडल किस आधारपर स्थित है?। इस प्रश्नको हल करनेके लिये द्रव्यान्तरका मानना अनिवार्य होगा। इतना ही नहीं किन्तु पदार्थोंकी वास्तविक व्यवस्था किस प्रकार कैसी है? यह शंका भी हृदयको विचलित करती रहेगी, जिसको हटाना हमारा प्रधान कर्तव्य होगा। अस्तु।

जिस प्रकार हेतुओंके बलसे जीव द्रव्य तथा धर्म, अधर्म द्रव्य अप्रकट होते पर भी सिद्ध हो गई तथैव उपर्युक्त शंकाओंके निराकरणके लिये आकाश द्रव्य भी अवश्य स्वीकार करना पड़ेगा, इसको विना माने कार्य न चलेगा। क्योंकि सकल द्रव्योंको अवगाह

सब जीव एकसे हैं । इसके बाद जिसे वे शत्रु या मित्र कहते थे, बन्धु वा दुश्मन समझते थे, उन सब कल्पनाको नष्टकर सबमें समान भावकी भावना रखनी चाहिये । इससे संसारके जीव मात्र हमारे मित्र बन जांयगे ।

इस प्रकार सबके साथ मित्रता होनेपर सब हीमें हमारा राग-भाव हो जायगा; परन्तु यह राग सम-राग, के रूपमें होगा । अब याद रखना चाहिये कि हमारी सब जीवोंके साथ मित्रता है परन्तु पुद्गलके साथ नहीं । और इसी कारण दुःखी जीवोंको और स्वयं-अपनेको दुःखी देखकर हमें करुणा आयगी । जहां करुणा उत्पन्न हुई कि उन जीवोंका और हमारा दुःख नष्ट हो जायगा । अर्थात् हमारे अनादि कालके अशुभ कर्म नष्ट होंगे । और सुखी जीवोंको देखकर सुख होगा अर्थात अनादि कालसे जो हमने शुभ कर्म किये हैं उनका फल भी हम भोग चुकेंगे । मतलब यह कि शुभ अशुभ कर्म अपना २ फल देकर नष्ट हो जांयगे । यह जो सुख-दुःख होते थे वे कर्मोंके कारण या पर वस्तुमें मोहके कारणसे होता थे; पर अब परभावके नष्ट हो जानेसे चित्तको आत्मस्वभावमें लीन होनेका मौका मिलैगा । और जबतक राग पर-वस्तुओंमें होता था, वह अब आत्म-ध्यानाग्निमें मग्न होकर, वीतराग होकर आनंदसे निज स्वरूपमें मिल जायगा । इस लिये मध्यम श्रेणीके जीवोंको इस उपायका उपयोग करना चाहिये; और जो पातक श्रेणीके जीव हैं उन्हें मध्यम श्रेणीके जीव बननेका यत्न करना चाहिये; और इस प्रकार वे जीव मध्यम श्रेणीमें आ जांय तब उन्हें भी यही उपाय काममें लाना चाहिये । ब्र० आत्मानंदजी गढ़ाकोटा ।

सोजीत्रानो लग्नगाळो.

આ સાલ (સં० ૧૯૭૮માં) સોજીત્રામાં શ્રી વીશા મેવાડા જ્ઞાતિમાં લગ્નગાળો વૈશાખ માસમાં ભરાયો હતો તેમાં આશરે ચાલીસ લગ્ન થયાં હતાં છતાં ખેદની વાત છે કે એકપણ લગ્ન જૈન વિધિથી થએલું સાંભળ્યું નથી. તેમ આધુનિક પરિગ્રહી ભટ્ટારકો પણ બે પધારેલા હતા, પણ કોઇ પણ ધાર્મિક વિષય ચર્ચાયો નહોતો. લગ્ન પ્રસંગે વૈશાખ સુદ ૩ થી આશરે પંદરસોથી બે હજાર માણસો એકઠા થયા હતા તે વૈશાખ વદી ૧૦ રવીવારની ઉજાણી કરી સઘળા પોતપોતાના ગામ તરફ વેરાઇ ગયા હતા. આ સાલ જ્ઞાતિ ભોજનની ન્યાતો ૨ જ થઇ હતી તેમાં એક ન્યાત પીપલાવવાળા શા० બાબરદાસ વ્રજલાલ તરફથી થઇ હતી ને બીજી ન્યાત ધર્મણાવવાલા શેઠ० નરસિંહદાસ ગંગાદાસ તરફથી થઇ હતી. લગ્ન પ્રસંગે મુંબઇ શ્રાવિકાશ્રમને નીચે મુજબ મદદ મળી હતી.

વરવાળા તરફથી.

૨૫) શા० નરસીદાસ ગંગાદાસ ધર્મણાવવાળા
૧૧) શા० મનુભાઇ પ્રેમાનંદદાસ બોરસદવાળા
૧૫) શા० શંકરલાલ તાપીદાસ આમોદ
૭) શા० જગજીવનદાસ રગનાથદાસ મોગરી
૧૧) શા० ચીવલાલ તારાચંદ દાવોલ
૧૦) શા० પરસોતમદાસ હીમચંદ સોજીત્રા
૭) શા० પીતાંબરદાસ જગજીવન સોજીત્રા
૫) શા० નરોતમ ગંગાદાસ વેડચ
૫) શા० નાથાશેઠ જવેરદાસ મોજ
૧) શા० જીવણદાસ છગનદાસ સોજીત્રા
૫) શા० પરસુદાસ ઇશ્વરદાસ વડોદરા
૨) શા० મંગળદાસ કેવળદાસ દાવોલ
૧) શા० ગુલાબચંદ મુળજી બોરસદ
૧) શા० નાથાભાઇ ઇશ્વરદાસ પાદરા
૧૦૬)

છોકરીવાળા તરફથી.

११) શા० ત્રીભોવનદાસ રણછોડદાસ કરમસદ
७) „ રાયચંદ ફુલચંદ સોજીત્રા
५) „ કાળીદાસ હરગોવીંદ આમોદ
४) „ રાયચંદ તલકચંદ વડુ
७) „ બાળરદાસ વ્રજલાલ પીપલાવ
५) „ પાનાચંદ મનોરદાસ વેડચ
५) „ નાથાલાલ મોતીલાલ કરમસદ
३) „ પુરસોતમ દામોદર વેડચ
२) „ ત્રેસંગભાઇ હીમચંદ પરીએજ
१) „ મુળજીભાઇ ઇશ્વરદાસ વલાસણ.
३) „ ભાઇજી મથુરભાઇ મહેળાવ
१) „ ચુનીલાલ મુલચંદ વકાલી સોજીત્રા
१) „ નાથાભાઇ ઇશ્વરદાસ પાદરા
३) „ હીરાલાલ દલપતભાઈ આમોદ

५८)

ઉપર મુજબ કુલ રૂપીઆ १६४) અવિવાહ્ય મને મદદ મળી છે તે ઉપકાર સાથે સ્વીકારીએ છીએ. આવી રીતે દરેક લગ્નમાળે હર્ષ પ્રસંગે, તેમજ શ્રુ૦ ઉ૦ પ્રસંગે આવાં ખાતાંઓને મદદ મળે તો ઘણી સારી વાત છે.

२) દાંતોલના શા० રાયચંદ દામોદરની દીકરી રૂક્ષ્મણીના પુન્યમાં મલ્યા છે.

તેમ આ વરસે સોજીત્રામાં એક "શ્રી વીશા મેવાડા દિગમ્બર જૈન કોમની વાડી" બાંધવા માટે ફંડ એકઠું કરવા માંડ્યું છે જેમાં અત્યાર સુધીમાં લગભગ ४१०००) રૂપીઆ ભરાયા છે ને કુલ આશરે ६००००) રૂપીઆ થવા સંભવ છે ને વાડી બાંધવામાં પણ લગભગ એક લાખ રૂપીઆનું ખરચ છે! તે ફંડમાં મોટામાં મોટી રકમ બોરસદવાળા પરીખ પ્રેમાનંદ નારણદાસ તરફથી રૂ० ५००१) ભરવામાં આવી છે.

જંબુસરવાળા પ્રેમાનંદ અમથાદાસ	રૂ०	२२५१)
કરમસદવાળા મથુરદાસ હરગોવીંદ	રૂ०	२००१)
ત્રાણજવાળા પાનાચંદ ઇશ્વર	રૂ०	६५१)
બોરસદવાળા શીવલાલ તુલશીદાસ	રૂ०	५०१)

ઉપરની મોટી રકમો સિવાય ચારસો, ત્રણસો તથા બસો ક્રોકની રકમો ભરાઇ ४१०००)ની રકમો ભરાઇ ગઇ છે ને જે લોકોએ ન ભરી હોય તેમણે ખુશીથી ભરી આપવી. છેવટે લેણા દીઠ રૂ० १६) લેવા ઠરાવ થયો છે.

ઉપર મુજબ કામકાજ થઇ વૈશાખ વદી ११ સોમવારે બધા લોક પોતપોતાના ગામે વેરાઇ ગયા હતા. વળી એક યુવક મંડળની મીટીંગ મળી હતી, તેમાં કેટલાક ઠરાવો પાસ થયા હતા તેમાં મુખ્ય ઠરાવ જ્ઞાતિનું વસ્તી પત્રક કરવાનો ઠરાવ થયો હતો અને તે મંડળના પ્રમુખ મી० મનસુખલાલ બેચરલાલ ચોકશી સોલીસીટર છે.
શા० ત્રીભોવનદાસ રણછોડદાસ કરમસદવાળા.

सन्तानोत्पत्ति।

मनुष्य स्वभावसे ही देवऋण ऋषिऋण और पितृऋण इन तीनों ऋणोंको लेकर जन्म लेता है। उनमें पूजा, दान-पात्रादिके द्वारा जैसे देवऋणसे और शास्त्रोंके पठन पाठन आदिके द्वारा जैसे ऋषि ऋणसे मुक्त होता है उसी प्रकार सन्तान उत्पन्न करके पितृऋणसे मुक्त होता है। गृहस्थके लिए संतान एक परम आदरकी वस्तु है। संतान गृहस्थाश्रमका मूल कारण है। संतानके बिना गृहस्थका घर अंधकारमय है इस लिये संतानोत्पत्तिके लिये पुरुषको ऋतुकालमें प्रसंग करना आवश्यक है। किंतु शरीर अस्वस्थ होनेसे या स्त्रीके समीपमें न रहनेसे अथवा किसी प्रकारका विशेष बाधक होनेसे कदापि प्रसङ्ग नहीं करना चाहिए।

उत्तम संतानको उत्पन्न करनेके लिए परस्पर स्त्री पुरुषोंमें प्रीति और मानसिक हर्ष होना अत्यंत आवश्यक है। आपसमें प्रेम, उत्सुकता और हर्षके न होनेसे गर्भके उपादान शुक्र और

रज शरीरमेंसे पूर्णरूपसे स्खलित नहीं होते। वीर्य और रजके अल्प परिमाणमें क्षरित होनेसे उनके संयोगसे जो गर्भ होता है, वह विशेष पुष्ट नहीं होता। इस लिए उस समय जिससे हर्ष और उत्सुकता प्रगट हो ऐसे कार्य करने चाहिए।

दम्पतीकी शय्या दूधके झागोंकी समान स्वच्छ कोमल, विस्तीर्ण सुगंधित द्रव्योंसे सुगंधियुक्त और नानाप्रकारके पुष्पोंसे सुशोभित होनी चाहिए। पुरुष पहलेसे ही वीर्यवर्धक पदार्थ विशेषकर दुग्ध और घृतपक्व पदार्थ एवं स्त्री रजको बढ़ानेवाले तैल व घृतके द्वारा बने हुए उड़द आदिके पदार्थोंको भक्षण करे। दोनोंको स्वच्छ वस्त्र पहनना, चन्दन अगर आदि सुगंधित द्रव्योंका प्रलेप करना, पुष्प मालायें पहनकर नानाप्रकारकी वेशभूषाओंसे सुसज्जित होकर पुरुष प्रथम दहने पैरसे और स्त्री बांये पैरसे शय्या पर चढ़े।

रजकी निवृत्ति होनेपर ऋतुके चौथे दिन भी गर्भाधान किया जा सकता है, किंतु चौथे दिन भी बहुतसी स्त्रियोंके रजःस्राव होता है। इस लिये मनु आदि स्मृतियोंमें चौथा दिन भी वर्जित है। वास्तवमें रजोदर्शन होनेके पहले दिनसे लेकर, जो सोलह दिन ऋतुकालके कहे हैं, उनमें प्रथमकी चार रात्रि, ग्यारहवीं और तेरहवीं रात्रि गर्भाधान करना उचित नहीं है। अन्य दश रात्रियोंमें गर्भाधान करना श्रेष्ठ है।

शुक्र और रज इन दोनोंमें शुक्रकी अधिकता होनेसे पुत्र, रजके अधिक होनेसे कन्या और दोनोंके समानभाग होनेसे नपुंसक संतान उत्पन्न होती है।

जैसे त्रिदोषजन्य ज्वर सातवें, नवें, ग्यारहवें आदि दिनोंमें स्वभावसे बढ़ता है और अन्य दिनोंमें पहलेकी अपेक्षा कम होता है एवं विशेष तिथियोंमें जैसे समुद्रमें ज्वार भाटा आकर जलको बढ़ा देता है और तिथि विशेषमें जल फिर प्रकृत अवस्थामें आ जाता है, उसी प्रकार स्त्रियोंके ऋतुकालके अयुग्म दिनोंमें रज स्वाभाविक रूपसे वृद्धिको प्राप्त होता है और युग्म दिनोंमें पूर्ण दिनोंकी अपेक्षा कम होता है। इस कारण पुत्रकी इच्छा होनेपर दम्पती युग्म दिनोंमें अर्थात् ऋतुके छठे, आठवें, दशवें, बारहवें, चौदहवें और सोलहवें, दिन कन्याकी इच्छा होनेपर अयुग्म दिनोंमें अर्थात् पांचवें, सातवें, नवें, और पन्द्रहवें दिन गर्भाधान करें। पहले २ दिनोंकी अपेक्षा दूसरे दिनोंमें अर्थात् पांचवें दिनकी अपेक्षा छठे दिन, छठे दिनकी अपेक्षा सातवें दिन, सातवें दिनकी अपेक्षा आठवें दिन; आठवें दिनकी अपेक्षा नवें दिनमें इस प्रकार दूसरे २ दिन गर्भाधान करनेसे उस गर्भकी सन्तान उत्तरोत्तर उत्तम स्वास्थ्ययुक्त, बलवान्, दीर्घायु और ऐश्वर्यशाली होती है।

पुत्र और कन्या होनेके लिये युग्म और अयुग्म दिनों में स्त्री-पुरुषके प्रसंगका कारण साधारण और स्वाभाविक है। किन्तु युग्म दिनोंमें भी यदि पुरुष वीर्यवर्द्धक घृत दुग्धादि पदार्थ और वाजीकरण औषधियां सेवन कर वीर्यकी वृद्धि करके अयुग्म दिनोंमें गर्भाधान करे तो भी पुत्र उत्पन्न हो जाता है। इसी प्रकार स्त्री रजोवर्धक पदार्थोंके द्वारा रजकी वृद्धि

कालके युग्म दिनोंमें सहवास करने तो भी कन्या उत्पन्न होसक्ती है।

गर्भाधानकी विधि ।

प्रसंगके समय दम्पती ताम्बूल भक्षण करें और तन्मय होजावें। स्त्री टेढ़ी तिरछी होकर या करवट लेकर शयन करके प्रसंग न करे। टेढ़ी तिछे या कुबड़ेपनसे शयन करके प्रसंग करनेसे वायु कुपित होकर स्त्रीके अंगोंमें पीड़ा उत्पन्न करता है। वैसे ही दाहनी करवटसे शयन कर सहवास करनेसे कफ स्खलित होकर गर्भाशयको ढकदेता है, इससे प्रायः गर्भ नहीं रहता है। बाईं करवटसे लेटकर प्रसंग करनेके पित्त कुपित होकर रक्त और वीर्य्यको दूषित करता है इससे भी गर्भ नहीं रह सकता। इस लिए स्त्री सीधी उत्तान रूपसे शयन करके वीर्य्यको ग्रहण करे। सीधी होकर उत्तानरूपसे शयन करनेसे शरीरके रक्षक वायु पित्त और कफ इनके प्रकृत अवस्थामें अपने २ स्थानोंमें रहनेसे गर्भधारण करनेमें किसी प्रकारकी बाधा नहीं होती।

यहाँ प्रसंगवशसे यह कह देना अनुचित न होगा कि ऋतुकालके बीतने पर भी आयुर्वेदमें स्त्री प्रसंग करनेकी आज्ञा देखी जाती है। शरीर धारी प्राणिमात्रको प्रसंगकी इच्छा स्वभावसे ही उत्पन्न हुआ करती है। रजस्वला होनेके बाद पन्द्रह या सोलह वर्षकी स्त्रीको बाला कहते हैं। सोलह वर्षके बाद बत्तीस वर्ष तक तरुणी और ३२ वर्षके बाद ५० वर्ष तककी स्त्रीको प्रौढ़ा कहते हैं। इससे आगे क्रमसे वृद्धावस्था आती है। रजस्वला होनेके पश्चात स्त्रियोंके सम्भोगेच्छा उत्पन्न होती है। बाला स्त्रीके साथ सम्भोग करनेसे पुरुषके स्फूर्ति और शारीरिक शक्तिकी वृद्धि होती है, किंतु उस समयमें उत्पन्न हुई सन्तान विशेष स्वस्थ और दीर्घायु नहीं होती। कारण सोलह वर्षकी अवस्था तक भी स्त्रियोंका शरीर पूर्णरूपसे पुष्ट नहीं होता। तरुणी स्त्रीके साथ प्रसंग करनेसे पुरुषकी शक्ति कुछ ह्रास होती है। प्रौढ़ा स्त्रीके साथ प्रसंग करनेसे वृद्धता आती है। वृद्धा स्त्रीके साथ सहवास करनेसे बहुत जल्द बलका नाश होकर शरीर आक्षीण हो जाता है।

हेमन्त और शिशिर ऋतु में मनुष्यके स्वभाव से कुछ अधिक बलकी वृद्धि हुआ करती है। इन दोनों ऋतुओंमें शीतल वायु और हिमके स्पर्शसे शरीरकी भीतरी गरमी बाहर नहीं निकल सकती। इस लिये शरीरके भीतरकी अग्नि (पाचकाग्नि) बढ़जाती है। उस समय अधिक पौष्टिक भोजन करने पर भी वह सहज में ही पचजाता है और शुक्रकी वृद्धि होती है। इस कारण हेमंत और शिशिर ऋतुमें बलकारक पदार्थोंका भोजन और वाजीकरण औषधियोंको सेवन करके शक्तिके अनुसार प्रतिदिन भी प्रसंग किया जा सकता है। विशेषकर इस समयमें कफका संचय होता है, इस लिये इन ऋतुओंमें प्रसंग करनेसे कफके न बढ़नेके कारण शरीर स्वस्थ रहता है।

वसन्त और शरदऋतुमें तीन दिनके बाद, ग्रीष्म और वर्षा ऋतुमें पन्द्रह दिनके बाद प्रसंग किया जासकता है। किंतु अधिक गरमी

या वर्षा होने पर एक दिन स्त्रीसंग त्याग देना चाहिये। ग्रीष्म ऋतुमें सूर्यकी तीक्ष्ण धूपसे शरीरका सार भाग क्षय होता है, उस समय शीतल और स्निग्ध अन्न पानादिके द्वारा उस क्षयकी पूर्ति होने पर भी शरीरमें सार भागकी वृद्धि नहीं होती। इसी प्रकार वर्षा और पहली ग्रीष्म ऋतुमें सूर्यकी तेज गरमीसे शरीर और उसकी परिपाक शक्ति दुर्बल हो जाती है। इस कारण पौष्टिक खाद्य पदार्थ खाने पर भी उनके उत्तम प्रकारसे जीर्ण न होनेसे धातु परिपुष्ट नहीं हो सकती। शुक्रकी वृद्धि न करके केवल उसको नष्ट करनेसे अनेक प्रकारके दुःसाध्य रोग उत्पन्न हो जाते हैं। वीर्य ही पुरुषका पुरुषार्थ बल और प्राण रूप है। उसको पुष्ट ... शरीरमें सहजमें ही रोग प्रविष्ट नहीं ... ते। कदाचित कोई रोग हो भी जाय तो वह सहजमें दूर हो जाता है। और अनुचित रीतिसे शुक्रक्षय करनेसे शरीर रोगों समूहका आगार बनजाता है और वह शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। साधारणतः शरीरको पूर्णरूपसे स्वस्थ और पुष्ट रखकर जितने परिमाणमें वीर्य क्षय हो उतने ही परिमाणमें उसकी फिर पूर्ति होने के लिए उत्तम सारयुक्त भोज्य पदार्थ और वाजीकरण औषधियोंको सेवन करके अपनी शक्तिके अनुसार प्रसंग करनेसे शरीरकी विशेष हानि नहीं होती। जो हो, प्रत्येक व्यक्तिको यह ध्यान रखना चाहिए कि दूध, घी आदि पौष्टिक और वीर्यवर्द्धक पदार्थ एवं वाजीकरण औषधियां (जिस औषधिको सेवन करनेसे शीघ्र ही वीर्य बढ़कर रतिशक्तिकी वृद्धि हो) सेवन न करके अधिक स्त्री प्रसंग करनेसे शीघ्र ही राजयक्ष्मा, क्षय, श्वास, खाँसी, वातव्याधि, शूल, ज्वर, पाण्डु, कामला, कृशता, नपुंसकता आदि कष्टदायक रोगोंसे पीड़ित होना पड़ता है। जो मनुष्य नियमित रूपसे प्रसंग करता है, उसके शरीरकी लावण्यता स्थिरता और बल अक्षुण्ण रहता है।

प्रातःकाल, सन्ध्याके समय, अर्द्धरात्रिमें और मध्यान्ह कालमें एवं अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा अमावास्या और संक्राति इन तिथियोंमें प्रसंग नहीं करना चाहिए।

क्षुधा और तृषाके अधिक होनेपर अथवा अत्यंत भोजन करके उसके जीर्ण न होनेपर, अन्य स्त्रीके ऊपर आसक्त होकर, अत्यंत आतुर होकर और रुग्णावस्थामें स्त्री प्रसंग करना उचित नहीं है।

रजस्वला, मैले वस्त्र धारण करनेवाली, अप्रिया, वृद्धा, संन्यासिनी, रोगिणी विशेषकर योनिरोग से युक्त स्त्रीके साथ प्रसंग नहीं करना चाहिए। रजस्वलाके साथ प्रसंग करनेसे जो दोष होता है, वह पहले ही कहा जाचुका है। मलिन, अप्रिय और वृद्धावस्थावाली स्त्रीके पास गमन करनेसे अधिकतासे शुक्र क्षय होता है और मनमें दुर्बलता उत्पन्न होती है। योनिरोगयुक्त और संन्यासिनीके साथ संगम करनेसे उपदंश आदि रोगोंसे ग्रसित होना पड़ता है।

मल-मूत्रके वेगको रोककर या स्त्रीके नीचे होकर प्रसंग करनेसे अथवा जब वीर्य पतित होनेको होता है उस समय बलपूर्वक उसके वेगको रोकनेसे पथरी आदि रोग उत्पन्न होते

हैं। गर्भस्थिति होनेके बाद भी तीन महीने तक प्रसंग किया जा सकता है। क्योंकि तीन महीने तक गर्भके अङ्ग-प्रत्यङ्ग परिस्फुटित नहीं होते चौथे ज्ञान महीनेमें गर्भके कुछ प्रत्यङ्ग, हृदय पूर्ण और उत्पन्न होजाता है। इस कारण चौथे महीनेमें प्रसङ्ग करनेपर गर्भको पीड़ा होती है। किन्तु गर्भवती स्त्री यदि अत्यन्त प्रसङ्गकी इच्छावाली हो तो उसकी कामना पूर्ण करनेके लिए गर्भकी पूर्ण अवस्थामें भी प्रसंग किया जासकता है। गर्भस्थितिके समय स्त्रियोंकी जिस विषयकी प्रबल इच्छा उत्पन्न हो उसको पूर्ण न करनेसे उसके मनके क्षुभित होनेके कारण वायु दूषित होकर गर्भमें अनेक विकारोंको उत्पन्न करसकता है।

स्त्री प्रसंग करनेके पश्चात् स्नान करना एवं हाथ, पैर उदर आदि अंगोंको धोना और उत्तम शीतल वायुको सेवन करना चाहिए। मिश्री मिला हुआ दूध, मधुर रसयुक्त अन्यान्य पौष्टिक पदार्थ, मधुर फल आदि भक्षण करके सुख पूर्वक शयन करना चाहिए। इससे उत्तम निद्रा आती है, धातु अत्यंत पुष्ट होती है और शरीरकी ग्लानि दूर होकर बलकी वृद्धि होती है।

(इस लेखमें कुछ बातें शास्त्र-सम्मत होने पर भी समयके विरुद्ध प्रतीत होती हैं। इसपर हम अपनी राय आगामी संख्यामें लिखेंगे। सम्पादक "वैद्य")

"वैद्य" दिसम्बर २१ में वैद्य शिवनाथ शर्मा द्वारा लिखित।



नाम-दहीको संस्कृतमें दधि, पयस्य, मङ्गल्य, विरल, दधिद्रस, घनेतर, क्षीरज, क्षीरोद्भव, तक्र जन्म और साम्द्रक कहते हैं। हिन्दीमें दही, बंगालमें दइ, मराठीमें दहीं, गुजरातीमें दहि, फारसीमें दोग और अरबीमें जुगरात कहते हैं।

गुण-दही पचने में खट्टा, गरम, अग्निदीपक, स्निग्ध, कुछ कषैला, भारी, मलरोधक, रक्तपित कारक, कफकारक, मेदजनक और शोथ पैदा करनेवाला है। यह बात विकारको दूर करता है, पेशाबको बढ़ाता, मस्मक अग्निको शांत करनेवाला, खांसी, श्वास, पीनस, विषमज्वर और जड़ैया बुखारको दूर करता है। यह शुक्र-वर्धक भी है। हृदयको हितकारी है।

भेद-दही पांच प्रकारका है, मन्द, मधुर, मधुर, खट्टा, खट्टा, और अत्यन्त खट्टा। जो दही कुछ जमकर गाढ़ा पड़ गया हो और जिसमें मिठास या खट्टापन कुछ स्वाद मालूम न पड़ता हो उसे मन्द कहते हैं। यह मल मूत्रको बढ़ाता, त्रिदोष और दाहको उत्पन्न करता है। जो दही जमकर गाढ़ा पड़ गया हो और जिसमें स्वादुरस प्रकट हो किन्तु खटाईका अंश मान न पड़े उसे स्वादु दही कहते हैं। यह अभिष्यन्दी, वीर्य-वर्धक, मेदजनक, कफकारी, वातनाशक, पचनेमें मधुर और रक्तपित्तको कुपित करता है। जो दही कुछ मीठा और कुछ खट्टा तथा गाढ़ा तथा

कसैला हो उसे स्वाद्वम्ल दही कहते हैं। इसमें दहीके साधारण गुण होते हैं। असली दही इसे ही समझना चाहिये। जिस दहीमें मधुरता नष्ट होकर खट्टा पन आगया हो उसे अम्ल दही कहते हैं।

यह अग्निको प्रदीप्त करनेवाला, रक्तपित्त और कफको बढानेवाला है। जो दही अत्यंत खट्टा हो और दांतोंको खट्टा करदे जिसके मुखमें रखनेसे रोमांच हो और जिसके खानेसे गलेमें जलन हो उसे अत्यम्ल दधि कहते हैं। यह गुणमें अग्निदीपक, खूनको बिगाड़ने वाला, वात और पित्तको उत्पन्न करनेवाला है। खानेके काममें मधुर दही लेना चाहिये, अत्यंत खट्टा दही नहीं खाना चाहिये।

ऋतुके अनुसार दहीके गुण—बरसातका दही पित्तकारक, वात नाशक, कफको कुपित करनेवाला तथा गुल्म, बवासीर, कुष्ट और रक्तपित्तमें हितकारी है। शरदऋतुका दही भारी, खट्टा रक्तपित्तको बढ़ानेवाला, सूजन, तृषा और ज्वर-पीडितोंमें विषम ज्वरकी उत्पत्ति करनेवाला है। हेमंतऋतुमें दही भारी, स्निग्ध, मधुर, कफकारक, बलवर्धक, वीर्यजनक, मेधाकारक, पुष्टिदायक और तुष्टिवर्धक है। शिशिरऋतुका दही वीर्यवर्धक, बलकारक, पित्तजनक, मलोंको नाश करनेवाला, गाढ़ा, खट्टा, पिच्छिल और भारी है। बसंतऋतुका दही, बादी, मधुर, स्निग्ध किंचित खट्टा, कफकारी बलकारक, वीर्यवर्धक होता है। साधारणतः बसन्तऋतुमें दही खाना अच्छा नहीं है। ग्रीष्म ऋतुमें दही हलका, खट्टा, गरम, रक्तपित्तकारक शोथ भ्रम और प्यासको करनेवाला होता है। शरद, ग्रीष्म और वसन्त ऋतुमें भी दही खाना श्रेष्ठ नहीं।

अवस्था भेदसे दहीके गुण—औटाये हुए दूधका दही रुचिकारक, स्निग्ध, गुणोंमें श्रेष्ठ पित्तवात-नाशक, सम्पूर्ण धातुअग्नि और बलको बढ़ाता है। जि० दूधकी मलाई निकालकर दही बनाया गया हो वह निस्सार दधि कहलाता है। ऐसा दही मल रोधक, शीतल, वात कारक, हलका विष्टम्भी, दीपन, रुचिकारक और संग्रहणीमें हितकारक है। छाना हुआ और पानी निकाला हुआ दही (गालितदधि) स्निग्ध, वातनाशक, कफकारी, भारी, बलकारक, पुष्टिदायक, रुचिकारक, मधुर, और पित्तको अधिक बढ़ाता है। चीनी मिला हुआ दही पित्त, दाह, तृषा और रुधिर विकारको दूर करता है। गुड़ मिला दही तृप्तिकारक, धातुवर्धक, भारी और वातनाशक है। रातमें दही नहीं खाना चाहिये। यदि खाना ही हो तो घी, चीनी मिलाकर खावे। मूँगकी दाल, और आमलेकी वस्तुओंके साथ दही खाना चाहिये। गरम किया हुआ दही खाना निषेध है। विना नियमके दही खानेसे ज्वर, रक्तपित्त, विसर्प, कुष्ट, पांडु भ्रम और कामलादि रोग होते हैं। हेमन्त ऋतुमें दहीमें सोंठ, मिर्च, पीपल और सेंधानमक तथा राई मिलाकर खानेसे कफ दोष नष्ट हो जाता है। वायु शांत होता है, अग्नि प्रदीप्त होता है, पथ्य है, और पुष्टि देता है और शरीरकी कांति बढ़ाता है।

सर और मस्तु—दहीके ऊपरकी मलाईको सर कहते हैं। और दहीसे निकले हुए पतले पानी

को मट्ठा या दहीका तोड़ कहते हैं। दहीकी मलाई स्वादिष्ट, भारी, वीर्यवर्धक, वातनाशक, जठराग्निको मन्द करनेवाली, खट्टी, बस्ति रोगनाशक, पित और कफको बढ़ानेवाली है। दहीका तोड़ क्रमिनाशक, बलकारक, रुचिदायक, स्रोतसों का शोधन करनेवाला, आनंदजनक, कफनाशक, तृषानिवारक, वातनाशक, तृप्ति करनेवाला अवृष्य (शरीरको पतला करनेवाला और मलके हजारका भेदन करनेवाला) होता है।

दधिकूर्चिका—आधा दूध और आधा पानी मिलाकर उसमें खट्टा दही मिलादेवे उसे दधिकूर्चिका कहते हैं। दधिकूर्चिका वातनाशक, रूखी, मलशोषक और देरसे हजम होनेवाली है। आयुर्वेद शास्त्री पं० शंकर दाजीके पुराने कागज पत्रोंमेंसे नीचे लिखी दधि क्रिया मिली है।

दधि क्रिया कौतुक।

अमीर लोगोंके योग्य दही बनानेकी ऐसी अद्भुत क्रिया कहता हूं जो कौतूहलवर्धक है। यह दही नेत्रोंकेलिये हितकारी और आयुष्यवर्धक है। यह दही कलियुगमें अमृतके समान है। आध द्रोण अर्थात साढ़े बारह सेर भैंसका दूध लेकर कपड़ेमें छानकर नये मिट्टीके बर्तनमें डाल आगपर गरम करे। फिर उसमें लौंग, जायपत्री, दालचीनी, इलायची आधा तोला, सोंठ, मिर्च, पीपर आधा तोला और केशर तीन माशे लेकर एक कपड़ेमें सबको बांध पोटली बनावे और वह पोटली दूधमें डाल देवे। पोटली पड़ा हुआ दूध मन्दाग्निपर पकावे। दूधको चमचेसे बराबर चलाता रहे। जब दूध इतना गाढ़ा हो जाय कि चमचेमें चिपटने लगे तब उसमेंसे पोटली निकाल लेवे। फिर उस दूधको एक दूसरे बर्तनमें रखे और कन्दोष्ण होने पर उसमें थोड़ा मट्ठा मिलादेवे। बर्तनके चारों तरफ राख बिछा दे और दूधके बर्तनको ढांककर रखे। बर्तनको ऐसी सावधानीसे रखे कि बिल्ली चूहे आदिके उपद्रवसे उसकी रक्षा हो। यह दही बहुत बढ़िया गाढ़ा सुंदर जमता है। कोई कहता है कि अमृत स्त्रियोंके अधरमें रहता है और कोई कहता कि वह स्वर्गमें है, किंतु उसे किसीने साक्षात देखा नहीं है; परंतु यह दही प्रत्यक्ष अमृतसे उत्तम क्षीर समुद्रके सारांशसे निर्मित हुआ है। यह मनुष्योंके लिये दुर्लभ और इन्द्र ऐसे देवता भी इसकी इच्छा प्रगट करते हैं। इस दहीको चीनी मिलाकर पुड़ियोंके साथ खावे। यह दही वृष्य, मधुर, आल्हादकारक, पुष्टिकर्ता, कामोत्तेजक, कांतिदायक और त्रिदोष नाशक है। यह राजाओंके लिये भी सदापथ्य और अग्निवर्धक है।

"वेंकटेश्वर समाचार"



(१) बालकके मुखके पास किसीको भी खांसने या छींकने नहीं देना चाहिए, अथवा बालकके मुखसे मुख मिलाकर उसका चुंबन नहीं करना चाहिए।

(२) बालकके मुखमें नकली स्तन वृन्त (रबड़के बने हुए स्तनाकार जो बाजारमें बिकते हैं) उसको चुसानेके लिये कभी नहीं देना चाहिए। इससे बालककी शारीरिक शक्ति और बुद्धि कम होजाती है। और उसके शारीरिक गठनमें भी ...र्भा होनेकी संभावना होती है।

(३) बालकको क्या दिन और क्या रात्रिमें नियमित रूपसे दूध पान कराना चाहिये और प्रतिदिन नियमित रूपसे उसे स्नान कराना चाहिए।

(४) जहां तक हो सके बालकको खुले स्थानमें रखना चाहिए। बंद या गन्दे स्थानमें कभी नहीं रखना चाहिए। खुली हवासे बालकके शरीरकी उन्नति होती है किंतु शीतकालमें अत्यंत शीतल और खुली हुई हवासे विशेषरूपसे बालककी रक्षा करनी चाहिए।

(५) बालकके लिये मधुर फलोंका सेवन कराना अत्यंत लाभदायक है। केवल दूधको छोड़कर फलोंकी समान बालकके लिये संसारमें कोई भी चीज हितकारी नहीं है। फलोंके सेवनसे बालकका पेट साफ रहता है, और रुधिर भी शुद्ध होता रहता है।

(६) बालकको कभी भी पर पर कर सुलाना नहीं चाहिये। इससे बालकको उत्तम नींद नहीं आती। बालकको जो नींद अपने आप आती है वही उसके शरीर और मनके लिये उपकारी है।

(७) बालकका मस्तिष्क प्रायः चार वर्षमें पूर्णताको प्राप्त होता है।

(८) बालकके पीनेका दूध कभी खुले हुए पात्रमें नहीं रखना चाहिये क्योंकि इससे बालकके पेटमें पीड़ा होजानेकी संभावना होसकती है।

(९) बालकके सिरपर जटा जूटकी तरह बड़े बड़े बाल नहीं रखने चाहियें क्योंकि उससे बालककी बुद्धि और जीवनी शक्तिका ह्रास होता है।

(१०) बालकको थोड़े २ मधुर पदार्थ भी खानेको देने चाहिए इससे बालकके शरीरकी वृद्धि और पुष्टि सहजमें होती है।

(११) बालकको कभी कोई नशीली चीज नहीं देनी चाहिए। "वैद्य"

॥श्रीवीतरागाय नमः॥

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः ।
संबोधयत्यन्नमिदं प्रवर्त्ततां, दैगम्बरं जैन-समाज-मात्रम् ॥

वर्ष १५ वाँ. ‖ वीर संवत् २४४८. आषाढ़ विक्रम सं० १९७८. ‖ अंक ९वां.

क्या करूँ ?

दो दिनकी जिन्दगीमें बताओ तो क्या करूँ ?
दुनियाके गहन वनमें बताओ तो किस तरह बढूँ ?
मोहमान मानसे पले जहां पेड़ खड़े हैं घने।
सिंहसे भी बढ़के जहां विचरें मनुज अमर बने॥
पग पगपर जहां कांटोंके भरे दुःख हैं खड़े।
विपदाके पहाड़ सिरपै अड़े सब कुछ झेलना पड़े॥
तब निज उद्देश पालनमें बताओ तो क्या करूँ ?
दो दिनकी जिन्दगीमें
बताओ तो क्या करूँ ?
विद्युत वेगसे भी तेज बहे सोता इस कालका।
बहते जीवको नहिं हो पाता बोध जिसकी चालका।
बताओ तो फिर किस किससे व्यवहार करूँ प्रेमका
अथवा कैसे कैसे विषवेल बढ़ाऊँ द्वेषका।
उत्तम ध्येय पानेको सबसे समताभाव धरूँ।
दो दिनकी जिंदगीमें
बताओ तो क्या करूँ।
इस नवीन युगमें विशुद्ध कर्मका उपयोग करूँ।
उसके कर्तव्य मर्मको समझ शुभ योग धरूँ।
कर्म कुठार हाथ ले कर्मक्षेत्रमें आगे बढ़ूँ।
सरस जीवनमें शुभ प्रेमका संचार करूँ।
वीर बनूँ मोक्ष पाऊँ कर्मका प्रहार करूँ।
दो दिनकी जिंदगीमें
सत्यका प्रचार करूँ।
—वीर—

प्रियवर, कर लेहु आत्म विचार।

सुजनता तनि दुर्जनता गहि।
कैसे यह हुए गए अविचार॥
गयहु विवेक पाखंड रहहु।
छई कूरपंड वृति घोर॥१॥
संयम शुभ मृदुता छांडी।
हठ धर्मसे करत रे प्यार॥
नित नए राग करत।
पावत नहिं द्वेष कामसे पार॥२॥
निज शुचिताको अभिमान नहिं।
कटु स्वारथ मय व्यवहार॥
पतित भए कितने रे अनारी।
अबहुं चेति भई न अबार॥३॥
मत बन्धनके बन्धन तो रहु।
छल हु स्वगुण गरिमागार॥
प्रबल उत्साह वेगु संचारहु।
उड़ावहु कर्म दुर्निवार॥४॥
धारहुशील संयम मय उपकार।
काढ़ु निज निज गेह उद्धार॥
बनहु 'वीर' सुखद प्रेममय।
करहु अहिंसा-मेह प्रचार॥५॥
—वीर-बरेली।



ब्यावरके सेठ मोतीलालजी कालालीवाल गत ज्येष्ठ सुदी ९ को ब्यावरमें वेदी प्रतिष्ठा तथा भारत. खंडेलवाल दि. जैन महासभाका दूसरा अधिवेशन अपने खर्चेसे करानेवाले थे और आमंत्रणादि सब तैयारियां होचुकीं थीं परंतु दैववशात वे सब तैयारियां जहांकी तहां रहीं और ८ दिन पहिले सेठ मोतीलालजी बम्बईसे ब्यावर जाते २ सेंदरा स्टेशन पर पेशाबके लिये दूसरी पटरी पर उतरे तब पैर फिसल गया और उसी पटरी पर इकदम ऐंजिन आ गया और आपके शरीरके टुकडे २ किन्हीके वेगसे होते ही आपके प्राण पखेरु उड गये जिसके समाचार खंडेलवाल समाज व सारी समाजमें मालूम होते ही सारे समाजमें इतना बड़ा भारी रंज (शोक) फैल गया था, कि, उसका हम क्या वर्णन करें और इसीलिये तुर्त ही होनेवाली वेदी प्रतिष्ठा व खंडेलवाल महासभा बंद रखी गई और वह प्रतिष्ठा अब होगी या नहीं उसका भी पता नहीं है, परंतु गत मासमें हम बम्बई गये थे तो जो समाचार सेठ मोतीलालजीके संबंधमें हमने सुने उसकी हमें तो स्वप्नमें भी आशा न थी। हमको खबर मिली की सेठ मोतीलालजी (जिनकी आयु करीब १५ वर्षकी होगी) का नुकता बम्बईमें गत मासमें तीन दिन तक हुआ जिसमें एक दिन ब्राह्मण भोजन, दूसरे दिन सारे सराफेका जीमन और तीसरे दिन कुल दि० जैनियोंका जीमन हुआ था उसमें हजारों रुपये खर्च हुए थे और बडे बूढे श्रीमान् पंडित आदि सभीने उसमें भाग लिया था। ऐसे नुकतेको अतीव अनुचित समझनेवाले इसमें नहीं गये थे।

मोतीलालजीका नुकता हुआ!

जीमनमें तरह २ के ऐसे पकवान बनाये गये थे कि इसको मृत्युका जीमन कौन कह सकते हैं: अजान आदमी तो इसको शादीका ही कहे ऐसा ही जीमनका दृश्य था।

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि तुर्तके मरे ऐसे युवान मनुष्यका नुकता होना क्या आवश्यक था? भारत दि० जैन खंडेलवाल महासभाके महामंत्री, स० महामंत्री, उनके पत्र 'खं० जैन हितेच्छु' के सम्पादक आदि तथा और अगुए क्या ऐसे नुकतेसे सहमत हैं? जब सबने इसमें योग दिया और इसका लेश मात्र भी विरोध अपने पत्रमें नहीं किया गया है यहां तककि ऐसे समाचार भी प्रकट नहीं किये हैं तब वे तो इसमें सहमत ही होंगे। 'खंडेलवाल जैन हितेच्छु' जब खंडेलवाल जातिमें ऐक्य व आवश्यक सुधार करनेके लिये निकाला गया है परन्तु हम तो जहांतक देखते हैं तो इस पत्रका रंगढंग ही ऐसा मालूम पडता है कि ऐक्य व सुधारके बदले कुसंप ही विशेष बढ़ता जाता है और वास्तविक सुधारके तरफ इसका लक्ष्य नहीं है। यदि ऐसा न होता तो अवश्य ऐसे नुकतेका विरोध यह पत्र करता व उनके कार्यकर्ता इसमें शामिल नहीं होते। पहिले जिनमन्दिरोंका भोजन

लिखाया गया यह मोतीलालजीकी आत्माको सुख पहुंचानेके लिये ही किया होगा या और कोई कारणसे किया होगा यह तो करनेवाले जानें परंतु यह तो निश्चित बात है कि ब्राह्मणोंको भोजन दिलाकर मृत आत्माको शांति मिलनेके विचारका घोर मिथ्यात्व खंडेलवाल दि. जैन समाजमें मौजूद होते हुए भी ऐसे रिवाजका विरोध न करना ही उसमें अपनी सम्मति बताना है।

कहां तो एक युवककी हृदयविदारक अकस्मात् मृत्यु और कहां उसका तुर्त ही मुकता होना और उसमें शादी जैसे मिष्टान्न उडना और उसमें जाति हितेच्छुकी डींग मारनेवालोंका मौजसे सामिल होना!!! उनका कर्तव्य था कि वे सेठ मोतीलालजीके संबंधियोंको उचित सलाह देकर ऐसे मुकतेको न करने देते और जो हजारों रुपये खर्च किये गये उतने ही या इससे विशेष रुपये कोई स्थायी धार्मिक या सामाजिक कार्यमें लगवाते।

हम तो ऐसे मुकतेका पूर्ण विरोध करते हैं और 'खं० जैन हितेच्छु'के संचालकोंको सलाह देते हैं कि जातिमें जो ऐसी २ कई मिथ्यात्वी अनावश्यक रीतिरिवाजें चल रही हैं उनके बंद करनेका प्रयास ही 'हितेच्छु' द्वारा करके जातिके सच्चे हितेच्छु बनिये। नहीं तो सुधार तो क्या परंतु अनेक कुवारे और सड़े आपकी जातिमें इसीके जरियेसे खड़े हो जायगे।

* * *

गतांकके टाइटल पृष्ठके समाचारसे पाठकोंको मालूम हुआ होगा कि **१९२१ की मनुष्य गणना।** जबकि जैनियोंकी संख्या १९११में १२४८१८२ थी तब १९२१ में हम ११७८१९६ रह गये हैं। अर्थात् १० वर्षमें हम ६९९८६ कम हो गये हैं। इसका कारण यदि हम नहीं ढूंढेंगे तो हम देखते२ १७९ वर्षोंमें समाप्त हो जायगे जैसे कि बौद्ध धर्मकी यहां संख्या नहीं रही है। कितने ही मनुष्योंका धर्मसे विमुख होना भी इसमें कारण है। जब ईसाई ३८॥ लाखके ४७॥ लाख अर्थात् ८७७८७९ बढ़े और हम घटे उसका कारण उनमें धर्म प्रचारकी प्रबल भावना है और ऐसे करोड़ों रुपयेके फंड हैं जिनसे कि वे अपनी संख्या बढ़ाते चले जाते हैं। बाल लग्न, कन्याविक्रय, वृद्धविवाह, अनमेल विवाह, तथा कुंवारे रह जाना ये चार कारण भी हमारी संख्याके ह्रासके खास कारणभूत हैं। हम दि. जैनियोंमें परस्पर रोटी तो जीमते हैं परंतु कन्या व्यवहार नहीं है इससे इस जाति बंधनसे भी कई जातियोंमें कुंवारोंकी भरमार रहती है और उनका जीवन वैसे ही पूर्ण होजाता है। एक जातिकी कन्या दूसरी जातिमें देना धर्मविरुद्ध नहीं है इसलिये हम तो कहते हैं कि पास २के स्थानोंमें परस्पर कन्या व्यवहार होनेकी आवश्यक्ता है तथा अनुचित विवाह बंद होनेका पूर्ण प्रयत्न होना चाहिये। कई भाई कहते हैं कि विधवा विवाह न होना ही हमारी घटीका कारण है परंतु यह ठीक नहीं है। बाल लग्न, वृद्ध विवाह, अनमेल विवाह बंद होनेसे विधवाओंकी संख्या अतीव घट सक्ती है। और हमारी निज दो एक

जातिमें विधवा विवाह (घरेजा) होता है उनकी भी संख्या बड़ी नहीं है इसलिये विधवा विवाह जैसी धर्मनिंद्य व धर्मविरुद्ध रीतिको चालू करनेकी कोशिश न करके जातिमेंसे अनुचित विवाह ही बंद करनेकी पूर्ण कोशिश होनी चाहिये और इस लिये हरएक जाति यदि मिलकर इसकी अमली कार्रवाई न करें तो सबसे सुलभ मार्ग यह है कि अपन खुद तो ऐसे लग्नोंमें सामिल न होवें। अनेक भाई सामिल न होनेसे सबको इसकी घृणा हो जायगी और तब ऐसे लग्न स्वयं बन्द हो जायगे।

* * *

सरस्वती भवनमें वाचनालय।

बम्बईमें सेठ सुखानंदजीकी धर्मशालामें ऐलक पन्नालालजी सरस्वती भवनमें नया कार्य चालू होगया है और उसमें हमारे जैन पत्रोंके मंगानेकी सूचनाएं हो रही हैं परंतु वे जैन पत्र सिर्फ संग्रह करनेके लिये मंगाये जाते हैं या उसका नित्य कुछ उपयोग होनेवाला है। जहां तक हम जानते हैं इसमें वाचनालयका कोई प्रबंध नहीं है और हमारे खयालसे इसमें ऐसे वाचनालयकी आवश्यकता है कि जिसमें कोई भी भाई बैठकर ग्रंथ बांच सके तथा जैन-अखबारोंको भी पढ़ सके। जब सब धर्मके ग्रन्थ मगाये जाकर संग्रह होंगे तो उसके साथ २ एक ऐसा वाचनालय भी होनेकी आवश्यकता है जिसमें सभी धर्मके साथ २ पत्र भी मंगायें जांय और सबको इसका निरीक्षण करनेका मौका भी दिया जाय।

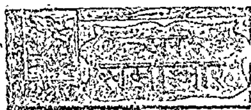
भवनके नियमादि अभी तक प्रगट नहीं हुए हैं वे शीघ्रही प्रकट होनेकी आवश्यकता है। बंबईमें दि० जैनियोंका एक भी वाचनालय नहीं है इस लिये यदि सेठ सुखानंदजी धर्मशालाके नीचेके भागमें एक सार्वजनिक वाचनालय खोल देवें तो दि० जैन समाजको बहुत लाभ होगा और अन्य लोग भी इसका लाभ ले सकेंगे।

* * *

સુરતમાં દેશી ઔષધાલય.

આપણા દિ० જૈન ભાઇયોમાં વડનગર, મુંબાઇ, અમદાવાદ, ઇન્દોર, કાનપુર, ઉજ્જૈન આદિ અનેક સ્થળે મફત દેશી ઔષધાલયો ચાલે છે ને તે સર્વેમાં દેશી ઔષધોજ વપરાય છે ત્યારે અમારા શ્વે० જૈન ભાઇયોમાં કેટલેક જુજ સ્થળે જે મફત-ઔષધાલયો ચાલે છે તેમાં દરેકમાં વિલાયતી અશુદ્ધ અને ધર્મને ભ્રષ્ટ કરનાર દવાજ વપરાતી અમારી જાણમાં છે અને એ માટે અમોને વારંવાર એમજ થતું કે અહિંસા ધર્મનો દાવો કરનાર આ ભાઇઓ લગભગ દારૂ માંસ મિશ્રિત આ ભ્રષ્ટ દવાઓનું દાન કેમ કરતા હશે? પણ જણાવતાં આનંદ થાય છે કે સુરતના એક સખી શ્રીમંત ઝવેરી શેઠ ગુલાભાઇ નવલચંદે સુરતમાં એક મફત, દેશી ઔષધાલયની સ્થાપના અષાડ સુદ ૧ ને દિનથી કરી છે. એ ઔષધાલય ખોલવા દબદબા ભરેલો મેલાવડો અત્રેના અસહકારી નેતા ડૉ० ઘીવાલાના હાથે થયો હતો, જેમાં અમોએ પણ ભાગ લીધો હતો. પ્રમુખ વિલાયતી દવા આપનાર ડોક્ટર હોવા છતાં તેમણે આર્ય ચિકિત્સા અને દેશી દવાની ઘણી પ્રશંસા કરી હતી તેમજ અમે કેટલુંક વિવેચન કરી જણાવ્યું હતું કે ગરીબ તવંગર સર્વેએ આ ઔષધાલયનો લાભ લેવો જોઇએ. તવંગર એમાંની ધર્માદા પેટીમાં મદદ પણ આપી શકશે. આ અસહકારના જમાનામાં હજુપણ શું વિલાયતી દવા અને દવાખાનાઓનો ત્યાગ કરવાની જરૂર નથી? વિલાયતી દવામાં લાખો તો શું કરોડો રૂપીઆ પરદેશ મક-

રાય જાય છે ને ધર્મભ્રષ્ટ થવાય છે તથા દેશની ઉત્તમોત્તમ આર્ય ચિકિત્સા પાયમાલ થઇ ગઇ છે. એ તરફ શું ધ્યાન આપવાની જરૂર નથી ! હવે તો દરેકે વિલાયતી દવા પ્રાણ જતાં પણ ન લેવાનો દૃઢ સંકલ્પ કરવો જોઇએ. અમને તો એવી પ્રતિજ્ઞા કેટલાંક વર્ષોથી છે અને એજ મુજબ સર્વે એ સંકલ્પ કરવો જોઇએ તોજ દેશી ઔષધાલયોની ઉન્નતિ થઇ લગભગ માંસ દારૂ મિશ્રિત ધન ને ધર્મ ભ્રષ્ટ કરનારી વિલાયતી દવાનું હિંદુસ્તાનમાંથી નિકંદન થશે.



परीक्षा होगी—दि० जैन माळवा प्रांतिक सभाकी ओरसे भादोंवदी ८ ता० १६ अगस्तसे परीक्षा प्रारम्भ होगी। परीक्षा देनेवाले श्रावण वदी अमावस तक प्रवेश फार्म भेज देवें। फार्म यहांसे मंगा लेवें।

मंत्री, परीक्षालय—जंवरीबाग इन्दौर।

२००० वर्षकी प्रतिमा मिली—केज (निजाम स्टेट) में एक मुसलमान मकान बनानेके लिये नीव खोद रहा था कि अचानक श्री आदिनाथजीकी एक विशाल प्रतिमा जमीनमेंसे निकल पड़ी जिसपर विक्रम सं० फक्त १९ है व अर्द्ध पद्मासन ऊंचाई तीन फ़ुट, सिरपर सुंदर तीन छत्रोंका आकार व भामंडल भी है। दोनों तरफ पार्श्वनाथजीकी २ छोटी २ प्रतिमायें हैं और नीचे दो साधारण प्रतिमाएं हैं। वृषभका चिन्ह है तथा छातीमें श्रीवत्स लक्षण खुदा हुआ है। प्रतिमा अति मनोज्ञ है।

इस गांवमें जैनियोंके ५-६ घर हैं उन्होंने यह प्रतिमा मांगी परन्तु हिंदू मुसलमान मारनेको तैयार हुए और प्रतिमाको फोडनेको भी तैयार थे इतनेमें राज कर्मचारी शंकरराव व बाबासाहब ब्राह्मण आये उन्होंने कहा कि मेरे जीतेजी तो हम इस प्रतिमाको फोडने नहीं देंगे। हां, यदि आप कुछ मूल्य लेना चाहते हो तो दिलवा दूं। फिर मुसलमानने १००) मांगे और अंतमें बातचीत होतेर १००) देकर भाउ बाबाजी देवघरे खेतवाळ जैनने प्रतिमा ली और अषाढ वदी ९ ता० १६-९-२२को गाडीमें विराजमान करके कुंथलगिरि पर लाये और वदी ८ ता० १७ को ब्र० पार्श्वसागरजी, सेठ रावजी सखाराम, ब्र० आश्रमके छात्रगण व पंच लोग बड़े समारोहसे प्रतिमाजीको पहाड़पर ले गये और देशभूषण कुलभूषण महाराजके मंदिरमें विराजमान करके १०८ जलसे भरे कलशोंसे अभिषेक किया। हरएकको कुंथलगिरीकी यात्राको जाकर इस प्रतिमाका दर्शन करना चाहिये।

नांदगांवमें रथयात्रा—नांदगांवमें अषाढ सुदी ९को खंडेलवाल पंचमहासभा, सुदी १०को श्री ऐलक पन्नालालजीका केशलोंच व सुदी ११को जौटली रथयात्रा होगी। स्वामीजीका चातुर्मास भी यहां नांदगांवमें ही होगा।

नेमागिरी पहाड़ (जिंतुर)के मंदिरोंका जीर्णोद्धार होना अत्यावश्यक है। इसके लिये ब्र० महावीरप्रसादजी अभी बम्बई गये थे तो ५१) सेठ हीराचंद गुमानजी २१) सेठ चुन्नीलाल हेमचंद तथा और भी सहायता मिली तथा

मितुरमें श्री० सुंदरबाईने १५००) देकर अपने पिताके स्मरणार्थ एक बावडी बनवा दी है। यहां विशेष सहायताकी आवश्यक्ता है।

कम्पिल क्षेत्र–में अतीव अप्रबंध है। श्री जीकी पूजन प्रक्षाल तक नहीं होती ऐसा मालूम हुआ है इसलिये तीर्थक्षेत्र कमेटीको जांच करके इसका प्रबन्ध करवाना चाहिये।

उदासीनाश्रम–इन्दौरसे कई उदासीन उपदेशार्थ घूमते हैं। वे कोई भी खर्चा नहीं मांगते। दूसरे कई २ आश्रमके नामसे घूमकर पैसे मांगते हैं उनके धोकेसे समाज सचेत रहे।

अभी दो चार उदासीन उपदेश करनेलायक और तैयार हुए हैं परन्तु उनके पर्यटनके खर्चकी गुंजायश नहीं होनेसे आश्रममें एक उपदेशक विभाग खोला है। जो कोई इसमें सहायता भेजेंगे उससे उदासीनोंके पर्यटनमें खर्च होगा। पन्नालाल गोधा, उदासीनाश्रम तुकोगंज-इन्दौर।

बम्बईमें सरस्वती भवन–गत श्रुतपंचमीको बम्बईमें सेठ सुखानंदजीकी धर्मशालामें ऐलक पन्नालालजीके हस्तसे ऐलक पन्नालाल सरस्वती भवन खुल गया। झालरापाटनमें इसके लिये त्यागीजीने २०० हस्तलिखित ग्रन्थ इकट्ठे किये हैं व ७००००) का चंदा भी किया है जिनमें ५८०००) ब्याज पर जमा है। ६२०००) लेना बाकी है और ७०००) मकानमें लगा है। ग्रन्थसूची भी छप गई है। अभी २९० ग्रन्थ वहांसे बम्बई लाये गये हैं। इस भवनमें सभी संप्रदायके ग्रंथका संग्रह होनेवाला है तथा ग्राम २ पंडित भी शास्त्रसभाके लिये घूमेंगा। १००) मासिककी सहायता तो सेठ सुखानंदजीने दी है व सौ २ ६० सेठ चुन्नीलाल हेमचंदजीकी बहू और पुत्रीने दिये हैं। व्यवस्थाके लिये २३ महाशयोंकी कमेटी बनी है जिसके सभापति व कोषाध्यक्ष सेठ सुखानंदजी व मंत्री ठाकरसीदास जैन नियत हुए हैं। दफ्तरका कार्य पं० पन्नालालजी सोनी करते हैं।

ऋ० ब्रह्मचर्याश्रम-(जयपुर)को श्रुतपंचमी पर ब्र० ज्ञानानंदजीके प्रयाससे बम्बईमें १०२१) की सहायता मिली थी।

मृत्यु और दान–मोदी रामतुलाल सुनवाए (महरौनी)ने अपनी धर्मपत्नीके मृत्यु समय १००८९)का दान किया है जिसमें ४०००) बड़े बाबा, कुंडलपुर। २०००) पपौरा क्षेत्र २३००) पपोरा पाठशाला तथा तीर्थो गरीबों व मंदिरोंको दिया है। इसमें अपनी संस्थाओंको कुछ भी दान नहीं दिया गया है। ऐसे मौकेपर अपनी संस्थाओं- को तो कुछभी ज्ञान दान अवश्य देना चाहिये।

जैनबिद्री–में अब इंतजाम अच्छा है। पूजा प्रतिदिन होती है। दोनों पहाड़पर पुजारी हरवख्त रहता है। जीर्णोद्धारका काम चालू है। भ० चारुकीर्तिकी जीर्णोद्धारके लिये कोशिश प्रशंसनीय है। इसमें सहायताकी आवश्यक्ता है।

अयोध्याजी–तीर्थकी व्यवस्था ठीक हुई है। तीर्थक्षेत्र कमेटीकी ओरसे मूलचंद परवार मुनीम भेजे गये हैं। तथा तीन मासकी सामग्री पूजाके लिये ७०) ला० देवीसहायजी फिरोजपुरने भेज दिये हैं।

हुमच पद्मावती—नामका प्राचीन तीर्थ मैसुर प्रांतमें अतीव प्रसिद्ध है। पद्मावतीकी यहां खास मान्यता है। जिनदत्त सेठकी यह राजधानी है। यहां बड़े २ मंदिर व बड़े २ प्रतिबिंब हैं। चांदी, सुवर्ण, मोती, माणक, रत्न, गरुडमणी, मुंगा, नीलम आदिकी प्रतिमाएं हैं। पहाड़पर प्राचीन मंदिर व गोमटस्वामीकी मूर्ति ९ गज खड्गासन हैं। आसपास भी प्राचीन खंडहर देखने योग्य हैं। पद्मावतीका मंदिर तो अच्छा है। जिनको पद्मावतीको न मानना हो वे ऐसा भी कर सकते हैं।

ब्र० गेबीलाल।

सावधान—मुनि नामधारी धूर्त हर्षकीर्ति (दाहोदवाले)की धूर्त भेषी चेली चतुर्मती अभी मींडर (उदेपुर) गई थी। वहां मंडल विधान कराया था व अपना केश लुंचन किया था ऐसे समाचार मिले हैं। कुछ भी हो परन्तु वह पूरी धूर्त है। विश्वास करने योग्य नहीं और इनसे सावधान रहना चाहिये।

शोकजनक मृत्यु व दान—जैन सुमति मित्रमंडल रावलपिंडीके सभापति ला० खानचंदजीका स्वर्गवास ता० २५-६-२९ को हो गया। आप बड़े धर्मात्मा और उत्साही थे। आपके उद्योगसे कई संस्थाएं रावलपिंडीमें चल रही हैं। अंत समय आपने ७७१)का दान किया है जिनमें २४१) सुमति मित्रमंडल व शेष अपनी संस्थाओंको तथा अन्य खातोंको दिया है।

સોજીત્રામાં શ્રાવિકાશ્રમને મદદ.

વૈશાખ માસમાં સોજીત્રાના લગનગાળામાં લગ્નોની ખુશાલીમાં મુંબાઇના ૨-૩ શ્રાવિકાશ્રમને નીચે મુજબ મદદ મળી હતી. આ પ્રસંગે બ્હેન મગનબ્હેન ખાસ પધાર્યાં હતા અને ઉપદેશ આપ્યો હતો,

૨૫) શા૦ નરશીદાસ ગંગાદાસ ધર્મજ
૧૧) પરી મગનભાઇ પ્રેમાનંદદાસ બોરસદવાળા
૧૧) શા૦ શંકરલાલ તાપીદાસ આમોદ
૧૧) શા૦ ત્રીભોવનદાસ રણછોડદાસ કરમસદ
૧૧) શા૦ પ્રભુદાસ શીવલાલ દાવોલ
૧૦) શા૦ પરશોતમ હીમચંદ સોજીત્રા
૭) શા૦ જગજીવનદાસ રૂગનાથદાસ મોગરી
૭) શા૦ રાયચંદ ફુલચંદ સોજીત્રા
૭) શા૦ પીતાંબરદાસ જગજીવનદાસ સોજીત્રા
૭) શા૦ બાપુરદાસ વ્રજલાલ પીપળાવ
૫) શા૦ નાથાશેઠ જવેરદાસ ભોજ
૫) શા૦ કાળીદાસ હરગોવનદાસ આમોદ
૫) શા૦ નરોતમદાસ ગંગાદાસ વેરથર
૫) શા૦ ત્રીભોવનદાસ ઇશ્વરદાસ સોજીત્રા
૫) શા૦ પરસુદાસ ઇશ્વરદાસ વડોદરા
૫) શા૦ પાનાચંદ મનોરદાસ વેડચ
૫) શા૦ નાથાલાલ મોતીલાલ કરમસદ
૩) શા૦ છોટાલાલ દલપતભાઇ આમોદ
૪) શા૦ રાયચંદ લક્ષ્મીચંદ પાડુ
૩) શા૦ પરશોતમ દામોદરદાસ વેડચ
૩) શા૦ બાપુજીભાઇ મથુરભાઇ મહેલાવ
૨) શા૦ જેસંગભાઇ હીમચંદ પરીએજ
૨) શા૦ મંગળદાસ કેવળદાસ દાવોલ
૨) શા૦ નાથાભાઇ ઇશ્વરદાસ બાદરા
૧) શા૦ મુલજીભાઇ ઇશ્વરદાસ વલાસણ
૧) શા૦ ગુલાબચંદ મુળજી બોરસદ
૧) શા૦ ચુનીલાલ મુલચંદ સોજીત્રા
૨) શા૦ રાયચંદ દામોદરદાસ દાવોલ
૧૬૬) કુલ

ईडरना शास्त्र भंडारनी शोचनीय दशा ।

પ્રિય પાઠગણ,

(૧) વારંવાર " દિગંબર જૈન " પત્રોમાં ખાસ કરીને ઇડરના જૈન શાસ્ત્ર ભંડારના જીર્ણોદ્ધાર માટે ઘણાજ અસરકારક અને આંખમાં પાણી આવી જાય તેવા લેખો આવવાથી હમારી લાગણી ઉશ્કેરાણી. હમારી હયાતી છતાં બહારગામના ભાઇઓ આવીને શું હમારા પ્રાચીન ભંડારનો જીર્ણોદ્ધાર કરશે ? શું હમારા ઇડરના પંચમાં એટલી પણ શક્તિ નથી કે શાસ્ત્રનો જીર્ણોદ્ધાર ન કરાવી શકે.

(૨) આવા વિચારથી હમો ઇડરના દિગંબરી કોમના આગેવાનો મેતા નાનચંદ જાદવજી, દાવડા મોતીચંદ પદમશી ગાંધી, પુનમચંદ શોકલચંદ તથા મુંબાઇના શેઠ લલ્લુભાઇ લક્ષ્મીચંદ ચૌકસી વીગેરેને લઇને ઇડરના શાસ્ત્ર ભંડારના વહીવટ કર્તા **ગાંધી મોતીચંદ શાંકલચંદની** દુકાને ગયા, થોડી ઘણી વાતચીત ચાલ્યા પછી ઉપરટે ગાંધી મોતીચંદ શાંકલચંદ વિના દરેક ભાઇઓએ ભંડાર ખોલી આપવાનું તથા શાસ્ત્ર જીર્ણોદ્ધાર કરવાને અનુમોદન આપ્યું. આટલું હોવા છતાં મોતીચંદ શાંકલચંદે શાસ્ત્ર જીર્ણોદ્ધાર કરવાની ચોકખી નાપાડી, તથા ભંડારની કુંચી પણ આપી નહીં. કુંચી ન આપવાથી પંચે એવું જણાવ્યું કે આરતી કાલે શ્રી મંદિરજીમાં પંચની સમક્ષ ભંડારનું તાળું ખોલી આપીશું પરંતુ બીજે દીવસે હમો તથા પુજારી બે ત્રણ વખત ગયાં પણ કોઇ પણ ભેગું થયું નહિ.

(૩) હમો પંચની સાથે ખાસ કરીને ગાંધી મોતીચંદ શાંકલચંદને વીનવીએ છિએ કે હવે મરણ પછી પણ તમારાથી શાસ્ત્રોનો જીર્ણોદ્ધાર થાય તો તમારા આત્માનું કલ્યાણ થશે. આવા શ્રેયસ્ કાર્યમાં આડા ન આવતાં તથા પાપના ભાગીદાર ન થતાં આ કામ તન મન અને ધનથી જો તમો કરશો તો પુણ્યના ભાગી થશો. પ્રાણી માત્રને સાથે કંઇ પણ આવવાનું નથી. ફક્ત " શુભાશુભ " કર્મોજ આવવાનાં છે. હમોને એમ લાગે છે કે જો તમો આ કામ એકલા માથે લઇને કરો તો ધારો એટલું કરી શકે એમ છે.

(૪) આ કામ માટે વળી ઘેર બેઠા ગંગા આવેલી છે. કારણકે જો તમો કોઇ બીજાની પાસે જીર્ણોદ્ધાર કરાવશો તો વગર પૈસે તે કરશે નહિ પરંતુ આતો "વગર પઇસે કામ થાય તેમ છે"

(૫) આ કામમાં આળસ કરવાથી એક ઘડી જાય છે તેમાં હજારો બલ્કે લાખો રૂપીયાનું નુકશાન થાય છે કારણકે હજારો રૂપીયા ખર્ચ કરવા છતાં પણ નષ્ટ થયેલા અમુલ્ય રત્નો મળવાં દુર્લભ છે. ભંડારમાં નાંખી મુકવાથી કંઇ લાભ નથી, પરંતુ નુકશાનજ છે. જો તમો એનો જીર્ણોદ્ધાર કરશો તો તેથી ભવિષ્યમાં તમારાજ સંતાનો તેનો લાભ લેશે.

(૬) આ કામ માટે શ્રીમાન દાનવીર શેઠ સાહેબ લાલા દેવીસહાયજી તથા લાલા જમ્બુપ્રસાદજી સહારનપુરવાલાએ કાનપુર મહાસભામાં શાસ્ત્ર ઉદ્ધારમાં જે ખર્ચ થાય તે આપવાને વચન આપેલું છે તે માટે તે મહાનુભાવોનો ઉપકાર માનવા જેવો છે. તા૦ ૨૮–૯–૨૨

લી૦ સરસ્વતિ સેવકો.

લલ્લુભાઈ લખમીચંદ ચોકસી
શા૦ નાથાલાલ ફુલચંદ
દોશી કસ્તુરચંદ સુરચંદ
કોઠારી મણીલાલ છગનલાલ
દોશી ચુનીલાલ નાનચંદ

षट्द्रव्यकी आवश्यक्ता और सिद्धि।

(जैन साहित्य सभा लखनऊका लेख नं० ३)

लेखक-पं० बुद्धिलाल श्रावक जैन पाठशाला लाटंरॅ (मारवाड)

सवैया ८ सगण-

चित चिन्तहु शुद्ध चिदातमकों, महिमा जिनकी नहिं जाय कही।
नहिं गाय सके जिनराय अहो, गणराय मती चकराय रही॥
निरबाध अगाध समाधि मई, सुख सायरता सरसाय सही।
तिहुँ काल अनन्त समै वरती, "षट्द्रव्य" दशा दरशाय रही॥ श्रावक.

महानुभावो ! जब कि देशमें चहुंओर राष्ट्रीय चरचा दीर्घ ध्वनिसे गूंज रही है तब यह षट्द्रव्यकी दिव्य कथा आप सज्जनोंको रुचिकर होगी इसमें सन्देह है। परन्तु यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि षट्द्रव्यका ज्ञान आत्म बलकी प्राप्ति और वृद्धिमें रामबाण औषधि है, और राष्ट्रकी उन्नति आत्मबल पर ही निर्भर है इस लिये कहना होगा कि छह द्रव्योंका कथन देश हितके हेतु अमोघ मन्त्र है और आधुनिक आन्दोलनके सर्वथा अनुकूल है।

हमारे पूर्वज छह द्रव्योंके ज्ञानसे आत्मबलमें बढे हुए थे इसी कारण भारतवर्षमें सदा अहिंसा धर्मका डंका बजा करता था। भारत वसुधराके शृङ्गार श्री पूज्य महात्मा गांधीजीके श्रीमुखसे सदा यही घोषणा हुआ करती है कि देशको समृद्धिशाली करनेके लिये अहिंसा और आत्मबलमें उन्नति करो। महात्माजी स्वयं षट्द्रव्यके नामाङ्कित ज्ञाता हैं और श्रीमान्‌ने देशहितमें जो आशातीत सफलता प्राप्त की है उसके अनेक कारणोंमें षट्द्रव्यका ज्ञान भी एक प्रधान कारण है।

साराश यह कि, छह द्रव्योंका ज्ञान, अहिंसा धर्म और आत्मबलकी वृद्धिका अद्वितीय साधन है और उससे लौकिक अलौकिक स्वाधीनताकी सिद्धि होसकी है। जब कि इससे स्वार्थ परमार्थ दोनों सधते हैं तो ऐसे उभय लोकोपयोगी विषयसे हमें वंचित नहीं रहना चाहिये। कहा भी है-

दोहा-स्वारथ परमारथ सकल, सुलभ एक ही ओर।
द्वार दूसरे दीनता, उचित न तुलसी तोर॥१॥

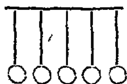
जिसकी कथा करते हुए सर्वार्थसिद्धिके देवतागण असंख्यकाल समाप्त कर देते हैं जिनका मर्म गणधर महर्षि भी न समझ सके और पूर्ण ज्ञानी परमात्मा भी जिनके अनंत

धर्म जानते हुए भी संपूर्णतया न कह सके उन अनंत गुणात्मक द्रव्योंका कथन करनेके हेतु मैं तुच्छमति होकर भी लेखनी ग्रहण करता हूं. यह देख विद्वान् लोग मुझे पागल कहेंगे और वास्तवमें ही मेरा प्रयत्न उस बालकके समान है जो दोनों हाथ फैला कर समुद्रका माप बतलाता है कि इतना बड़ा है । पर हां ! जो कुछ कहूंगा सो गुरूगम और अनुभवसे कहूंगा । कहीं चूकूं तो छल नहीं समझना और न गुरूका दोष समझना ।

(१) एक कटोरेमें दही रखिये । उसे नेत्र इन्द्रियसे देखिये तो उसमें रंग है, नाकसे सुंघिये तो उसमें गंध प्रतीत होती है, जीभसे चखिये तो उसमें स्वाद जाना जाता है, दहीको हाथमें लीजिये तो उसमें चिकनाहट नरमता और बज़नका बोध होता है सारांश ! दही इन्द्रिय गोचर है । अब कुछ दही कटोरेमें ही रक्खो और कुछ दही कटोरेमेंसे हाथमें लेओ तो मालूम हो जावेगा कि दहीके खंड होसक्ते हैं । अब हाथमेंका दही कटोरेमें ही छोड़ देओ तो वह फिर मिल जावेगा । इससे यह भी प्रतीत होता है कि दहीमें इन्द्रिय गोचरताके सिवाय मिलने विछुरनेका गुण है इस लिये " **पुरयंति गलयंति पुद्गलाः** " की नीतिसे दहीको पुदगल कहना चाहिये । दहीके समान अन्य वस्तुएं भी जो इंद्रिय गोचर हैं वे सब पुदगल हैं जैसे छड़ी, घड़ी, धोती टोपी, कागज कलम, ताला, तलवार, टका, पैसा आदि ।

पुदगलोंके ये रूप, रस, गंध, स्पर्श, गुण सदा स्थिर नहीं रहते, सदा बदलते रहते हैं । अर्थात वर्णसे वर्णान्तर, रससे रसान्तर, गंधसे गंधान्तर और स्पर्शसे स्पर्शान्तर हुआ करते हैं । जैसे जिस आमके फलको हमने कल हरा देखा था वह आम मिष्ट पीला दिखता है और थोड़े कालके बाद लाल दिखने लगता है । जिस फलको हमने कल खट्टा देखा था वह आम मिष्ट देखते हैं और थोडी देरमें विरस हो जाता है । इन गुणोंके गुणांश भी सदा बदलते रहते हैं जैसे जिस ककडीको हमने कल बहुत हरी देखा था आज उसमें कम हरियाली देखते हैं और कुछ कालमें वह पीली दिखने लगती है । ये गुणांश कभी कभी इतने हीन प्रगट रहते हैं कि इन्द्रिय गोचर भी नहीं होते जैसे कि अग्निकी गंध, वायुका रंग इत्यादि । परन्तु यह स्पष्ट है कि वर्ण ५ रस ५ गंध २ स्पर्श ८ इन २० मेंसे जहां १ भी धर्म पाया जावे उसे पुदगल जानो । पुदगलोंकी हालतें सदा बदलती रहती हैं जैसे पानीसे भाप, कुहरा, ओस बादल होते रहते हैं । अथवा अन्न, पानी, हवासे शरीर की चमड़ा खून मांस वीर्य आदि हुआ करते हैं । जब ये पुदगल आपसमें टकराते हैं तो वायु मंडलकी हवाको धक्का लगता है फिर वह हवा एक दूसरे वायु कणोंको धक्का देती है यहां तक कि कानकी झिल्ली तक धक्का पहुंचता है और आवाज सुनाई देती है ।

इस चित्रमें देखो एक लकड़ीमें सूतसे बंधी हुई गोलियां लटक रही



हैं अब एक गोलीको धक्का देओ तो वह दूसरेको और दूसरी तीसरी आदिको धक्का देगी ऐसा ही शब्दमें होता है। शब्द भींत आदिसे रुक जाता है और कभी उलटकर पुनः सुनाई देता है उसे प्रतिध्वनि कहते है। इससे स्पष्ट है कि शब्द मूर्तीक है और मूर्तीक पुदगलोंसे उत्पन्न है। परन्तु शब्दको पुदगलका गुण नहीं कह सकते क्योंकि वह पुद्गलमें सदा नहीं रहता और गुण वही होता है जो पदार्थमें सदा रहता है अत. शब्द पुद्गल की पर्याय याने हालत है। बहुवसे मतान्तर वादी शब्दको आकाशका गुण बतलाते हैं उन्हें हम सम्बोधन करते है कि अरूपी आकाशसे मूर्तीक शब्द नहीं निरपन्न हो सक्ता अगर शब्द आकाशका गुण होता तो लोक अलोक सदा एकसा शब्दायमान रहता और यह घरेकी आवाज, यह बांसुरीकी तान और यह बीनकी ध्वनि है ऐसा बोध नहीं होता। इतने थोड़ेही वक्तव्यसे आप लोग समझ गये होंगे कि जो कुछ इन्द्रिय गोचर हैं वह पुद्गल है इस लिये अँधेरा, धूप, छाया, प्रकाश, शरीर, वचन, जल, वायु, अग्नि, पहाड, स्वास निस्वास, आदि सब पुद्गल है। बिजली, टेलीफोन, रेल, तार आदि सब पुद्गलके चमत्कार है। कई मतान्तर वादी कहते हैं कि जो कुछ हम देखते सुंघते सुनते है यह सब मिथ्या अर्थात् असत् है। इसका निराकरण हम केवल इतनेमें ही करके आगे चलेंगे कि जो वे यह कहते हैं "कि जगत मिथ्या है भ्रांति है" सो उनका ऐसा कहना भी भ्रांति हुआ अत. उनका मिथ्या भ्रांति रूप वचन भी प्रमाण नहीं है।

अब एक चाक मिट्टीका टुकड़ा लेओ उसमेंका एक खसखससे भी छोटा टुकडा स्लेट पर रखो। उस छोटेसे कणके चाकूसे जितने बन सकें खंड करो। उन खंडोंमेंसे सबसे छोटे खंडके फिर खंड करो, यदि साधारण प्रकाशसे काम नहीं चले तो धूपमेंसे खंड करो और सबसे छोटे खंडके पुनः खंड करो, यदि साधारण आखोंकी दृष्टि काम न देवे तो चश्मेसे काम लेओ और खंड करो। फिर चश्मा काम न देवे तो माइक्रासकोपमे देखके खंड करो। जब माइक्रासकोपसे भी निरुपाय होते देखो तो बहुत बढिया सूक्ष्म दर्शक यंत्रसे देखकर खंड करो। और जब सूक्ष्मदर्शक यंत्र भी व्यर्थ होने लगे तो ज्ञानसे खंड विचारो। बस सबसे छोटेमें छोटे पुद्गल अणुको जिसका फिर खंड नहीं हो सके उसे बुद्धिसे विचारो उसीका नाम परमाणु है। ऐसे परमाणु भी स्पर्श, रस, गंध, वर्ण वंत रहते हैं क्योंकि किसी वस्तुके गुण कभी नष्ट नहीं हो सक्ते। जब कि इन परमाणुओंमें स्निग्धता रूक्षता सदा स्वाभाविक रहती है वो वे एक दूसरे मिला करते हैं और दो तीन चार संख्यात असंख्यात अनतकी संख्यामें भी मिल जाते हैं ऐसी बन्ध रूप दशामें उन्हें स्कंध कहते है। अब आप सोच सक्ते हैं कि परमाणु ही असली पुद्गल है जिसकी

ईंट, पत्थर, कागज, कलम आदि डालते हैं। पुद्गल वस्तुका अस्तित्व वर्तमानमें तो स्पष्ट ही सिद्ध है और पूर्वकालमें उसका अस्तित्व हमारी स्मृति सिद्ध करती है कि कल परसों और उसके पूर्वकालमें हमने पुद्गलोंको देखा सुना अनुभवन किया था। इतिहास और पुरानी कथाओंसे अनंत भूतकालके पुद्गलोंका अस्तित्व प्रतीत होता है। अब आगामी कालमें भी पुद्गल पदार्थोंका अस्तित्व रहेगा इसमें कोई सन्देह कर सक्ते हैं अतः प्रधानतया इसी पर विचार करना है। पदार्थोंमें गुण होते हैं और गुण वही हैं जो पदार्थोंसे कभी अलहदा नहीं होते सदा सहभावी रहते हैं। धनके कारण मनुष्य धनवान् कहलाता है, ऊंटके पास रहनेसे ऊटवान और गाड़ीका स्वामी होनेसे गाड़ीवान कहलाता है, ऐसा गुणों और वस्तुओं अर्थात गुण गुणीका संयोगी सम्बन्ध नहीं है क्योंकि धनवान जुदी वस्तु हैं और धन जुदी वस्तु है। अतः अग्निका उष्णताके साथ, जीवका ज्ञानके साथ जैसा सम्बन्ध है वैसा ही गुण गुणीका सम्बन्ध है, कभी ऐसा नहीं हो सक्ता कि अग्निकी उष्णता तो आप रक्खें और अग्निको मै अपने पास रक्खूं। इसी प्रकार यह भी नहीं हो सक्ता कि आपका ज्ञान मेरी थैलीमें रक्खा रहे और आप घर पर बैठे रहें। वस! इसी प्रकार स्पर्श रस आदि गुणोंका पुद्गलसे सम्बन्ध है-श्री स्वामी कुंदकुन्द मुनिंद्रने कहा है कि-

दव्वेण विणा ण गुणाः गुणेहि दव्वं विणा ण संभवदि।
अव्वदिरित्तो भावो दव्व गुणाणं हवदि तम्हा॥

भावार्थ—द्रव्यके विना गुण नहीं होते और गुणोंके विना द्रव्य नहीं होते इस लिये द्रव्य और गुणोंका अव्यतिरिक्त भाव है। कहनेका अभिप्राय यह है कि पुद्गलके स्पर्श रस आदि गुण कभी नष्ट नहीं हो सक्ते इससे उसका आगामी कालमें कायम रहना स्पष्ट तया सिद्ध होता है। सारांश! पुद्गल थे, हैं और रहेंगे। इसी कारण पुद्गल पदार्थ सत् है, सतका कभी विनाश नहीं होता और कभी असतका उत्पाद नहीं होता यही वस्तुका वस्तुत्व है। सूत्रजीमें कहा है कि सत–उत्पाद, व्यय, ध्रुव युक्त होता है अर्थात वस्तुकी हालतें बदलती रहती हैं पर वस्तु कायम रहती है।

जिस प्रकार पुद्गलमें स्पर्शादि गुण हैं वैसे ही थाली लोटा आदि पर्यायें भी हैं। भेद इतना है कि गुण तो साथ रहते हैं अर्थात सहभावी होते हैं और पर्यायें क्रमशः होती हैं अर्थात् क्रमभावी होती हैं। भाव यह कि एक द्रव्यमें एक कालमें एक ही पर्याय होती है पश्चात् दूसरी, पश्चात् दूसरी, पश्चात दूसरी, पश्चात् दूसरी, बस! यही उसका उत्पाद व्यय है अर्थात एक पर्यायका लय हो जाना और दूसरीका प्रगट होना, फिर उसका भी उसीमें लय हो जाना और तीसरीका प्रगट होना।

अपने हाथमें आटेकी लोई लीजिये वह गेंदके समान गोल है उसे दबा कर बाटी बनाइये अब बाटी पर्याय प्रगट होगई और लोई पर्याय कहा गई ? उसीमें समा गई। अब बाटीको और बढाइये तो रोटी पर्याय प्रगट होगई और बाटी पर्याय उसीमें समा गई। पर लोई, बाटी, रोटी आदि सब हालतोंमें आटा वस्तु मौजूद है। इस थोड़ेसे ही कथनसे आप समझ सके हैं कि पुद्गल पदार्थोंमें गुण है और पर्याय है इस लिये "गुणपर्य्ययवद्द्रव्यं" की नीतिसे पुदगलोंको द्रव्य कहना चाहिये। और द्रव्य, वस्तु, पदार्थ, तत्व आदि प्राय एकार्थवाची है। समयसारजीमें कहा भी है—

दोहा—**भाव पदारथ समय धन, तत्व वित्त वसु दर्व।**
द्रवनि अर्थ इत्यादि बहु, नाम वस्तुके सर्व॥

यह बात भी प्रत्यक्ष सिद्ध है कि पुदगल परमाणु अनतानत है जो नाना अवस्थाओको प्राप्त हुआ करते हैं और कभी भी सर्वथा नष्ट नहीं होते। यदि पुदगल पदार्थ न होता तो न पानी होता, न हवा होती, न सभा होती न, सभा मडप होता, न शरीरधारी सभापति होते, न सभासद होते और न व्याख्यान होते। साराश ! जो कुछ हम देखते सुनते हैं कुछ भी न होता। स्मरण रहे कि पुदगल अपने स्वरूपसे ज्ञान हीन और वे जान है इस लिये वह अजीव है। साइसके विद्वानोंने जो अब तक ६१। ६७ तत्व खोजे हे और भी खोज रहे है वे सब पुद्गल विज्ञानी वा जड विज्ञानी है। परन्तु हम अपने पाठकोंको आत्म विज्ञानकी ओर झुकाया चाहते हैं।

(२) आप अपने एक हाथसे, दूसरे हाथमें चीमटी लीजिये और कुछ जादा दबाइये। तो, स्पर्श, रस, गंध, वर्णवंत शरीरके सिवाय एक और विलक्षण पदार्थ ज्ञात होगा जिसे यह बोध होता है कि हमें दुःख हुआ, हमें दबाया है, हमने दबाया है, हम पकड़े गये, हमने जाना, हमने देखा। यह जानने वाला शरीरके लक्षणोंसे भिन्न लक्षणोंवाला है बस ! यही ज्ञायक लक्षण आत्मा है और वास्तवमें यही तुम हो, तुम शरीर नहीं हो आत्मा हो जीव हो। जीवके रहते जड़ शरीरको लोग जीवित कहते हे। मुख्यतया हमें जीव पदार्थको ही समझना और समझाना है क्योंकि अहिंसा और आत्म बलका सम्बंध जीव पदार्थ ही से है। यह आत्मा शरीरसे इतना तन्मय रहता है कि शरीरको पकडो तो आत्मा भी पकडा जाता है शरीरको पीटो तो आत्मा पिट जाता है। क्या झाड क्या चिंटी क्या हाथी सबके शरीरमें आत्मा रहता है। इन्द्रियोंके व्यापार और कायकी चेष्टासे उसका अस्तित्व प्रतीत होता है। परतु शरीरकी अचेतन परणतिसे जीवकी चैतन्य परणति जुदी देखनेमें आती है। जिसे लोग मरजाना कहते हैं उससे जीव पुद्गलकी पृथकता स्पष्टता सिद्ध है। मृत प्रेत, पूर्वभव स्मरण आदिके दृष्टात जगह जगह

स्वामी दयानंद सरस्वतीका अनुमान था कि मुक्तात्मा परिमित कालमें मुक्तपुरीसे हकाल दिये जाते हैं। परंतु स्मरण रहे कि जिस प्रकार बीजके अत्यंत जल जानेसे उसमें फिर किसी भी कारणसे अंकुर नहीं होता उसी प्रकार कर्मके अत्यंत विदग्ध हो जानेसे फिर भवांकुर नहीं होसक्ता। स्वामीजीको यह भी डर था कि मोक्ष होते होते संसारकी जीवराशि शून्य हो जावेगी। इसका समाधान उन सज्जनोंकी समझमें शीघ्र आसकेगा जो दशमलवका गणित जानते हैं। यह देखिये १· पूर्णांक जीव राशि है। इसके पीछे दशमलवविंदी देनेसे (·१) इसका मान दस गुणा घट जाता है। फिर दशमलव विंदीके आगे शून्य ० रखनेसे उसका मान और भी दस गुणा (·०१) जावेगा इस तरह आप चाहे जितने शून्य बढाते जाइये मान घटता ही जावेगा परंतु कल्पांत कालतक भी शून्य बढाते रहनेसे दशमलवका अभाव नहीं होगा। उसी प्रकार संसार राशिका अभाव भी नहीं हो सक्ता।

अब यह देखना है कि जो कपडा गंदा है वह अपने स्वभावसे ही गंदा है या उसमें कोई दूसरी चीज आ लगी है। यदि गंदापन वस्त्रका निज स्वभाव होता तो वह उज्वल कभी नहीं होता क्योंकि "स्वकं स्वभावं ण विजहंति" इससे सिद्ध है कि कपडेका स्वभाव मलिन नहीं है, कोई दूसरी चीज जिसे मैल कहते हैं कपड़ेसे चिपक गई है। पर यह अवश्य है कि कपड़ेका ऐसा स्वभाव है कि उसमें मैल चिपक जाता है और मैलका ऐसा स्वभाव है कि वह कपडेसे चिपक जाता है। वह वस्तु जो कपडेसे चिपक गई है कपडेके किस्मकी नहीं है, विजातीय है। इसी प्रकार आत्माको गंदा करनेवाली ऐसी वस्तु है जो आत्माके चैतन्य स्वभावसे विरुद्ध अचेतन है और अरूपी स्वभावके विलक्षण अर्थात् मूर्तीक है। बस ! इसे ही कर्म कहते हैं। "कर्म भी पुद्गलकी एक अवस्था सिद्ध हो गई"।

जब हमें क्रोध आता है तब आत्माके अंदर बड़ी खलबली मचती है, हम बड़े रंज और गमका अनुभव करते हैं। जिस तरह समुद्रमें ज्वार भाटा होता और उथल पुथल होती है उसी प्रकार शांतिके समुद्र आत्मामें बड़ी बेचेनी होती है। पर थोड़ी देरके बाद वह बेचेनी शान्त हो जाती है और मालूम होता है कि किसी चीजका असर था जो उतर गया। इससे भी प्रतीत होता है कि ये सब हरकतें करनेवाले आत्म स्वभावसे भिन्न पुद्गल पदार्थ हैं। ये आत्मामें विभाव उपजाते और शरीर आदिमें अहंबुद्धि पैदा करते हैं। परन्तु जिन्हें जीवाजीव द्रव्योंका सच्चा ज्ञान है वे आत्मासे शरीरको सर्वथा भिन्न और कोसों दूरके समान अनुभव करते हैं। वे सच्चे महात्मागी हैं। उन्हें मरनेका डर नहीं। दमन नीति उन्हें काबूमें नहीं ला सक्ती। जेलमें और मंदिरमें उन्हें अन्तर नहीं दिखता। चाहे उनसे चुनकी चटवाओ या चको -

चाहे किरकिरी मिला हुआ आटा देओ, चाहे मोहन भोग देओ। सदा प्रसन्न रहते हैं। उनके हृदयमें हिन्दू, मुसलमान् आदि एकसे प्रेम बंधु झलकते हैं और उन्हें कितनी ही तकलीफें और अड़चनें आवें और कैसी कठिन दमन नीतिसे सताये जावें पर वे सत्याग्रहसे नहीं चिगते।

लाओ जिती हों पासमें, हथकड़ी सांकल बेड़ियां।
कटि ग्रीव जंघा बांध दो, छाती शिखा पग एड़ियां॥
बाकी रहे नहिं तन जरा भी, खूब कस कर बांध दो।
संतर जहलमें सींकचे, ताले लगा कर बांध दो ॥ १ ॥

सारांश। विकट संकट आनेपर भी सच्चे महात्मा लोग परीषहसे नहीं चिगते। वे तपश्चर्याको कर्तव्य समझते हैं और सच्ची स्वाधीनता पानेमें सफलत होते हैं।

इतने वक्तव्यका सार यह है कि जीव पदार्थका अस्तित्व समझना भी एक प्रकारसे स्थूल है क्योंकि वह हमारे अनुभव गोचर है। वह हमारे शरीरमें है। वह ही हम हैं। पानीमें मीन पियासीके समान आत्माको अन्यत्र नहीं खोजना है। आत्म देव तो देहके देवालयमें ही रहता है। समयसारजीमें कहा भी है–

मत्तगयन्द. केइ उदास रहैं प्रभु कारन, केइ कहीं उठि जात कहींके।
केइ प्रणाम करें गढ़ि मूरति, केइ पहार चढ़े गह छींके॥
केइ कहैं असमानके ऊपर, केइ कहें प्रभु हेठि जमींके।
मेरो धनी नहिं दूर दिशान्तर, मो महिं है मोहि सूझत नीके॥

यदि जीव पदार्थ न होता तो न तो कोई मानने वाला होता न देखने होता, न स्वराष्ट्र होता, न पर राष्ट्र होता। सब अजीव अजीव ही होते।

अब जीव भी एक द्रव्य सिद्ध हुआ। जिसमें चैतन्यादि गुण हैं और संसारी शक्त अथवा मनुष्य, पशु, देव आदि पर्यायें हैं। इसके पश्चात हम आप लोगोंका चित एक सूक्ष्म पदार्थकी ओर आकर्षित करते हैं।

२–आप देखा करते हैं कि जो कल था वह आज नहीं है जो बालक थे वे युवक हो गये, युवक थे वे वृद्ध हो गये जो वृद्ध थे वे मृतक हुए। जो शांत थे वे क्रोधित हैं जो क्रोधित थे वे शांत हैं। सारांश जो नवीन था सो पुराना हुआ। अथवा यों कहिये कि पूर्व अवस्था लय हो गई और नवीन अवस्था प्रगट हो गई अर्थात पदार्थोंकी अवस्थाओंमें परिवर्तन हुआ और हुआ करता है।

यह रीति कबसेकी और कब तक रहेगी इसका उत्तर सोचिये तो यही मिलेगा

कि जबसे पदार्थ हैं और जब तक पदार्थ रहेंगे तब तक बराबर परिवर्तनकी रीति चालू रहेगी अर्थात् अनंत भूतकालसे यह पद्धति चालू है और अनन्त भविष्यत कालतक रहेगी।

ऐसा क्यों होता है ? यह विचारें तो अवस्थासे अवस्थांतर होनेका असली अर्थात् उपादान कारण वे ही पदार्थ हैं जो अवस्थान्तर हुए हैं। यदि दूधमें दही बननेका खासा न होता तो किसकी मजाल थी कि दूधसे दही बना देता। पर विना बाह्य कारणके भी काम नहीं हो सक्ता। विना रई घुमाये अर्थात् मथन किये बिना मक्खन नहीं मिल सक्ता है। दूसरा दृष्टांत लीजिये कि जो कुंभकारका चक्र घूमता है उसका उपादान कारण चक्र स्वयम् ही है कुंभकार दंडा-आदि प्रेरक कारण हैं परंतु यदि वह खूंटी जिस पर चक्र घूमता है वह न हो तो भी चक्र न घूम सकेगा ऐसे कारणोंको उदासीन निमित्त कारण कहते हैं।

बस ! सब पदार्थोंके अवस्थान्तर होनेमें खूंटीके समान जो उदासीन निमित्त कारण है वही काल है। जीव पुद्गलों आदिकी हालतें बदलनेमें वह प्रेरक नहीं, निमित्त रूप है। वह मूर्तीक पुग्दलोंसे भिन्न लक्षणोंवाला अर्थात् अमूर्तीक, और जीवके चैतन्य धर्मसे विलक्षण अर्थात् अचेतन ही होना चाहिये।

मिनिट, घंटा, पहर, वर्ष आदिको लोग व्यवहारमें काल कहते हैं पर वह पुद्गलोंकी परणतिसे प्रगट होता है अर्थात् घड़ीकी बड़ी सुई जब बारा नंबरोंपर चक्कर लगा देती है तब लोग कहते हैं कि एक घंटा हो गया।

स्वामी कुन्दकुन्दने कहा है कि " तह्मा कालो पडुच भवो " अर्थात् व्यवहार काल पुदगलाश्रित है परन्तु इस व्यवहार कालसे वास्तविक काल जो पदार्थोंको अवस्थान्तर कराता है निराला है वह जीव द्रव्यके समान-अमूर्तीक वस्तु है भेद इतना है कि जीव माप में बड़ा है। और कालका प्रत्येक कण परमाणुके बराबर है। परन्तु परमाणु मूर्तीक है और कालाणु अमूर्तीक है। चांदीकी एक पाट लेओ जो लाखों परमाणुओंके बराबर है यह जीव पदार्थका दृष्टान्त है। अब चांदीकी एक रेतनका एक बहुत ही छोटा कण लेओ यह कालाणुका दृष्टान्त है। ऐसे कालाणु सब लोकमें भरे हुए हैं। यह स्मरण अवश्य रहे कि चान्दीकी रेतन पुदगल है इसमें स्निग्धता रूक्षता है जो मिलकर पाट बन जाती है पर कालके दानेमें स्निग्धता रूक्षता नहीं है इससे कालके दाने एक दूसरेसे कभी नहीं बंध सक्ते हैं। इसी कारण वे असहाय हैं।

जिस तरह जीव दूसरोंको जानता और अपनेको भी जानता है उसी तरह काल पदार्थ दूसरोंको वर्ताता और अपनेको भी वर्ताता है। जब कि वह स्वयम् वर्तता है तो उसमें पर्यायें उपजतीं और व्यय होती हैं। ये अरूपी पर्यायें पर गुण पतित हानि वृद्धि स्वरूप समझनेसे बुद्धिमें आ सक्ती हैं परन्तु यह विषय सूक्ष्म है यहां लिखनेसे लेख

बाहुल्यता होगी। सारांश कालमें गुण और पर्यायें होती हैं अत: वह द्रव्य सिद्ध होता है।

यदि काल पदार्थ न होता तो निमित्तके बिना पदार्थोंकी हालत न बदलती उनमें उत्पाद व्यय नहीं होता। जो पदार्थ जैसा है वैसा ही रहता जो आम हरा है वह हरा ही रहता पीला न होता न सड़ता और न छोटा बड़ा होता।

हमारे श्वेताम्बर बंधु इस अतीव आवश्यक द्रव्यका अस्तित्व नहीं मानते। परन्तु जब वे गति स्थिति स्थानके हेतु, निमित्त भूत धर्म अधर्म आकाशको चाहते हैं तो कालके बिना भी काम नहीं चल सक्ता परिवर्तनाके हेतु भी निमित्त होना ही चाहिये।

ब्राह्मण धर्म शास्त्रोंमें भी कालका उल्लेख है। और कहा है—

चौपाई.—सिरंजत काल सकल संसारा। करत काल तिहुं लोक संहारा॥
सब सोवत जागत है सोऊ। काल समान बली नहिं कोऊ।१।

यह कथन जैन मतके स्यादवादसे सम्यक् सिद्ध होता है। अर्थात् काल पदार्थ संसारकी नवीन पर्यायोंको उत्पन्न कराता है और प्राचीन पर्यायोंको लय कराता है। परन्तु यदि कोई यह समझ जावे कि काल ही उत्पन्न करता है, काल ही नष्ट करता है तो यह "ही" लगानेसे एकान्तवाद हो जाता है और वह दूषित है॥ कहा भी है—

दोहा—पद स्वभाव पूरव करम, निच्चय उद्यम काल।
पक्षपात मिथ्यात सब, सर्वाङ्गी शिवचाल॥१॥

कालके संबंधमें एक बड़ी भारी शंका यह होती है कि काल पदार्थ जब लोक मात्रमें है तो वह अलोकाकाशको क्यों कर परिवर्तित करता है। इसका समाधान कुन्द-कुन्द स्वामीने बड़ी कड़ी युक्तियोंसे किया है उनमेंसे एक मोटीसी यह है कि जिस प्रकार शरीरके मध्य भागमें मैथुन होता है और उसका अनुभव सर्वांग होता है। उसी प्रकार काल भी आकाशके मध्यमें रहके सम्पूर्ण आकाशको वर्तीता है।

हमारे ऋषियोंकी कथन शैली ऐसी सुन्दर है कि बार बार द्रव्यानुयोगके शास्त्रों का कथन चिंतवन करनेसे अरूपी काल द्रव्य भी स्पष्टतया समझमें आने लगता है।

४—अब हम चौथे पदार्थ पर आप लोगोंका चित्त झुकाया चाहते हैं। आप देखिये पुस्तक टेबिल पर रक्खी है, टेबिल प्लेटफार्म पर है, प्लेटफार्म पृथ्वीपर है, अर्थात् पदार्थोंमें आधार आधेय वा क्षेत्र क्षेत्रिय भाव है।

जिस प्रकार जीव पदार्थ अपनेको और सकल पदार्थोंको जाननेवाला,'ज्ञान' इस परमधर्मसे सिद्ध है। अपनेको और दूसरोंको वर्तानेवाला काल पदार्थ 'वर्तना' इस परम धर्मसे सिद्ध है। उसी प्रकार अपनेको और दूसरे समस्त पदार्थोंको क्षेत्र देनेवाला अवगाहना परमधर्मवाला

पदार्थ होना ही चाहिये । उसके विना द्रव्योंकी सिद्धि नहीं हो सक्ती । बस ! उसीका नाम आकाश है । जो सबको क्षेत्र देनेवाला है, सबका क्षेत्रिय है, सबका आधार है। सारांश ! आकाश और सब पदार्थोंमें आधार आधेय सम्बन्ध है । जिस प्रकार जीवके एक प्रदेशमें भी अपनेको और अनंत पुद्गलों, जीवों, काल आदिको जाननेका सामर्थ्य है, कालके एक प्रदेशमें अपनेको और अनंत जीव पुद्गलों आदिको वर्तानेकी सामर्थ्य है उसी प्रकार आकाशके प्रत्येक प्रदेशमें जो परमाणुके बराबर होता है अपनेको अनंत जीवो, पुद्गलों और काल आदिको स्थान देनेका सामर्थ्य है । पं० प्रवर दौलत रामजी साहबने कहा भी है "सकल द्रव्यको वास जासुमें सो आकाश पिछानो" ।

ऊपर आसमानमें जो नीला सा हद्दे नजर दिखता है अथवा जो लाल पीले रंग बदलते रहते है उसे बहुतसे लोग आकाश समझ जाते हैं । परन्तु रंग पुद्गलोंमें होता है आकाशमें नहीं हो सक्ता । आकाश अरूपी वस्तु है ।

जब कि आकाश सबका क्षेत्रिय है तो जहां जहां जीवादि पदार्थ हैं वहां वहां आकाशका अस्तित्व सिद्ध ही है । लोकमें तो आकाश है ही । परन्तु उससे आगे, क्या है इस प्रश्नका उत्तर यही मिलेगा कि उससे आगे आकाश है, फिर उससे आगे, आकाश . फिर उससे आगे ? आकाश ! लोकसे आगे भी आकाश है तो वहां जीवादि पदार्थ क्यों नहीं पहुंच जाते और लोकको और भी विस्तृत क्यों नहीं कर लेते ! इसका समाधान धर्म द्रव्यके कथनसे हो सकेगा ।

आकाशमें स्थान दान आदि गुण हैं और काल द्रव्यके समान अरूपी पर्यायें है अतः आकाशको द्रव्य कहना चाहिये । यदि आकाश न होता तो पदार्थ ही न रह सक्ते । इस लिये लोककी सिद्धिके हेतु आकाशका अस्तित्व मानना ही चाहिये ।

१–६–*पाठक ! जीव, प्रकृति, काल और आकाश तो संसारमें प्रायः प्रचलित* हैं । अब हम उन अरूपी सूक्ष्म वस्तुओंकी ओर आपकी दृष्टि डालना चाहते हैं जो जैन शासन सिवाय अन्यत्र अप्रसिद्ध ही हैं । जिन्हें स्वामी दयानन्दजी जैसे प्रसिद्ध आर्य विद्वान् न समझ सक्के और धर्म अधर्म द्रव्यको जीव प्रकृति आदि पदार्थोंके धर्म अधर्म अर्थात् स्वभाव विभाव समझ बैठे और पवित्र जैन धर्मका खंडन अपने सत्यार्थ प्रकाशमें कर गये ।

यह देखिये झाड़से एक फल गिरा और धरती पर ठहर गया । लड़केकी पतंग उड़ने उड़ते कुएमें पड़गई । अभिप्राय यह कि जीव पुदगलोंमें गमन स्थिति क्रिया देखते हैं । इसका कारण सोचिये तो अंतरंग कारण तो ये ही गमन स्थिर होनेवाले पदार्थ हैं

*. पुद्ग

अर्थात् क्रिया रूप परणमनेकी शक्ति उन क्रियावान् पदार्थोंमें ही है। अगर जीव पुद्गलोंमें गमन स्थितिका स्वभाव न हो तो किसीकी ताकत थी जो उससे मस कर सक्ता। परन्तु अंतरंग कारणके सिवाय बाह्य कारण भी चाहिये। बाह्य कारणके विना भी कार्य नहीं हो सक्ता यह बात न्यायसे सिद्ध है जिसका यहां लिखनेसे विषयांतर होना संभव है।

जब रेलगाड़ी चलती है तो उसके चलानेका उपादान कारण तो वह स्वयम है एंजिन खींचता है सो वह प्रेरक कारण है। इतना होनेपर भी पातोंके विना रेल नहीं चल सकेगी। अभिप्राय यह कि लोहेकी पातें रेलके चलनेमें उदासीन निमित्त कारण हैं। एंजिन खींचे वा रेल चले तो लोहेकी पटरी सहायक होती है पर रेलको जबरदस्ती खींचकर नहीं चलाती। और न चलती हुईको ठहराती हैं।

साइंसके विद्वानोंका भी मत है कि गति स्थितिके हेतु बाह्य निमित्त अवश्य होना चाहिये। ये लोग बहुत दिनोंसे इसका खोज कर रहे हैं, परंतु उन बेचारोंको अरूपी पदार्थोंका जो प्रत्यक्ष ज्ञान गोचर है कैसे पता लग सक्ता है। बस ! जो गति स्थितिमें निमित्त रूप हैं उन्हीं वस्तुओंका नाम धर्म अधर्म है। ये स्वतंत्र पदार्थ हैं। जिस प्रकार नींबूका धर्म खटाई है, गुडका धर्म मिठाई है।

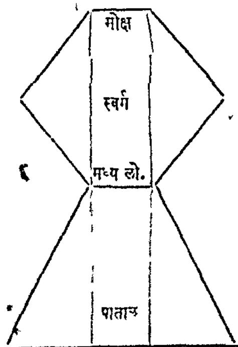
जीवका अधर्म हिंसा वा राग द्वेष है उस प्रकार धर्म अधर्म द्रव्य किसी पदार्थके गुण दोष नहीं हैं वरन जिस तरह आकाश एक द्रव्य है उसी तरह धर्म भी एक द्रव्य है और अधर्म भी एक द्रव्य है। धर्ममें गति सहाई परम धर्म है, अधर्म द्रव्यमें स्थिति सहाई परम धर्म है और दोनोंमें काल द्रव्यके समान् अरूपी पर्यायें हैं। अतः ये दोनों द्रव्य हैं।

यहां एक प्रश्न होता है कि जैन धर्ममें भी तो अहिंसा आदिको धर्म और हिंसा आदिको अधर्म बतलाया है अथवा "वस्तु स्वभावो धम्मो"की रीतिसे इसी निबंधमें पदार्थोंके चैतन्य आदि धर्म कहते आये हो अब यह निराले पदार्थ कैसे कहते हो ? इसका समाधान इस प्रकार हैं कि एक वाच्यके अनेक वाचक होते हैं जैसे सूर्यके वाचक शब्द दिनकर, दिवाकर, दिनेश आदि हैं। और एक वाचकके अनेक वाच्य भी होते हैं जैसे जैसेकि 'मन' हृदयको (दिलको) भी कहते हैं और मन तौलनेका माप भी होता है। पर जहां जैसा विषय व प्रसंग होता है वैसा ही आशय लिया जाता है। क्योंकि संसारमें पदार्थ और उनके गुण बहुत हैं। और कोषमें शब्द थोडे हैं। इस लिये जहां गुणोंका कथन हो वहां धर्म अधर्म शब्दसे स्वभाव विभावका आशय लेना चाहिये और जहां द्रव्योंका कथन हो वहां धर्म अधर्म शब्दसे दोनों पदार्थ समझना चाहिये।

स्वर्गीय स्याद्वाद वारिधि पुज्य पं० गोपालदासजी बरैयाने श्री जैनसिद्धांत-दर्पणमें एक तर्क निकाला है कि गति स्थितिके हेतु जुदे जुदे दो पदार्थ माननेकी क्या आवश्यक्ता है ? इसका समाधान भी उस प्रात. स्मरणीय विद्वान्ने किया है कि परस्पर विरोधी धर्म एक ही धर्मीमें नहीं हो सक्ते इस लिये जो पदार्थ चलानेवाला है वह ठहरानेवाला नहीं होसक्ता और जो ठहरानेवाला है वह चलानेवाला नही हो सक्ता अत. दोनों पदार्थ प्रथक् प्रथक् सिद्ध है। और दोनोंकी ही आवश्यक्ता प्रतीत होती है।

अब आप लोगोंकी समझमें आया होगा कि धर्म अधर्म पदार्थ है अर्थात् धर्मी हैं और गति स्थिति सहायकता दोनों के क्रमशः धर्म है। जिस प्रकार साइंसवालोंने लिखा है कि यदि माध्याकार्पण न होता तो सूर्य चन्द्र अपने मार्गपर न रहते न जाने कहां जाते, यदि परमाणु आकर्षण न होता तो सब चीजें धूलकी देशामें रहतीं। उसी प्रकार जैन ऋषियोंका कहना है कि यदि धर्म द्रव्य नहीं होता तो जो पदार्थ जहां था वहां ही रहता कोई भी पदार्थ नहीं चलते न कोई मोक्ष जाता न कोई देशान्तर जाता। न चरखा चलता, न सूत कतता, न सभा होती, और न आप लोग अपने घरसे आ सक्ते।

और यदि अधर्म द्रव्य न होता चलती हुई कोई भी वस्तु न ठहरती। गिल्लीको डंडा मारनेसे वह चली ही जाती फिर न ठहरती। छतरी जो हवामें उड पड़ी थी उड़ती ही जाती। और सिद्ध आत्मा जो उपरको गमन किये थे चले ही जाते कभी भी विश्राम नहीं पाते। यहां तक कि इन दो द्रव्योंके विना लोक अलोकका भी भेद न होता।



यह चित्र देखिये छहों द्रव्योंसे भरे हुए लोकका आकार है। छहों द्रव्य अपने अपने गुण पर्यायोंमें परणमते हैं कोई भी द्रव्य अपने गुणस्वभाव नहीं छोडते और न अन्यके गुण स्वभाव ग्रहण करते हैं। हां! जीव पुद्गल, स्वभाव विभावरूप होते हैं। विभाव परणति निबंधका विषय नहीं है होता तो हम उसका कथन करते। पर इतना अवश्य कहेंगे कि एक दूसरेके निमित्त नैमित्तक होनेसे द्रव्योंकी परणति सिद्ध होती है। अत लोकका या द्रव्योंका कोई कर्ता हर्ता विधाता सिद्ध नहीं हो सक्ता इस लिये सभी द्रव्य स्वयम् सिद्ध हैं। द्रव्योंका समुदाय रूप, लोक, जिसके बाहरी अपार खड़ा

है यह कहे विना; हम निबंध पूरा नहीं कर सकते । एक साइंसके विद्वान्ने एक मनुष्यको बिलकुल निराधार खडा कर दिया था । और उसे हमने स्वयम् देखा है । बुद्धिसे सोचा जावे तो यह जीव अजीव ही की करामात है कहनेका अभिप्राय यह कि इतना बड़ा लोक जीव अजीव ही की विलक्षण विद्युतसे जिसे माधाकरषण कह सक्ते है अधर खड़ा है । परमार्थ दृष्टिसे सब द्रव्योंके आधार स्वरूप आकाशके आधारपर लोक है और आकाश अपने परमधर्म आधारके आधार है ।

छहैं द्रव्योंके सबधमें नीचे लिखा उद स्मरण योग्य है ।

सवैया मानिक-.

जीव धर्म अधरम नभ पुगद्‌ल, काल सहित षट् द्रव्य प्रमान ।
चेतन एक अचेतन पाचों, रहैं सदा गुण पर्जयवान ॥
केवल पुगद्‌ल रूपवान् है, पाचों शेष अरूपी जान ।
काल द्रव्य बिन पंच द्रव्यको, अस्तिकाय कहते बुधिवान ॥ १ ॥

उपसंहारमें हमें यह कहना है कि निबंधमें कई जगह मतान्तर वादीको लक्ष्य बनाकर संबोधन किया है सो किसीकी निन्दा वा विरोधकी इच्छासे नहीं किया है । अब ऐसा कीजिये कि एक घड़ी भरको आपही वादी बन जाइये और कहिये लोककी सिद्धिके वास्ते जीव द्रव्यकी आवश्यक्ता नहीं है और न उसका अस्तित्व सिद्ध है । तो मैं कहता हूं कि आप कौन हें ?

अब आप कहिये-हम पुद्गल हे शरीर हैं । शरीरमें शराब कैसा नशा कुछ काल रहनेसे लोग जीव जीव चिल्लाने लगे हैं ।

मैं कहता हूं-कि शराबका नशा भी जीव ही को होता है । नहीं तो शराबकी बोतलें भी उछलती कूदती फिरतीं इससे जीवका अस्तित्व सिद्ध हैं ।

अब आप कहिये-कि पुद्गल नहीं हैं ।

सो मैं कहता हू-कि यह रग बिरंगे पदार्थ देखने हैं सो क्या है ?

अब आप कहिये-संसारमें आकाश नहीं है ।

तो मैं कहता हू-जीव पुगद्‌ल आदि कहा रहते हैं ?

आप कहिये-हम कालकी कुछ आवश्यका नहीं समझते ।

तो मैं कहता हूं–क्या विना निमित्तके भी कार्य हो सक्ता है ? संसारमें सभी लोग निमित्तको बलवान मानते हैं।

आप कहिये–लोककी हद माननेकी जरूरत नहीं। वह अनंत है।

मैं कहता हूं–जब सब चीजोंकी हद है तो लोक भी हद सिद्ध है।

आप कहिये–धर्म अधर्म द्रव्यका अस्तित्व मानना अनावश्यक है।

मैं कहता हूं–लोककी हदसे धर्म अधर्म द्रव्योंका अस्तित्व स्पष्ट सिद्ध है।

आप कहिये–इन द्रव्योंका जानने कथन करनेवाला ईश्वर नहीं है।

मैं कहता हूं–कि यहा और इस समय ईश्वर नहीं है कि सर्व काल और सर्व क्षेत्रमें ईश्वर नहीं है।

आप कहिये–कि कभी भी और कहीं भी ईश्वर नहीं है।

मैं कहता हूं–अगर आप सर्व काल और सर्व क्षेत्रको जानते है तो आप ही ईश्वर हो।

आप कहिये–कि यदि ईश्वर है तो वह इन द्रव्योंका वा जगतका कर्ता अवश्य है।

मैं कहता हूं–कि आप ईश्वरको " निरीह ईश्वर विभु " मानते हैं या नहीं ?

आप कहिये–सब ही ईश्वरवादी प्रभुको निरीह मानते हैं।

तो मैं कहता हूं–कि इच्छा रहित प्रभु इस प्रपंचमें क्यों पड़ने चला ?

आप कहिये–तो सुख दुख कौन देता है।

मैं कहता हूं–जड़ चेतन अनादि-संयोगी। आप हि कर्ता आप ही भोगी।

अथवा दोहा–**को सुख को दुख देत है, कौन करै झक झोर।**
उरझत सुरझत आपही, ध्वजा पवनके जोर॥

अब आप कहिये–कि लोककी सिद्धिके हेतु छह ही द्रव्योंकी क्यों आवश्यका है ? कुछ कमती मानो !

मैं कहता हूं–कि छहमेंसे किसको छोड़ दूं। जिसके बिना पदार्थोंकी सिद्धि होती जावे और बाधा न पड़े उसे छोड दू।

आप कहिये–कि छहसे ज्यादा द्रव्य मानिये।

मैं कहता हूं-कि सातवां आठवां द्रव्य सिद्ध कीजिये।

अस्तु! अधिक कहनेसे क्या? लोककी सिद्धिके हेतु छह ही द्रव्योंकी आवश्यक्ता है और वे स्वयम् सिद्ध है।

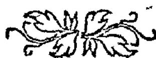
बहुत लोग रुपये पैसेको द्रव्य कहते है। जब मैं विद्यार्थी था तब मैंने द्रव्य-संग्रह ग्रंथ इस लिये मंगाया था कि उसमें रुपये कमानेकी युक्तियां होंगी। लोग रुपया पैसा स्वरूप द्रव्यकी उपासना किया करते है सो वह भी द्रव्य ही है पर पुद्गल-द्रव्य है उसमें आनंदका लेश भी नहीं। सदा अपने आत्म द्रव्यका आनंद लेना चाहिये।

छहों द्रव्योंमें आत्म द्रव्य सारभूत और उपादेय है। हे जीव! तुम आत्मा हो, आत्मा तुम्हारा है, तुम आत्माके हो। उसे नम भलेप्रकार जानो, उसका श्रद्धान करो और उसीमें स्थिर रहो। જેથી પધારે સારી રીતે હશે. વહુના સ अर्थात् अपने 'स्व' के ऊपर राज्य करो यही स्व- र આપનાવુ સભ हो त्यों ही पराराष्ट्र अर्थात् कर्म दल तुम्हारे ऊपर कब्जा कर लता है या नौकरशाही रूप इंद्रियोंकी हुकूमतमें तुम्हें रहना पड़ता है जो तुम्हारे ज्ञान धनका शोषण करती और नाना नाच नचाती हैं तथा तुमसे पूरी पूरी गुलामगा ... भांति १की चटमटक और चकाचौंध भरी विदेशी वस्तुएं दिखाकर तुम्हें ... छे એ તો ... है और पराधीनताकी जंजीरसे कस देती हैं। फिर तु... શોભા પાના પર ... विदेशी लोग तुम्हारे कपड़े सीनेके लिये सुई भी न देवें तो तुम्हें फमा... ભાઇઓ। इसलिये उनसे असहयोग करदो जो तुम्हारा असली रक्त चूसते है। तुम सच्चे स्वदेशी बनो एक क्षण मात्रको भी अपने स्वदेश और देशबंधुओंका हित मत भूलो। दमन नीतिसे मत डरो और अहिंसा पूर्वक सत्याग्रह ग्रहण करके स्वात्मबल बढ़ाओ।

अंतमें यह कहते हुए निबंध समाप्त करता हूं कि-

सब मित्र पवित्र चरित्र धरैं,
अरु शिक्षित पुत्र कलत्र करैं।
पुनि कौशल काव्य-कला विधिसे,
सजदो इस भारतको निधिसे॥

समाज सेवी—बुद्धिलाल श्रावक-टाइप (जोधपुर)



પુરૂષની શારીરિક અવનતિ થવી ન જોઇએ એટલે કે ઓછું, નહીં ભાવતુ, હલકા પ્રકારનું ભોજન ખાવાથી અને મરી ગયેલા ધ્રસમને સંભારી આર્તધ્યાન કરી કાયા ગાળવાથી શરીરની અવનતિ થાય છે અને તેની અસર તેના મોઢા આગળ ફરતાં બચ્ચાં ઉપર બુરી થાય છે અને શિક્ષા બીજાને ભોગવવી પડે છે. નીતિભ્રષ્ટતા થવી ન જોઇએ, આ બાબત વિશેષ અગત્યની છે. જૂઠ, જારી, ચોરી, દ્વેષ વગેરે દુર્ગુણોનો સમાવેશ આમાં થાય છે. આ જગ્યાએ એક દાખલો આપવાથી સારી સમજ પડશે. આગગાડીમાં બેસવાની ઉતાવળમાં એક બાઇ પોતાનો જુનો ઘરી કરેલો સાલ્લો પોટલી પાસે પડેલો તે લેવાનો ભુલી ગઇ એક વિધવા બાઇ તે લઇ ઝટ બીજા ડબ્બામાં બેસી ગઇ અને પોટલામાં ખોસવા જતી હતી તેવામાં પેલી બાઇ આવીને કહેવા લાગી કે પેલો સાલ્લો લાવો, પોટલીમાં કયા મુકો છો ! તેણે જુવાબ આપ્યો કોઇ લઇ જાય તેથી હું લાવી, મારે તમારા સાલ્લાને શું કરવો છે. એમ બહુ સતી નહીં થા, તું તો મારી પચવાડે હતી. ત્યારે મને બુમ મારવી હતીને. ખીસીયાણી થઇ પેલી બેસી ગઇ, આ બાઇએ જુના સાલ્લા ખાતર ચોરી અને જૂઠ બન્ને ગુન્હા કર્યા. આવાં કુટુંબને જો આપણે મદદ નહીં કરીએ તો તેઓ નીતિભ્રષ્ટ થાય તેમાં શી નવાઇ ! ! માટે નિરાશ્રી વિધવા અથવા તેવા બીજા કુટુંબને આપણે પ્રથમ મદદ કરવી જોઇએ. ત્રીજા પ્રકારના કુટુંબને કેવી રીતે મદદ આપી શકાય તેનો વિચાર આવતા લેખમાં કરવામાં આવશે. આવી બાબતો ઉપર 'દિગંબર જૈન' માં પૂરેપૂરી ચર્ચા થવી જોઇએ અને બીજા બાઇઓએ આ બાબતમાં સહાનુભૂતિ બતાવવી જોઇએ.

हुम्मड लग्न पर

उड़ती नजर.

લગ્નસરા આવી ને ગઇ. જનતાનો આનંદ માણ્યો સમાયો નહિ, તેમા અમારા ગુજરાતમાં દશાહુમડ જ્ઞાતિમાં સારાં લગ્ન થયાં કહેવાય છે; અને તેમ થવું સંભવિત છે. કારણ કે ગઇ સાલ સિંહસ્થ વરસથી બંધ રહેલ લગ્ન, આ વરસમા થનાર લગ્ન ને ખર્ચાના કારણથી લેવાએલ નાની *કન્યાઓના લગ્ન એમ બન્નુ પ્રકારથી લગ્ન થવાથી* સંખ્યા વધુ થાય તેમાં શક નથી. તેમાં ઉંછેરનો વર્ગ તો દર વરસ ચાલુ હોય છેજ. એક તિથિ કે સરાનો લગ્ન આર્થિક દ્દષ્ટિથી લાભકારક છે. લગ્ન માસ વૈશાખમાં એકંદરે દરેક માણસ નિવૃત્તિવાળું હોય છે, કારણકે ખેડુત વર્ગને પાક લેવાનો કે ઉત્પન્ન કરવાનો હોતો નથી ને ખેડુત નિવૃત્ત હોય ત્યા તેના પર આધાર રાખતા આ દેશના ધંધા વિહોણા લોક પણ નિવૃત્ત હોય છે, એટલે આવા નિવૃત્તિના સમયમા લોકો મોજમઝાના ને બીજા પ્રસંગો માણે છે. લગ્ન પ્રસંગ પણ તેમાનો એક છે. કુદરતી રીતેજ તે માટે આ સમયજ નિર્માણ થયેલો જાણે હોય એમ લાગે છે. આ રૂતુમાં ફળફુલ આદિથી કુદરતનું સૌદર્ય ઉઠયું હોય છે. વસંતનો બહાર પણ આવી ગયો હોય છે. તેવા આનંદ જનક સમયમા લગ્નની પ્રથા યોગ્યજ રીતે ગોઠવાઇ છે. ને આ નિવૃત્ત સમયે અમારા દશા હુમડ બાઇઓ નિવૃત્ત હોય તેમા કાઇ નવાઇ નથી.

આ લગ્નો માટેની તૈયારીઓ તો સ્વાભાવિક રીતેજ બે ત્રણ માસ આગમચથી ચાલુ થઇ રહી હોય છે. માબાપો લગ્નનો સામાન લેવામાં, કપડા સીવડાવવામા, મુખ્યત્વે ઘરેણાં ગાંઠાં ઘડાવવામા ઉપરાંત મુહૂર્ત જોવડાવી (નાખતુંજ) સગાં સંબંધીઓને નિમંત્રવામા રોકાએલ હોય છે. સ્વાભાવિક રીતે હુમડ બાઇઓનાં સુપ્રેજીત મહાત્મા ગાંધીજીના પ્રભાવથી દરેક દિશામાં પ્રખ્યાત થએલ ગુજરાતના પાટનગર અમદાવાદ

માં સરસામાનમાં મુખ્યત્વે કાપડ ખરીદવા ઉતરી પડયા હતા. અમારા હુમડ પુરૂષ વર્ગમાં તો મહાત્માજીનો આદેશ ખાદી પહેરવાનો થોડેક અંશે સચવાયો છે, પણ સ્ત્રી વર્ગ તો બીલકુલ એથી નિરાળોજ છે. અજ્ઞાન દશાના પડળ તેમને શુદ્ધ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થવા દેતા નથી. ધોળાં કપડાં તો ધોબીઓ પહેરે તે તેમનાથી પહેરાય નહીં. રૂઢી દેવતી એ તો તેમને ભારે થઇ પડે. ભાઇઓએ તો ખાદી પહેરી પણ લગ્નમા તો વિલાયતી માલજ વાપર્યો. એ તેમને શરમાવનારૂં છે, તેમની કિંમત કરાવનારૂં છે. કેટલાક ભાઇ ખાદી વાપરવાના વિચારના હશે, પણ રૂઢીના દાબે, લોકલજ્જાએ, ઘરના સ્ત્રી વર્ગના દબાણે, બીજાઓની નિંદાથી ડરીને, વિલાયતી વાપરનાર અન્ય જનથી ઉત્પન્ન થયેલ અસરથી ડગી ગયેલ વિચારથી વિલાયતીને તજી ન શક્યા. અફસોસ છે કે હજુ **સ્વદેશીનું રહસ્ય અમારો સમાજ બરાબર સમજી શકયો** નથી. તેથી 'ખાદીની ખાનદાની' આબાદી ને પરદેશી કાપડથી પૈસાની બરબાદી '' એ સિદ્ધાંત ન સમજતાં રૂઢીના ગુલામી પરદેશી રંગ બેરંગી બિહામણા કાગરચિત્રા રંગોથી ભરપુર તરેહવાર કપડા ખરીદી લાવ્યા હતા, તેમાંએ કન્યા માટેના કપડામાં જે રેજા (ખંડ) ખરીદવા પડે છે તે કિંમતે અતિશય મોંઘા ને વપરાશે ડાકણીયા (ઉપયોગ થતો નથી તેથી પહેરનાર મરીને તે સાચવવા ભૂત થાય છે તેથી) હોય છે. આગેવાનો જો આ રેજા વાપરવાનું બંધ કરે તો તે આશીર્વાદ સમાન લેખાશે. "કલકતાનું પોત પણ બંધ કરવામાં આવે એ પણ ઇચ્છા યોગ્ય છે. પહેરેથી દેખાવમાં બેડોળ ને પહેરનાર સ્ત્રીના સૌંદર્યને હણનાર હોય છે. આમ ધીમે ધીમે પણ બીનજરૂરી જેના સિવાય ચાલી શકે તેવી મોંઘી વસ્તુઓ બંધ કરી તેને બદલે સાદી ને ઉપયોગી વસ્તુઓ વપરાશમાં લેવામાં આવે તો થોડાજ અરસામા ગેરલાભ નાશ થાય. ઘાઘરા (ચણીયા) ઓ માટે, મોજાઓ, ઓરણીઓ, સાડલા વગેરેમાં ખાદીજ વાપરવા બ્હેનોએ ધીમે ધીમે પગરણ માંડવાની જરૂર છે. એટલે રૂઢી પણ આસ્તે કદમ અલોપ થશે.

અમારા દશાહુમડોમાં ઘણું ખરૂં લગ્ન એકજ તિથિએ અથવા તો એકાદ બે દિવસના ફરકમાં હોય છે. બીજી રીતે કહીએ તો કન્યાના માબાપો તે રીતે લે ભાગુ બ્રાહ્મણો પાસે રૂ૦ ૦-૨-૦ હજાર જાપ કરાવી લગ્નનું મુહૂર્ત લેવરાવે છે આ એકજ તિથિના લગ્નની પ્રથા આર્થિક દૃષ્ટિથી જરૂર લાભદાયક છે ને આવા ખર્ચાળ વરસોમા તેમ કરવાની જરૂર છે, પણ આ બાબતમાં અમારી હુમડ જ્ઞાતિમાં હાલમાં ઘણી અતિશયતા વધી પડી છે, તેથી તેમાં ઘણી જાતના [illegible] (ગેરલાભ) ઉત્પન્ન [illegible] પૈસાના સદુપયોગથી ભૂલવામા આવ્યું છે તે અનુભવ થશે. અમારા માટે કરવામા આવે છે તે કે તે પણ સમજતા હા, અમારા હુમડો એટલું તો જરૂર જાણશે કે આ વિવાહ એટલે સ્વર્ગ ને લગ્ન એટલેજ છે. અને મોક્ષ મેળવવા કોણ શું નથી કરે યા અમારા આ મોક્ષ માટે અમારે ધક્કો આ કાવા દાવા ખેલવા પડે છે, ઘણી જાને બડે જાઓ મહેરબાન પેઠે રહેવુ પડે છે, પઇસાદારના બેટા તો અમે હોવાજ જોઇએ ને કમ નસીબે જો ગરીબાઇને વર્યા હોઇએ તો અમારૂં મોક્ષ (લગ્ન) બે ડગલા આગળ ને આગળ ખસતુંજ જાય છે. વળી અમારે તમાચા મારી ગલ લાલ રાખવું પડે છે; કારણકે અમારો ગામડાનો સંબંધ ને આવક પણ તેવીજ હોય છે; અને આવી રીતે જ્યા લગ્નનો મુદ્દોજ ઉંધો સમજ્યા હોઇએ ત્યા યોગ્ય ફળ કેમ મળે ?

આ અમારી વચલા કહેવાતા વર્ગની સ્થીતિ! પરંતુ અમારા ગરીબ વર્ગને કન્યાઓ મળે નહિ. **અરે ! ગરીબ ગરીબને દે નહિ, ત્યાં પૈસાદાર વર્ગ તો દેજ શાનો ?** આનું ખાસ કારણ માણસની **મહત્વાકાંક્ષા** છે દરેક મનુષ્યને આગળ વધવાની–મોટા થવાની–અભિલાષા રહે છે તે પ્રમાણે તે કાંઈ પણ કરે છે, તેથી તે -મોટા

માણસની સોબત-આશ્રય શોધે છે. કહ્યું છે કેઃ-

महाजनस्य संसर्गः कस्य नोन्नतिकारकः ।
पद्मपत्रस्थितं वारि धत्ते मुक्ताफलश्रियम् ।

એટલે મોટા માણુસની સોબતથી કોની ઉન્નતિ થઇ નથી ? એટલે કે થઇ છે. દાખલા તરીકે એક પાણીનું ટીપું હોય છે તે પણ કમળપત્રના સંસર્ગમાં આવવાથી (તેના ઉપર હોય છે ત્યારે) રત્નની કાંતિ ધારણુ કરે છે. આ દ્રષ્ટિથી વચલા ને ગરીબ ગણાતા વર્ગના પોતાની કન્યાઓ પોતે મોટા થવાની આશામાં મોટાઓને દે છે (આ એક જાતનો કન્યાવિક્રય છે) તેમાએ ગરીબવર્ગની કન્યાને તે લે નહિ, ત્યારે તે બિચારા વચલા [illegible] મા દે એટલે કે પઇસાદારો પોતપોતાની કન્યાઓ એટલે આ[illegible] દે નહિ ને વચલા વર્ગની ડબામાં બેસી ગઇ અને પોત[illegible]ને ગરીબ વર્ગમાંથી હતી તેવામાં પેલી બાપ[illegible] વર્ગને કન્યા મળી શકે નહિ. બેન પેલો સાદનો [illegible]કાંક્ષા તેમને મૃત્યુના રસ્તાપર દે છે ! તેવુ[illegible]ય છે. આમાંથી યોગ્ય વિચારથી રસ્તો હું લાવી, [illegible]તાં સાટાં તેખડાંમાં પડી ન છુટકે બેસ બઇ [illegible], આમ પોતે પોતાની ભૂલનો ભોગ થઇ હતી. ત્યારે [illegible] તે તેમાં પરદો જેવાની દ્રષ્ટિથી તેઓ [illegible] પઇસાદાર વર્ગની ભૂલ જુએ છે, પોતાની નહિ, ને તે રીતે એક બીજા તરફ દ્વેષની લાગણીથી જુએ છે. ખરૂં તો એ છે કે માણસે પોતાની ભૂલ પહેલી જોવી જોઇએ, ને તે સુધારવી ઘટે છે ને તે રીતે તે આગળ વધી શકે છે. તો જો ગરીબ વર્ગે પોતપોતામાં વિચાર કરી નિશ્ચય કર્યો હોત કે આપણી કન્યાઓ આપણા વર્ગમાં લેતી દેતી ને પૈસાદાર વર્ગ તેમની કન્યાઓ આપણા વર્ગમાં ઉતારે નહિ તો તેમના વર્ગમાં આપવી નહિ. તો તેઓના (ગરીબવર્ગના) છોકરા પરણ્યત, સાટાં તેખડાં કરવાની જરૂર રહેત, નહિ ને ધનીક વર્ગની પણ આંખો ઉઘડત કે જેમાંથી કન્યાઓ લઇએ છીએ તેમાં આપણી કન્યાઓ ઉતારવી જોઇએ. પણ અમારા હ્રદયમાંમાં એક શાંતિ સૂત્ર રહેલો છે તે "હું પહો"નો છે. [illegible] મેં તેરમે કુઠ કગ' એટલે ગરીબ વર્ગમાં

ગણાય તેવા માણસો ખોટી મોટાઇથી તે વર્ગમાં ગણાવાની આનાકાની કરે છે પણ છેવટે જ્યારે વળ છેડે આવે છે ત્યારે તેમને ગરીબ દેખાયા વિના ચાલતું નથી. આમ ખોટી મોટાઇના ફાંસામાં ફસાવાથી તે વર્ગ પોતાનું અહિત કરી રહેલ છે. પણ ઓ ધનિક ગણાતા વર્ગ ! તારૂં પણ કયા ઓછું અહિત થઇ રહેલ છે. તારી જ્ઞાતિ દિવસે દિવસે અધમતામાં જતી જાય છે. સાટા તેખડાં વધતા જાય છે. તારી સ્વાર્થ બુદ્ધિથી ગરીબોને શોષવું પડે છે ને તેમનો છેવટે અંત આવે છે. તે તમારા પાપથી જેને તમે આજ જે ખાડામાં ધકેલો છો તેજ ખાડામાં કાલે તમારે ધસડાવું પડશે એ ખ્યાલ ભૂલશો નહિ. કંઇ નહિ તો એ ગરીબોના શ્રાપથી પણ તમારે કડવાં ફળ ભોગવવા પડશે; ધર્મમાંથી વિચલતા મનુષ્યને તેમાં સ્થિર કરવો એ જૈન ધર્મનો ઉપદેશ તમે કાં ભૂલી ગયા જણાઓ છો ? આ તો આપણે પેટા દોષોમાં ઉતર્યા પણ મુદ્દા ઉપર આવીએ. ત્યારે લગ્નનું મહત્વ ન સમજાયું હોય ત્યાં તેના લાભાલાભ જાણેજ કોણ ?

દરેક વ્યક્તિ-આત્મા પોતાનું કલ્યાણ ઇચ્છે છે. તે કલ્યાણ તે મોક્ષ (લુગડાનું નહિ હો) છે ને તે માટે દરેક દેહધારી પ્રયત્નશીલ હોય છે. તે સાધનામાં બળવાન ચારિત્રવાળા આત્માઓ તો સંસારથી નિરાળા મશગુલ હોય છે, પણ જે નિર્બળ આત્માઓ ચારિત્ર પાળવામાં શિથિલ હોય છે તેવા આત્માઓએ લગ્ન કરવું યોગ્ય છે ને તે વૈરાગ્ય દ્રષ્ટિથી. આત્મ ચિંતનમાં કોઇ પ્રસંગે કામવાસના તીવ્રપણું દાખવે, તે દાબવી પોતાની શક્તિ બહાર છે એમ જણાય ત્યારેજ સ્ત્રી સાથેનો સમાગમ અનુભવી પોતાની વૃત્તિઓને કાબુમાં લાવી વૈરાગ્ય તરફ વાળવી ને આ દ્રષ્ટિથી પહેલાંના સ્વયંવરનો રિવાજ જરૂરનો છે, ને ટકાવોજ જોઇએ. ને વૈરાગ્ય દ્રષ્ટિને અલગ કરીએ તો પણ સાંસારિક-વ્યવહારિક-દ્રષ્ટિથી તે પદ્ધતિની જરૂર છે. કારણ કે આ જમાને [illegible]માં હજારો ત્તદની ભુલ ભુલા-

ઝણીમાંથી પસાર થવાની જરૂર પડે છે. ને તેમાંથી બચવા સારા સાથીની જરૂર છે, તે પત્ની છે. સ્ત્રીથી ઘણી ફરજો અદા થાય છે. તે મિત્ર છે. વૈદ્ય છે, ભ્રાતા છે, ચાકર છે, ઘરમાં સચિવ છે, રક્ષક છે વગેરે વગેરે જે કંઇ ઉપમા આપો તે તે છે ટુંકમાં તે કલ્પવૃક્ષ સમાન છે. તે પોતાના ભોગે પણ પતિને સુખ આપે છે. પોતાના શીલવ્રતમાં તત્પર રહે છે. તે રીતે પોતાનું ને પોતાના આશ્રિત જનોનું કલ્યાણ કરે છે તે સાથે પુરૂષ પણ ચારિત્રવાન, સત્યપ્રિય, ઉદ્યમી, શાણો ને બળવાન હોવો જોઇએ. આમ પોતાને યોગ્ય પતિ પત્ની મેળવવા પુત્ર પુત્રીઓનેજ પોતાની પસંદગી કરવા દેવી જોઇએ. માબાપોએ તો તેમને તેમની ઘતી બુધ્ધોનીજ માર્ગદર્શક સૂચના કરવી જોઇએ ને એ તો દેખીતુંજ છે કે તે સ્વપસંદગી કરવા ઉપરની બીના સમજી શકે તેટલી યોગ્ય ઉમરનાં ને કેળવાએલ બાળકો હોવા જોઇએ. પ્રથમ તે પ્રથા હતી. હાલ પણ જો આ પવિત્ર પ્રથા અનુસરવામાં આવે તો! પણ વો દીન કહાંસે કિ મિયાંકે પાંવમે જુતિયાં.

આજ કાળને અનુસરીને કન્યાનું ભવિષ્ય બાપના હાથમાં આવી રહ્યું છે. પ્રથાનું રૂપાન્તર જરૂર તે વખતને અનુકુળ લાભપ્રદ હશે, પણ તેમાં ધીમે ધીમે દોષો દાખલ થવા પામ્યા છે. સત્તા બાપના હાથમાં એટલે તેનો સદુપયોગ યા દુરૂપયોગ બાપની ઇચ્છા ઉપર અવલંબે છે તે સત્તાથીજ "ગાય ને દીકરી જ્યાં દોરે ત્યાં જાય" એ કહેવત ચાલુ થઇ છે તેથીજ દીકરીનો બજારની વસ્તુ તરીકે વિક્રય કરવામાં આવે છે તેથીજ બાપ પોતાના નીચ સ્વાર્થ ખાતર પોતાનાજ અંશ ને પ્યારા બચ્ચાંની અમૂલ્ય જીંદગીનો ભોગ આપે છે. કીડી મંકોડી જેવા જીવો માટે પ્રાણ વરસાવનારા, દેવ દેવીઓને અપાતા બકરા મેંઢાના ભોગ માટે કકળાતા ને બચાવવા ધાતા આ જૈન ભાઇઓ પોતાના વહાલાં બચ્ચાં માટે કુળની મોટાઇની આશથી અંજાઇ લગીર વિચાર સરખો પણ કરતા નથી. ખરેખર કન્યા દેવી તે વખતે તેમનાથી પોતે અપવિત્ર થતી હોય તે ખ્યાલથી તેમનાથી રીસાઇ દૂર બેઠેલી જણાય છે. જે વર કન્યાના સંબંધ થાય છે તેમાં ઘણાખરા બીલકુલ બાલકી ને અણુછાજતા હોય છે. આચારવિચારે ને ઉમરે કજોડાં થાય છે. અરે! ઉમરનાં કજોડાં તો ટુંક મુદત માટે હોઇ વિચારપૂર્વક નિભાવી લેવાય પણ આચારવિચારે કજોડાં તો આખો મનુષ્ય ભવ દુઃખમાં વ્યતીત થાય છે. વર વહુને બારમો ચંદ્રમાં હોય છે. ઉપરથી જોનારને તે જોડું કદાચ સુખી જણાય પરંતુ જો વ્યક્તિઓનાં-મનુષ્યોનાં-જીગર ચીરી જોશો તો ત્યાં હજારો નહિ બલ્કે લાખોની સંખ્યામાં માર્મિક ઘા પડવાથી તેમાંથી ટપકતું રૂધીર નિઃસાશાના અગ્નિથી બળી જતું જણાશે. ટુંકમાં નરકાગારનો ખ્યાલ આવશે. જ્યારે તે સત્તાના સદુપયોગથી ઉપરથી ઉલટુંજ સ્વર્ગનો અનુભવ થશે. અમારા ભુમડ ભાઇઓ આ કજોડાં શું તે પણ સમજતા નથી, આથી વાંચનારને ખ્યાલ આવશે કે આ જનતા કેટલી કેળવાએલી ને આગળ વધેલી છે. જ્યારે જ્યારે અમારા બંધુઓ પંચ મેળવે યા મેળાવડામાં ભેગા થાય છે ત્યારે અમુકનો આ ગુન્હો ને તમુકનો તે ગુન્હો, તે માટે ફલાણાને દંડો ને તે વસુલ કરો ને કન્યા લેવા દેવા સંબંધી કાર્યવાહી કરે છે પણ જ્ઞાતિમાં આ બાબતમાં સુધારો કરવા બીલકુલ લક્ષ જતું નથી. જાણે કંઇ કરવાપણું હોયજ નહિ પણ વિચાર કરે ત્યારેને ?

હવે બારીક વિચારથી જણાશે કે માબાપોની હાલની સત્તા તેમને ગળે બલા વળગવા જેવી થઇ પડી છે, કારણકે અમારા ભુમડો પૈસાદાર કે ગરીબ હોય તે પોતાને ત્યાં છોડીઓનો જન્મ ઇચ્છતા નથી, ને જો છોડી અવતરી તો તરતજ ટાઢીઓ તાવ આવે છે! આમ જ્યાં ભવિષ્યના સ્ત્રીરત્નની અવહેલના થાય છે ત્યાં બાપ લોકોનો ત્રાસ કેમ ન હોય? આમ માબાપો જો છોડીનો જન્મ સહન ન કરતાં છોકરોજ ઇચ્છે છે તો હું પુછું છું કે તેમ બનવું અશક્ય છે છતાં

કુદરતથી તેમની એ અભિલાષા પૂર્ણ, થાય તો અમારા હુમડ ભાઇઓ બધા છોકરાજ પામે ને એક પણ છોકરી નહિ. ને પછી બધા છોકરા બેઠા બેઠા માળાઓ ફેરવે. જ્ઞાતિબહારની કન્યા ખપે નહિ એટલે બધા કુંવારાનું વ્રત આદરે, તેમ થાય તોજ તેમની આંખો ઉઘાડે. હાલ તેમની વસ્તી ૭૦૦ ઘરથી ઘટીને કેટલી રહી છે ને તેનું કારણ શું તે જાણવાની પણ તેમને દરકાર નથી. પણ જો તેમને જ્ઞાતિમા કન્યાઓ કેટલી છે તો તે તરત કહી આપશે, કારણ તે અમારૂં મોક્ષ છે. જોયું કે અમારે ત્યાં કન્યા જન્મો નહિ ને બીજાની કન્યા મારા છોકરા માટે જોઇએ, એમ કયાએ બન્યું સાભળ્યુ છે? ને દરેક એવી ઇચ્છા કરે તો શું થાય?

આમ છોકરી પારકા ઘરની વસ્તી ગણાય છે. તે તો પરઘેર જવાની તો તો આપણે તેને માટે નાહક ખર્ચ શા માટે કરવું ને પરણાવવાનું ખર્ચ તો 'બીજા ખર્ચનો જે ઊારો થયો તે ખરો. વળી છોડી કહી એટલે દુઃખનો દરીઓ. ને જેથી દુઃખ થાય તે વસ્તુ તરફ માણસની ચાહના કેવી હોય? અને ખરેખર માણસનુ ચાલતુંજ હોય તો આ છોડીઓને ન્યાય દેશપાર કરે અગર દુધ પીતી કરે! આવી પરિસ્થીતિ ને બેદરકારીથી છોકરીને અક્ષર જ્ઞાનથી અજ્ઞાન રાખવામા આવે છે. કારણકે તેમને કયા રળવા જવું છે કે પાટે (વ્હેવાર કરવા) બેસવું છે? વળી ઘરના કુસસ્કારોથી તે કુમળી વયની છોડીઓ કુસસ્કારી બને છે ને તેથી જન્મતેજ અનેકસ્કાર રાખે છે. આમ તે અમુલ્ય રત્નોને પત્થર બનાવી મૂકે છે. ને ખર્ચના હિસાબી હુમડો કુમર થતા પહેલાંજ લગાડી દે છે. ને ન થી સ્વાદન્ત્ર્યમર્હતિ એ સિદ્ધાંત સિદ્ધ કરી દેખાડવા પહેલેથીજ જાણે રસ્તો કરી મૂકતા હોય એમ જણાય છે. આ વખતે પણ તેવાં બાળ લગ્ન ૧૦ થી ૧૨ થયાં સાંભળ્યા છે. ખરેખર જેનો નિયમ છે. તે જ્ઞાતિઓના મઝામાં તે ...ગ્યા દેખાતા મિથ્યાત્વ કેમ ઉતર્યો હશે? આમ

અપરિપક્વ ઉમરે થયેલ લગ્નથી વરવધુ ઢીંગલા ઢીંગલી (બીજું શું કહેવાય) ઓની શારીરિક ને માનસિક સ્થીતિ પર શું અસર થાય ને તેનું કેવું પરિણામ આવે તે કહેવાની ભાગ્યેજ જરૂર હોય. આમ પરીણીત બાળકો અજ્ઞાન રહે છે. અપવિત્ર સસ્કારો ને વિચારોથી તેમનાં ચારિત્ર બગડે છે. ને અનેક ક્ષુદ્ર દર્દોના ભોગ થઇ પડે છે, પીડાય છે, રીબાય છે ને ઘણુંખરૂં અલ્પવયમાં મોટા ઘરના મહેમાન થઇ જાય છે, માબાપના પર અકથ્ય કન્યા-વિધવાનું અસહ્ય દુઃખ મૂકતા જાય છે. આ વિધવાઓને મા બાપો ધગતા અંગારાથી સળગતી સગડી ગણે છે અને આ વિધવાની શી દશા? સાસરે સંપ નહિ ને પિયરે જંપ નહિ. અનાથ ને ઓશિઁ‌ંયાળ કેટલી? મેંણા ટુણા ખમવા પડે. પોતાની આજીવિકાનો વિચાર વગેરે વગેરે દુઃખનો પારાવારજ નહિ. આ વિષય માટે કોઇ અન્ય પ્રસંગ લઇશું તે સિવાય આ લખાણ ઘણું લાંબુ થઇ જાય એમ છે. વળી બચેલ વર-વધુ ભવિષ્યમા પોતાની સંતતિને કેમ ઉછેરવી કેળવવી વગેરેથી અજ્ઞાન હોવાથી કંઇ કરી શકતા નથી ઉલટું તે સંતતિ જન્મીને મરવાને યોગ્ય હોય છે ને જીવે છે તો તે અજ્ઞાન કુસંસ્કારી, રોગિષ્ટ, અલ્પાયુષી, સત્વહીન, બાયલી, બીકણ, બાયકાઇ, વગેરે દુર્ગુણોથી ભરેલી નીપજી દુનીયામા ભારરૂપ થઇ પડે છે. અરે ક્યા છે હાલ પહેલાંના મહાવીર બાહુબલ સ્વામી, અભય કુંવર, શીવાજી, પ્રતાપ ને ભામાશાહ જેવા વીર રત્નો! વળી નાની ઉંમરમાં સત્વહીન થવાથી દંપતિને ભવિષ્યમા બાળક નથી થતા ત્યારે પુત્રવધુને ચડતા દિવસની રાહ જોનાર મા-બાપ ભુલી જાય છે કે તેમનુ સત્યાનાશ તેમનાજ હાથે થયેલુ છે ને તેથી બાવા, જતિ, ધાગા મંતર કરે છે ને પછી વખત તે આડે માર્ગે દોરાય છે ને કુટુંબમા કલેશ ઉત્પન્ન કરે છે. વળી વરપક્ષમા પૈસાદાર માણસ હોય તો ઉપર પ્રમાણેની સ્થીતિમાંથી ઉત્પન્ન થયેલ પરિણામે કમનશીબે છોકરૂં ન થયું તો બિચારી વહુના ભોગ

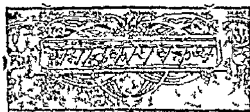
॥श्रीवीतरागाय नमः ॥

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः ।
संबोधयत्पत्रमिदं प्रवर्त्ततामू, दैगम्बर जैन समाज मात्रम् ॥

वर्ष १९ वाँ. ‖ वीर संवत् २४४८. श्रावण विक्रम सं० १९७८. ‖ अंक १०॥



हमारे पाठक अच्छी तरहसे जानते हैं कि हमारे परमपूज्य तीर्थक्षेत्र, सिद्धक्षेत्र, अतिशयक्षेत्र तथा प्राचीन धर्म स्थानों व

तीर्थ-रक्षा फंड।

प्रतिमाओंकी रक्षाके लिये हमारे पूज्य नेता स्वर्गीय दानवीर जैनकुलभूषण सेठ माणिकचंद हीराचंद जौहरी अतीव परिश्रम करके **भारतवर्षीय दि० जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी** स्थापित करागये हैं, जिसका कार्य सुचारु रूपसे चल रहा है और अभी इसके महामंत्री भी सेठजीके धर्मप्रेमी और परोपकारी भानजे सेठ चुन्नीलाल हेमचंदजी झरीवाले हैं जिनके पुत्र सेठ रतनचंदजी बी० ए० इस कमेटीके कार्योंकी देखभाल अच्छी तरहसे कर रहे हैं तथा कमेटीकी पांच वर्षोंकी रिपोर्ट भी छपा रहे हैं जो शीघ्र ही प्रगट होगी परंतु हमारे सब भाई जानते हैं कि इस कमेटीका चालू खर्च निभने तथा तीर्थोंकी रक्षाके लिये कोई स्थायी फंड न होनेसे कमेटीके कार्यकर्ताओंने पांच वर्ष हुए एक ऐसा सुलभ प्रस्ताव प्रदर्शित किया है कि जो किसी गरीब भाईको भी भारी न लगेगा। यह प्रस्ताव सिर्फ यही है कि तीर्थरक्षामें स्थायी आयके लिये प्रत्येक दि० जैन गृहके पीछे सिर्फ एक २ रु० प्रति वर्ष लेना और यह एक २ रुपया सब दि० जैनी भाई दशलाक्षणी पर्वमें अपने २ यहां एकत्र करके तीर्थक्षेत्र कमेटीको भेज देवें। प्रति वर्ष घर पीछे १) देना कोई बड़ी बात नहीं है। तो भी हम यहां तक मानते हैं इस प्रस्तावका अमल बहुत ही कम हुआ है अर्थात आज तक बहुत ही कम रकम तीर्थरक्षा फंडमें वसूल आई है इसीसे इस वर्ष कमेटीके महामंत्रीने एक अपील प्रकाशित की है कि दशलक्षणी पर्वमें सब भाई अपने २ मंदिरोंमें इकट्ठे होते हैं और मंदिरके लागकी उगाही होती है तथा धार्मिक कार्योंके विचार भी इसी मौके पर होते हैं उसी समय सब भाइयोंको सलाकर पंचायती द्वारा इस तीर्थरक्षा फंडका एक २ रुपया वसूल करनेका प्रबंध करें जिससे हरएक शहरकी वसूली एक साथ भेजी जासके। बम्बईके गुलालवाडीके मंदिरमें ऐसा ही प्रबन्ध हुआ है अर्थात् मंदिरमें हो मंदिरके

वहिवटकर्ताओं द्वारा सबका एक २ रुपया इकट्ठा होजाता है और इकट्ठी रकम कमेटीको भेजी जाती है इसी प्रकार सब स्थानोंपर प्रबंध होनेकी आवश्यक्ता है। हमारे अनेक तीर्थोंपर अनेक प्रकारके झगडे चालू हैं जिसकी रक्षाके लिये द्रव्यकी आवश्यक्ता पडती ही है इस लिये आशा है कि तीर्थरक्षा फंडका एक २ रुपया देनेके लिये हमारे भाई प्रमाद नहीं करेंगे। इस फंडकी रसीद बुकें भी बम्बईसे मिल सकती हैं। पत्रव्यवहारका पता—मेनेजर भारत० दि० जैन तीर्थक्षेत्र कमेटी, हीराबाग, गिरगाम—बम्बई है।

* * *

हम कई दिनोंसे सुन रहे हैं कि विलायती कपड़े तैयार करनेमें गाय की चर्बीका उपयोग होता है परंतु विलायतके एक संवाददाताने यह लिखा

विलायती कपडे-में घोर पाप।

था कि इसमें गायकी चर्बी नहीं परंतु कुछ अंशमें भैंसेकी चर्बीका उपयोग होता है इस पर विहार की साधु महासभाके मंत्रीने 'राजस्थान केशरी' पत्र (वर्धा)में एक पत्र प्रगट कराया है उसमें वे लिखते हैं कि—'एस० निरवेट पियरी ब्लोक सार्टिंग'' नामक अंग्रेजी पुस्तकके देखनेसे पता चलता है कि मानचेष्टर (इंग्लंड)के बने हुए कपडोंमें जहर और चर्बी दी जाती है। यह पुस्तक गत जनवरी १९२२में छपी है। मानचेस्टर इम्पोर्ट एन्ड कंपनी ६९ किंग स्ट्रीट लंडनमें मिलती है। इस पुस्तकके ७ और ९ पेजमें चर्बी लगाई जानेकी बात लिखी है। पेज ११–१२ और १३में साफ २ लिखा है कि **बैल, गाय और भैंसोंकी चर्बी** जाती है। कोबील और ह्युम साहबकी पुस्तकोंमें लिखा है कि **विलायती रंगीन कपडोंमें** १०० गेलनमें १०० गेलन **गाय सूअरका खून (लोहू)** दिया जाता है जिससे रंग पक्का होजाता है आदि।

यह एक ऐसी विधर्म बात प्रगट हुई है कि जिसको बांचकर हरएक जैन, हिन्दू, पारसी, मुसलमान सभी हिंदवासियोंके हृदय कंपायमान होंगे कि जिस विलायती चटकमटकदार कपडोंको हम वापरते है उसके तैयार होनेमें तो पारावार हिंसा होती है जिसके पापके भागी हम भी होते हैं और जिसके वापरनेसे हमारा धर्म और धन लुटा जा रहा है।

ऐ जैनियों! अब तो सचेत हो जाईये और अपने घर और मंदिरोंमें जहां २ विदेशी अस्पर्श कपडे रखे हों उनको बहार कर दीजिये और प्रतिज्ञा कर लीजिये कि हम अब कभी भी विलायती कपडे नहीं खरीदेंगे। अब देशमें हमारे पूज्य कर्मवीर नेता **महात्मा गांधीके** उपदेशसे हाथसे कते और हाथसे बुने टिकाउ खादीका प्रचार हो रहा है और म० गांधीजीका कहना है कि यदि सारा हिंदुस्थान विशुद्ध खादीका ही उपयोग करने लग जाय तो प्रतिवर्ष हिंदके १९०००००००० (सवा अबज ६०) परदेश जाते बच जायगे और हिंदके प्राचीन शिल्पका उद्धार हो जायगा। स्वदेशी खादी वापरनेमें धन धर्म दोनोंका बचाव होता है तब क्यों नहीं अब विलायतीका मोह छोडा जाय? यहांकी मिलोंमें भी कपडा साफ करनेमें गायकी चर्बीका उपयोग

होता ही है इस लिये हिंदकी मिलोंके कपडोंका धर्ताव भी न करना चाहिये तथा रेशमी वस्त्र हिंसामयी अतीव अपवित्र है यह सब कोई जानते हुए भी खुशी२से वापरते हैं उसका मोह अब तो त्याग करना चाहिये और विशेष करके हमारे मंदिरोंमें तो रेशमी या विलायती सूती कपड़ेका एक भी वेष्टन, चंदोवा, तोरन, धोती दुपट्टे आदि नहीं होने चाहिये। शास्त्रोंके सभी रेशमी वेष्टन बदल कर उसपर विशुद्ध गाढ़ेका वेष्टन पीला रंगके चढ़ादेना चाहिये। आशा है हमारे इस दशलाक्षणी पर्वमें हमारे जैनी भाई इस बातका घर२ उपदेश करेंगे और विशुद्ध गाढ़ेका ही प्रचार होनेके लिये घर तथा मंदिरोंमें प्रयत्नशील होंगे।

*   *   *

पोडशकारण पर्वमें कर्तव्य। हमारा सोलहकारण पर्व इसी वदी १ से प्रारंभ होचुका है और आश्विन वदी १को इसकी पूर्णाहुति होगी। इस पर्वमें हरएक मंदिरमें अभिषेक, पंचपूजा, सोलहकारण पूजन, तत्वार्थसूत्र पाठ, सहस्रनाम पाठ आदि होते हैं परन्तु हम जहांतक जानते हैं ऐसे बहुत ही कम मंदिर होंगे जहां सोलहकारण धर्मकी अलग २ भावनाओंका नित्य अर्थ सुनाया जाता हो। कई भाई बहिन यह व्रत भी करते हैं परंतु वे सोलह भावनाओंके नाम तक पूरे नहीं जानते हैं तो अर्थकी तो बात ही कहां रही और बिना व्रतका माहात्म्य जाने उसका फल कैसे इसलिये हरएक मंदिरमें इन दिनोंमें नित्य दर्शनविशुद्ध्यादि सोलह भावनाओंका अर्थ खुब भाई बहिनोंको सुनाना चाहिये तथा तत्वार्थके अर्थ भी नित्य होने चाहिये। सोलहभावनाकी अलग पुस्तक भी मिलती है तथा श्री रत्नकरंड श्रावकाचार टीकामेंभी इन भावनाओंका विस्तृत वर्णन है उसका वाचन अवश्य होना चाहिये।

*   *   *

भंडारका द्रव्य। हमें जहांतक मालूम है हमारे अनेक मंदिर और तीर्थ ऐसे है जिनमें हजारों तो क्या लाखों रुपयेका फंड है परन्तु उनके शास्त्रभंडार देखेंगे तो वहां इनेगिने ही शास्त्र होंगे। हम समझते हैं कि जहांतक हो हरएक शास्त्रकी एक २ प्रत तो अवश्य होनी चाहिये इसलिये जहां २के मंदिरोंमें जो २ ग्रंथ न हो उसकी एक २ प्रति मगा लेनी चाहिये। लिखित न बन सके तो जितने शास्त्र छप चुके हैं उनकी एक २ कापी मंगा लेनी चाहिये। हमारे घरके द्रव्योंसे नहीं तो मंदिरके भंडारके द्रव्यसे शास्त्र खरीद करना प्रथम कर्तव्य है और भंडारके द्रव्यका सच्चा उपयोग करनेका है। द्रव्य जमा रखकर व्याज बढ़ा २ कर खूब रकम इकट्ठी करना और धार्मिक कार्यमें उपयोग न करना कुछ भी कार्यकारी नहीं है। आशा है इस पर्वमें भंडारके द्रव्यका उचित व्यय करनेके लिये हरएक पंचायती प्रयत्न शील होगी।

इसने गतांकमें ' ऐलक पन्नालाल दि० जैन सारस्वती भवन ' बम्बईकी

हमारी अंतरंग भावना। प्रशंसा करते हुए लिखा था कि इसमें ऐसे वाचनालय (लायब्रेरी) का प्रबंध होनेकी भी आवश्यक्ता है कि जिसमें सब जैनपत्र मगाये जाय और नियत समयमें बैठकर सब जैनी भाई उस वाचनालयका लाभ लेसकें तथा ऐसा प्रबंध नहीं हुआ है सो होना चाहिये आदि, इसपर इसके मंत्री ठाकरदासजीने " जैन गजट " अंक २० में " वापडियाजीकी अतरंग भावना " नामक लेख छपाया है उसमें लिखा है कि वापडियाजीने तो चारों ओर हल्ला मचा दिया है, जैनमित्र और दिगंबर जैन न देना हो तो नहीं दवें परंतु वाचनालयके विषयमें ऐसा जाहेरमें क्यों लिखा आदि, परंतु समाजने हमारा लेख पढ़ा ही होगा उसमें हमने सिर्फ वाचनालयके प्रबंध होनेकी ही सुचना लिखी थी, पत्र देने न देनेकी रायके विषयमें बात ही नहीं थी। राईका पर्वत बनाना और जरा २सी बातमें समाजको बार २ भड़काना, ठाकरसीदासका ही काम है।

सुलभ जैन ग्रन्थमालाके दो नये ग्रन्थ।

धर्म-परीक्षा—श्री अमितगति आचार्य कृत मनोवेग पवनवेगकी अपूर्व मोघजनक कथाका हिन्दी अनुवाद। पृ० १९० और मू० सिर्फ ।=)

तीर्थयात्रा दर्शक—इसमें अपनी सभी यात्राओंका परिचय है। पृ० २७१ और मूल्य सिर्फ।) मैनेजर, दि०जैन पुस्तकालय सूरत



कुंथलगिरी—के श्री कुलभूषण ब्रह्मचर्याश्रमका दशवां वार्षिकोत्सव श्रावण सुदी १३-१४-१५ को होनेवाला था।

'विश्वबंधु'—नामक नवीन मासिक पत्र गोलालारीय दि० जैन सभाकी ओरसे पं० बंशीधरजीके संम्पादकत्वमें जखौरा (झांसी) से शीघ्र ही प्रकट होगा।

कुंरकुंथ (सोलापुर)—में देवी फीरंगीबाईको बकरे, भैंस, मुर्गेका वध होता था वह बंद होकर पुत्रा (पूरणपोली)का नैवेद्य अबसे चढ़ेगा।

ऋषभ ब्रह्मचर्य आश्रम—हस्तिनापुरसे जयपुर आगया है और सुचारु रूपसे चल रहा है। आश्रमको जनवरीमें ८३४।=) फर्वरीमें (१००) मार्चमें ९७४।।।-) अप्रेलमें ११९७) मईमें १९४) और जून माहमें २००३।) की सहायता मिलीथी। तथा १००धोती जोड़े सेठ मदनमोहनजी, २० थान गाढ़ेके मिश्रीचंदजी, तथा घी शक्कर मिठाई आदि दानमें मिले थे। दातारोंको कुछ न कुछ सहायता इस आश्रमको दशलाक्षणी पर्वमें भेजनी चाहिये।

कामा—में भादो वदी १ से भादो सुदी १५ तक ठाठबाटसे तीन लोक विधान होगा।

सतना—के महावीर जैन औषधालयका गत वर्षमें ३९९ दुखियोंने लाभ लिया था।

सिद्धवरकूट- क्षेत्रमें इस साल माहुवा (गिजाई) की उत्पत्ति नहीं हुई है इस लिये यात्री गण यात्राको आसके हैं। इस क्षेत्रसे २ चक्रवर्ती और १० कामदेव कौन २ मोक्ष गए। उनके नाम जिनको मालूम हों भेजना चाहिये।

म्हैसुर-में गत ता० ९ को जैन एज्युकेशन फंडकी सभा हुईथी उसमें नातेपुते निवासी शेठ रामचंद धनजीने ५०१) सहायता की थी।

दशलाक्षणी पर्व-में पं. देवकीनंदनजी शास्त्री देहलीसे. कूचामें ठहरेंगे और धर्मोपदेश करेंगे।

आवश्यकता-ऐलक पन्नालाल दि० जैन सरस्वती भवन बम्बईके लिये एक उपदेशककी आवश्यकता है जो कर्नाटक भाषाका जानकार हो। पता-ठाकरसीदास जैन, सुखानंद धर्मशाला मुम्बई नं० २

तारंगाजी-में तारंगाहिल स्टेशनपर धर्मशाला बनानेके लिये शेठ डाह्याभाई प्रेमचंद जौहरी (बम्बई) ने तीन हजार रु० देने स्वीकार किये हैं।

तीर्थ क्षेत्र कमेटी-के महामंत्री सूचित करते हैं कि जुगमंदिरदास जैन बाराबंकी कमेटीके कुछ रु०का घुटाला करके चला गया है। सब भाई ऐसे आदमीसे सावधान रहें।

प्राचीन श्रावकोद्धारिणी सभा-गत मासमें ब्र० शीतलप्रसादजीने रांची मानभूम जिलेमें भ्रमण करके मानभूम सिंहभूम गेजेटियरसे प्राचीन श्रावक तथा प्राचीन प्रतिमाओंका पता लगाया है कि मयूरभंजमें बहुत जैनी थे व वहां २ प्राचीन प्रतिमाएं, २००० वर्षकी हैं। उनके चित्र पार्श्वनाथ व महावीर स्वामीके मयूरगन आर्किओली पुस्तकमें दिये हुए हैं तथा मानभूममें पाकबीरमें ५०७ मंदिरके अवशेष ९-६हाथ ऊंची पद्मप्रभु व अन्य मूर्तियां हैं। यहां मानभूम-रांचीमें १००००से अधिक प्राचीन श्रावक हैं जो पार्श्वनाथ भगवानको कुलदेवता मानते हैं, जीवदया पालते हैं, आमिष भोजन व मद्यपान नहीं करते, शुद्रके हाथका जल तक नहीं पीते, गूलर आदि कुछ नहीं खाते, दिनमें भोजन अच्छा समझते हैं। इनको श्रावक धर्म समझानेकी आवश्यकता है तथा जहां २ ग्रामोंमें चैत्यालय नहीं है स्थापित होने चाहिये तथा प्राचीन मंदिरोंका जीर्णोद्धार होनेकी तथा प्राचीन प्रतिमाओंके संग्रह करनेकी आवश्यकता है इस लिये कलकत्तामें स्याद्वाद प्रचारिणी सभाकी ओरसे रा० ब० लाला लक्ष्मीचन्दजीके सभापतित्वमें एक विराट सभा हुई थी जिसमें ब्र० शीतलप्रसादजीने इन मानभूम व रांचीके प्राचीन मंदिर व श्रावकोंका वर्णन करके इनके उद्धारकी आवश्यक्ता बताई जिसका समर्थन पं० जयदेवजी, शेठ बैजनाथजी, प० झमनलालजी आदिने किया और सर्वसम्मतिसे **"प्राचीन श्रावकोद्धारिणी सभा"** की स्थापना होगई जिसका उद्देश यह निश्चित हुआ कि बंगाल और विहार प्रांतमें जो प्राचीन श्रावक हैं उनको श्रावक धर्म समझाकर उद्धार किया जाय, उनके स्थानोंमें चैत्यालय व पाठशालाएं स्थापित किये जावें, पुस्तकोंका प्रचार किया जावे व प्राचीन मंदिरोंका जीर्णोद्धार किया जावे। इसके कार्यकर्ता इस प्रकार नियत हुए संरक्षक, ब्र० शीतलप्रसादजी, सभापति शेठ रतनलाल राजी, उपसभापति-शेठ दयाचन्दजी,

शेठ रामचन्द्रजी व शेठ मदनलालजी पांड्या, मंत्री शेठ बैजनाथ श्रावगी नं० १६० मुतापट्टी (कलकत्ता), उपमंत्री सेठ मानमलजी, कोषाध्यक्ष सेठ प्रेमचंद पन्नालालजी, समासद पं० जयदेवजी, पं० झम्मनलालजी आदि २९ महाशय। इस कार्यके चलानेके लिये अपील होते ही २५०) स्याद्वाद म० समाने दिये और तुर्त ही बड़ी २ रकमें बोली गई अर्थात करीब ६०००) का चंदा हो गया जिसमें १०००) सेठ चन्दनमलजी ८००) सेठ जोखीराम मुंगराज, ९००) सेठ प्रेमसुखजीने दिये हैं। इस धर्म प्रभावनाके कार्यमें भारतके समी जैन भाइयोंको सहायता ना चाहिये। मंत्रीसे पत्र व्यवहार करना चाहिये व प्राचीन श्रावक नामक पुस्तक (इसके विवरणकी) प्रगट हुई है वह कार्ड लिखकर मंगालेनी चाहिये। पुज्य ब्र० शीतलप्रसादजीने कलकत्तामें ही चातुर्मास किया है और इसी कार्यमें अपना विशेष योग देरहे हैं।

रतलाम बोर्डिंगमें आवश्यकता—सेठ माणेकचंद पानाचंद दि० जैन बोर्डिंग रतलाममें दि० जैन कौमके विद्यार्थियोंकी आवश्यक्ता है (हुमड़के विद्यार्थियोंको प्रथम पसंदगी दी जायगी)। प्रवेश होनेवाले तुर्त ही सुप्रिन्टेन्डन्ट को अर्जी भेजें।

बम्बईमें—गत ता० १९ जुलाईको शेठ नत्थूसा पासूसा एलीचपुर पधारे थे और सभा करके सुबकी मुक्तागिरी क्षेत्रके मुकद्दमेका हाल सुनाया था।

लेखक चाहिये—ऐलक पन्नालाल दि० जैन सरस्वती भवनके लिये कई लेखकोंकी आवश्यक्ता है तथा ऐसे लेखकोंकी भी आवश्यकता है जो कानड़ी लिपिसे नागरी लिपिमें लेख लिख सकें। पत्रव्यवहार—मंत्री सरस्वती भवन, सुखानंद धर्मशाला बम्बई नं० ४से करें।

परीक्षा—मालवा प्रां० दि० जैन परीक्षालयकी ओरसे परीक्षा भादों वदी ८ ता० १६ अगस्तसे सभी कक्षाओंकी ली जायगी।

जैनन्याय—की परीक्षा लेनेका प्रबंध इन्दौरके सं० साहित्य भवन परीक्षालयने किया है। परीक्षा जनवरीके अंतमें होगी। पता—मंत्री परीक्षालय, विद्याबानी—इन्दौर।

मदरासमें—सेन्ट्रल जैन लायब्रेरीकी स्थापना जैन गेझेटके सम्पादक सी० मल्लीनाथके प्रयत्न से प्रारंभ हुई है। जैन भाईयोंको पत्र व पुस्तकें भेंट भेजना चाहिये।

महाविद्यालय—मथुरासे ब्यावरमें लाया गया है। और अधिष्ठाता ब्र० ज्ञानानंदजी हुए हैं। ब्यावरके भाईयोंने १५०) मासिक सहायता देना स्वीकार किया है।

त्यागियोंका चातुर्मास।

निम्न लिखित त्यागी ब्रह्मचारियोंने नीचे लिखे स्थानों पर चातुर्मास किया है।

मुनि चंद्रसागरजी—परतापुर (बांसवाड़ा, मेवाड़)
ऐल्लक पन्नालालजी नांदगांव (नासिक)
ब्र० शीतलप्रसादजी नं. २ रामा उदमैनस्ट्रीट कलकत्ता
उदासीन चांदमलजी " " "
" गेबीलालजी मंदसौर (मालवा)
" पं० पन्नालालजी गोधा " "
" धामीलालजी " "
ब्र० छोटेलालजी ब्यावर (राजपूताना)

ब्र० भगीरथजी वर्णी ब्यावर „
मुनि आदिसागरजी–बाहुबली पहाड
(हातकलंगडा–कोल्हापूर)
मुनि शांतिसागरजी–ऐनापुर (कुडची, हुबली)
ब्र० ज्ञानानंदजी–जयपुर (ह० ब्र० आश्रम)
उदासीन पं० दीपचंदजी मास्टर–दाहोद
ब्र० सुखानंदजी–हांसी (हिसार)
प० सुरेंद्रकीर्तिजी–सोजीत्रा (पेटलाद)

विशेष त्यागी ब्रह्मचारियोंके चातुर्मास्का हाल जिनको मालूम हो लिख भेजें तो प्रकट करेंगे।

सावधान–जिस अनंतकीर्ति मुनि नामधारी धूर्तका समाचार हम आगे प्रकट कर-चुके है उसीके विषयमें कुडलपुरके त्यागी गोकुलप्रसादजीकी सूचनसे मौजा किदरये (सागर) से हमारे पास खबर आई है कि यह धूर्त जेठ मासमें यहां आया था व शास्त्र विरुद्ध विपरीत क्रिया व बहुत अनर्थ करगया था, मांस भक्षी जाति के घरोंमें घुसकर भोजन तक लिया था इसलिये इस धूर्तसे सर्व भाई सावधान रहें। (२) दूसरे मुनिनामधारी धूर्त हर्षकीर्ति (दाहोद) की चेली चतुर्मति (आर्यिका नामधारी) ने भींडर (मेवाड) में जाकर चातुर्मास करदिया है और स्त्रियोंको बहकार कर खूब ढ़ोंग मचा कररही है। सुना है कि केशलोंचके बहानेसे अभी अभी करीब ५००) रु भोली समाजसे लेकर हर्षकीर्तिके पास पहुंचाये हैं। हमारी महासभाके उपदेशकोंको ऐसे स्थानपर भेजकर लोगोंको सचेत करना चाहिये।

जैन जेलमें–बिठोरिया (सागर) में हरिश्चन्द जैनको स्वराज्य कार्यमें योग देनेके लिये ७ मासकी सजा हुई है।

नियमनो भंग.

गुजराती दिगम्बर दशा हुमड माटे.

दरेक कोमनी अंदर विवाह तथा लग्न जेवा उपयोगी, व्यवहारिक प्रसंगो माटे कोमना डाह्या नेताओ पोतानी एकनीज स्थीति पर नहिं वीचा-रतां कोमना दरेक मनुष्योनी स्थिति ध्यानमां लइ समय संजोगो तथा वातावरण वीगेरे दरेक बाबतो जोइ शांत मनथी विचारी केवळ निस्वार्थ सेवा, केवळ कोमना हितार्थे बजावा सारु, दढ चित्तथी नियमोनुं बंधारण रचे छे, अने ते नियमोनुं कोमना दरेक मनुष्यो पासे पालन करावी, कोमने उन्नत दिशामां क्रमे क्रमे लइ जवानुं सौभाग्य प्राप्त करे छे

आज सुधीमां आपणे घणे स्थळे एकत्र थइ बहु बहु उहापोह करी तेमज दर वर्षे सभाओ भरी समाज हितनी चर्चा करी सारा सुधारा कर्या छे, वधारे पडती तेमज खर्चाळ रुढिओने उखेडी फेंकी दीधी छे, विवाह, लग्न, संबंधी, जे रुढिओ अधोगतिमां लइ जनार हती, तेने कंइक सुधारी सहेज आगळ वध्या छीए एम मानी आंखो मीची, तेटलामां तो लग्ननी शरुआत थइ, आजसुधी केडना रोग कहेवातो हतो आ वर्षे उमड रोग कहेवायो वगर मुहुर्ते लग्नना ल्हावा लेवाने जप जप करी करावी. एक बे मीतिए लग्नना वाजा घेरेघेर वाग्या, लहाणु लेवामां कोइने कयास रही नही. तेमज पहला लेवामां के आपवामां पण ख्याल राखी नथी

कन्यावाळाओना सहेज दबाणथी घणा स्थळे लग्नघेला वरपक्षे सवाया, दोढा, पहला आपी उत्साह वधार्यो छे, त्यारे केटलेक ठेकाणे श्रीमंता इनो चमकाट टकावी राखवा साउ अपग उदा-रता दर्शावी पुरो पक्ष लीधो छे, आवी, तुच्छ उदार वृत्तिनुं अविचारी नसतर चलावी शा माटे नियमनो भंग करता हशे ?

समाजनो अवाज–ए ईश्वरी अवाज छे, साचो अने अनुकुळ कायदो घडाया पछी साम-

નાયકો અથવા સમાજ શુભેચ્છકો અલ્પશક્તિને આદ્યશક્તિ રૂપે માનવા, આગળ પાછળનો વિચાર કર્યા સિવાય, દૈવી અવાજને શા માટે ઠોકરે મારતા હશે? આવી ઠોકરોથી તો અનેક નિયમોનું ઉલ્લંઘન થઇ કોમમાં અંધેર-વધશે, અને તેથી ઉન્નતિને બદલે અધોગતિ થશે.

કર્તવ્ય ભંગ—માણસ થાય છે તેનો મુળ રોગ કોણ તપાસે છે. નબળો ધણી અબળા પર શુરો, એ ગત આપણે કરી રહ્યા છિએ. સુખ, દુઃખ કર્માધીન છે, જેવુ કરો તેવુ ભરો, એ નિયમાનુસાર આપણે આ "સંસાર નૌકાની સફર કરી રહ્યા છીએ, સફર કરીએ છીએ, એટલું સમજીએ છીએ, પરંતુ નથી સાચા સુકાનીને ઓળખતા, કે નથી ઓળખતા દિશાઓને. આપણે તો જીવન પુરૂં કરી રહ્યા છીએ. પછી ભલે દરિયામાં રહીએ. કે જંગલમાં ફરીએ, તે કયા જોવું છે? બિચારી નિર્દોષ કન્યા-રત્નોનાં જીવન વિકસાવવાનો માર્ગ (યોગ્ય લગ્ન સબંધ) શોધવાને અશક્ત હોવાથી ગમે પણ સમયમાં, ગમે પણ વયે, અને ગમે તેવા પર દ્રષ્ટિએ દેખાડેલા, માનેલા, વર સાથે અમુલ્ય કન્યા-રત્નો આપી (ઉપર કહેલી કહેવતને) ખરી પાડી તમારૂં બગાડી બીજાનું બગાડી રહ્યા છો, યોગ્યાયોગ્ય લગ્નસંબંધોને વિગાડી કજોડા રૂપી ઢીંગલા ઢીંગલીની રમતમાં કન્યાના જીવનની રૂપરેખા દોરતાં ખરેખર આંસુ આવે છે. અફસોસ થાય છે કે પુત્ર અથવા પુત્રીને સંસાર સીડીનો સાચા અનેક પગથીએ ચઢવાનો મંત્ર આપવાનું હતી, કર્મ બગીને જુની પદ્ધતિએજ પગથીએથી અજ્ઞાન રાખી ગે, ભમો, રૂપીઆની નજીવી રકમ પસ્લામાં આપી અપાવી ભગાવો કેટલાં કૃતઘ્ન બને છે અને કર્તવ્ય ભંગ થાય છે.

ન્યાય કોણ આપે—જ્યારે રાજા પાપી થાય છે ત્યારે પ્રજા પણ પાપીજ થાય છે. પ્રજા પાપી થાય, તેમાં રાજાની સંમતિ હોય તો -તે રાષ્ટ્રની પુરી દશા થાય આવા પરિવર્તનમાં સમાજની ભારે આગેવાનો, પ્રજાને માટે રાજા અને વિશ્વને માટે મેઘરાજા કર્તવ્ય ભંગ નીવડે તો જગતનું બેલી કોણ રહે!

શાંતિ સેવક,
ચુનીલાલ વીરચંદ ગાંધી—રણાસણવાળા.

ઝહેરનો દુઃખદ બનાવ.

'દિગંબર જૈન'ના ગત જેઠ માસના અંકમા જાહેર (મહીકાંઠા) ગામમા ગયા પર્યુસણના વખત. માં એક ભયંકર બનાવ બન્યો હતો તે વિષેની એક ચોપડી કે જેનું નામ 'ધર્મ કે અધર્મ' નામે પેમ્ફલેટ છપાવ્યા હતા અને તે બનાવનો હજુ સુધી નિર્ણય આવ્યો નથી તેમ એક મિત્ર લખે છે, તો તેના જવાબમાં નીચેનો ખુલાશો પ્રગટ કરવા મહેરબાની કરશો.

વિશેષ આ ચર્ચાપત્રીએ પોતાનું નામ પ્રગટ કર્યા સિવાય ચર્ચા કરવાનુ શરૂ કર્યું છે તે ઘણી અફસોસની વાત છે. હજુ સુધી તેવણ મિત્રનામાં હિંમત આવી નથી તેવુ દેખાય છે પણ હું અરજ કરૂ છુ કે હવે તેમણે સ્વરાજ્ય માટે તૈયાર થઇ હિમતવાન બનવુ જોઇએ અને મને આશા છે કે હવેથી જ્યારે જવાબ તથા બીજું લખાણ લખશે તો નામ સહિત લખ્યા વિના રહેશે નહિ.

'ધર્મ કે અધર્મ' એનો નિર્ણય હજુ સુધી માર્ગ નૃસિંહપુરા ભાઇઓ લાવ્યા નથી, તો હું સમસ્ત દિગંબરી ભાઇઓને અરજ કરૂ છુ કે ભાઇઓ, તમો આ ઝઘડાનો નિર્ણય લાવો, નહિં તો આ પર્યુષણ નજીક આવે છે અને તેમાં ન નિર્ણય નહિં થાય તો આના કરતા પણ ગંભીર બનાવ બનવા સંભવ છે તો મહેરબાની કરીને આનો નિવેડો લાવશો.

દરેક દિગંબર તેમજ નૃસિંહપુરા ભાઇઓને અરજ કરવામાં આવે છે કે આ બનાવનો નિવેડો કેવી રીતે તમો લાવવા ઇચ્છો છો તે પત્ર દ્વારાએ આ લેખકને જણાવશો અથવા તો આ પેપરમાં પ્રગટ કરશો એવી આશા છે. મી. દરગન રામચંદ તેમજ અન્ય વિદ્વાન ગૃહસ્થો મળીને આનો નિવેડો લાવશે તો હું સઘળા આભારી થઇશ. એજ અરજ.

એમ. ડી. શાહ નરસીપુરવાળા,

श्री स्याद्वादविद्यापतये नमोऽस्तु ।

जैन काव्योंका महत्व ।

(जैन साहित्य सभा लखनऊका लेख नं० ४)

(लेखक—पं० बनवारीलालजी स्याद्वादी—मोरेना ।)

वन्दारुवृन्दपरिघट्टविलोलिताक्ष वृन्दारकेश्वरकिरीटतटावकीर्णैः ।
मन्दारपुष्पनिकरैर्विहितोपकारं वन्दामहे जिनपतेः पदपद्मयुग्मं ॥
मुकुरविमलगण्ड चन्द्रसंकाशतुंडं गजकरभुजदण्ड कामदाहाग्निकुण्ड ।
विनुतमुनिपषण्ड गोमठेशप्रचण्ड गुणनिवहकरण्ड नौमि नाभेयपिण्ड ॥

आध्यात्मिकजननी, अहिंसाधर्मप्राणा, साहित्यसुन्दरी, परोपकारशीला, विज्ञाननयना भारतवर्षीयार्यजातिके पूर्वेतिहास पर दृष्टि वृष्टि करनेपर यह जाति चारित्रोज्ज्वला, अक्षयज्ञानरत्नोंकी प्रसवित्री सुष्टुतया प्रवीन होती है, किन्तु निरपेक्ष हम यह भी कहेंगे, कि तत्सामयिक कुछ विषयलम्पटियो एवं च स्वधर्मोन्मत्तगणोंने प्रज्वलित–द्वेषाग्निसे दग्ध कर इस आर्यजातिके सर्वोत्तम पूर्वेतिहासको कलंक–कालिमामय बना दिया है । इस प्रज्वलित विद्वेषाग्नि हीके कारण गगनस्पर्शी उत्तुंगशृङ्गसमन्वित हिमधवलपर्वतमाला, एवं भीतिजनक नीलवर्णसलिलराशिपूर्ण समुद्रसरीखे प्राकृतिक आत्मरक्षकोंके उपस्थित रहने पर भी, सुसम्य ज्ञानालोकसे प्रकाशित अत्यंत बलिष्ट धार्मिकवसुन्धरा भारत पर विधर्मी और विजातीय नीच वैदेशिकदस्युदलके पुनः पुनः आक्रमणोंसे, भारतवर्ष विध्वस्त विपर्यस्त और परपदानत होकर अपनी अतुलधनराशि विद्या, प्राचीनसभ्यतासम्पत्ति, ऐश्वर्य, आत्मगौरवको पश्चिमीय सागरमें समाधिस्थ कर आज मुट्ठीभर पश्चिमीय जनोंकी तन्त्रता (परतन्त्रता)के चुंगलमें फँसा हुआ अपने जीवनमरणके प्रश्न हल करवानेकी अवस्थामें उपस्थित हो गया है । प्रिय पाठकवृन्द ! यहांपर ही मेरे अश्रुप्रवाह होकर समाप्त नहीं हो जाते। किंतु–

इस विद्वेषाग्नि तथा च स्वधर्मोन्मत्तता ही के सम्बन्धसे श्री अहिंसासातायुक्त, मान्यक्षमामाणिक्य, मार्दवच्छत्र, आर्जवाचार्य, शौच्यतीर्थभूमि, सत्यरत्नविभूषित , संयमपरिखावेष्टित, तपोभूमि, त्यागजननि, आकिंचन्य मूलसे शोभायमान, विश्वप्रेमचन्द्रकी ज्योत्स्ना का प्रकाशक, ऐसे जैनधर्मका सार्वभौमिक प्रसार न बढनेके हेतु, विपक्षियोंने जैनधर्मके प्रचारकोंको निर्मम कष्ट प्रदानके साथ साथ सहस्रों जिनमन्दिरोंको छिन्न विच्छिन्न, जैनसाहि-

त्यके लाखों ग्रंथराजोंको नष्ट कर, जैनप्रमितिसे जो संसारको वंचितकिया है। शायद इसीसे दैवने प्रकोपकर भारतमाताके ३० कोटि जनोंकी स्वतंत्रताको अपहरणकर दारुण दुःखसे दुःखित किया है ! बौद्धमतकी राज्यसत्ताके समयमें जब कि भारतवर्षने प्रशान्त जैनधर्मको विदा करनेमें किसी प्रकारकी भी कसर नहीं रक्खी थी, वृहद्ग्रंथराजोंके साथ २ जैनमहाकाव्योंका भी वृहदंश नाशको प्राप्त हो गया था और जब कि श्री शंकराचार्यने जैनधर्मको नष्टीभूत करनेके इरादासे वर्षों गरम पानी कराकर असंख्य जैनग्रंथराजोंको अग्निदेवकी भेट करदी।

हम नहीं लिख सकते हैं कि जैनसाहित्यके प्रसार करनेके कारणभूत महाकाव्योंका इस पूर्वेतिहासमें कितना प्रक्षय हुआ होगा।

अब हम अपने विचारशील पाठकोंको इस वृहत् पूर्वेतिहाससे अलग कर प्राप्त अभीके करीब ३०० वर्ष पहिले (अर्थात् मुगल बादशाह औरंगजेब) के जमानेमें ही लिये चलते हैं।

मुगल बादशाहतकी जड़को काटनेवाले इस बादशाहके जमानेमें हिंदु ग्रन्थोंकी तरह कितने ही महीनों तक जैनग्रंथराजसमुदाय गाँवोंकी तरह जलते रहे। भारतवर्षीयाध्यात्मिक क्षय करनेके लिये जो भारतके असंख्य ग्रंथभँडार यवनगणोंने नष्ट किये उसमें भी महाकाव्योंका प्रबल क्षय हुआ।

इस ग्रन्थराजोंके प्रक्षय युगके समय धार्मिक वीरोंने जो ग्रन्थराजि कंदरा गुहादि गुप्त स्थानोंमें छिपाकर रक्षा की थी, उसमें भी बहुग्रंथराशि हमारे विद्याप्रिय पश्चिमीय विद्वान् (जर्मनी, इंगलैंड, आस्ट्रेलियादिके रहनेवाले) प्रलोभन या डरसे परतंत्र जैन संसार एवं च कर्तव्यपथसे विचलित भारतवर्षसे लेगये। इसमें भी वृहदवशिष्टभाग भट्टारकों, अन्य भँडारोंमें दीमक, अन्य कीटोंका आहार हो रहा है। अतः जो कुछ भी काव्यशास्त्र समुपस्थित है, उन जैन काव्यग्रन्थोंका महत्व भव्य पाठकोंकी ही भेंट करता हूं।

'**जैन काव्यका महत्व**' इस शब्दके उच्चारण करनेसे सहृदयके हृदयमें जो भाव प्रादुर्भाव होता है, वही '**जैन काव्यका महत्व**' इसका विग्रहलम्भार्थ है। इसमें शब्द हैं जैन–काव्य–महत्त्व।

यहां जैन शब्द संबंधी वाचक होनेपर भी इसका अर्थ सुलभ होनेसे इसके व्याख्यानको लक्षित न करके "काव्य" शब्दका लक्षण लिखनेको प्रारंभ करते हैं। किसी भी चीज़का लक्षण या स्वरूपमें जबतक सम्पूर्ण उद्बोध नहीं होता है; तब तक सहृदयोंके हृदयाकाशमें उस पदार्थकी सुनिर्मल ज्योति ठीक ठीक नहीं चमकती है। अब उस काव्यका लक्षण 'काव्यप्रकाश" ग्रंथके रचयिताने इस प्रकार किया है—

"तद्दोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि" (काव्यप्रकाश)

अर्थात् गुणसहित दोपरहित शब्दार्थको काव्य कहते हैं। वह शब्दार्थ सर्वत्र सालंकार हो। कहीं २ अस्फुट अलंकार होनेपर भी काव्य कहा जासकता है।

पंडित जगन्नाथने "रसगंगाधर" नामक ग्रंथमें इस प्रकार कहा है—

" रमणीयार्थप्रतिपादकशब्दः काव्यं " (रसगंगाधर)

इसका अर्थ प्रायः स्पष्ट ही है।

और "साहित्यदर्पण" नामक ग्रंथके कर्ताने काव्यका लक्षण इस प्रकार किया है—

"वाक्यं रसात्मकं काव्यं" (साहित्यदर्पण)

अर्थात् रसात्मक वाक्यको काव्य कहते हैं। लेकिन जब हम उपर्युक्त लक्ष्यके ऊपर दृष्टि वृष्टि करते हैं, तो हमको यह सब लक्षणोंकी विलक्षण सृष्टि सूजती है। क्योंकि काव्यका प्रयोजन इस प्रकार कहा है—

" काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिर्वृतये कान्तासंमिततयोपदेशयुजे ॥ "

अर्थात् जिसमें कीर्ति हो, अर्थप्राप्ति हो, लोक व्यवहार ज्ञान हो और अमंगलका विनाश हो, झटिति (जल्दी) विलक्षण सुख हो, कान्ता संमिततासे उपदेश मिले, यही काव्यका प्रयोजन है।

इस प्रयोजनकी सिद्धिका जो कारण है उसका लक्षण दोष रहित गुण सहित अलंकारविशिष्ट शब्दार्थ इतने ही कहनेसे पर्याप्त नहीं हो सकता है। क्योंकि ऐसा कतिपय वाक्य यदि केवल शृंगाररसात्मक लिखा जायगा तो उपर्युक्त प्रयोजनमें " शिवेतरक्षतये " अर्थात् अमंगलविनाशके लिये क्या हो सकता है ? या उससे कोई सच्चा उपदेश मिल सकता है ? इसलिये काव्य प्रकाशकारका उक्त प्रयोजनको लिखते हुये इस तरह लक्षण बनाना, अयुक्त मालूम पड़ता है। ऐसे ही साहित्यदर्पणके रचयिता श्रीयुत विश्वनाथ महापात्र रसात्मक वाक्यको काव्य कहते हुए ठीक नहीं जचते। उसमें भी हम यही कह सकते हैं कि कोई शृंगारादिक रसात्मक वाक्यसे ही उक्त प्रयोजनकी सिद्धि नहीं हो सकती है। अतः यह ठीक नहीं है। इसी तरह " रमणीयार्थप्रतिपादकशब्दः काव्यं " कहते हुए रस गंगाधरकार भी हमारे मान्य नहीं हो सकते हैं। क्योंकि पूर्वोक्त दोष भी उनका पीछा नहीं छोड़ता। और भी अनेक आलंकारिकोंने काव्योंके लक्षण बनाये हैं, किंतु हम उनका खंडन मंडन कर लेखको विस्तृत करना नहीं चाहते। किंतु पूर्वोक्त काव्य लक्षणोंमें दोषानुसंधान करते हुये काव्यसे उक्त प्रयोजनकी सिद्धि जिस काव्यसे हो उसका अनुसंधान

करते हुए जैनालंकारिक काव्यका लक्षण अलकारचिंतामणिके अनुसार कहते है।–

" शब्दार्थालंकृतोद्धं नवरसकलितं रीतिभावाभिरामं।
व्यंग्याद्यर्थं विदोषं गुणगणकलितं नेतृसद्वर्णनाढ्यं॥
लोकद्वन्द्वोपकारी स्फुटमिह तनुतात् काव्यमग्र्यं सुखार्थी।
नानाशास्त्रप्रवीणः कविरतुलमतिः पुण्यधर्मोरुहेतुम्॥

(अलकारचिंतामणि)

यह जैन कवि श्रीमद्भगवज्जिनसेनाचार्यका कहा हुआ निर्दोष एवं च मान्य काव्यका लक्षण है। इस श्लोकका अर्थ इस प्रकार है–

शब्दालकार, अर्थालकारसे दीप्त, नवरस सहित, रीति और भावसे सुन्दर व्यंग्यादि अर्थवाला, दोषरहित गुणसहित नेताकी सद्वर्णनसे पूर्ण, इह तथा परलोकका उपकारी, पुण्यधर्मका बड़ा भारी कारण, ऐसे काव्यको नानाशास्त्रप्रवीण, अनुपम बुद्धिवाला कवि करे।

इस काव्यलक्षणसे लक्षित काव्य ही वास्तविक काव्य कहा जा सकता है। इस तरहके काव्यसे उपर्युक्त प्रयोजन अथवा अन्यत्रोक्त—

" धर्मार्थकाममोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च।
करोति कीर्तिं प्रीतिं च, साधुकाव्यनिषेवण॥ (साहित्यदर्पण)

इस प्रयोजनकी सिद्धि हो सकती है।

अत अब विचार करना चाहिये कि भारतीय काव्य भडारोंमें ऐसे कितने काव्यरत्न हैं जो कि उक्त पूर्व लक्षण लक्षित हों। इसका विचार करनेके लिये सबसे पहिले " लोकद्वन्द्वोपकारी पुण्यधर्मोरुहेतुम् " इन दोनों विशेषणोंको हम उपस्थित करते हैं। जो पुण्यधर्मोरुहेतु है। वास्तवमें वही काव्यचिंतामणि उभयलोकका हितकारी होकर मनवांछित फलप्रद है।

अब हमको यह विचार करना चाहिये कि पुण्य और धर्मकी शिक्षा जिनसे मिल सकती है ऐसे काव्य कितने हैं। सर्व प्रथम हम अजैन नैषधादि लोकप्रसिद्ध सरस काव्योंपर ही दृष्टिपात करते हैं, तो उसमें एक पुरुषका स्त्रीके साथ किस तरहका प्रेम होता है और उसका कैसे निर्वाह होता है इत्यादि विषयोंको छोडकर धर्मादि शिक्षाकी प्राप्ति नहीं हो सकती और जो जो प्रसिद्ध प्रसिद्ध काव्य हैं उनमें माघ किरातादि तथा रघुवंश कुमारसंभवादि हैं। उन्होंमें कोई तो शृंगाररस ही से लबालब भरे हुए हैं। कोई वीररस प्रधान तथा च कोई वनवर्णनात्मक हैं। इसीको पुष्ट करते हुये प्रधान्त हुये हैं। उन्होंमें आदिसे अन्ततक अवलोकन करने पर भी धर्मोपदेशकी गन्ध भी नहीं मिलती। पूर्वोक्त प्रयोजनेच्छु हम जैनकाव्यमार्गमें पदार्पण करते ही उक्त प्रयोजनको पद पद पर

दृष्टिगोचर करते हैं। क्योंकि जैन काव्योंमें ऐसा कोई भी काव्य नहीं हैं जिसमें धर्मोपदेशके साथ साथ समग्र लौकिक व्यवहार दिखाते हुये अन्तमें मोक्ष प्राप्तिके लिये केवलीभगवान्‌के मुख निर्गत वचनावली सरस श्लोकोंसे सज्जित नहीं की गई हो। इस बातकी सत्यता प्रमाणित करनेके लिये हम उन्हीं सहृदयोंसे प्रार्थना करते हैं जिन्होंने उभय काव्य (जैन, जैनेतर) रसका आश्वादन गवेषणा पूर्वक किया हो। यही जैन काव्यका सर्व प्रथम सुख और शांतिको प्रदान करनेवाला महत्त्व है। इस सर्व प्रथम महत्त्वका हम लोगोंको कम मूल्य नहीं समझना चाहिये।

एक वार एक पंडितराजने ऐसा कहा था कि "धर्मप्रधान काशीनगरीमें अध्ययन करनेवाले काव्यरसिकवृन्दोंमें बहुतसे रसिक वेश्यागमनादि दुश्चरित्रोंको सेवन करते हैं। इसका खास कारण यही है कि उन काव्योंमें श्रृंगाररसकी प्रधानताके साथ २ योग्य शिक्षा, धर्मोपदेशका नितान्त अभाव है।"

वह काव्य अनेक प्रकारका होता है, किन्तु दृश्य, श्रव्यके भेदसे दो प्रकारका है। दृश्य नाटक प्रकरणादिको कहते हैं। और श्रव्य काव्यके भेद बहुतसे हैं। यथा—महाकाव्य, खंडकाव्य, चम्पू—गद्यकाव्य, आख्यायिका इत्यादि हैं। इन्होंमें खासकर काव्य शब्दका उच्चारण करनेपर लौकिक प्रतीति महाकाव्यकी होती है। इसी महाकाव्यमें जैनाचार्यसे कहा हुआ पूर्व काव्यका लक्षण याथातथ्येन घटता है। अतः नाटक, भांण इत्यादिसे उपर्युक्त काव्यलक्षणोंका प्रयोजन सुष्टुतया, सिद्ध नहीं हो सकता। अतएव हम प्राधान्येन महाकाव्योंकी ही उत्तमता बतलायेंगे। इससे पहिले काव्यलक्षणमें **"नेतृसद्वर्णनाढ्यं"** यह जो विशेषण है इसका अर्थ नेताका जो सद्वर्णन है अर्थात् जिससे पूर्वोक्त धर्मार्थकाममोक्ष प्रयोजनोंकी सिद्धि हो सकती हो ऐसे वर्णनसे आढ्य=प्रचुर हो।

जिसके ऊपर कवि अपनी शब्दार्थालंकारोंसे विभूषित तथा गुणोंसे सुशोभित सरस्वतीको सजाता है वह नेता कैसा होना चाहिये? नेताका लक्षण "साहित्यरत्नाकर" में ऐसा कहा है—

"महाकुलीनत्वमुदारता च तथा महाभाग्य विदग्धभागे।
तेजस्विता धार्मिकतोज्वलत्वममीगुणा जाग्रति नायकस्य॥"

अर्थात् महाकाव्यका नायक वही होसकता है जो महाकुलीन और बड़ा भारी उदार और महाभाग्यशाली, अतिशय विदग्ध और महा तेजस्वी, धार्मिक हो। संसारमें उपर्युक्त गुणविशिष्ट महाकाव्यके नायकको अनुसंधान करते हैं तो हमको अष्टादश दोषरहित, अनंत चतुष्टययुक्त तीर्थंकरोंको छोडकर मानव जातिमें कोई भी दृष्टिगोचर नहीं होते। अतः द्वितीय सर्वोत्तम जैन काव्योंमें उत्तमता यही है कि प्रायः सम्पूर्ण महाका-

क्योंकि नायक तीर्थंकर या तद्भवमोक्षगामी ही हैं। उन तीर्थंकरोंको छोड़कर संसारमें ऐसा कौन माताका लाल है जो उनसे गुणशाली प्रमाणसे प्रसिद्ध हुआ हो। उनके सद्वर्णनोंसे आढ्य जैन महाकाव्यपुंज ही हैं। यथा महाकाव्य धर्मशर्माभ्युदय, महाकाव्य चंद्रप्रभचरित्र, महाकाव्य पार्श्वनाथचरित्र, नेमिनिर्वाण इत्यादि।

अब हम यह दिखाते हैं कि महाकाव्यमें वर्णनीय विषयोंका सन्निवेश किस पांडित्यके साथ जैन कवियोंने किया है उसका भी थोड़ा नमूना सहृदयकाव्यरसास्वाद-निपुण पाठक महोदयोंकी सेवामें उपस्थित करते हैं। महाकाव्यमें १८ वर्णनीय विषय हैं। जैसा ही अलंकारचिंतामणिमें कहा है—

भूभृत्पत्नी पुरोधाः कुलवरतनुजाऽमात्यसेनेशदेश-।
ग्रामश्रीपत्तनाब्जाकरशरीधनदोद्यानशैलाटवीद्धाः॥
मंत्रो दूतः प्रयाणं समृगयतुरगेभार्त्विन्द्वाश्रमाजि-।
श्री वीवाहाबियोगास्सुरतवरसुरा पुष्पवार्नर्मभेदाः"॥

(अलंकारचिंतामणी)

ये १८ वर्णनीयका यथा स्थानमें निवेश जैन महाकाव्योंमें जिस ढंगसे किया गया है, उसे जैन महाकाव्योंके अध्ययन करनेवाले समझसकते हैं।

यहांपर प्रत्येक वर्णनीयका उद्धृत करनेसे यह लेख महत् ग्रंथाकार स्वरूपमें परिणत होजायगा अतः चुनेहुए विषयोंका नमूना दिखाकर आगे बढ़ेंगे। भूभृत्, राजाका वर्णन हरएक जैनमहाकाव्योंमें भिन्न भिन्न रीति तथा भिन्न भिन्नालंकारोंसे सजाकर भिन्न२ कवियोंने वर्णन किया है। उसमेंसे पाठकोंके मनोरंजनके लिये महाकाव्य धर्मशर्माभ्युदयमें हरिश्चन्द्रकविके पद्य दिखाते हैं।

गतेऽपि दृग्गोचरमत्र शत्रव स्त्रियोऽपि कंदर्पपत्रपा दधुः।
किमद्भुतं तद्धतपंचसायकं यदव्रजन्संगरसंगताः क्षणात्॥

(म० धर्मशर्माभ्युदय)

इस पद्यमें राजाका वर्णन वीररसके साथ२ सौन्दर्यका वर्णन श्लेषभंगीसे जिस प्रकार किया है सो सुहृदय समझसकते हैं। तथा च

न मंत्रिणस्तंत्रजुषोऽपि रक्षितुं क्षमाः स्वमेतद्भुजगायसेः क्वचित्।
इतीव भीत्या शिरसि द्विषो दधुस्तपाद्मचञ्चन्नखरत्नमंडलम्॥

(धर्मशर्माभ्युदय)

इस श्लोकमें श्लिष्ट रूपक मूल उत्प्रेक्षाका निवेश किस चातुर्यके साथ किया है, उसे चतुरशीरोमणि समझ सकते हैं।

तथा च-"तदीय निस्त्रिंशलसद्विधंतुदे बलाद्गिलत्युधतराजमंडलम् ।
निमज्ज्य धारासलिले स्वमुचकैर्दुर्दाद्विजेभ्यः प्रविभज्य विद्रपः ॥
(धर्मशर्माभ्युदय)

इस श्लोक श्लिष्टपरम्परितरुपकका निवेश करते हुये कवि उस मार्गपर चले हैं कि शायद ही कोई कवि उस मार्गमें पहुंचा होगा। इस तरह नायक (राजा)का वर्णन कहाँ तक बताया जाय। एकसे एक सुन्दरसे सुन्दर पद्यरत्न जैनमहाकाव्यसमुद्रमें इस विषय पर उपस्थित हैं।

द्वितीय राजपत्नीका वर्णन महाकाव्यमें कहा गया है। इस वर्णनमें उसी धर्मशर्माभ्युदयमें कविने कैसा प्रतिभापाटव दिखलाया है। विनोदके लिये उसका भी २ या ३ पद्य उद्धृत करेंगे।

" प्रयाणलीलाजितराजहंसकं विशुद्धपार्ष्णि विजिगीषुवास्थितं ।
तदंघ्रिमालोक्य न कोपदण्डभाग्भियेव पद्मं जलदुर्गमत्यजत ॥
(धर्मशर्माभ्युदय)

इस श्लोकमें एक विजगीषु नरेशके साथ राजपत्नीके पादका साम्य श्लेष्योपमालंकारसे कैसा दिखाया है।

चक्षुका वर्णन करनेमें अनुपम श्लोक सहृदय महोदयोंकी सेवामें पेश करते हैं:-
जितास्मदुत्तं समहोत्पलैर्युवां क याथ इत्यध्वनिरोधिनोरिव ।
उपात्तकोपे इव कर्णयोः सदा तदीक्षणे जग्मतुरन्तशोणताम् ॥
(धर्मशर्माभ्युदय)

इसकी उत्प्रेक्षा क्या ही अनोखी है।

तथा देश वर्णनमें चन्द्रोपल (चन्द्रमणि) के प्रासाद पंक्तिके साथ एक श्लेषरीतिमे वरवर्णनीयका साम्य देखिये।

व्यापार्य सज्जालकसंनिवेशे करानभिप्रेक्षति यत्र राज्ञि ।
दधत्यनीचैस्तनकूटरम्या कान्तेव चन्द्रोपलहर्म्यपङ्क्तिः ॥ "
(धर्मशर्माभ्युदय)

इसी प्रकार ग्रामवर्णनमें स्वर्गसे व्यतिरेकको दिखाते हुये एक पद्य किस रीतिसे लिखा गया है। इसकी उत्तमता हमारे भव्य सभ्य पाठकवृन्द ही विचारे।

" अनेक पद्माप्सरसः समन्ताद्यस्मिन्नसंख्यातहिरण्यगर्भाः ।
अनंतपीताम्बरधामरम्या ग्रामा जयन्ति त्रिदिवप्रदेशान् " ॥
(म० धर्मशर्माभ्युदय)

यद्यपि शैलके वर्णनके उदाहरणमें बहुतसे जैन महाकाव्य उपस्थित हैं, हम इसके उदाहरण स्वरूप महाकवि श्री हरिश्चन्द्रकृत धर्मशर्माभ्युदयका दसवां सर्ग सम्पूर्ण देना चाहते हैं क्योंकि कविने ऐसी उत्तमताके साथ शैल वर्णन किया है कि शायद ही किसी कविने ऐसा वर्णन अपने काव्यमें किया हो लेकिन लेख बृहद् न होनेकी चिंता हमको रोकती है, फिर हम इसका उदाहरण अवश्य देंगे।

" पत्राम्बुजेषु भ्रमरावलीनामेणावली सत्तमरावलीना।
पपौ सरस्याशुनरं गतान्तं न वारि विस्फारितरङ्गतान्तरम् ॥ "

(महा. धर्मशर्माभ्युदय)

इस पद्यमें यमकालंकारके साथ २ स्वभावोक्तिका कैसा मणिकांचन योग हुआ है यह देखकर चित्त गद्गद होता है। तथा च–

" दूरेण दावानलशङ्कया मृगास्त्यजन्ति शोणोपलसंचयद्युतीः।
इहोच्छलच्छोणितनिर्झराशया लिहन्ति च प्रीतिजुषः क्षणं शिवाः॥"

(धर्मशर्माभ्युदय)

पर्वत तपस्या करनेका प्रधान स्थान है। इस बातको दिखानेके लिये मोक्षनगरका अत्यंत दुर्गमार्गमें जिनेन्द्ररूपी सार्थवाहको प्राप्त कर अगाड़ी पैर रखनेके लिये यह पर्वत प्रथम स्थान है। यह रुपक शांतरसको पिलाता हुआ कैसा आल्हादकारी है।

ऋतु वर्णनका भी जैन महा काव्योंमें सर्वत्र वर्णन किया गया है। उसमें भी हरिश्चंद्र कविका चातुरीयुक्त वर्णनके श्लोक प्रियपाठकोंकी भेंट अवश्य करेंगे।

" कतिपयैर्दशनैरिव कोरकैः कुरवकप्रभवैर्विहसन्मुखः।
शिशुरिव स्खलितस्खलितं मधुः पदमदादमदालिनि कानने ॥ "

इस श्लोकमें वसंतका आगमन हास्य करते हुए शिशुके साथ उपमा देते हुए क्या ही अच्छा वर्णन किया है।

इसी तरह इसी ग्रन्थ धर्मशर्माभ्युदयमें ग्रीष्मवर्णनमें कुत्तोंकी जीभ निकलनेमें कविराजने क्या ही अच्छी उत्प्रेक्षा की है।

"इह शुना रसना वदनाद्बहिर्निरगमन्नवपल्लवचञ्चलाः।
हृदि खरांशुकरप्रकरार्पिताः किमकृशानुकृशानुशिखाः शुचौ॥

(महा. धर्मशर्माभ्युदय)

तथा वर्षावर्णनमें भी इसी कविका उत्तम श्लोक उद्धृत करते हैं।

वास्तवमें कोई निरपेक्ष सज्जन सुहृदयवर काव्यपरीक्षक जिस समय निरपेक्ष चश्माको लगाकर यदि काव्योंकी उत्तमताका विचार करेगा तो हम इस बातको दावेके साथ कह सक्ते हैं कि जैन काव्योंकी ही सर्व प्रथम उत्तमता उसे ज्ञात होगी क्योंकि जैन काव्य-समुदाय, शब्दालंकार, अर्थालंकारोंके पुंजोंसे विभूषित एवं च नवरस सहित, सुरीति भावोंसे मनोहर, पद पदके व्यंगादि अर्थसे आश्चर्यको करनेवाला, गुणोंकी पंक्ति बद्धमालासे घिरा हुआ एक अद्वितीयताको लिये हुए है। वास्तवमें जिस समय मेघमालासे आच्छादित सूर्य रूपी जैन काव्यसमुदायकी एक किरण त्रैमासिक पत्र "जैनसिद्धांतभास्कर" में प्रकाशित हुई उसी समयसे ही जैनकाव्यकी उत्तमता सिद्ध हो चुकी थी। हम भी अपने पाठकवृन्दोंके लिये इस किरणको देकर समस्त हृदयकमलोंको प्रकाशित किये देते हैं:—

"तातां ताती ततेतां ततति ततो तता ताति ताती ततत्ता।
तात्तातीतां तताती ततति ततिततां तत्ततत्ते तितंतिः॥
तातातीतः तितातो ततनु ततिततां ततिता तृति तत्ते।
ताते तितो तुतात्ता ततुतति तुत्ततितां तत्तु तोत्त॥

यह श्लोक त्रैमासिकपत्र "जैनसिद्धांत भास्कर"में प्रकाशित हुआ था, और उसका अर्थ लगानेके लिये २५०) पारितोषिक मिलनेके लिये भी सूचना थी। अर्वाचीन दुनियांके समस्त संस्कृतके विद्वानोंमेंसे किसीने भी इसका अर्थ न लगा पाया। अवधिके पूर्ण होनेपर पत्रके सुयोग्य सम्पादक एवं च देशकी वेदीपर त्यागधर्मको करनेवाले देशभक्त पदमराजजी रानीवालोंने इसके लिये द्विगुणित पारितोषिक बढ़ाया पर भी आजतक किसी भी माईके लालने इस श्लोकका अर्थ न लगा पाया।

पाठक महाशय! इस श्लोकका अर्थ जैनसिद्धांतभवनमें उपस्थित है। एक समय जिनेंद्रभूषण भट्टारक श्री तीर्थराग सम्मेदशिखरजीकी वन्दनार्थ काशी होते हुए पालकी द्वारा जारहे थे। जैनेतर वैष्णव विद्वानोंको यह सह्य न होकर उन्होंने पालकी रोकली और कहा कि जब तक आप शास्त्रार्थमें हम लोगोको नहीं हरादेंगे तब तक हम आपको पालकी द्वारा नहीं जाने देंगे। क्षमागार नम्र भट्टारक जिनेंद्रभूषणके हृदयमें श्री तीर्थराजकी वन्दनाके लिये बहुत व्याकुलता तथा च जल्दी थी। अतः उन्होंने काशीके विद्वत्समाजसे यह कहा कि " **आप जबतक इस श्लोकका अर्थ लगावें तबतक मैं वन्दना करके वापिस आता हूँ और शास्त्रार्थ करूँगा** " बादमें श्री १००८ भट्टारकजी श्री तीर्थराजकी वन्दनाकर वापिस आये। तब मालूम हुआ कि किसी भी पंडितराजसे यह श्लोक नहीं लगना। इतनेमें एक नैयायिक महाशयने कहा कि इस शब्दोंके वितण्डावादको त्यागकर आप अपनी प्रतिज्ञानुसार हमसे शास्त्रार्थ कीजिये। तब शास्त्रार्थ हुआ और '**सत्यमेव जयति नानृतं**" इस नीतिके अनुसार जैनियोंकी विजय तथा विपक्षियोंकी पराजय हुई।

विज्ञपाठकवृंद! काव्य शब्दका अर्थ केवल महाकाव्य ही नहीं है किन्तु वन्दनीय जैनालंकारों और इतरालंकारिकोंकी अपेक्षा दृश्य श्रव्य इस तरह दो प्रकारका है—

प्रथम काव्यभाग दृश्यको बतलाते हैं। नाटक सट्टक भाँड प्रकरण इत्यादिको दृश्य काव्य कहा है। प्रियपाठकवृन्द! नाटकादिकी उत्तमता तभी ज्ञात होती है जब कि वह रंगमंच पर खेला जाकर भव्य नाट्यदर्शकोंको अपनी उत्तमताका प्रदर्शक हो, क्योंकि नाटककी उत्तमता रंगमंच पर ही खेले जाने पर प्रगट होती है। फिर भी हम इस बातको स्वाभिमानके साथ प्रियपाठकोंकी हृदयस्थलीमें बैठाते हैं कि जो जैन नाटकवृन्द विक्रांतकौरवादि हैं वह जैनेतर शकुंतलादि नाटकोंसे विशेषोत्तम हैं। मेरे ख्यालसे अज्ञानावस्थामें सोती हुई जैन समाजके पर्यंकके नीचे स्थित, तथा थोडे कालसे प्रोद्भूत जैन नाटकवृंद अभी तक निर्पेक्ष पश्चिमीय संस्कृत विद्वित्परिषद्के पास नहीं पहुँचा। नहीं तो अवश्य ही ये निर्पेक्ष समालोचना कर इस जैन नाटकवृंदको उच्चस्थान देते। जिस समय हम विक्रांतकौरवादि जैन नाटकोंकी पंचसंधि, पताकास्थान, प्रवेशक, विष्कंभकादिका निवेशचातुर्य, पदमनोहारितापर दृष्टिपात करते हैं तो हस्तिमल्ल कविके नाटकों परसे दृष्टि उठना नहीं चाहती। तब कालिदासका "शकुन्तला" नाटक बिल्कुल फीका हो जाता है।

हमारे पाठकवृन्द इस बातसे परिचित ही होंगे कि जैन नाटक रचयिता पूज्यात्मा श्री हस्तिमल्लके दृश्यकाव्य लीलाकी तारीफ प्राचीन विद्वानोंने बहुत

' यत्र च मधुकरकुटुम्बिनीनिकुरम्बाडम्बरचुम्ब्यमानमकरन्दकदम्बस्तम्बविलम्बितनिजनितम्बिनीबिम्बाधरपानपरवशविलासिनि, सुरतसुखोन्मुखमुखरपरिखेलत्सखीसखानेकखगप्रेङ्खखलमुखावलिख्यमानफटितशिखरैः समीपशाखिभिः स्खलितप्रसंख्यानिमखसंमुखीनवैरवानसमानसे, क्वचिन्नितवसहचरोपरचितकरवाद्यलयलास्यगानमधुमत्तसीमन्तिनीसमालोकनकुतूहलमिलद्वनदेवताभराभुग्नककुभविटपिनि, वटविटपविटङ्कपंक्तिकोटरोपविष्टवाचाटशुकपेटकपठ्यमानेन विटविकटरताटोपचाटुपाटवेन विघ्यमानमुनिमनःकपाटपुटसंधिबन्धे, विकिरकुलकहलवशविशीर्यमाणकुरवकतरुमुकुरमुक्ताफलितवितर्दिकावलिकर्मणि, चपलकपिसंपातलुप्यमानभराभिर्निर्भरविभ्रमारम्भसंभ्रमाभिर्भामिनीभिः परिरभ्यमाणनिभृतसरसापराधवल्लभे, भुजमूलपुलकितरणरतकान्तकेन वान्तराविवयुवतिपुष्पावचितिनि, सरलद्रुमस्तम्भसंमूलसंभूतलताशोकततिविनिर्मितासुपीनस्तनलिखितपत्रलाञ्छितोरःस्थलरमणरसरभसोच्छलदुत्तालचलनासुलीलान्दोलासु विलसन्तीनां विलासिनीनां मुखरमणिमेखलाजालवाचालितमरुद्दलपचमालसिपल्लवितविरहवीरुधि, जम्बुकुञ्जकुञ्जगुञ्जत्पारापतपतङ्गसन्दीपितमदनमददरिद्रितसुन्दरीसंभोगहुतवहे, कदलीदलातपत्रोत्तम्भनगारभरितभर्तृभुजाभोगसंभावनविकटकुचकुम्भमण्डलानामितस्ततो विहरन्तीनां रम्भोरूणामनवरतझणझणायमानमणिमंजीरशिञ्जिताकुलितगलकेलिदीर्घिकाकलहंससंपदि, रमणरतिरतजनितारतिश्रमोत्सेकविचलद्विकचविचकिलपालम्बामोदसुरभितसुमगभुजङ्गनाभीवलीभगर्भे, तमालदलनिर्यासरसपूरितकरकिशलयपुटेन यमितनखलेखनीधारिणा सहचरनिचयेन रच्यमानसहचरीकपोलफलकतलतिलकविचित्रपत्रभङ्गिनि, खलरताभियुक्तकुटहारिकाताडुतलोत्तरलतरत्तोत्सावितनिञ्च (चु) लमूलविलनिलीनोलूकबालकालोकनाकुलकाकोलकुलकोलाहलकाहले, बहलकोकिलप्रलापगलितलज्जस्य निसर्गादुत्तालतरसुरतसंरम्भिणः पण्याङ्गनाजनस्य कलगलोल्लसल्लोहलोल्लपितानुलपनपरसारिकाशावसंकुलकुलायकरलोपकण्ठजरठिनाभिनवाङ्गनारतिचेतसि माकन्दमञ्जरीमकरन्दबिन्दुस्यन्दुदुर्दिनेन मुचकुन्दमुकुलपरिमलोल्लासिना प्रचलाकिकुलकलापसीमन्तोचितेन वातचातकेनाचम्यमानसुरतश्रमखिन्नखेचरीपयोधरमुखलुलितघनघर्मजलमञ्जरीजाले, निधुवनविधिविधुरपुरन्ध्रिकाधरदलदर्पितदीपमानाननचपकचारितदर्दुरीकबीजसीधुनि, पुण्ड्रेक्षुकाण्डमण्डसंपायिनीभिः पिङ्गपरिषद्भिश्चण्डतरमुड्डमरितडिण्डिमारवाकाण्डताण्डवितशिखण्डिमण्डले, मृद्वीकाफलगलनचटुलकामिनीकरवलयमणिमरीचिमेचकितकिंकिरातरामिणि, नालिकेरफलसलिलविलुप्यमानमिथुनमन्मथकलहावसानपयःपानातुच्छनाच्छे, कन्दुकविनोदव्याजविस्तारितविभ्रमेणतरुणजनसंनिधानविरूढश्रृङ्गारमत्सरेण भ्रमविभ्रमोद्भ्रान्तभासत्परिमलमिलिन्दसुंदरीसंदोहमण्डितापाङ्गपातेन विब्बोकिनी समाजेन युवजनालगचरणपाटलितबकुलालवालभूमिनि, रसनिरसपिञ्जरितकुचकलशमण्डलाभिर्मृद्वीरहगिन्दमहिलाभिरिव परिपाकपेशलफलभिनतमध्याभिर्नागमूरवल्लरीभिरपराभिश्च वृक्षौषधिवनस्पति-

लताभिरतिरमणीये, नरखचरामराणां मिथः संभोगलक्ष्मीमिव दर्शयति निखिलभुवनजनानां श्रियमिवादाय जातजन्मनि, रोध्रवरागवेध्रयनीरन्ध्रितकेतकीरज.पटलनिर्मलितकपोलदर्पणेनविविधकुसुमदलविनिर्मितललामकर्मणा कुटजकुड्मलोल्वणमल्लिकानुगतकुन्तलकलापेन तापिच्छगुलुच्छविच्छुरितशतपत्रीमृक्संनद्धचिकुरभङ्गिना मरुबकोद्भेदविदर्भितदमनकाण्डशिखंडितकेशपाशेन प्रियालमंजरीकणकलितकर्णिकारकेसरविराजितसीमन्तसंततिना चम्पकचितविकचकच- (काञ्च)नारविरचितावतंसेन माधवीप्रसूनगर्भगुम्फितपुन्नागमालाविलासिना रक्तोत्पलनालान्तरालमृणालवलया कुलशकोटेन (?) सौगन्धिकानुबद्धकमलकेयूरपर्यायिणा, सिन्दूरवारसरकुसुन्दरकदलीप्रवालमेखलेन शिरीषवशवाणकृतजंघालंकारचारुणा मधुकानुविद्धबन्धूकग्रतनूपुरभूषणेन अन्यासु च तासु तासु कामदेवकिलिकिञ्चितोचितासु क्रीणासु बद्धानन्देन सुन्दरी जनेन सह रमन्ते कामिनः" (यशस्तिलकचम्पू १ आश्वास)

भो काव्यरसिकगण! यह चम्पूकी वनक्रीड़ाके वर्णनका कुछ थोड़ासा अंश आप लोगोंकी सेवामें भेट है। जिससे कि आपको भलीभांति समझमें आसकता है कि चम्पू अद्वितीय ग्रंथ है। उपरिलिखित हृद्यगद्यमें कविने कैसी अनुपम अनुप्रासमाला पहनाई है। काव्य पाठकवृन्दोंको यह तो विदित ही होगा कि उपमा, विरोध, श्लेष, परिसंख्या आदिकी रचना तो प्रत्युत सरल है किन्तु अनुप्रासोंका बनाना उच्चतम भूषण है। कादम्बरी तथा माघकविके शिशुपालवधमें ऐसी अनुप्रासोंका अद्भुत छटाटोप नहीं पाया जाता। इस उपर्युक्त हृद्यगद्यमें पूज्याचार्यने जैसी अनुपम और अद्वितीय अनुप्रासमाला पहिनाई है उसी प्रकार प्रियकाव्यरसिकवृन्दोंके आस्वादके लिये माधुर्यगुण कैसा पद पदमें अद्भुत भरा हुआ है। जहाँतक आप काव्यसागरमें गोते लगायेंगे आपको यह बात अच्छी तरहसे ज्ञात हो जायगी कि माधुर्यगुण, उत्तमतासे जैन काव्योंमें ही पायाजाता है। शायद मैं इसका कारण जैन काव्योंके रचयिता आचार्यगणोंकी क्षमा, अहिंसा तथा वैराग्य समझता हूं। यह बात बिना दृष्टांतके शायद आप लोगोंकी समझमें नहीं आवे। हम प्रसिद्ध जैनेतर काव्य "काव्यप्रदीप" के दो श्लोक इस बातके निर्णयके लिये देंगे—

" स्वच्छन्दोच्छलदच्छकच्छकुहरच्छातेतराम्बुच्छटा।
मूर्छन्मोहमहर्षिहर्षविहितस्नानाह्निकाहाय वः॥
भिन्द्यादुद्यदुदारदर्दुरदरी दीर्घादरिद्रद्रुम-
द्रोहोद्रेकमहोर्मिमेदुरमदा मन्दाकिनी मन्दताम्॥

(काव्यप्रदीप प्रथम उल्लास)

अन्यच्च–

" कः कः कुत्र न घुर्घुरायितघुरीघोरो घुरेत्सूकरः
कं कं कः कमलाकरं विकमलं कर्तुं करी नोद्यतः ॥
के के कानि वनान्यरण्यमहिषा नोन्मूलयेयुर्यतः ।
सिंहीस्नेहविलासवद्धवसतिः पंचाननो वर्तते " ॥

(काव्यप्रदीप ७ वां उल्लास)

इन श्लोकोंमें हम अनुप्रास वहुल कह सकते हैं । लेकिन साथमें रौद्ररस भी पद पदपर टपकता है । किन्तु हमने जो ऊपर " यशस्तिलक " की मनोहर गद्य अनुप्रासमय दी थी उसमें पद पदपर माधुर्य भरा हुआ है । आप इस गद्यके दृष्टांतसे अवश्य ही समझ गये होंगे कि " यशस्तिलचम्पू " एक, अद्वितीय काव्य है । किन्तु इस काव्यमें कादंबरी, शिशुपालवध, नीलचम्पू, आदिकी तरह श्रृंगाररस ही नहीं भरा किन्तु यह लोकोपकारि-शिक्षाओंका निकेतन है ।

प्रायः पाश्चात्य विशारद भारतीय काव्यरत्नोंकी समालोचनाओंमें सर्व प्रथम यह दोष निकालते हैं कि इनमें स्त्रियोंका सौन्दर्य, स्त्रीपुरुषोंका प्रेम तथा उसका निभाना आदि निरुपयोगी विषयोंपर ही भारतीयकाव्यरचयिताओंने शब्दार्थालंकारोंसे शोभायमान सरस्वतीको सजाया है, कोई अच्छे २ विषयों पर रचते तो कितना अच्छा उपकार होता " आदि ।

वास्तवमें यूरुपीय सज्जनसमालोचक जो इस दोषको प्रधानस्थान देते हैं वह प्रायः ठीक ही मालूम पड़ता है, क्योंकि कालिदास कविके ग्रंथोंमें तथा कादम्बरी आदि काव्य-ग्रंथोंमें आदिसे अंततक यह ही श्रृंगाररस पाया जाता है । हम अपने पाठकोंको कालि-दासका श्रृंगाररसकी मदोन्मत्ततामें एक उदाहरण भेट करते हैं–

वागार्थाविवसंपृक्तौ, वागर्थप्रतिपत्तये ।
जगतःपितरौ वन्दे, पार्वतीपरमेश्वरौ ॥

इस श्लोकके अनुसार कवि कालिदासने महादेव पिता, तथा माता पार्वतीको मानकर नमस्कार किया है किन्तु ये ही कवि कालिदासजी अपने "कुमारसंभव" में क्या वर्णन करते हैं–

गम्भीरनाभीह्रदसंनिधाने, रराज नीला नवलोमराजिः ।
मुखेन्दुभीतस्तनचक्रवाकवंचच्युता शैवलमंजरीव ॥

इस श्लोकमें " श्रृंगाररसोन्मत " कवि कालिदास उसी माता पार्वतीकी योनिका वर्णन

करनेमें शर्माते नहीं है यह अत्यंत घृणास्पद है। किंतु हम इस बातको बड़े स्वाभिमानके साथ कहते हैं कि जैन काव्योंमें श्रृंगार रसको प्रायः निम्न स्थान ही मिला है। तथा शांति वीर करुणादि लोकोपयोगी रसोंको प्रधान स्थान मिला है। तथा जैन काव्योंकी रचना श्रृंगाररसको प्रधानकर संसारमें व्यभिचारादि अशुभ परिणामोंके निमित्त जैनेतर काव्योंकी तरह नहीं हुई, बल्कि लोकोपकारी विषयोंको उच्च स्थान ही मिला है। उदाहरणार्थ हम यश स्तिलकचम्पूको ही लेते हैं। इस काव्यमें जो दिनचर्या, ऋतुचर्या आदिका जो वर्णन किया है वह अत्यंत उत्कृष्ट है। किसी काव्यग्रंथोंमें तो यह विषय पाया जाता ही नहीं, बल्कि किसी भी वैद्यग्रंथने ऐसी चारु सरल मधुररीतिसे वर्णन नहीं किया होगा। पाठकोंके विनोदार्थ हम चम्पूके कुछ श्लोक अवश्य देंगे—

स्थाल्यां यथा नावरणाननायासघट्टितायां च न साधुपाकः।
अनाप्तनिद्रस्य तथा नरेन्द्र! व्यायामहीनस्य च नान्नपाकः॥

अर्थ—हे राजन्! जैसे बिना ढके हुए मुखवाली तथा नहीं ढारी गई ऐसी स्थाली (बटलोई) में अच्छा पाक नहीं बनता तथैव बिना निद्राको लिये हुए, तथा बिना व्यायाम किये हुए पुरुषको अन्न नहीं पचता।

अभ्यङ्गः श्रमवातहा बलकरः कायस्य दार्ढ्यावहः।
स्यादुद्वर्तनमङ्गकान्तिकरणं मेदः कफालस्यजित्॥
आयुष्यं हृदयप्रमादि वपुषः कण्डूश्रमच्छेदि च।
स्नानं देव यथार्तुसेवितमिदं शीतैरशीतैर्जलैः॥ (यशस्तिलकचम्पू)

ओराण प्रांतिज विभागनी आधुनिक स्थिति

(લેખક—શા હાથીભાઈ માણેકચંદ-સોનાસણ)

આજના જમાનામાં દેશના ખુણે ખાચરે રહેનારી અભણ પ્રજા પણ, પોતપોતાની જ્ઞાતિની ઉન્નતિ કરવા માટે અનેક ઉપાયો કરી રહેલી જણાય છે, પરંતુ અમારા ગુજરાતના કુમકો, તેમાંએ મુખ્યત્વે ઓરાણ પ્રાંતિજ વિભાગના ભાઈઓ, ધાર્મિક, નૈતિક આર્થિક અને સામાજીક બાબતોમાં ઘણાજ પછાત જોવામાં આવે છે અને તેના અનેક કારણો, બારિકાઈથી વિચારતા દ્રષ્ટિએ પડે છે, તે ટાળવાને ધીરે ધીરે પ્રયત્ન કરવામાં આવે તો જરૂર ઉન્નતિ થઈ શકે, પણ કોને પડી કે જ્ઞાતિના સુખ માટે, તન મન અને ધનનો ભોગ આપે! અત્યારે તો "સબસમકી સમાલો મેં મેરી ફોડતા હું" જેવું જણાય છે. વસ્તી છૂટીછવાઈ હોવાથી, દેખાદેખીથી ખોલેલી ધાર્મિક પાઠશાળાઓ ચાલી શકતી નથી કેળવણીના ખાતા, જૈન સમાજમાં હોવા છતાં, આર્થિક સ્થિતિ ને બાળલગ્નના કારણે, લાભ લઈ શકતો નથી અને કદાચ કોઈ કેળવાએલા માતા પિતા, હિંમત ધરી પોતાના બાળકને કેળવણી આપે, પણ બાળલગ્નના અવિચારી કાર્યથી, નિશાળી મદદ, તે બાળકોને અધવચ લટકતુ પડે છે, જેથી તેમની હાલત "ધોબીનો કુતરો નહિ ઘરનો કે ઘાટનો" જેવુ બને છે.

આ જમાનાના ચાલુ પ્રવાહ પ્રમાણે ઉન્નતિ કરવાનું, અને જુના રીવાજો સુધારવાનું કાર્ય, ચારિત્રવાન ધર્માચાર્યો, તેમજ લાયક વર્તમાનપત્રો કરી શકે છે. આજે ચારિત્રવાન (સાધુ ને બ્રહ્મચારી) ધર્માચાર્યો જણાતા નથી તેમજ કોઈ દેશ કાળ ક્ષેત્ર ને ભાવથી અજ્ઞાન, ભાડુતી ઉપદેશકો કોઈ કોઈ વેળા ભ્રમણ કરતા જણાય છે ખરા! પણ તેઓનો ઉપદેશ ગમે તેવો સારો હોય છતાં, તેઓ આધિ વ્યાધિ ને ઉપાધી ભરેલા જેવા હોવાથી, પ્રભા પડી શકતી નથી. તેમજ વરસમાં એકાદ ભ્રમણ (દોરો) થતું હોવાથી જનતા પર નહિ જેવી થએલી અસર તરતજ ભુસાઈ જાય છે. ગુજરાતમાં ચાર પાંચ તડે વહેંચાયલી વસ્તીના મળી આશરે ત્રણ હજાર ઘરની સંખ્યા છે, છતાં તેના હિતાર્થે પ્રસિદ્ધીમાં આવેલુ, "દિગંબર જૈન" માસિક પણ, તેને દૈવવશાત આપત્તિને લીધે, ઉત્તેજનના અભાવે, તથા અમારા દુર્લક્ષથી દિવસે દિવસે પોતાની દિશા બદલતી જણાય છે કારણ કે રાષ્ટ્ર ભાષા હિંદી થવાથી, આપણ ગુજરાતીઓને, હિંદી ભાષાનું વાચન, તે ભાષા શીખવવામાં ઘણું અગત્યનું થઈ પડે ઉપરાંત પણ છે તો ગુજરાતી, ને તેને દાળ ભાત ખીચડી પર સારો પ્યાર પણ છેજ, પણ સાદો અને ઓછા ખર્ચવાળો ખોરાક, પીરસનારાઓની દિન પર દિન ખોટ પડતી ગએલી જણાવાથીજ લાચારીએ, પોતાની દિશા બદલતી પડી હોય, એમ અમને તો જણાય છે પણ જો ગુજરાતી ભાઈઓ, ગ્રાહક થાય, અને બીજાઓને પણ ગ્રાહક થવા પ્રેરણા કરે, અને લાગણી પૂર્વક તેને વળગી રહે, તો તે હિંદી થતુ અટકે, ને પ્રથમની માફક, સારી રીતિમાં ગુજરાતી જાણ વળી તેના જેવા, મરતા, સગા, સોના ને વળી જુજ લવાજમે, વાચક પુરતુ ભેગા આપનાર ઉત્સાહી સંપાદકના હાથે લખાતું તૈયાર થતા પત્રને વિસારી મુક્યું, તે અમો ગુજરાતીઓને તો, શરમાવનારૂજ છે, ગુજરાતીઓ માટે હજુ તેમ થોડી થોડી જગા તો ચાલુ છેજ, તો તેનો વધુ લાભ લઈ, સંપૂર્ણપણે પોતાનુ બનાવી તેમ ઉપયોગી બાબતોની ચર્ચા કરી, સમયાનુકુળ લાભ ગુજરાતીઓ શા માટ ન ઉઠાવે? પણ જુના નામ પ્રમાણે—

"તમારી બુદ્ધિએ તમે હાલ્યા કરો લાખ પણ

અમે તો અમારા હતા હાય તેમ હાલશું"

એ પ્રમાણે બરાબર ચાલી રહેલો જણાય છે "જ્યાં ચાણુ ગામમાં નથી રહ્યા કા (ગામમાં હજાર રજનો સાગ" એ મુજબ ઉદ્દેશમો હતે છે

સ્થળે ભ્રમણ કરે, સભાઓ ભરે ને ઉપદેશ આપે; પણ ઉપદેશ સાંભળે કોણ! હિંદી ઉપદેશકોને પણ, અનેક જાતની હાડમારીઓ ભોગવવી પડે છે અને તે, ઉપદેશ હિંદી ભાષામાં મળતો હોવાથી, તેનો ,રસ ગુજરાતના ભાઈઓને ઠીક લાગતો નથી ને તેથી તે જોઈતું પોષણ આપી શકતો નથી. ને તેજ કારણથી હિંદી ભાષામાં લખાતા, "દિગંબર જૈન" માસિકને ગુજરાતીઓ વિસારતા જાય છે. આ અભાગ દુર્ભાગ્યનીજ નિશાની જણાય છે.

કોઈનો ગુનો ખોળવો હોય, દંડ કરવો હોય, કે ગ્નાતી બહાર કરવામાં પહેલ કરવી હોય, યા કન્યા લેવાની જાળ પાથરવી હોય તો અમને એકત્ર થવામાં, વાર લાગતી નથી. પણ ઉપદેશકોના ઉપદેશ વેળા કે પત્રો વાચવામાં નવરાશ મળતી નથી. પણ લગ્ન, મરણ, અથવા મેળાવડા પ્રસગે ગ્નાતિ સુધારણાની બાબતો પર લક્ષ ન દેતાં, નાદાન બાળક બાળકીઓને સગપણની ગાંઠથી જોડી દેવામાંજ શ્રેષ્ઠતા માને છે, જીંદગીના વ્યવહારમાં અગત્યનું કાર્ય લગ્ન હોવા છતાં, પોતાની અજ્ઞાનતા તેમજ બાળક બાળકીનો મન મેળાપ સિવાય, જીંદગીનો દસ્તાવેજ ખુણામાં બેસી કરી આપે છે.

ઠેકાણે ૮૪ ગામડાંઓમાં, વસ્તી છુટી છવાઈ વેરાયલી જણાઈ હતી, જેમાં ફક્ત બે ગામડાઓમાં ચાલીસ બાવીસ ઘર સંખ્યાબાદ કરતાં, બીજા કેળવાએલા લોકસમુદ્રમાં, આપણી નજીવી સંખ્યા ભળી ગએલી, જેથી ધર્મ સંસ્કાર છુટી જઈ, લોક સંસ્કાર દાખલ થએલા જણાય છે. ઉપર જણાવેલા વસ્તીના આંકડા જોતાં, ઘર-દીઠ ચાર માણસની સરેરાશ આવે, તે ઘણી ચિંતાજનક બીના છે.

આ વિભાગનું વસ્તીપત્રક ઝટ કરાવવાની જરૂર છે, તેમજ બીજા વિભાગોની પણ ગણત્રી કરી આંકડા નક્કી કરવા જોઈએ, જે જાણવાથી અનેક જાતની ખામીઓ, દૂર કરવાનું સુગમ થઈ પડે, જેથી આપણા વિભાગમાં બાર વરસમાં શું તફાવત પડ્યો, તે પણ જણાય. થોડા સમય પહેલાં હિંદુસ્તાનમાં જૈનોની સંખ્યા, પંચોસ લાખની ગણાતી હતી. તે ધીમે ધીમે ઘટીને, આજે ફક્ત સાડા અગીઆર લાખનીજ રહી છે તે જાણી કયા જૈનને દુઃખ નહિ થાય?

ચોવીસો માણસની વસ્તી સંખ્યા હોવા છતા, અને અમદાવાદમાં પંદર સોળ વરસથી, બોર્ડિંગ હોવા છતાં; એક પણ માનો પુત એવો નીકળી આવેલો જણાતો નથી કે જેણે પોતાના બાળકની કેળવણી પાછળ, હજાર કે બે હજાર રૂપીઆ ખરચી; તેમને ચારિત્રવાન બનાવવા સ્વપ્ને પણ ખ્યાલ કર્યો હોય, ૭૦૦ ઘરના ગોળમાં ફક્ત બે કે ત્રણ વ્યક્તિઓએ મેટ્રીક સુધીની સાધારણ પરીક્ષા આપેલી જણાય, ત્યાં કેળવણીનો ફેલાવો કેટલો હશે ! તેનો વિચાર વાંચકને સોંપું છું.

જુના વિચારના માતા પિતા, પોતાનાં નિર્દોષ બાળકોને, ઉંચ કેળવણી ન આપતાં, ઉલટી રીતે, ગુજરાતી ચોથી કે પાંચમી ચોપડીથી ભણતા અટકાવી, લગ્નની વરમાળા પહેરાવે છે. માતા પણ કીંમતી વસ્ત્રો પહેરી, મોડ ઘાલી, મનુષ્યોના ટોળામાં મલકાતી મહાલે છે. અને લગ્નના કોડ પુરા કરે છે પણ તેને ખબર નથી, કે; હું મારાં લાડકાં બાળકોને, કાચી ઉમરે ગૃહસ્થાશ્રમમાં જોડી, મચકાકલા ને રોગથી ભરેલાં, હાડ પીંજર સમાન, બાળકો ઉત્પન્ન કરવાનું, મશીન કારખાનું ઉભું કરાવી આપી, અમૂલ્ય જીંદગીઓને, ધુળધાણી કરાવી મુકું છું. પિતાથી પણ પોતાના બાળકના હાથનું, મીંદળ મુડલુ ન છુટયું, તેટલામા તો હોશિયાર થવાને બ્હાને, મુંબાઇની ગાડીએ રવાના કરે છે. જેમ ચાર ખુણીઓ ઢેફાળો, અફળાઇ કુટાઇ ગોળ બને, તે મુજબ થોડા ઘણા સંસ્કારોથી મોકલેલું બાળક, પોતાના કુટુંબ માટે કીંમતી ,કુકા એકઠા કરવામાં, જીદગીની સાર્થકતા માની અધુરા પુરું કરે છે, જેથી ખરી મનુષ્યપણાની જવાબદારી સમજવામાં આવતી નથી અને એવુ તો સમજાયજ કયાંથી કે અનેક ભવોમાંનું બાકી રહેલું, પાપરૂપી ત્રણ ચુકવવાને આ મનુષ્ય ભવ હશે; અને એવો કોણ મૂર્ખ મનુષ્ય હોય કે રત્નને કાગ ઉડાવવાના ઉપયોગમાં વાપરે, પણ કરે શું ?

આજે આર્થિક દ્રષ્ટિથી પંકાએલી, ચોર્યાશી અંદગનો વારસો ધરાવનારો, મુંબાઇ નગરીમાં રહેનારાઓ, સુપ્રિહાન મેળવવાની ઉત્કંઠા ધરાવે તો અનેક જાતના સાધનો ઉપરાંત અનેક વિદ્વાનોની મુલાકાત અને યોગ્ય સલાહ મદદ મેળવી શકેજ, પણ બેદરકારીએ, "બાર વરસથી દિલ્હીમાં રહે પણ ભાડભુંજાની દુકાનમાં" એ મુજબ એવા મનુષ્યો ભલે મોટા પગારદાર હોય; ભાવતાં ભોજન જમે, કે પછી મોટરોમાં ગનગમતી સહેલ કરે, અથવા તો વારસામાં મળેલા ધર્મના અંગે ટીલાં ટપકાં કરી, ધર્મા ધપપણાનો ડોળ દેખાડે, તેથી કંઈ કુટુંબનું, નાત જાતનું, સમાજનું, કે દેશનું કલ્યાણ કરી શકતા નથી. બાવળ અને તાડના વૃક્ષ ઉંમરે પહોચતાં જાય તેમ ટટાર ઉચાં વધે જાય છે; છતાં 'રાહદારીઓ નિર્ભયતાથી તેની નીચે બેસી' શકા નથી, પણ આંબાનું વૃક્ષ ઉમરે પુગતું જાય છે; તેમ તે નચું નમતું જાય છે, તે જોઇ વેને કોઇ છેદે છે, કાપે છે, પ્રહાર કરે છે, છતાં પરોપકાર વૃત્તિને ન તજતા, દરેક સાથે મિષ્ટ ફળ આપવાં ચાલુજ રાખે છે. વિદ્વાનો કહે છે કે "નમ્રતાનુ નીચાણ કબુલ રાખવાથી શ્રીમંતાઇના ઉંચ ગુણો પાસ થાય છે." ઝડપાલો પણ પક્ષીઓ ને જુદી જુદી જાતના કીડી જેવાં જંતુ પણ અનેક જાતના ઉપકારો કરે છે, પણ જે મનુષ્યો પરોપકાર વૃત્તિને તજી દઇ, સ્વાર્થ મા રચ્યા પચ્યા રહી, કાળક્ષેપ કરે તો તે મનુષ્યની ગણનામાં ગણી શકાયજ કેમ ?

કોઇ પણ નાત જાતની કે દેશની ઉન્નતિ, મઘના ટીંપાની માફક, રાહ જોઇ બેસી રહેવાથી થઇ નથી, આપણામા કેટલાક નામાંકિત સદ્ગૃહસ્થો છે, છતા તેઓ પ્રમાદને વશ, તેમજ ધંધા માપાઆજ ગણ્યા હોવાથી નનિ સુધરવાનો વિચાર મરણે પણ કોઇ વેગા લગી શકતા નથી. તે પણ શોચનીય છે. તે સિવાય અમારા નિર્માણના માણસો, મોટી સખ્યામાં મુંબઇ જેવા આગળ પડતા શહેરમાં શ્રીમન્ત છે. તેઓમા કેટલાક ઉંચ વિચાર ધરાવનારા, મારા સ્નેહી મિત્રો છે અને તેઓ ધારે તો ઉન્નતિને

જરૂર ઉચ્ચ સ્થિતિએ લાવી મુકે. તેઓ પોતાના સ્વાર્થનો થોડો નજીવો ભોગ આપી, વરસમાં ફક્ત એકજ માસ જ્ઞાતિ સેવા માટે બહાર પડી, ગામેગામ ફરી અમારા ભાઇઓને મરતુસ્પીતિનુ ભાન કરાવવાનું શરૂ કરે તો; થોડા સમયમાં બીજી જ્ઞાતિઓની હારમાં ઉભા રહેવાને શક્તિવાન થઇએ.

થોડા વખત ઉપર જ્ઞાતિ ઉદ્ધારણા માટે અમારા વિભાગના પ્રાંતિજ મુકામે, બોર્ડીંગ ઉઘાડવામાં આવ્યું, એ આપણી ઉન્નતિ માટેનું પ્રથમ પગથીઉજ ગણી શકાય છતાં તેમાં વિદ્યાર્થીઓ કેમ ઉભરાતા નથી? અને દાખલ થએલામાંથી કેટલાક અભ્યાસ અધુરો મુકી જાય છે તેનો વિચાર આપ સુજ્ઞ મહાશયો કરી લેશો. મારી સમજ પ્રમાણે આપણને આગળ જતા અટકાવનાર, બાળલગ્ન મુખ્યત્વે ઉન્નતિની આડે આવે છે તેમાં સચોટ સુધારો ન કરીએ ત્યાંસુધી આપણો ઉદ્ધાર આપણે કરી શકીએ નહિ. તે બાબત પર મારા અંગત વિચારો આપ સમક્ષ રજુ કરૂં છું, તે પર આપ નવરાસ વખતે ખુબ વિચાર કરી લેશો જેથી હું આપનો આભારી થઇશ.

ઉપર જણાવી ગયા તે પ્રમાણે વરની ઉમર કન્યા કરતાં પાંચ કે સાત વરસ મોટી રાખવી જોઇએ. કન્યાની ઉમર બાર વરસની થાય ત્યારે તેનું સગપણ કરવું. અને પંદર વરસની ઉમર સુધીમાં લગ્ન કરવું. આથી સુરતીઆને પોતાનો અભ્યાસ વધારવામાં અડચણ આવે નહિ કારણકે લગ્ન વખતે તેની ઉપર લગભગ ૨૦ થી ૨૨ વરસની થવા જાય છે. બીજા પણ અનેક ફાયદા થાય. વળી વિદ્યાર્થીઓને આગળ વધારવા માટે સ્કૂલ ફી તેમજ પુસ્તકો પૂરાં પાડવા માટે, એક ફાળાનું ફંડ ઉભું કરવું, અને દરેક વિદ્યાર્થીને તેનો લાભ આપવો જોઇએ. આ જમનો પથર માટીમાં પૈસા ખાલી નાખવાનો નથી, પણ મંદિરો બંધાવો તે પહેલા, તેને સંભાળનારાઓ તૈયાર કરો ત્યાર પછી મંદિરો બાંધવાં શરૂ કરજો. પૂજા કરવાવાળા નહી હશે તો મંદિરનાં બારણાં કોણ ઉઘાડશે!

આગળના શ્રીમાનો સમુદ્રની માફક ગંભીર ગુણના ધારક હોવાથી જેમ સમુદ્ર સરિતાઓનું વધારે પડતું જળ, પોતાના સ્થાનકે એકત્ર થવા દઇ, ગર્વમાં ફુલાઇ ન જતાં, કષ્ટની વેળા વરાળને વરસાદરૂપે સરિતાઓને જળ, પાછું સોંપી પોતાની ઉદારતા બતાવે છે, તે મુજબ શ્રીમંતો ગરીબોના પૈસા પોતાને સ્થાનકે એકઠા થવા દઇ. હાડમારી, દુષ્કાળ કે એવી કુદરતી આફત વેળા ધનનો ઉપયોગ ગરીબોને કષ્ટથી બચાવવા માટેજ કરતા. ગરીબો પણ ઉદારતા પર આફ્રીન થઇ, વાત્સલ્ય પ્રેમવડે જરૂરની વખતે, પોતાનો પ્રાણ આપવા પણ ચુકતા નહિ તે વારે અકબર બાદશાહના રાજ્યમાં ૧૦ પૈસે પણ ચોખા, અને રૂપીઆનું દસ શેર ઘી, તેમજ ખાનપાન બહુજ સસ્તાં હતાં. જ્યારે આજના શ્રીમાનો એકલપેટા ગરીબોનાં રક્ત ચુશી, વિલાયતી ફેશનની વિલાસી વસ્તુઓના મોહમાં ફસી, ગાડી વાડી ને લાડીમાં સુખ માની, ધર્મ તજી, વિષયેન્દ્રિયો તૃપ્ત કરવામાંજ ધર્મ માની રહ્યા છે. અને ગરીબો પણ (ક્ષત્રી ને શુદ્ર વર્ગ) પોતાની હયાતીમાં, ખરે બપોરે ગામડાં લુંટાતાં છતાં, પોતાનો ધર્મ ભૂલી પોતાના જીવનું જતન કરી રહ્યા છે. અને શ્રીમંતોની દેખાદેખીથી ગરીબો પણ દેશના કારીગર વર્ગને ભૂખે મારી પરદેશીઓને પોષી રહ્યા છે, જેથી હિંદુસ્થાન દેશ પાયમાલ થતો જાય છે. આંકડા-શાસ્ત્રીઓના કહેવા મુજબ પરદેશીના માણસ દીઠ રોજની સરેરાશ આવક, દસ રૂપીઆ થાય છે. ત્યારે નિર્ધન હિંદુસ્તાનના માણસની રોજની સરેરાશ આવક ફક્ત એકજ આનાની છે, એવું જાણવા છતાં આપણ ને આપણો સમાજ અનેક જાતના વિચિત્ર રંગી, પરદેશી કપડાં દેખાદેખીથી ખરીદ કરી દેશને ને ધર્મને અનેક રીતે હલકી પહોંચાડીએ છીએ. "રાજસ્થાન કેસરી" ના તા. ૨--૭--૨૬ના અગ્ર લેખમાં નિદાનની સાધુ સમાના મંત્રી લખે છે કે "વિલાયતી કમીન કપડામાં એક હજાર ગેલનમાં વજુબી તેલ અને ચરબી ને શુવરનું લોહી મેળવી માટો રંગ ચઢાવવામાં આવે છે.

આ બીના સાચીજ હોય તો આપણે તેવાં અપવિત્ર, ને ધર્મ ભ્રષ્ટ કરનારાં કપડાં પહેરી, આપણા શરીરને હરગીજ અપવિત્ર ન કરીએ: સાપની કાંચળીની માફક તેનો તો ત્યાગજ કરવો ઘટે. જો આટલું જાણવા છતાં આપણે વિદેશી કાપડ વાપરીએ તો આપણી પામરતા ને અધમતાનો છેડો ક્યાં ?

આ વિદેશી વસ્ત્રોને બદલે, આપણા સમાજમાં, ઘેર ઘેર રેંટીઆ (ચરખા) દાખલ કરી તે પર સુતર બનાવી, તેમાંથી કાપડ તૈયાર કરી, તે પવિત્ર જીવન અર્પતું કાપડ પહેરવું જોઇએ, જેથી ધર્મ, અર્થ, અને કામ સાધી શકાય તેમાંજ આપણી ને આપણા દેશની, આબાદી સમાએલી છે. હમેશાં રેંટીએ બેસી સુતર કાંતવું એ આજનો આપણો ધર્મ છે. તે હલકું કામ નથી તે પવિત્ર ને દયાનું કામ છે, જેનાથી દેશનું કલ્યાણ થાય, ગરીબોનું પોષણ થાય, આપણાં દુઃખ દૂર થાય, ને કુટુંબના કપડાં મફતમાં પુરા પડી શકે, તેવા કામ તરફ આપણું લક્ષ દોરી રસ્તો દેખાડી મહાત્મા ગાંધીજીએ, આપણા પર મહાન ઉપકાર કર્યો છે. ખાદીની હીલચાલ આખા દેશમા પગભર થવા આવી છે, ત્યારે આપણા કેટલાક ભાઇઓ તેનું રહસ્ય સમજતા નથી, પણ તે ખાદીમાં ખાનદાની ને સાદાઇ નજરે તરી આવે છે. ખાદીમા દેશાભિમાન, પવિત્રપણું, સ્વધર્મનો ઉદ્ધાર, અને આપણાં બાળ બચ્ચાંઓનું કલ્યાણ છે. ને એજ ખાદીમા સ્વરાજ્ય છુપાઇ બેઠેલું છે. ખાદી પહેરી આપણે કોઇનો દોષ કરતા નથી, કોઇનું બગાડવા માગતા નથી, પણ કરેલા પાપનુ પ્રાયશ્ચિત કરીએ છીએ આજ સુધી આપણે પરદેશી ગોદડીમાં ફસાઇ આપણું, આપણા સમાજનું, ને આપણા દેશનું, ને છેવટે ધર્મનું મોટું અપમાન કરેલુ છે, તેનો દંડ આપવા પશ્ચાતાપ કરી, ખાદી પહેરી આત્મ શુદ્ધિ કરીએ છીએ, તેમા બીજાને ખોટું લગાડવા જેવું કંઇ નથી. ખાદી પહેરવી એ ખાનદાનીનું લક્ષણ છે, આપણા દેશનું ભૂષણ છે, આપણાં ધર્મનું ગૌરવ છે, ખાદીમાં પરદેશી જડવાદનું જોર નથી, ખાદીમાં નાસ્તિકપણાની ગંધ નથી, તેમાં તો પવિત્રતા ભરેલી છે.* અને તેમાંજ અમૃત રહેલુ છે. જ્યારે આખો દેશ ખાદી પહેરતો થશે ત્યારે આપણને સ્વરાજ મેળવવા માટે ખટપટ કરવી નહિ પડે, ત્યારેજ આપણો ધર્મ ઓળખતા થઇશું અને ત્યારેજ આપણે આપણાં ભાઇ બહેનોને સાદાઇ ને ખરા ધર્મને રસ્તે ચડાવી શકીશું. એજ કારણથી આજે દેશનાયકો અને ઉત્સાહી દેશબંધુઓ આશરે વીસથી પચીસ હજારની સંખ્યામાં દેશના ઉદ્ધાર માટે તન મન ને ધનથી પોતાના પ્રાણની આહુતી આપી તુરંગ વાસ ભોગવી રહ્યા છે તેમને મુક્ત કરવા આપણા સમાજ ને આપણા દેશમાથી પરદેશી વસ્તુઓને વિલાંજલી આપી સ્વદેશી વસ્તુઓનો પ્રચાર કરવા કટિબદ્ધ થવુ અને ઘેર ઘેર ખાદી વાપરી મનુષ્યપણાની જવાબદારી સમજવી જોઇએ. છેવટે દરેક દેશવાસીઓને પરમાત્મા સદ્બુદ્ધિ આપો કે જેથી આપણી ભવિષ્યની ઓલાદનું કલ્યાણ થાય.

स्त्री समागम ।

अवस्था और गुणका विचार न करने, विवाह मार्यादाकी जड़ ढीली पड़जाने तथा अधर्म और अनीतिकी हवा फैल जानेसे विषयवासनाकी सीमा टूट गई है और लोगोंके शरीरके भीतरी उपयोगी तत्व निर्बल पड़ने लगे हैं। शारीरिक और मानसिक शक्ति नष्ट हो जानेसे आजकल मनुष्य जाति जो प्राणी मात्रमें सबसे ऊंची होनेका अभिमान रखती है उसकी दशा नष्ट होनेकी अंतिम और सबसे नीचेकी सीढ़ीपर आ पहुंची है। ऐसे समयमें यह बात ध्यानमें रखने योग्य है कि संसारमें जीवन तत्वोंको टिका रखनेका मूल साधन उत्तम क्षेत्र और उत्तम बीजका संबन्ध है। वीर पुरुषोंको उत्पन्न कर देशकी वाहवाही कराने और कुटुम्बको संपत्तिका स्वाद चखानेकी यही एक मात्र चाबी है।

ऋतु, क्षेत्र, पानी और बीज ये चारों योग्य हों तो बीजमेंसे उत्तम अंकुर निकलता है। वैसे ही पुष्पवती स्त्री रूपी ऋतु, गर्भाशय रूपी

परलोकमें सुखी होता है। इस प्रकारका वह ज्ञान सरल है उसका मिलना कठिन नहीं है परन्तु इतने पर भी उसकी कुछ परवाह न रखकर विकृत इच्छाको दैवी प्रेरणा समझ बेहद विषय सुखका सेवनकर शारीरिक और मानसिक बलको क्षय करके और जिसका प्रायश्चित कहीं ढूंढने पर भी न मिले ऐसे भयंकर पापमें पड़नेके बराबर और कौनसी मूर्खता होगी?

अजर और अमर होनेकी इच्छा मनुष्य मात्रको होती है। इसके लिये (अपने लिये और अपने बच्चोंके लिये) दैवी नियमके अनुसार चलकर, व्यसनरूप दूषित समागमको बंद करनेमें यदि प्रत्येक दम्पतिकी प्रवृत्ति हो जाय तो कैसा अच्छा हो? परन्तु अफसोस! इस वर्तमान समयमें वैसा अनुकरणीय तथा नमूना स्वरूप जोड़ा क्वचित ही मिलता है। तम्बाकू आदिके व्यसनी लोग अपनी इच्छाको अधिकतर तृप्त करनेके लिये उसी व्यसनमें लिपटे रहते हैं, वैसे ही कामी पुरुष अपने दूषित मनको तृप्त करनेके लिये (यद्यपि उससे सच्चा सुख और तृप्ति मिलना संभव नहीं है) तथापि न करने योग्य कृत्यतक कर डालते हैं।

परन्तु यह नहीं समझते कि ऐसा करनेसे मन धर्म शून्य होकर नीच बन जाता है। मदिरापान और जुआ खेलनेवालेकी तरह काम-वासना कभी शांत होती ही नहीं है। वरन् विषयभोग द्वारा उसे शांत करनेका उपाय करनेसे वह और अधिक २ बढ़ती जाती है जिसके परिणाममें शरीरका नाश ही होता है। पुरुष ज्यों २ स्त्री संगमें अधिक २ क्षीण होता जाता है, त्यों त्यों

ही उसका वीर्य क्षीण होता जाता है। परन्तु तब भी उसका मन तृप्त नहीं होता। अंतमें वीर्यके बदले रुधिर निकलने लगता है। और इस तरहपर वीर्य तथा रुधिर दोनोंके कम हो जानेसे जोड़ ढीले पड़ जाते हैं, शरीर निस्तेज और दुर्बल होने लग जाता है, भोजनसे रुचि हट जाती है, अन्न पचता नहीं, ज्वर, खांसी और आखिर क्षय रोग तक उत्पन्न होकर शरीर निकम्मा कर देते है।

स्त्री समागममें नियमित रहनेवाले पुरुषोंका जीवन सुख, शांति और आरोग्यमें व्यतीत होता है और काम सुख भोगनेकी शक्ति अधिक समय तक बनी रहती है। तथा जवानीमें ही बुढ़ापेके दुःख भोगकर मृत्युके वश नहीं होना पड़ता।

यद्यपि मानसिक सुखकी अपेक्षा शारीरिक सुखकी योग्यता कम है परन्तु तब भी उस सुखका भोगना संसारके नियमसे विरुद्ध नहीं है। इसमें शास्त्रीय निषेध भी नहीं होता और न उसमें किसी प्रकारका अनर्थ है। परन्तु जैसे मनुष्यको अपने अन्यान्य कर्तव्योंके साथ नीति-शास्त्रके नियमोंका पालन करना आवश्यक है। वैसे ही समागम रूप शारीरिक सुख भोगनेमें भी नीतिके नियमानुसार चलनेकी बहुत ही आवश्यकता है। हम बहुतसे आदमियोंसे कहते सुनते हैं कि विषयसुख भोगनेमें पशु-वृत्तिका त्याग करना चाहिये। परन्तु ऐसा करना हमारी भूल है। क्योंकि इन्द्रियविषयके नियमोंका पूरा २ पालन तो पशु ही करते हैं। इसलिये इस बातमें पशु वृत्तिका त्याग करना ही मूर्खता है। बहुतसे आदमी जानते होंगे कि गर्भ रहने योग्य स्थितिके सिवाय दूसरे समयमें पशुओंमें मादा, नरको अपने पास नहीं आने देती। दूसरे प्राणियोंमें नर नारीके समागमका जो हेतु है वही हेतु मनुष्य जातिमें भी मुख्य गिनना चाहिये। मनुष्य जातिमें नर नारीके सम्बन्धमें ऊपर लिखे हेतुके साथ प्रेम और धर्म भी मिला हुआ है। इस तरह स्त्री समागममें जो गर्भधारण, प्रेम और धर्म ये तीन हेतु मिले हुए हैं, इनको बराबर सार्थक करनेके लिये स्त्री और पुरुषकी उमर योग्य होना और साथ ही में उनको इस विषयका ज्ञान प्राप्त कराना आवश्यक है।

स्त्री पुरुषके समागम संबंधमें वैद्यक शास्त्रोंमें बहुत थोड़ा लिखा गया है परन्तु वैद्यक शास्त्रोंमें जो कुछ लिखा गया उस सबको इकट्ठा किया जाय तो उसमें कितना ही परस्परमें विरोध भी पाया जाता है। और जिसमें विरोध आता है वह सर्वमान्य हो नहीं सकता। इसलिये हमको परस्परके विरोधी विषयकी जांच करके अंतिम सिद्धान्त निकाल लेना चाहिये। मनुष्यका मन दुर्विचारसे रहित हो तो आवश्यकतासे अधिक समागम करनेकी उसको इच्छा ही नहीं होगी।

स्त्री समागमकी सीमा शरीरकी मजबूती, स्वभाव, ऋतु, उमर, खुराक आदि बहुतसी बातोंपर निर्भर है। मन और शरीरकी स्थिति दृढ हो और मन संतोषसे काम करनेमें शक्तिमान हो, तब ही समागम करना उचित है। समागमकी क्रिया दोनोंके लिये आवश्यक होनी चाहिये। यह दोनोंमेंसे एकको भी नापसन्द हो तो दोनोंको हानि पहुंचाती है। और दोनोंकी

इच्छासे दोनोंहीके अनुकूल हो तो आनन्ददायक और निर्दोष प्रजाको उत्पन्न करनेवाली होती है। दोनोंमेंसे एकको भी मानसिक अथवा शारीरिक पीडा हो, क्षोभ हो, बेचैनी हो, अथवा दूसरे कार्योंमें मन लगा हुआ हो तो उस समय का समागम हानिकर होता है। स्त्री और पुरुष दोनों हीको समागमकी इच्छा हो, तब ही समागम करना चाहिये।

जो पुरुष स्त्री समागमके सम्बन्धमें अपने मनको वशमें रखकर योग्य नियमका पालन कर सक्ते हों वे बडी उमर वाले, कुसमयमें बुढ़ापेसे न दबनेवाले, तेजस्वी, बलवान और मजबूत होते हैं। किस हालतमें और किन २ स्त्रियोंसे विषयभोग नहीं करना चाहिये, उसका खुलासा इस प्रकार है।

रजस्वला, बिना इच्छावाली, मलिन, अप्रिय, पुरुषकी अपेक्षा ऊंची जात वाली, उमरमें बडी, रोगी, विकृत अंगवाली, द्वेष करनेवाली, गर्भिणी, गुप्त इन्द्रियके किसी भी रोगवाली, गुरुकी स्त्री, संसारसे विरक्त, अपवित्र, आर्तव अथवा गर्भाशयके दोषवाली, अनिष्ट रूपवाली, अनिष्ट आचारवाली, झूठा प्रेम दिखाने वाली, क्रूर, बिना प्रीतिवाली, दूसरेपर प्रीति रखनेवाली और पराई स्त्री, वेश्यायें इतनी स्त्रियां समागमके लिये निषिद्ध हैं।

सूर्योदय और सूर्यास्तका समय (प्रातःकाल, सायंकाल) आधी रात, अमावस्या, पूर्णिमा, गर्भके छोड़नेका समय, मध्याह्न, सारा ही दिन और पर्वके दिन भी समागमके लिये निषिद्ध हैं।

कामका वेग आये बिना, भूखे, प्यासे, पेट बहुत भरा हो तब, दवा खाने बाद, अपवित्र शरीरसे; ऊंचे नीचे होकर, टेढ़े-सीधे होकर, मूत्रबाधा और किसी प्रकारकी थकावटके समय भी समागम निषिद्ध है।

ऊंचे पुरुषको नीची स्त्रीसे और नीचे पुरुषको ऊंची स्त्रीसे समागम नहीं करना चाहिये। योग्य उमरको न पहुँचा हुआ हो, बूढा, रोगी, उदास, दुबला और अशुद्ध वीर्यवाला पुरुष समागमके योग्य नहीं है। जो स्थान रमणीय हो, जहां स्त्रियोंके सुन्दर गायन सुननेमें आते हों, जहां मंद सुगंध पवन आनेका अवकाश हो और जहां एकांत स्थान हो वहाँ समागम करना ठीक है।

जहा पर पास ही माता पिता आदि बड़े रिश्तेदारोंका निवास हो, जहा नगर खुली हो, जहा शर्म आती हो अथवा जहा दुःखके शब्द सुननेमें आते हों, वहा पर समागम करना ठीक नहीं है। स्त्रीको शरीर उलटा या करवट लिये वीर्य कदापि ग्रहण नहीं करना चाहिये। कारण शरीर उलटा करके बीज ग्रहण करनेसे उसके गुप्त अंगमें पीड़ा होती है। दाहिनी पसलीके बल लेटकर ग्रहण करनेसे आमाशयमें से गिरनेवाला कफ गर्भाशयको बन्द कर देता है। और बाईं तरफके करवटसे पित्ताशयमें से पित्ताश गिरकर रज और वीर्यको नष्ट देता है।

सोले बरस परिपक्व न हुए हों ऐसी अवस्थामें बालक, स्त्री समागम करे तो उसका शरीर थोड़े पानीवाले तालाबकी तरह तुरत होकर सूखने लगता है और वैसे कुम्हार कच्चा हुआ घड़ा

॥श्रीवीतरागाय नमः ॥

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः ।
संबोधयत्पत्रमिदं प्रवर्त्तताम्, दैगम्बर जैन समाज मात्रम् ॥

वर्ष १५ वाँ. || वीर संवत् २४४८. भाद्रपद विक्रम सं० १९७८. || अंक ११वां

" आत्म विकाश "

गई अब रात्री हुवा प्रभात । करो अब आत्मोन्नती विकाश !
नींदमें गाफिल होकरके ! तजा सब पागल हो करके ।
गमाई भारतीय सब लाज ! समोंगे क्या अब नूतन साज ॥
नहीं है गगन कुसुमकी आश ! करो अब आत्मोन्नती विकाश ॥१॥
मोह ममताको तजडालो । सभी सत्याग्रह व्रत पालो ।
करो मिथ्या आशा चकचूर । बनो तुम योद्धा अब भरपूर ॥
नहीं रक्खो जीवनकी आश ! करो अब आत्मोन्नती विकाश ॥२॥
भीष्म सम हुए इसी भूपर, उठे जो नियमित दृढ व्रतपर ।
बताया योद्धाका सब साज । याद करलो सब तुम वह आज ॥
छोड करके भोगोंकी आश, करो अब आत्मोन्नती विकाश ॥३॥
भूखसे मरे सभी जाते । दमनसे दबे सभी जाते ।
हवन समशानमें होता । काम परदेशोंका होता ॥
उठो सोवोगे फिर क्या बस ! करो अब आत्मोन्नती विकाश ॥४॥
जेलमें जाकर भारत पूत । करत हैं पक्का निज सूत ।
वहां भी देश कार्य करते । नहीं विपदाओंसे डरते ॥
जगो ! करते किसकी अब आश । करो अब आत्मोन्नती विकाश ॥५॥
नहीं इसका है फल अति बुरा । नींदका झोंका यह विषभरा ।
सम्हालो शेरों कैसी देह, छोड दो मिथ्या सभी सनेह ॥
बना नहिं कोई उस है पास, करो अब आत्मोन्नती विकाश ॥६॥

" मणि "

समाजोन्नति

तजे यदि ईर्षा वि । साज । समुन्नत होवे जैन समाज ॥१॥

कलहसे हुआ दिलोंमे फेर । द्वेषने लिया दिलोंको घेर ।

छो. दो शीघ्र दिलोंसे द्वेष । ही अब रहा हाय दवलेश ॥

मशाशो श वि सपर सर आ.— मुक्त होवे जैन समाज ॥२॥

दृष ही भ..। वर दा । नहीं कुछ भी देता माला ।

हुई है झगड़ेसे यह क्षती । रही नहि सहोदरोंमें रती ॥

एक पर पडते हैं इस गाज । इसीमें डूबी जैन समाज ॥३॥

वि. बाबू भी हैं ऐंठे । विचारा जो कुछ कह बैठे ।

रखा जनता का रभी न लक्ष्य । भी इरते क्या वह दक्ष ॥

सपन्ना । भी समाया लाज । भ त द रदी हाय जैन समाज ॥४॥

इधासे श ख्री ण बोले । चान दि हाथ बीन तौले ।

१ सस रसरा वर्षा होगा । शांतिसे क्या और खोवेगा ॥

या रे रक्षक नि खिल समाज । सन्ना पा सर ही यह साज ॥५॥

वि । दि में । ह ह वो । द्वष दल हाय न हरपाओ ।

" वरद्धो तन्ना ही होगा । शा त रा भतना ही होगा "

• साहालो । री जैन समाज । मच दो शांति समर न्य आज ।



हमारा सबसे महत्व पूर्ण धार्मिक पर्व श्री दशलाक्षणी पर्वके दिन चल होगये हैं। ये १० दिन इतने पवित्र हैं कि इसमें सोलह कारण, दशलाक्षणी, रत्नत्रय, अनंत, सुगंध दशमी, श्रवण द्वादशी, ऋषि पंचमी, निर्दोष सप्तमी आदि अनेक व्रत इसी दिनोंमें आते हैं। ऐसे तो पर्वके १० दिन कहे जाते हैं परन्तु हमारे इस पुण्य पर्वकी समाप्ति आश्विन वदी १ को ही सोलह कारण व्रत पूर्ण होकर होती है।

दशलाक्षणी पर्वमें कर्तव्य।

इन पुण्य दिनोंमें हमारे भाई व बहिनें यथाशक्ति व्रत पूजा आदि करते हैं यहां तक कि बहुतसे भाई व बहिनें दश२ सोलह२ या एक२ माहका उपवास करते हैं जिससे जैन धर्मकी विशेष प्रभावना होती है। हरएक मंदिरमें नित्य पंच पूजा, व्रतोंकी पूजा, सूत्रपाठ आदि होता है परन्तु अब भी ऐसे बहुतसे स्थान हैं जहां नित्य शास्त्र सभा नहीं होती है न सूत्रजी व दश धर्मपर विवेचन होता है। बिना अर्थ और माहात्म्य समझे पूजा करनेका कुछ भी फल नहीं है इस लिये हरएक मंदिरजीमें इन दिनोंमें नित्य दश धर्मोंमें से एक २ धर्मका तथा उसके साथ सूत्रजीका एक२ अध्यायका अर्थ सब भाइयोंको सुनाना चाहिये। हमारे भट्टारकोंका तो नाम ही जाने दीजिये क्योंकि जहां ये होते हैं वहां किस प्रकारका कितना उपदेश देते हैं यह तो हम जानते ही हैं परन्तु जहां कहीं त्यागी ब्रह्मचारीने चतुर्मास किया है वहां तो धर्मामृतकी अच्छी वर्षा होवेगी ही और जहां नहीं है वहांके पढे लिखे भाई नित्य दो दफे मंदिरमें सब भाइयोंको धर्मका स्वरूप सुनावें और यथा शक्ति धर्म ध्यान करके दान पुण्य करें।

अब इस पवित्र पर्वमें हमारा सबसे प्रथम कर्तव्य यह भी है कि हमारे मंदिरोंमें एक भी अपवित्र वस्तु पहिने हुए न जावें और न मंदिरके पूजन व उपकरणादिमें एक भी वस्तु अपवित्र हो। विलायती व यहांकी मिलोंके बने कपडे चरबी और लोहूके कलफसे तैयार होते हैं तथा रेशमी वस्त्र कितनी हिंसा होकर तैयार होता है वह सभी भली भांति जानते हैं इसलिये हमें अब मंदिरजीमेंसे विदेशी व मिलके कपडे तथा रेशमी वस्त्रका उपयोग बिलकुल बंद करके हाथके काते और हाथके बुने शुद्ध स्वदेशी सूती कपडे अर्थात् **पवित्र खादीका** ही उपयोग करना चाहिये। विदेशी वस्त्र त्यागकी प्रतिज्ञा जिन २ भाई व बहिनोंने नहीं की है उनको इस पवित्र पर्वमें अवश्य ले लेनी चाहिये।

अब इस पर्वमें उत्तम क्षमा धर्मके साथ २ उत्तम त्याग धर्मका भी कुछ कम महत्व नहीं है। त्याग धर्मके पालनसे ही हम उन्नति कर सकते हैं इसलिये त्याग धर्मके पालनार्थ इस पर्वमें चारों प्रकारका यथाशक्ति दान हम सब भाइयोंको करना चाहिये। तथा हमारे भाई व बहिनें जो

दश २ उपवास करते हैं उनका तो खास कर्तव्य है कि इस व्रतके उपलक्षमें अच्छी रकम दानमें निकाले तथा प्रभावनामें बतासे आदि न बांटकर पुस्तकोंकी प्रभावना करें। हमारी संस्थाओंमें दान करनेसे चार दानका पुण्य होता है इसलिये हरएक स्थान पर संस्थाओंके लिये खास चंदा इकट्ठा करके सभी संस्थाओंको प्रमाणमें भेज देना चाहिये। हमारी खास संस्थायें ये हैं-ऋषभ ब्र० आश्रम जयपुर, मोरेना सिद्धांत विद्यालय, काशी स्याद्वाद महाविद्यालय, कुंथलगिरी आश्रम, सागर विद्यालय, अनाथाश्रम देहली, अनाथाश्रम-औषधालय बड़नगर, महाविद्यालय ब्यावर आदि। इन संस्थाओंमें काफी स्थायी फंड नहीं है और खर्च तो नित्य चालू ही है और हमारे भाई यदि अपनी कमाईका सौवां हिस्सा भी दान करदें तो हमारी संस्थाएं अच्छी तरहसे चल सकें। इसके साथ २ एक विशेष कर्तव्य यह भी है कि हमारे सब तीर्थोंकी रक्षा होती रहे इसलिये तीर्थक्षेत्र कमेटीकी ओरसे जो प्रबंध होता है उनका चालू खर्च चलानेके लिये प्रतिवर्ष प्रत्येक घर पीछे केवल १) तीर्थरक्षा फंड इकट्ठा करनेकी सूचना हो रही है उसका पालन करना हमारा कर्तव्य है इसलिये इस पर्वमें पंच द्वारा तीर्थरक्षा फंडका घर पीछे एक २ रु० की उगाही करके बम्बई तीर्थक्षेत्र कमेटीको मनिओर्डरसे भेज देना चाहिये।

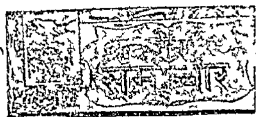
कारण बिना कार्य नहीं होता इस लिये जहां जहां किसी प्रकारका भी कलेश हो उसको इस पर्वमें उत्तम क्षमा गुण धारण करके मिटा देना चाहिये तथा मंदिरोंका हिसाब प्रगट करना चाहिये तथा चतुर्दशीके दिन सब भाई व्यापार छोड़कर उपवास करते हैं व धर्म ध्यान करते हैं उस दिन मंदिरके शास्त्र भंडारकी सम्हाल करनी चाहिये और जो २ शास्त्र मंदिरजीमें न हों उनको अपने द्रव्यसे या तो मंदिरके भंडारोंके द्रव्यसे मंगा लेने चाहिये। यह पर्व कहां किस तरहसे मनाया गया, क्या २ नवीन कार्य हुए आदिके समाचार सब भाई हमें *आश्विन वदी १ तक भेज देवें ताकि वे आगामी* अंकमें प्रकट कर सकें।

* * *

नुकता और शास्त्र।

ब्यावरमें प्रतिष्ठा करानेकी भावनाका रटन करते २ अकस्मात् अकाल मृत्युको प्राप्त होनेवाले ३६ वर्षके एक नामी श्रीमान् सिं० **मोतीलालजीका** नुकता बम्बईमें हुआ था उसकी चर्चा हमने की थी और ऐसे नुकते शास्त्र सिद्ध हो तो बतावें ऐसा हमने लिखा था उस पर खंडेलवाल जैन हितेच्छुने अं० १९में 'नुकता और शास्त्र' नामक लेख लिखकर तोड़ मरोड़ कर नुकताको शास्त्र-सिद्ध दिखानेका यहां तक प्रयत्न किया है कि अंतमें यहां तक लिखडाला है कि "नुकता करना न रूढ़ि है न कुरीति है और इसे बंद करना मानों पापके प्रायश्चित्तका बंद करना है, और मृत मनुष्यके पुत्रादि पर दूना पापका बोझ लाद देना है !!" उपरोक्त वाक्य लिख कर संपादकजीने यह बतलाया है कि हरएक छोटे बड़ेकी मृत्युका नुकता करना शास्त्र सिद्ध है और करना ही चाहिये और न कोई भी नुकता-

दिको दुना पाप लगेगा तो जब खंडेलवाल महासभा धर्मसे अविरुद्ध चलनेकी पूरी डींग मारती हैं और उसने ६० वर्षकी आयु तकका नुकता न करनेका प्रस्ताव कर रक्खा है वह क्या उनके विचारसे धर्म विरुद्ध नहीं है? नुकते न करनेवालेको ये पापी और अधर्मी कहते हैं तब ऐसा प्रस्ताव क्यों कर रक्खा है ?! और बंगाल आसाम खं० सभाने ३० के स्थान पर ४९ वर्ष तककी आयुवालेका नुकता न करनेका जो प्रस्ताव किया है वह भी उनको बुरा लगा है यह कैसी मजेकी बात है! इससे ही पता लग सकता है कि खंडेलवाल जैन हितेच्छु कैसे२ सुधार जातिमें करना चाहता है!



दाहोदमें ऐक्य—वागड प्रांतका केन्द्र, दाहोदमें ९१ गृह जैनियोंके हैं। वहां कई दिनोंसे परस्पर फूट थी और दशलाक्षणी पर्वमें कई बाधाएँ उपस्थित होनेकी शंका थी परन्तु अतीव हर्ष है कि भादों वदी ११ को वहांके जूने मंदिरमें सब भाइयोंने बैठकर अपना झगडा बडे प्रेम भावसे निवटा लिया और एकता होगई जिसके चिह्नरूप बतासे भी बांटे गये। यहांके मंदिरमें रेशमी अपवित्र वस्त्रोंका उपयोग होता है सो भी बंद होना चाहिये।

मूडबिद्री—में बडे मंदिरके जीर्णोद्धारका कार्य पूर्ण होने आया है और भ० चारुकीर्तिजी और पंचोंके प्रयत्नसे वहां आगामी माघ मासमें पंचकल्याणक प्रतिष्ठाका बडा भारी उत्सव होनेवाला है।

साकरोदामें विद्यालय—ब्रह्मचारी चांदमलजीके उपदेश व प्रयत्नसे साकरोदा (उदयपुर, मेवाड) में एक वर्ष हुए बोर्डिंग व ऋषभ दि० जैन विद्यालयकी स्थापना हो गई है और खूब उन्नति पर है। अभी ७० विद्यार्थी पढ रहे हैं। इस प्रांतके जैनियोंका कर्तव्य है कि अपने बालकोंको इस विद्यालयमें पठनार्थ भेजें व यथाशक्ति सहायता भी देते रहें।

उपदेशक चाहिये—गुजरात तथा दक्षिण प्रांतमें उपदेश करनेके लिये बम्बई दि० जैन प्रांतिक सभाको एक उपदेशककी आवश्यकता है। सफर खर्च और वेतन योग्यतानुसार। लिखो—माणिकचंद बैनाडा, महामंत्री, हीराबाग-बम्बई।

पावागढ—सिद्ध क्षेत्रमां गत वर्षमां यात्री ओछा आवेला हता तेथी आवक करतां खर्च वधु थयो छे तेमज धर्मशाला वगेरेनुं देवुं घणुं छे ने व्याज भरवुं पडे छे माटे ए तीर्थनी रक्षाना फंड माटे मुनीम चंदुलाल मथुरादासने गुजरात मालवा अने निमाडमां मोकलेला छे. ए मुनीम वैष्णव छे माटे तेमनापर शंका न लावतां सर्वेए यथाशक्ति मदद आपवी अथवा अमने मोकलवी। लालचन्द कहानदास मंत्री, नवीपोळ-वडोदरा।

तिलक जयंती—के दिन गत १ अगस्तको सागरकी पाठशालाके छात्रोंने सभा करके स्वदेशी

वस्त्र ही पहननेकी प्रतिज्ञा ली थी।

रामटेकमें खं० सभा–नागपुर प्रां० दि. जैन खंडेलवाल सभाका ७ वां अधिवेशन ता० १०–११–१२ अक्टूम्बरको होगा। सब तैयारी होरही है।

भिंड–में महावीर दि० जैन विद्यालय अच्छी तरह चल रहा है। इसकी प्रबंधक कमेटीने नियम बनाया है कि ६) साल देनेवाले २९० –व १०१) देनेवाले १०० मुख्य मेम्बर बनाये जावें। सब भाइयोंको मेम्बर बनना चाहिये। १०० तो बन चुके हैं।

इंदौरमें उत्सव-दा० सर सेठ हुकमचंदजीकी पारमार्थिक संस्थाओंका ८ वां वार्षिकोत्सव इस साल विशेष रूपसे मनाया जायगा अर्थात भादों सुदी १० से तेरहद्वीप पूजन विधान होगा व आश्विन वदी ४ को जलयात्रा महोत्सव, विद्वानोंके व्याख्यान व संस्थाओंका वार्षिकोत्सव होगा तथा जंवरीबाग धर्मशालाकी दूसरी मंजिल तैयार होगई है उसकी उद्घाटन क्रिया होगी और शामको सर सेठ हुकमचन्दजीकी ओरसे उपस्थित दि० जैनियोंका प्रीतिभोज होगा। सभी भाई व स्नातक संस्थाके पूर्व कार्यकर्ता व छात्र आना अवश्य २ पधारें।

इनायीटाल, महामंत्री।

दशलाक्षणी पर्वमें-पं०वंशीधरजी व रावजीभाई दोशी पूनागरमें मुनि शांतिसागरजीके पास उपदेशार्थ जांयगे। यहां २०० ३००–४०० जैनियोंके गृह हैं। पं० जिनदास शास्त्री फोल्हापुर जांयगे व सोलापुरमें सुमेरचंद मानिकचन्दजी बी० ए०, पं० वासु शास्त्री व गुलाबचन्द दोशी करेंगे।

कलकत्तामें धर्म-प्रभावना–पूज्य ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजीने इस साल कलकत्तेमें चातुर्मास किया है इससे वहां धर्म प्रभावना खूब हो रही है। ब्रह्मचारीजी नये मंदिरमें नित्य दोनों समय शास्त्र पढते हैं तथा चावल पट्टीके मंदिरमें ब्र० चांदमलजी शास्त्र पढते हैं। स्याद्वाद प्र० सभाके जल्से हरएक १४ को होते हैं। कार्तिकी महोत्सवपर यहां महासभाका अधिवेशन करनेका भी विचार हो रहा है। रक्षाबंधनके दिन सभा होकर संस्थाओंमें दान करनेकी अपील की गई थी जिससे पांच संस्थाओंके लिये करीब ७००) का दान हुआ था जिसमें सर सेठ हुकमचन्दजीने २५०) दिये थे। स्त्री समाजने भी १००) इकट्ठे कर बम्बई आश्रमको भेजे थे। तथा २३ भाइयोंने विधि पूर्वक पं० अम्मनलालजी द्वारा यज्ञोपवीत धारण किया था। यहां धर्मशाला व औषधालयकी बड़ी भारी आवश्यकता है। क्या ब्रह्मचारीजीके चातुर्मासके स्मरणार्थ कलकत्तेके धनिक भाई ऐसा कोई बड़ा दान नहीं करेंगे? हमें तो इस साल इन भाइयोंसे बहुत उम्मेद है।

महासभाकी–प्रबंधक कमेटी देहलीमें ता० २९ जुलाईको बैरिस्टर जंगमन्दरलालजीके सभापतित्वमें हुई थी उसमें ८ प्रस्ताव हुए थे जिनका सारांश यह है कि जैन गजटके लिये १०००) के जैनोंमें प्रेस खोला जावे। धुर्मा फंडका ट्रस्टडीड पास होकर रजिस्टर कराना निश्चित हुआ, बा० नंदकिशोरजी कोषाध्यक्ष धार्म

डेढ महीनेमें न देवें तो दीवानी या फौजदारी उचित कार्यवाई करनेके लिये नवीन कोषाध्यक्ष निर्मलकुमारजीको सत्ता दी गई, महामंत्री ला० भगवानदासजीका स्तीफा अफसोससे स्वीकार किया गया आदि।

खंडवा—में मंदिरके कार्यकर्ताओंने व पंचने प्रस्ताव किया है कि जिन मंदिरोंमें विदेशी वस्त्र किसी भी निमित्तसे न चढाया जाय। इसका अनुकरण वहांके वैष्णव मंदिरमें हो गया है।

परतापगढ—में ब्र० गेंदीलालजी, उदासीन पं० पन्नालालजी गोधा व घासीलालजीके चातुर्मासमें ठहरनेसे बहुत धर्म प्रभावना हो रही है। नित्य दो दफे शास्त्र सभा होती है।

जिंतुर—में नवीन प्राचीन तीर्थ नेमगिरी पर्वतपर श्रा० सु० ९ को ब्र० महावीरप्रसादजीके उद्योगसे नेमिप्रभु जयंती मनाई गई थी।

ब्यावरमें सत्समागम—महासभाका महा विद्यालय ब्यावरमें आ गया है और इस साल यहां दशलाक्षणी पर्वमें बा० भागीरथजी वर्णी, ब्र० ठाकुरदासजी, ब्र० पं० उमराव ब्र० ज्ञानचंदजी, ब्र० छोटेलालजी (मथुरा), आदि त्यागियोंके उपदेशामृतका अवश्य लाभ होगा। सेठ हुकमचंद जगाधरमलजी व मुन्शी भागचंदजी सोहाना तो धर्म साधनार्थ यहां पहुंच गये हैं व अन्य भाई भी आ सकते हैं।

अयोध्याजी—तेरहका प्रबंध सुधर गया है और नवीन मुनीम मूलचंद परवरको ला० फतेचंदजी व दयालासजी मोदराजोंने जाकर सब चार्ज ता० २४ जुलाईको दिला दिया है। यहांके सामानकी सूची भी 'जैनमित्र' में प्रगट हो गई है।

बडनगर अनाथालय—के अनाथ छात्रोंको रक्षाबंधन पर्वके दिन उत्सव सभा आदि कर विधिपूर्वक यज्ञोपवीत धारण कराया गया था।

नांदगांव—(नासिक) में ऐलक पन्नालालजी महाराजका चातुर्मास है। वहां भी ऐक्यता हो गई है और खूब धर्म प्रभावना हो रही है आसपासके भाई त्यागीजीके दर्शन व उपदेश लाभार्थ वहां अवश्य पधारें।

जैन जेलमें—पिठौरिया (सागर)में हरिचंद्र जैन स्वराज्य कार्य करते हुए ६ माह जेलको गये हैं।

छूटे—महात्मा भगवानदीनजी बेतूल जेलसे छूटे हैं और ब्र० कुंवर दिग्विजयसिंहजी आगामी मासमें छूटेंगे। अर्जुनलालजी सेठी अजमेरमें कांग्रेस कमेटीके मंत्री हैं और कांग्रेसका खूब कार्य कर रहे हैं।

परतापुरमें—मुनि चंद्रसागरजीका चातुर्मास नहीं हुआ है, परंतु परतापुरमें तो क्षुल्लक शांतिसागरजीने चातुर्मास किया है और एक मासका उपवास कर रहे हैं। दस दिनके बाद सिर्फ जल लेते हैं। नीतरीमें पं० चुन्नीलालजी द्वारा अच्छा धर्मोपदेश हो रहा है तथा समोसरण विधान व रथयात्रा उत्सव भी हो गया है और जैनधर्मका उत्तम उपदेश देते हैं तथा आप दशलाक्षणी पर्वमें १० उपवास करनेवाले हैं।

संपत पचान, नटियाकोट।

रक्षाबंधन—पर्वमें जेठमल सदासुख लखनऊने संस्थाओंको ६७) का दान किया था।

सिद्धवरकूटमें—कोट बननेका काम चालू हो गया है। सेठ हुकमचंदजीने १०००) भेज दिये हैं। जिन सज्जनोंके पास क्षेत्रकी रकम बाकी हो भेज देनी चाहियें।

छूटे—उपरौली (मेरठ) निवासी ला० मंगतराय जैन (कोंग्रेस कमेटीके मन्त्री) ९ माहकी जेल पूर्ण होनेपर गत ता० १९ को मेरठ जेलसे छूटे हैं।

महोपदेशक—पं० कस्तूरचन्दजी दशलाक्षणी पर्वमें उज्जैनके भाइयोंके आग्रहसे वहां ठहरे हुए हैं और धार्मिक व्याख्यान व आम सभाएं हो रही हैं।

क्षमा धर्म।

क्षमा नाम संस्कृत भाषामें पृथ्वीका भी है। पृथ्वी पर राज्य करो, इसको काटो, चीरो जलाओ कुछ भी क्यों न करो, मगर पृथ्वी न तो किसी पर क्रोध करती है और न किसीका बुरा चाहती है। ठीक इसी प्रकार **मनुष्यका स्वभाव होना सो ही क्षमा धर्म है।** यह क्षमा धर्म क्रोधरूपी वैरीको जीतनेसे प्रगट होता है। क्योंकि क्रोध है सो आत्माके क्षमा धर्मको खो देता है। और सत्य, संयम, सन्तोष, निराकुलता आदि स्वभावको भी नष्ट कर देता है। क्रोधीके धर्म अधर्मका, हित अहितका, विचार नहीं रहता है। गुस्सा करनेवालेके अपने मन, वचन, काय, काबूमें नहीं रहते हैं। वे गुस्सा [illegible] बहुत कालकी प्रीतिको क्षणमात्रमें दूर करके मित्रोंको भी शत्रु बना देता है। क्रोधका बहुत प्रभाव होकर झूठ वचन, कठोर निंद्य, भीड व लड़ाके बोलने लायक वचन बोलने लग जाता है। क्रोधी धर्मको भुला देता है। क्रोधी मनुष्य पिता, माता, पुत्र, स्त्री, मालिक नौकर, मित्र, बंधु आदिकको मारनेमे पाप नहीं समझता। निहायत गुस्सेवाला आदमी, जहर, हथियार आदिकसे अपघात तक कर लेता है। कमजोरीका विश्वास कभी नहीं हो सक्ता। क्रोध ही यमराजके समान है। क्रोधके असरसे बड़े२ ऋषिमुनि भी धर्मसे भ्रष्ट होकर नरक आदि दुर्गतियोंमें चले गये। क्रोध बुद्धिमें भ्रम कर देता है। क्रोधसे पागल हो जाता है। निर्दयी बना देता है। गुस्सेकी बराबर जगतमें कोई भी पाप नहीं है। गुस्सेके बराबर अपना घात करनेवाला कोई भी नहीं है। जैसे किसी जलता हुआ अंगार फेंककर मारे तो उसे लगना न लगना उसके होनी (शुभ या अशुभ कर्मों) के आधीन है। मगर जिसने अंगारा हाथमें लेकर मारना चाहा उसका हाथ तो प्रथम ही जल जायगा। इसी तरह जो कोई गुस्सेके वशमें होकर दूसरेका बुरा करना चाहेगा वह अपने क्षमा, शील, सत्य, सन्तोष, आदिक गुणोंको नष्ट कर देता है। जिसने अपने क्षमा धर्मको नष्ट कर दिया है उसीको आत्मघाती कहते हैं। क्रोधरूपी वैरीको जीत लेना, कभी भी गुस्सा नहीं करना उसीको क्षमा कहते हैं। क्षमा है सो आत्माका मुख्य धर्म (स्वभाव) है। क्षमा धर्म ही संसारके दुःखोंसे छुड़ानेवाला है, दुर्गतिसे बचानेवाला है, क्षमा धर्म जिसके होता है उसके सारे गुण सहज हीमें प्रगट हो जाते हैं। इसलिये सबको चाहिये कि उत्तमक्षमा धर्मको धारण करें। ॐ शान्ति शान्ति शान्ति॥

उलफतराय जैन-गोहाना।

श्री दशलाक्षणिक पर्व या जैनियोंके सत्याग्रह दिवस।

जैनियो! बतलानेकी आवश्यक्ता नहीं कि आनेवाला श्री दशलक्षण पर्व कितना पुनीत है? जैनोंका प्रत्येक बालक २ भी इस पर्वसे भलीभांति परिचित है। ज्यों२ पर्वके दिन समीप आते जाते हैं त्यों २ भावोंमें पवित्रता आती जा रही है। पहिले मैं इस पर्वको भलीभांति पूर्ण करनेके लिये निम्नलिखित सामग्री परम आवश्यक समझता हूं। आशा है कि आप उस सामग्रीको संचित कर पर्वके परम पावन दिवसों धर्ममय व्यतीत करेंगे।

ठीक इसी भांति सत्याग्रहके लिये भी अपनी हार्दिक पवित्रताकी आवश्यकता है। **बिना क्रोधादिको वशमें किये पूरा सत्याग्रही कदापि नहीं कहा जा सकता** है। सत्याग्रही यदि जेलमें भेज दिया जावे, देशसे निकाल दिया जावे या अपने घरमें सकुटुम्ब रहे, कदापि द्वेष भाव और प्रेम भाव न रखकर समता भाव ही धारण करेगा जो कि उत्तम क्षमा धर्मका पूर्ण परिचायक होता है।

बन्धुवर्ग! संसारमें ऐसा कोई प्राणी नहीं है जो सदा सुखकी खोजमें न रहा करता हो किन्तु सुख मंदिरके यथार्थ मार्गको ज्ञात न कर व्यर्थ ही इधर उधर भ्रमण किया करते हैं जिसका परिणाम दुःखमय ही होता है और उस दुःखके फलको भोगते हुये दुःखके बीजों पर ध्यान न देकर दुःखको दूर करनेके लिये प्रयास किया करते हैं तथा दुःख दूर करनेके प्रयत्नके विफल होनेपर हताश भी हो जाया करते हैं।

जिस मनुष्यके घरमें आग लगी है उसका सबसे पहिला प्रयत्न यह ही होना चाहिये कि जहांसे आग लगी है वहांसे जल सिंचनादि उपायोंसे आग शान्त करे, शान्त होनेपर अन्य सर्व सामग्री स्वयमेव सुरक्षित रह सक्ती है किन्तु अन्य अज्ञानी पुरुष पहिले मुख्य स्थानको शान्त न कर इधर उधर फैली हुई सामग्रीको घरसे बाहिर ले जाया करता और उठाने रखनेके अन्तर तक अग्निके अधिक प्रज्वलित हो जानेके कारण घरकी समस्त सामग्रीसे हाथ धोकर, भस्म ही प्राप्त कर सकता है। उसी प्रकार हम सुखकी परम अभिलाषा रखते हुये भी उसके बीजको न प्राप्तकर सुखके फलको प्राप्त करनेमें विफल प्रयत्न हुवा करते हैं। इस परम सुख फलके साधन बीजको हमारी क्रोधाग्नि, मानशिखरि (पर्वत) माया जल और लोभ गर्त सदा ही नष्ट किया करते हैं। कहनेकी आवश्यक्ता नहीं कि मनुष्य क्रोधके वशमें होकर अपना व दूसरेका कितना अनिष्ट कर डालता है। क्रोधी, मानी, मायावी और लोभी पुरुष मान व अपमानका विचार न कर हित व अहित एक ही समझ बैठते हैं। जो मनुष्य क्रोध द्वारा दूसरे पर क्रोध प्रकट कर अपना क्रोध दूर करना चाहता है, वह सर्वथा मूढ़ करता है। जो मनुष्य हाथमें अङ्गार लेकर दूसरेको जला हुआ देखना चाहता है वह स्वयं पहिले अपना हाथ जला बैठता है, पीछे चाहे दूसरेकी हानि हो या न हो।

क्रोध केवल आत्माकी हीनता है। जो मनुष्य दुर्बल और रोगी हुआ करते हैं, तथा जिनको अपने अधिक शक्तिधारियोंका सामना करना पड़ता है अतएव दुर्बलताके कारण ही क्रोध पिशाचिनीको पास बुला लाया करते हैं। जो मनुष्य गंभीर होता है वह कदापि क्रोध नहीं करता सदा समता धारण करता है। समुद्र न तो वर्षाकालमें अधिक होजाता है और न गर्मियोंमें सूख ही जाता है तभी तो उसका माहात्म्य समस्त संसारमें विदित हुआ है क्रोध और मानकी अधिकतासे शान्तिके अभावमें फूट-फल उत्पन्न हुआ करता है। आज इस फूटके प्रत्यक्ष अनेक उदाहरण उपस्थित हैं। प्रत्येक व्यक्ति फूटकी हानिको समझता हुआ भी उसे त्याग नहीं सकता, न जाने कैसी विलक्षण दशा है। यह दशा ठीक सांप छछूंदरके समान है। जिस तरह सांप छछूंदरको छोड़े तो स्वयं मर जाता है और निगल जावे तो बच ही कैसे सकता है।

हमारी यह भूल है। हमारा कोई प्रतिपक्ष नहीं है। यदि आपने अपना [illegible] सर्वनाश कर लिया तो महत्व सबको नष्ट कर लिया, यदि नहीं किया तो संसार रहा ही रहेगा। आपके सामने दोनों पंथ उपस्थित हैं। जहाँ आप सुख समझें जाइये।

यदि पारस्परिक विद्रोह रहे तो भी फूट नहीं किन्तु फूटका दौर्भाग्य कि उसका सिंहासन, मन्दिरों, सभाओं आदि व समाजोपयोगी संस्थाओंमें ही स्थान पा सकता है।

धर्मकी अहर्निश (दिनरात) चर्चा हम करते रहते हैं, अपने आप समझते हैं, दूसरोंको समझाते हैं पर आचरणको सर्वथा भिन्न समझते हैं किन्तु वाचक वर्ग! "**ज्ञानं भारः क्रियां विना**" अर्थात् क्रियाके बिना ज्ञान होना निष्फल है।

उस ज्ञानका फल प्रेम अथवा वात्सल्य अङ्ग होना चाहिये। बिना सहधर्मियोंमें प्रेम किये धर्मकी प्रभावना होना वन्ध्या (बांझ)के सुन्दर पुत्रकी आशाके समान है। हम अपने प्रत्येक व्याख्यानमें, लेखमें, पारस्परिक वार्तालापमें भी "**प्रभावना**" को महत्व देते हैं लेकिन परस्परमें विद्वेष होनेके कारण सबको विदित हो जावे कि "ये जैनी हैं" इतने कहाये जानेसे ही इतिश्री नहीं हो जावेगी। हमको वास्तविक धर्मका (क्रोधादिको मन्दकर) आचरणकर जैन धर्मकी प्रभावना करना चाहिये।

आत्माकी दृष्टिसे प्रत्येक स्वतन्त्र है कि वह शुभ अशुभ कार्य करे और करावे अतः उस उपयोगको भलाईकी ओर लगानेसे ही प्रशंसा हो सकती है। अनिष्ट मार्गपर चलना आजकल सहल हो गया है। हमारा समाज अवनतिकी ओर (छिद्रों, एक दूसरेकी भलाई बुराईकी ओर) बढ़ती चला जाता है, उन्नतिकी ओर शतशः प्रयत्न भी निष्फल होजाते हैं। इस प्रकार संसारमें गुणराशी और अवगुणराशि दोनों प्रत्यक्ष हैं, जिधर जिसका स्वभाव लगाने लगजावे सो ही ठीक है। देख फूलदान (जिस उपवनमें कोमल, मधुर, सुगन्धित फल-फूल हैं उसमें) से भ्रमर

बबूलको ही भक्ष्य समझता है। धन्य है इस स्वभावको ? उंटमें इस अवगुणके कारण उसके आकार (देह) में भी कुरूपता आदि अवगुण प्रकट दीखते हैं। जैसा कहा है –

" रूक्षं वपुर्न च विलोकनहारि रूपं,
न श्रोत्रयो सुखदमारटति कदापि।
इत्थं न साधु तव किंचिदिदश्च साधु,
तुच्छे रतिः करभ कण्टकिनि-द्रुमे यत्॥

अर्थात् ऊंटका शरीर छूनेसे रूखा (कठोर), रूप देखनेमें असुन्दर, शब्द अश्रुतप्रिय (न सुननेयोग्य) लगता है। उसमें इतने अवगुण हैं कि बड़े पेटमें न समाकर बाहिर तक निकल आये। कहनेका सार यह है ठीक इसी प्रकार फूट आदि के रहनेके कारण हमारी जाति व समाजके शरीरमें भी उसी प्रकार रूपहीनता–प्रभावनाका अभाव है। जो हम शब्द निकालते हैं व सुनते हैं वे भी द्वेष परिपूर्ण, इस लिये कोई सज्जन (निष्पक्ष) सुनना नहीं चाहता है। हाँ, आपसमें (पक्ष २ वालोंमें) तो उसकी सुन्दरता आदि सभी गुण मालूम होते हैं वह भी प्रकृति विरुद्ध नहीं। देखिये–

" उष्ट्राणां विवाहेषु गीत गायन्ति गर्धभा।
परस्पर प्रशसन्ति, अहोरूपमहोध्वनिः॥

अर्थात् ऊंटोंके विवाहमें गधे गीत गाते हैं। वे दोनों आपसमें रूपकी और ध्वनि (शब्द) की प्रशंसा करते हैं। गधेने ऊंटसे कहा "कामदेव! आपके रूपको क्या कहना है ? " फिर क्या था, ऊंटने अपनी प्रशंसा सुन धोतीसे बाहिर होगये और गधेसे कहते हैं ", और आप तो कोकिल हो रहे हैं " निष्पक्ष विचारो तो न इसमें रूप ही है और न शब्द मनोहर ही किन्तु एक दूसरेको प्रसन्न कैसे किया जाय ?

इसलिये उपर्युक्त दृष्टान्तसे आपको हृदय-मन्दिरमें क्षमा (उसकी बहिन शान्ति) प्रियाको अवश्य स्वीकार करें और सदा सत्य प्रेमोद्यानके फल फूलोंका मधुर आस्वाद लेते रहें। देखिये —

"प्रेमका प्याला नहीं जिसने पिया,
सार है, निस्सार है, जीवनी उसकी॥"

अर्थात् जिसने प्रेमके प्यालेमें भरा हुआ अमृत नहीं पिया उसका जीवन लोहेके समान कृष्ण (मलिन, चारित्र और रूपमें) होता है और पशुओंके समान उनका जीवन निरर्थक है।

अत अब आवश्यकता एक, एक (१, १) होनेकी नहीं है लेकिन नौ और दो ग्यारह–एक पर एक (११) होनेकी आवश्यकता है। समाज व जातिके बन्धनका प्रत्येक व्यक्ति उसका सूत (डोरा–धागा) है बिना प्रत्येक व्यक्तिके मिले समुदाय कैसे कहा जा सकता है ? बालू (रेती) को मरुस्थल (रेगिस्तान) नहीं कहते और न बिन्दु २ को समुद्र ही कहते हैं आदि।

इसलिये जिस प्रकार जलमें रेखा करने पर एक होजाता है–पाराके सैकड़ों टुकडे करने पर भी एक होजाता है, बन्धुओं, उसी प्रकार हम भी एक होजाओ। भिन्न २ दरबारी हो केवल इसी अनेक समझे जाओ। हार्दिक प्रेम वासना एक ही हो तभी जैनधर्मकी प्रभावना होसक्ती है।

दूसरे देखनेमें मनोहर रेशमी वस्त्रोंका त्याग सर्वथा कर देना चाहिये। इसका विवरण दिगम्बर जैन, जैनमित्रादि समाचार पत्रोंमें

ભડકામણાં કપડાંના મોહમાં વિલાસ લુબ્ધ થઇ રહેલા ભાઇઓ તમારાં જૈન તીર્થો ભયમાં સપડાય છે અને સપડાયાં છે. તમને ચમન-ચમન સિવાય કશું એ ક્યાં સુઝે છે? જ્યારે તમે તમારો દેહ સ્વદેશી બનાવશો ત્યારે તમારો આત્મા પવિત્ર થશે. અને ત્યારેજ આત્મબળ મેળવી તમારા ધર્મનું રક્ષણ કરશો.

ખાદી ઉત્પન્ન કરવા માટે આપણે રેંટીયા શાળા–વણાટશાળામાં દાખલ થઇ જાતે કામ શીખવું જોઇએ અને તેનો સદુપયોગ કેરી ખાત્રી કરી આપવી જોઇએ કે જે ગરીબી ભડકામણાં કપડામાં હતી તે નષ્ટ થઇ છે. સ્વદેશી પ્રચારનું કાર્ય પંચદ્વારાએ થાય તો સારું કામ થાય, અને ઠરાવનો અમલ બરાબર કરી બતાવે તો પાછળ રહી ગયેલાં સમાજમાં પ્રાપ્ત થયેલા તેજથી દરેકને આનંદ થાય.

ઉદ્દર્મ ગરા થયા પછી કામ બરાબર કરી બતાવવું. એમ તો ન થવું જોઇએ કે ગુજરાતના હમારા દિગંબર દશા હુમડ ભાઇઓએ ઉદ્દર્મ શુગ થઇ નાણાંની ટીપો ભરાવી પઇસા સારા એકઠા કરી શ્રી ૧૦૦૮ શ્રી ચંદ્રસાગર બોર્ડિંગ સ્થાપી અને પોતાનાં બાળકોને તો ઘેરજ રાખી મુક્યા છે. વિદ્યામંદિરમાં તો વિદ્યાર્થીઓજ ગોતે કેળવણી માટે સંસ્થા સ્થાપી પછી તો બાળકોને પૂર્ણ ભોગે પણ ભણાવવા મોકલવાને પ્રતિબંધ પણે કરવો જોઇતો હતો, તે તો ભૂલ્યા પરંતુ ઉદ્દર્મ ગગ અને કાર્યે અધુરા એ કહેવતને ખરી પાડી છે તેમના કરતા, હવે તો સમજી સમજીને પગલુંજ ભરો તોજ સમાજની પ્રતિષ્ઠા છે. સત્ય કાર્ય કરનાર આપ કોઇની રાહ ન જુએ. તે તો પોતે કરી પોતાની ફરજ બજાવે. કોઇ યુક્તિ મેળવે તે પછીજ હું મેળવું એમ ન કહે. જેમ તમાસો દેખવામાં ગોથી પહેલા જઇ પહેલું સ્થાન મેળવવાનો લોભ રાખીએ છીએ તેમજ સત્યમાર્ગે ચાલવામાં પરમાત્માની મદદ સિવાય કોઇની રાહ ન જોઇએ.

દેશીમાં ચાલી રહેલ ધર્મયુદ્ધમાં જ્યારે ખાદી-રેંટીયા એ અહિંસાને છે. અને તેનાજ પ્રભાવે ને તેજ ન સહી શકનાર સરકારે આપણા પચીશ હજાર દેશ ભાઇઓને કેદ કર્યા છે, અને કરતી જાય છે.

પરદેશી વસ્તુઓ વાપરી આપણે દેશદ્રોહી બન્યા છીએ. આપણા ઉદ્યોગોને જમીનદોસ્ત કરી પરદેશીના ઉદ્યોગ પોષ્યા છે. ધનવાન બનવાના લોભે હજારોના મ્હોંનો રોટલો છીનવી કંગાળ કીધા છે, હજારોને ઘરબાર વિનાના બનાવ્યા છે, હજારો ભારતના પુત્રોને એક ટંક ખાવાના સાંસા છે, અને હજારો ભાઇઓ એક ટુકડાની ભિક્ષા માગતાં મરણ માગે છે. પેટને ખાતર ન કરવાનાં કાર્ય કરી ઘણાએ પ્રાણ ત્યાગે છે, સ્ત્રીઓ શીયળ વેચે છે, પુરૂષો પુરૂષાર્થ વેચે છે.

આવી મુસ્કેલીમાં આખો દેશ સંડોવાયલો છે. ત્યારે ભાઇઓ તમો શું પૈસા બચાવવાનો સરળ માર્ગ જે સ્વદેશી છે, તેનો સ્વીકાર પણ શું નહિ કરો? આપણે તો ગુર્જરાતી જાડાં કપડાંના પહેરનારા અર્ધ સ્વદેશી છીએ. તો આપણને સંપૂર્ણ સ્વદેશી બનતાં સમય પણે શું લાગવાનો હતો? આપણે એટલો તો નિર્ણય જરૂર કરીએ કે હવે પછી વિલાયતી કપડાં ન ખરીદીશું. આપણો ખેડુત વર્ગ ઘણા ભાગે જે આપણો ગ્રાહક વર્ગ છે, તેને કોઇ પણ રીતે સચ્ચાઇથી સમજાવશો તો સમજી જાય તેવો છે, માટે વિલાયતી ખરીદો તેના બદલે દેશીજ ખરીદશો તો જરૂર તેમાં સરળતા મેળવશો.

સાચો પંથ પકડતા વિઘ્નો વધારે નડે છે. પરંતુ અડગ રહેવાથી સત્યમાર્ગ બધું સરળજ થાય છે. મહાત્મા ગાંધીજી તમોને વારંવાર યાદ કરે છે કે મારા ગુજરાતી ભાઇઓ સ્વરાજ ક્યારે બજાવશો, અને કહે છે કે સ્વદેશી ચલાવો ચરખી અને લોઢીના ઉપયોગ માટે કપાતાં લાખો પ્રાણીઓની રક્ષા થઇ, દેશ આબાદ થાય છે, માટેજ સમાજમાં નિયમ બાંધો, ને પોતે હલનાથી પાળો તોજ અહિંસાવાદી છો એમ કહેવાને તમને અધિકાર છે.

અલ્પ મતિએ લખાએલા આ લેખમાં કદાચ ભુલ જાને તો સુધારી સાથે વાંચ મહેરૂ કરી કુટુંબને, કોમને અને દેશને વફાદાર નીવડો. તથાસ્તુ.

श्री दशलाक्षणी पर्वमें जैन समाजका आवश्यकीय कर्तव्य ॥

विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छन्न गुप्तं धनम् ।
विद्या भोगकरी यशः सुखकरी विद्या गुरूणां गुरुः ॥
विद्या बन्धु जनो विदेशगमने विद्या परं दैवतम् ।
विद्या राजसु पूजिता न हि धनम् विद्याविहीनः पशुः ॥

संसारमें अनादि कालसे अखिल जन प्रथमतः विद्या (ज्ञान) के लिये ही आदर देते आरहे हैं। अर्थात सबसे प्रथम ज्ञान प्राप्त करनेके लिये ही चेष्टा करते हैं, उसका कारण यही है कि जब तक किसी भी वस्तुके गुण दोषका परिज्ञान नहीं हो जाता तभी तक उस वस्तुमें हेयोपादेयकी बुद्धि नहीं होती, अतएव दुःखदायी वस्तुका त्याग व सुखदायी वस्तुका ग्रहण नहीं हो सक्ता। इसलिये सुखसे वंचित रहना पड़ता है, इससे ज्ञात होता है कि संसारमें ज्ञानके अतिरिक्त सुखदायी पदार्थ दूसरा है ही नहीं, जैसा कि एक "कवि" ने कहा है "ज्ञान समान न आन जगतमें सुखको कारण" अतः उक्त धर्मशास्त्रके वाक्यानुसार हमारी जैन समाजका यही कर्तव्य है, कि जिस प्रकार बने उस प्रकार अपनी सन्तानको हरएक तरहसे अर्थात् लौकिक शिक्षा तथा पारमार्थिक शिक्षासे शिक्षित बनावें। यह शिक्षा वर्तमानके सामाजिक विद्यालयों व पाठशालाओंमें मौजूद है, अतएव उन्हीं विद्यालयोंको स्वकीय द्रव्यकी सहायता द्वारा चिरस्थायी रखना समाजका मुख्य कर्तव्य है। तदनुसार बुंदेलखंड प्रान्तमें "**सागरस्थ श्रीसत्तर्क सुधातरङ्गिणी दिगम्बर जैन पाठशाला**" जो कुछ विद्याकी जागृति कर रही है वह समाजके समक्ष है। किन्तु बिना झिरके कूप भी खाली हो जाता है। इस नीतिके अनुसार इस पाठशालाकी मासिक आय ३००) तीनसोसे भी कम है, और व्यय५००) पांचसोसे भी अधिक है, क्योंकि वर्तमानमें लगभग ४० चालीस छात्र विद्याध्ययन करते हैं जिनमें सिर्फ ६ छात्र ही ऐसे हैं जो कि शहरसे पढ़ने मात्रके लिये आते हैं, शेष सर्व छात्र छात्राश्रममें रहकर भोजन भी करते हैं। इसलिये जब तक ५००) पांचसोकी आमदनी पाठशालाकी चिरस्थायी न हो तब तक पूर्ववत् कार्य सुचारुरीतिसे नहीं कर सक्ता, अत्र[illegible] समाजसे सादर निवेदन है कि यदि अपनी जातिको वास्तविक समुन्नत बन[illegible] कर्तव्य है तो "**कथनीसे करनी भली**" इस नीतिके अनुसार श्री [illegible]ण "**शौच**" पर्वका अनुशीलन करते हुए स्वकीय द्रव्यको "**विद्यादान**", तथा [illegible] क्योंकि आप ही लोगोंका लगाया हुआ यह पौधा यदि सदैव हरयार[illegible] शिक्षाका अद्वितीय प्रभाव फैला देगा।

निवेदक— **कालेवु पंते।**

करोड़ीलाल सराफ, मंत्री—श्री सत्तर्क सुधा

जैन काव्योंका महत्व।

(गताङ्कसे आगे)

स्नानं विधाय विधिवत्कृतदेवकार्यः।
संतर्पितातिथिजनः सुमनाः सुवेषः।
आप्तैर्वृतो रहसि भोजनकृत्तथा स्यात्
सायं यथा भवति भुक्तिकरोऽभिलाषः॥ (यश०)

अर्थात् स्नानको करके विधिके अनुसार जिनेंद्रार्चाको कर अपने अतिथिजनोंको संतुष्टकर, निराकुलचित्त होकर अच्छे वेषको धारणकर अपने हितजन गुरु आदिकोंसे युक्त एकान्तमें यदि भोजनको करै तो संध्याके समयमें उसकी भोजन करनेमें रुचि होती है।

चारायणो निशि तिमिः पुनरस्तकाले
मध्ये दिनस्य धिषणश्चरकः प्रभाते।
भुक्तिं जगाद नृपते मम चैष सर्ग-
स्तस्याः स एव समयो क्षुधितः यदैव॥

अर्थात् हे राजन्! चारायण नामक वैद्यने रात्रिमें भोजन करनेके लिये कहा है तथा तिमि नामक वैद्यने संध्याकालमें, धिषण नामक वैद्यने दोपहरके समयमें, तथा चरक-नामक वैद्यने सुबहके समयमें भोजन करनेको कहा है। लेकिन मेरा तो इस विषयपर ऐसा मत है कि जिसको जब भूख लगे उसी समय भोजन करे।

अधिगतसुखनिद्रः सुप्रसन्नेन्द्रियात्मा।
सुलघुजठरवृत्तिर्भुक्तपक्तिं दधानः॥
श्रमभरपरिखिन्नः स्नेहसमर्दिताङ्गः।
सवनगृहमुपेयाद्भूपतिर्मज्जनाय॥

अर्थात्—प्राप्त किया है सुखनींदको जिसने, अच्छी तरह प्रसन्न है इन्द्रिय, आत्मा जिसकी, तथा बहुत थोडी है जठरकी वृत्ति (क्षुधा) जिसकी, भोजनको पचाता हुआ ऐसा और बहुत श्रमसे खिन्न ऐसा भूपति, तैलको शरीरमें मर्दनका स्नान करनेकेलिये स्नान गृहको जावे।

आदौ स्वादु स्निग्धं गुरु मध्ये लवणमम्लमुपसेव्यम्।
रूक्षं द्रवं च पश्चान्न च भुक्त्वा भक्षयेत्किंचित्॥

भोजनके आदिमें स्वादयुक्त, घृतयुक्त भारी भोजन करना चाहिये। बीचमें लवण युक्त आम्लके रससे युक्त भोजन करना चाहिये, पीछेसे रूक्षाहार करना चाहिये, तथा भोजन करके कुछ नहीं खाना चाहिये।

शिशिरसुरभिवर्षेष्वातपाम्भः शरत्सु, क्षितिप जलधरहेमन्तकालेषु चैते।
कफपवनहुताशा संचयं च प्रकोपं॥

हे राजन् ! शिशिर ऋतु (माघ फाल्गुन) में कफका संचय होता है, सुरभि (वसन्त चैत्र वैशाख) ऋतुमें कफका प्रकोप होता है, और घर्मऋतु (ज्येष्ठ, आषाढ) में कफ शांतिको प्राप्त होता है, गर्मीमें वायु संचयको प्राप्त होता है, श्रावणमास, भादोमासमें पवन प्रकोप होता है, शरद ऋतु (आश्विन कार्तिक) में पवन शांतिको प्राप्त होता है शरदऋतुमें पित्त संचय होता है, मार्गशीर्ष पौष मासमें पित्त प्रकोप होता है, माघ फाल्गुन मासमें पित्त शान्त होता है ।

तदिह शरदि सेव्यं स्वादु तिक्तं कषायं ।
मधुरलवणमम्लं नीरनीहारकाले ।
नृपवर ! मधुमासे तीक्ष्णतिक्तं कषायं ।
प्रशमरसमथान्नं ग्रीष्मकालागमे च ॥

अर्थात हे नृपवर ! इस शरदऋतुमें मिष्टान्न, तिक्त, कषायरसको सेवन करना चाहिये, तथा नीरनीहार ऋतुमें मीठा नुनखरा आम्लके रसको सेवन करना चाहिये। वसन्तकालमें तीक्ष्ण, तिक्त कषायरसको सेवन करना चाहिये, तथा ग्रीष्मऋतुके प्रारम्भ होने पर प्रशमरसान्न (मिष्टान्न) को सेवन करना चाहिये आदि लोकोपकारी विषयोंका इसमें बहुत ही योग्य रीतिसे वर्णन किया गया है। इस ग्रंथके अष्टमध्यायमें समस्त आचार जिनपूजाका वर्णन बड़े विस्तारके साथ तथा साहित्यकी लालित्यको दिखाते हुए जिस योग्य सुचाररीतिसे किया है वह कोई दूसरे ग्रन्थमें नहीं मिलता। यह भी इसके अनन्यलभ्य महत्त्वके द्योतन करनेके लिये उदाहरण होगा अतः पाठकोंके मनोविनोदके लिये स्नानविधिका एक दिग्दर्शन दर्शाते हैं।

" ॐ भक्तिभरविनतोरगनरसुर सुरेन्द्रशिरःकिरीटकोटिस्फुरत्[illegible]मानचरणयुगम्, अमृताशनाङ्गनाकरविकीर्यमाणमन्दारनमेरुपारिजातसंतानकवनप्रसूनस्यन्दमानमकरन्दरसार्द्रीकृत[illegible]मत्तालिकुलकेलि[illegible]निम्नाटति पापारिगीतम् [illegible]वेणुवल्लकीवीणावानकमृदङ्ग[illegible]विलासाद्भूमिभारि[illegible]नवधिवंशु[illegible]वादनादनिवेदि[illegible]विधि[illegible] अने[illegible]विकिरतुल्यकीर्णेन्द्रि[illegible]शोकानोक[illegible]सवरराग[illegible]पदम् [illegible]मुवनैश्वर्यलोलनातपत्रत्रयशिखण्डमण्डल[illegible]पुरोल[illegible]मानमत्तगुणा[illegible]नरम्, अनवरतदक्षविक्षिप्यमाणोभयचक्षुना[illegible]शुना[illegible]तानाभिनवनिग्न[illegible]कानिनद्धाधिकारिहार्याशोरिद[illegible]रिन[illegible]तिर[illegible]निदरम्, अनवधिस्तुविस्तार[illegible]रविम्बा[illegible]कक्षीन[illegible]रोमाराम्, [illegible]तिस्फुटोदय[illegible]वनानमनाबसानन्दन[illegible]पादवाणीम्, अनन्तमानवममवमरणसमापीनमनुमदिखिन्मुन-

ऐन्द्रवृन्दवन्द्यमानपादारविन्दयुगलं ।

" मङ्गावलिलक्ष्मीलतिकावनस्य, प्रवर्षनावर्जितवारिपूरैः ।
जिनं चतुर्भिः स्नपयामि कुम्भैर्नभः सदो घेनु पयोधराभैः ॥ "

(यशस्तिलकचम्पू ८ वा आश्वास)

पाठकवृंद ! इस स्नानविधिके विशेषणसे आप अनुमान कर सकते हैं कि "यशस्तिल-कचम्पू" को किस तरहसे अनन्यलभ्य महत्व प्राप्त है ।

यद्यपि यशस्तिलकचम्पूके विषयमें बहुतसे पंडितप्रवरोंकी शुभ सम्मतियां हमको उद्धृत करना चाहिये थीं, परन्तु लेख बढनेके भयसे हम एककी ही सिर्फ उल्लेख करेंगे ।काशीके प्रसिद्ध पंडित गुलाबझाकी यह सम्मति है—

"यशस्तिलकचम्पूकी सृष्टि मानवी बुद्धि द्वारा नहीं हुई बल्कि किसी अनुपम दैवीय बुद्धिसे हुई है । इत्यादि "

प्रियपाठकवृंद ! अब हम आपको इस "यशस्तिलकचम्पू"की उत्तमताका सिंहावलोकन कर "जीवन्धरचम्पू" के लिये कुछ कहेंगे ।

वास्तवमें इस "चम्पू" ग्रन्थके वैसे तो सबही गद्य और पद्य उल्लेखनीय हैं तथापि भव्य पाठकोंके सन्मुख कुछ इसकी भी उत्तमताके दृष्टांत स्वरूप श्लोक भेंट देंगे किन्तु इसके पहिले हम इस काव्यके नेता "जीवन्धरस्वामी"के चरितके बारेमें कहेंगे । वास्तवमें इनके चरित्रोंपर "गद्यचिंतामणि, जीवन्धर चम्पू, क्षत्रचूडामणि, जीवन्धर चरित्र, जीवन्धर पुराणादि काव्य रचे हैं । वास्तवमें इनकी जीवनीका वृत्तांत विशेष कौतूहलवर्द्धक, पतनसे उन्नत बनानेको आदर्शनेता चरित्रक लिये सर्वोत्तम है । इस ही कारणसे इनकी जीवनीके वृत्तांतसे सज्जित अनेक काव्यरत्न हैं अब हम जीवंधरचम्पूकी बानगी देते हैं—

वक्त्रं चन्द्रप्रभं यत्पदजयुगमजितं यस्य गात्रं सुपार्श्वं
कृत्यं स्वाधीनधर्मं हृदि पुरुचरितं शीतलं सुव्रताढ्यं ।
राज्यं श्रीवर्धमानं कुलमतिविमलं कीर्तिवृन्दं त्वनन्तं
सोऽयं प्रत्यक्षतीर्थेश इव विजयते विश्वविद्याविनोदः ॥

अर्थात चन्द्रप्रभ, सुपार्श्वनाथ, शीतलनाथ, सुव्रतनाथादि तीर्थंकरोंकी तरह विजयको प्राप्त होता है । नामके एक देश कथनसे सम्पूर्णका ज्ञान हो जाता है ।

और भी हम इस चम्पूकी विशेषताका दृष्टांत देंगे । अक्सर देखा जाता है कि कालि-दास आदि कवि अपने अपने काव्योंमें शृंगाररसकी महत्ता दिखानेके लिये स्त्री, पुरुषके हावभावोंको बडी निर्लज्जताके साथ दिखाते हैं किन्तु महाकवि हरिश्चंद्रजी कैसी अनुपम रीतिसे अपने चम्पूमें बताते हैं । आशक्त गुणमाला क्रीडाशुकके द्वारा किस तरह अपने

प्रेमी जीवंधरको पत्र लिखती है। तथा विरहाग्नि दुःखसे दुःखित स्वामी जीवंधर उसका नया उत्तर देते हैं—

मदीयहृदयाभिधं मदनकाण्डकाण्डोद्यतं
नवं कुसुमकन्दुकं वनतटे त्वया चोरितं।
विमोहकलितोत्पलं रुचिररागसत्पल्लवं
तदद्य हि वितीर्यतां विजितकामरूपोज्ज्वलः॥ जी० च० ३

तथा भामीनी उसके उत्तरमें पत्रद्वारा यह भेजते हैं,

" मम नयनमराली प्राप्य ते वक्रपद्मं
तदनु च कुचकोशप्रान्तमानत्य हृष्टा।
विहरति रसपूर्णे नाभिकासारमध्ये
यदि भवति वितीर्णा सा त्वया तं ददामि॥ जी० च० ४ लं०

काव्यरसिकमंडल! जरा निरपेक्ष दृष्टिपर पक्षपातका एनक न लगाकर कहिये। प्रेमी प्रेमिकाओंके ऐसे सुन्दर पत्र क्या, और किसी कविने अपने नेता उसकी प्रेमिणीके साथ करवाये हैं; इसका सौभाग्य जी० च० के रचयिता श्रीयुत महाकवि हरिश्चन्द्रजीको ही प्राप्त हुआ है।

पाठकों! "जीवन्धरचम्पू" उत्तमतामें प्रायः सम्पूर्ण उल्लेखनीय है। अतः और हमको उल्लेख करना चाहिये था किन्तु मंगलतक पहुंचनेमें मार्ग अभी विशेष तय करना है; अतः हम चम्पूको छोड़कर श्रव्यकाव्यके प्रधान भेद " महाकाव्य " में उत्तमता दिखाते हैं।

पाठकवृन्द! जिस तरह वैष्णव महाकाव्यपुंज आजकल आप लोगोंकी निगाहमें आते हैं उसी तरहसे जैनमहाकाव्य पुंज भी उनसे किसी हालतमें भी कम नहीं है। यद्यपि मैंने लेखके पूर्व भागमें इस बातको दिखला दिया है कि बौद्ध तथा शंकराचार्य, महमुदगजनवी, औरंगजेब आदिके जमानेमें जैन ग्रन्थरत्नोंके साथ २ जैनकाव्योंका भी प्रलय हुआ था फिर भी इस प्रलय युगसे बृहदवशिष्ट बहुत भाग भारतमें उपस्थित हैं।

आप लोगोंको जो काव्य दृष्टिगोचर होते हैं वह प्रायः सम्पूर्ण निर्णयसागरके छपे हुए ही होंगे, क्योंकि जैनसमाज अपने धनके सामने ऐसे रत्नोंको थोड़ा ही कुछ मूल्यवान् समझती है! नहीं तो भारतादि देशोंमें रहते हुए अपने काव्यरत्नोंको प्रकाशित न करती! देखिये जितने भी जैन काव्य "निर्णयसागर"से प्रकाशित हुए हैं, वह सब जयपुरकी सरकारी लायब्रेरीसे प्राप्त हुए हैं। यह लायब्रेरी प्राईवेट तथा अन्दर है। इस लायब्रेरीमें जैन काव्योंकी उपस्थिति बहुत है, उसमेंसे बहुत थोड़े प्रकाशित हुए हैं किन्तु वैष्णव काव्य

निर्णयसागरमें बहुलतासे पाये जाते है इसलिये आपकी दृष्टिमें बहुत कम आते है, किन्तु यदि आप प्रकाशित तथा अप्रकाशित दोनोंको मिलाकर वैष्णव काव्योंसे तुलना करेंगे तो जैन काव्योंकी गणना किसी प्रकारसे भी कम नहीं हो सकती।

जैन महाकाव्य समुद्रके अन्दर जो विचित्र रत्न स्वरूप एकाक्षर वा द्वयाक्षरके श्लोक उपस्थित हैं, पाठकोंको हम उन्हींका सिंहावलोकन कराते हैं।

रौरोरा रैररैरेरी रोरो रोऽररेररिः।
रुरुरुरुरुरुरोरारारीरैरुरोररम् ॥ (म० चन्द्रप्रभ १९ सर्ग)

अर्थ-चिल्लाते हुए शत्रुके त्यागशील कुबेरको, तिरस्कृत करनेवाले शत्रुको, चक्रोंके आक्षेपसे प्राप्त कर लिया (अथवा चक्राक्षेपोंके द्वारा शत्रुका शत्रु स्वयं आगया।)

" ककाकुकङ्ककेकांककोकिकोकैककुःककः।
ककुकौकःकाककाककककाकुककाङ्कुः ॥ (महा० नेमिनिर्वाण)

अर्थात् देखिये विचित्र एकाक्षरसे समुद्रका कैसा सुन्दर वर्णन किया है।

कंकः किं कोककेकाकी किं काकः केकिकोऽककं।
कौकः कुकंककः कैकः कः केकाकाकुकांकक ॥ (महा० धर्मशर्माभ्युदय)

अर्थ-चक्रवाक हंसके समान गमन करनेवाला बगुलाके आकार तथा मयूरके समान स्वरूप धारण करनेवाले कौएके आकार, स्वर्ग, पृथ्वी जलमें अद्वितीय होकर कुटिलतासे मयूरके समान शरीरको समान बनाकर कुटिलतासे युद्ध करता भया।

" गंगोरगगुरुग्रांग गौरगोगुरुरुग्रगुः।
रागागारिगिरंगैरग्रेऽगं गुरुगीरगात् " ॥ (धर्मशर्माभ्युदय)

अर्थ-गंगा, शेषनाग तथा हिमालयके समान गौर वाणीवाले बृहस्पति तथा प्रखर है प्रकाश जिनका ऐसे बृहस्पतिके समान गानसे महानादके कारण विषके समान महानाद होता भया। (अर्थात् जिस प्रकार शरीरको विष दुख देता है इस प्रकार कर्णोंके लिये कटुक नाद)

रैरोऽररीरुरुरारा रोरुरारारिरोरिरत्।
रुरुरोरुरारारुरुरुरुरेररः ॥ (महाकाव्य द्विसंधान)

अर्थ-धन देनेवाले, और शत्रुओंके समूहको अच्छी तरहसे नष्ट करनेवाले, शब्द करनेवाले प्रतिविष्णु (श्री बलभद्र) बड़े २ आरोंको शत्रुओंके प्रति प्रेरित करते भये और शत्रुओंके हृदयको घायल करते भये।

यहां रामायण पक्षमें (द्वितीयार्थ) धन देनेवाले, शत्रुओंके समूहको नष्ट करनेवाले,

शब्द करनेवाले प्रतिविष्णु लक्ष्मणजी बड़े २ आरोंको शत्रुओं (रावण पक्षवालों) के प्रति प्रेरित करते भये और शत्रुओंके हृदयोंको घायल करते भये।

वीरारिवैरवारी वै वत्रे रविरिवोर्वराम्।
विवोवरैराविविरैरवोवाचा विरावचान्॥ (प० द्विसंधान)

अर्थ-वीर शत्रुओंके वैरको नष्ट करनेवाले अपराधियोंके अंधकारको भगानेवाले गम्भीर ध्वनिवाले सूर्यके समान कृष्णजीने अच्छी तरह धान्यसे पूर्ण पृथ्वीको अपने प्रखर तेज मंडलसे आच्छादित कर दिया।

द्वितीय अर्थ-वीरशत्रुओंके वैरको नष्ट करनेवाले अपराधियोंके अंधकारको भगाने वाले, गंभीरध्वनिवाले केशवके समान रामचन्द्रजीने अच्छी तरह धान्यसे पूर्ण पृथ्वीको अपने प्रखर तेजोमंडलसे आच्छादित कर दिया।

ऐसे विचित्र एकाक्षर व्यंजन, द्वयाक्षर व्यंजनके अनेक श्लोक हैं। इस बातका हम लोगोंको विशेष गौरव मानना चाहिये। प्रिय पाठकवृंद! जैनेतर कवियोंने मुख्यतया आठ रस माने हैं तथा पीछेसे यह भी कह देते हैं कि "**शान्तोऽपि नवमो रसः**" किन्तु पूज्य जैनाचार्योंने शान्तरसको खूब अपनाया है। वास्तवमें यह ही योग्य तथा न्यायानुकूल भी है। क्योंकि बिना रसके काव्य ऐसा है जैसे अच्छे भोजनोंमें निमकका नहीं होना

साधुपाकेऽप्यनास्वाद्यं, भोज्यं निर्लवणं यथा।
तथैव नीरसं काव्यमिति ब्रूमो रसानिह॥ (वाग्भट्टालंकार)

तथा वाग्भट्टालंकारमें रसोंको कहा है।

श्रृंगारवीर करुणाद्भुत हास्य भयानकाः।
रौद्रबीभत्सशान्ताश्च, नवैते निश्चिताबुधैः॥ (वा० अ०)

अर्थात्-श्रृंगार, वीर, करुणा, अद्भुत, हास्य, भयानक, रौद्र, वीभत्स, शान्त ये नव रस बुद्धिमानों द्वारा निश्चित हैं।

सब महाकाव्योंमें इस शांतिरसको प्रायः उच्च स्थान ही दिया है। अब हम "चंद्रप्रभमहाकाव्य"के लिये कहेंगे। यह उत्तम काव्य श्रीयुत वीरनन्दिने बनाया है। इसका तथा कालिदास द्वारा विचित रघुवंश महाकाव्यका हम मिलान करते हैं।

रघुवंशके दूसरे सर्गका श्लोक तथा चन्द्रप्रभके चतुर्थ सर्गका प्रथम श्लोक देते हैं।

अथ प्रजानामधिपः प्रभाते जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्यां।
वनाय पीतप्रतिबद्धवत्सां यशोधनो धेनुमृषेर्मुमोच॥
(रघुवंश)

अथ प्रजानां नयनाभिरामो लक्ष्मीलतालिङ्गितसुन्दराङ्गः।
वृद्धिं स पद्माकरवत्प्रपेदे दिनानुसारेण शनैः कुमारः॥

प्रिय पाठकवृंद। देखिये वीरनन्दि, कालिदासकी काव्यरचनाके विषयमें शैलीकी उत्तमता यहीं देखिये। कालिदासकी कल्पना शक्ति, बुद्धि पाटव, आलंकारिक रचना देखकर वीरनंदिके शिष्यकी तरह मालूम होते हैं। तथा चंद्रप्रभके प्रथम सर्गमें देशवर्णन ऐसी उत्तमतासे लिखा गया है कि, रघुवंशमें तो क्या? बल्कि कालिदासके दूसरे काव्योंमें भी पाना असंभव है। उदाहरणके लिये हम कुछ श्लोक देते हैं—

मदेन योगो द्विरदेषु केवलं विलोक्यते धातुषु सोपसर्गता।
भवन्ति शब्देषु निपातनक्रियाः कुचेषु यस्मिन्करपीडनानि च॥

अर्थात् उस नगर (रत्नसंचयपुर) में हस्तिओं ही में मद केवल था, तथा धातुओंमें ही उपसर्ग पाये जाते थे तथा निपातनक्रिया शब्दोंमें ही पाई जाती थी, करपीडा (हस्त-पीडा) कुचोंमें ही पाई जाती थी। अर्थात् उस रत्नसंचयपुरमें हस्तिओंमें ही केवल मद था किन्तु मद=घमंड=शोकमें नहीं था तथा धातुओंमें ही उपसर्ग पाया-जाता था। किन्तु उस नगरमें उपसर्ग, उपद्रव नहीं पाये जाते थे। शब्दोंमें ही निपातनक्रिया थी किन्तु उस नगरमें निपातन मारण नहीं था, तथा कुचोंमें ही करपीडा हस्तपीडा थी, किन्तु उस देशमें करपीडा='मकरशाप=नहीं थी।

ऐसे ही बहुत अच्छे २ श्लोकोंमें देशवर्णन, राजाका वृत्तांत दिया है। द्वितीय सर्गमें उद्यानका कैसा अच्छा वर्णन किया है तथा इसमें न्यायका वृहदंश दिया है जो कि विशेष गम्भीर तथा सरल श्लोकोंसे सुसज्जित है। चन्द्रप्रभकाव्यमें राजनीतिका कैसा उत्तम वर्णन किया है जिसको देखकर बहुत आश्चर्य होता है। पाठकोंके लिये हम देते हैं।

वाञ्छन्निभूतीः परमप्रभावा मोद्वीविजस्त्वं जनमात्मनीनं।
जनानुरागं प्रथमं हि तासां निबन्धनं नीतिविदो वदन्ति॥
समागमो निर्व्यसनस्य राज्ञः स्यात्संपदां निर्व्यसनत्वमस्य।
वश्ये स्वकीये परिवार एव, तस्मिन्नवश्ये व्यसनं गरीयः॥
विधित्सुरेनं तदिहात्मवश्यं, कृतज्ञतायाः समुपैहि पारम्।
गुणैरुपेतोऽप्यपरैः कृतघ्नः समस्तमुद्वेजयते हि लोकं॥
धर्माविरोधेन नयस्व वृद्धिं त्वमर्थकामौ कालिदोषमुक्तः।
युक्त्या त्रिवर्गं हि निषेवमाणो लोकद्वयं साधयति क्षितीशः॥
वृद्धानुमत्या सकलं स्वकार्यं सदा विधेहि प्रहतप्रमाद।

विनीयमानो गुरुणा हि नित्यं सुरेन्द्रलीलां लभते नरेन्द्र ॥
निगृह्णतो बाधकरान् प्रजानां भृत्यांस्ततोऽन्याननयतोऽभिवृद्धिम् ।
कीर्तिस्तवाशेषदिगन्तराणि, व्याप्नोतु बन्दिस्तुतकीर्तनस्य ॥
कुर्याः सदा संवृतचित्तवृत्तिः फलानुमेयानि निजोहितानि ।
गूढात्ममंत्रः परमंत्रभेदी भवत्यगम्यः पुरुषः परेषाम् ॥
(चंद्रप्रभ ४ सर्ग ३६–४२)

अर्थ–हे पुत्र उत्कृष्ट प्रभाववाली विभूतियोंको चाहते हो तो अपने जनों (प्रजा)को कभी दुःखित मत करो, क्योंकि नीतिज्ञ कहते हैं कि उन सम्पत्तियोंके आनेका प्रथम कारण जनोंका अनुराग ही है।

(प्रजानुरंजन शासन शासन है, नहीं तो सब निष्कासन हैं)
[तथा सम्पत्तियोंका समागम निर्व्यसन राजाके होता हैं]

निर्व्यसन नरेशके सम्पत्तियोंका आगमन होता है, तथा राजाका निर्व्यसनत्व, अपने परिवारके वश करनेपर ही होता है, अपने परिवारके वशमें न करनेसे व्यसन (दुःख गरीय (अतिशय बड़ा) होता है। अपने परिवारके वशमें रखनेकी इच्छा रखनेवाला राजा कृतज्ञताके पारको प्राप्त होवे। क्योंकि दूसरे २ गुणोंसे सहित होने पर भी कृतघ्न (किये हुए ऐहसानको न माननेवाला समस्त लोकको दुःखित करता है।

कलिकालके दोषोंसे रहित हे राजपुत्र! तुम धर्माविरुद्ध धन, कामकी वृद्धिको प्राप्त करो क्योंकि युक्तिसे धर्म, अर्थ, कामको सेवन करनेवाला नरेश इस लोक, परलोक दोनोंको सिद्ध करता है। अपने प्रमादको नष्ट कर अपने तमाम कार्य वृद्धोंकी अनुमतिसे सदैव करो क्योंकि बृहस्पतिसे विनीयमान (कहा हुवा) इन्द्र, सुरेन्द्र, लीलाको प्राप्त होता है, अथवा वृद्धसे विनीयमान राजा इन्द्रलीलाको प्राप्त होता है। प्रजाको बाधा करनेवाले ऐसे राज्यके नौकरोंको निग्रह, और प्रजाकी उन्नति करनेवाले ऐसे राज्य नौकरोंका अनुग्रह करनेमें बन्दिजनोंसे स्तुति होनेवाले ऐसे राजाकी (तुम्हारी) कीर्ति सम्पूर्ण दिशाओंमें व्याप्त होवेगी। (इस श्लोकके अनुसार वर्तमान नौकरशाही जो कि प्रजाको बाधा कर रही है, उसके लिये निग्रह स्वरूप असहयोग जिसका प्राण अहिंसा है करना जैन समाजका धर्म, कर्तव्य एवं च शुभनीति प्रतीत होती है।

हमेशा अपनी चित्तवृत्तिको प्रकाशित मत करो जिससे कि तुम्हारे विचार केवल कार्योंके फलसे अनुमान किये जांय; क्योंकि गूढ विचारवाला पुरुष जो है सो दूसरेके विचारको जान सकता है किन्तु दूसरे लोग उसकी मंत्रणाओंको नहीं जान सकते।

प्रिय पाठक इस विचारसे जिनको कही गयी हुई उच्चकोटिकी राजनीति है, यदि

यह राजनीति काममें लाई जाय तो आज भारतवर्षकी यह दशा नहीं होती। प्रिय पाठक-वृंद, मैं अब "धर्मशर्माभ्युदय"की उत्तमता दिखाता हूं। इस महाकाव्यके रचयिता श्रीयुत कवि हरिचन्द्रकी प्रशंसा बहुतसे प्राचीन विद्वानोंने की है, उसमेंसे हम "कादम्बरी"के रचियता श्रीयुत बाणकवि "हर्षचरित"में कहेगये पद्यको दिखाते हैं।

पदबन्धोज्ज्वलो हारी, कृतवर्णक्रमस्थितिः।
भट्टारहरिश्चन्द्रस्य, गद्यबन्धो नृपायते ॥ (हर्षचरित)

प्रिय पाठकवृन्द ! प्रसिद्ध बाणकवि भी कहता है कि पदबन्धोंसे उज्ज्वल, हारी, ऐसी भट्टारहरिश्चन्द्रकी गद्यबन्ध नृपकी तरह आचरण करती है। इन्हीं श्रीयुत कविराज हरिश्चन्द्रकृत यह एक मनोहर पद्यकाव्य है।

इसकी हम क्या प्रशंसा करें इसके प्रथम सर्गमें सज्जनदुर्जन वर्णन बहुत चारुगीतिसे किया जाता है। उदाहरणार्थ हम दो पद्य उद्धृत करते हैं।

गुणानधस्तान्नयतोऽप्यसाधुपक्षस्य यावाद्दिनमस्तु लक्ष्मीः।
दिनावसाने तु भवेद्गतश्री राज्ञः सभासंनिधिमुद्रितास्यः॥ धर्मशर्मा०
उच्चासनस्थोऽपि सतां न किंचिन्नीचः स चित्तेषु चमत्करोति।
स्वर्णाद्रिशृंगाग्रमधिष्ठितोऽपि काको वराकः खलु काक एव॥ ध.श.

प्रिय पाठक वृंद ! ऊपरके श्लोकमें श्लेषगर्भित स्वभावोक्तिको दुर्जनके लिये कैसा दिखलाया है सो विचारिये। तथा दूसरेमें दुर्जनके लिये कैसा अर्थांतर दिखलाया है।

तथा इसी तरह इस ही पहिले सर्गमें जम्बूद्वीप, सुवर्णगिरि तथा रत्नपुर नामके ग्रामका वर्णन पदलालित्य, अलंकार, रस, उपमा, उपमेय आदिसे अधिकतम सुन्दर बना दिया है। जो कि नैषध माघमें नहीं पाया जा सकता। तथा पांचवें सर्गमें स्वर्गसे उतरती हुई देवांगनाका अत्यंत मनोहर ऐसा वर्णन किया है जो कि नैषध, माघमें उन देवांगनाओंका ऐसा वर्णन ही नहीं मिलता तथा सुन्दरके साथ २ वृहदाधिक्यके साथ किया है; जिसको कि बहुतसे महाकाव्यों सिर्फ ३–४ श्लोकोंसे किया होगा। तथा इसी तरह इस महाकाव्यके कुल दसवें सर्गमें विन्ध्याचल पर्वतका कैसा उत्कृष्ट उत्तम वर्णन किया है जो कि किसी काव्यके अन्दर नहीं पाया जाता है; तथा ११ वें सर्गमें ऋतुओंका वर्णन विशेष उल्लेखनीय है किन्तु हम उसका दृष्टांत स्वरूप देनेमें बिलकुल असमर्थ है; क्योंकि अभी बहुत दूर पड़ाव है;

अब हम दर्पकवि, श्रीयुत हरिचंद्र कविजीकी काव्यरचनाका मिलानकर "महाकाव्य" के भागको खतम करेंगे।

श्रीयुत हर्षकवि राजा नलकी विद्याके वर्णनमें कहते है—

"अधीतिबोधचरणप्रचारणै, दशाः चतुस्रा प्रणेयन्नुपाधिभिः।
चतुर्दशत्वं कृतवान् कुतः स्वयं, न वेद्मि विद्या सुचतुर्दश स्वयं॥

अर्थ—महाराजा नल अधीति, ज्ञान, आचार, प्रचार से विद्याओंमें ४ पर्नेको करते तथा उन्होंने स्वयं १४ विद्याओंको प्राप्त कर लिया। मैं नहीं जानता कि राजा नलने १४ विद्याओंको कैसे प्राप्त किया।

तथा कविवर हरिचन्द्रजी राजाकी विद्याका वर्णन करते है।

ततः श्रुताम्भोनिधिपारदृश्वनो, विशंकमानेव पराभवं तदा।
विशेषपाठाय विधृत्य पुस्तकं कराञ्च मुञ्चत्यधुनापि भारती (धर्म०)

अर्थ—श्रुतसागरके पारको प्राप्त ऐसे इस राजासे पराभव(हार)की आशंकासे ही मानों विशेष अध्ययनके लिये सरस्वती अपने हाथसे आज भी पुस्तकको नही छोड़ती है। विचारिये पाठक उभयकाव्योंकी उत्तमता। अब हम और भी इस विषयमें मिलान करते हैं।—

हरिचन्द्र कवि राजीके वर्णनमें कहते हैं —

कृतौ न चेत्तेन विरंचिना सुधानिधानकुम्भौ सुदृशः पयोधरौ।
तदङ्गलग्नोऽपि तदा निगद्यतां स्मरः परासु कथमाशु जीवितः॥

अर्थ—उस सुव्रताके दो स्तन यदि ब्रह्माने अमृतके कोप नहीं बनाये। तो फिर कहिये उसके शरीरमें लगा हुआ मृत कामदेव किस तरह जीवित हो गया। तथा हर्ष कवि कहते हैं:—

अपि तद्वपुषि प्रसर्पतोऽमिते कान्तिझरैरगाधितां।
स्मरयौवनयो खलु द्वयोः प्लवकुम्भौ भवतः कुचावभौ॥

अर्थ—कान्तिरूपी झरनामे अगाधित दमयन्तीके शरीरमें विद्यमान कामदेव यौवनके लिये उसके कुचयुग तैरनेके लिये दो घड़ोंके समान होते भये।

कपोलहेतोः खलु लोलचक्षुषो विधिर्व्यधात्पूर्णसुधाकरं द्विधा।
विलोक्यतामस्य तथा हि लाञ्छनच्छलेन पश्चात्कृतसीवनव्रणं॥

अर्थ—चंचल है चक्षु जिसके ऐसी राजीमें ऐसे कपोलोंके कारणसे ब्रह्माने चन्द्रमाको द्विधा विभक्त कर दिया। अतएव कलंकके छलसे मिलाईका निशान दीख पड़ता है।

तथा हर्षकवि कहते हैं—

'हृतसारमिवेन्दुमंडलं, दमयन्ती वदनाय वेधसा।
कृतमध्यबिलं विलोक्यते, धृतगम्भीरखनीखनीलिम" ॥

अर्थ—ब्रह्माने निश्चय करके दमयन्तीके मुखके बनानेके लिये चन्द्रमाका सर

सार खींच लिया अतएव सार खीचनेसे श्याम हुए चन्द्रमामे पुतीहुई सफेदी के छुटजानेसे बीचमें कालिमा दिखाई पडती है ।

पाठकवृंन्द देखिये कवि हरिचन्द्रजीकी कवितामें कितना रससौन्दर्य है ।

इमामनालोचनगोचरां विधिर्विधाय सृष्टेः कलशार्पणोत्सुकः ।
लिलेख वक्रे तिलकांकमध्ययोर्भ्रुवोर्मिषादोमिति मंगलाक्षरं ॥
(धर्मशर्माभ्युदय)

इस श्लोकमें कविने स्वीकृति वाचक ॐ शब्दको किम अद्वतीयरूपसे दिखाया है ।

इन्ही कवि हरिश्चंद्रजीकी एक उत्तम कल्पना दिखाते हैं ।—

उदीरिते श्रीरतिकीर्तिकान्तिभिः श्याम एतामिति मौनधान्विधि ।
लिलेख तस्यां तिलकांकमध्ययोर्भ्रुवोर्मिषादोमिति संगतोत्तरं ॥

अर्थ—श्री, रति, कीर्ति, काति इन्होंने जिस समय ब्रह्माजीसे प्रार्थना की उसी समय मौनी ब्रह्माने तिलका चन्हित भौं इसके बहानेसे ॐ (अर्थात मै स्वीकार करता हूं) ऐसा समुचित उत्तर लिखा दिया । इसी तरह इनकी प्रत्येक कवितामें नवीन२ सुन्दर कल्पना भरी हुई है ।

प्रियपाठकवृंद । इसी तरहसे महा० द्विसंधान जिसमें कि एक साथ महाभारत, रामायण दोनोंका एक साथ ही श्लोकोंसे अर्थ लगता चलता है । उदाहरणार्थ हम इसका भी उल्लेख अवश्य करेंगे ।

केचरपार्थामधुरा न भारती कथेव कर्णान्तमुपैति भारती ।
तनोति सालंकृति लक्ष्मणान्विता सतां मुदं दाशरथे यथा तनु ॥
१ सर्ग

प्रियपाठकवृंद । इस काव्यके उपर्युक्त श्लोकसे आप अनुमान करसकते है । तथा इस काव्यके अन्दर विशुद्ध, तथा उच्चकोटिके राजनीतिका वृत्तांत आया है । जो कि ऐसे नाजुक जमानेमें इसका कथन भारतके लिये अच्छा होता । प्रियपाठकवृंद द्विसंधानकी तरह चतुःसंधान, चतुर्विंशति संधान उपस्थित हैं जो कि कवि जगन्नाथने बनाये हैं,इनमेंसे चतुःसंधानके हरएक श्लोकका अर्थ चार चार कथाओंके अनुसार चार ४ अर्थवाला होता है तथैव दूसरे चतुर्विंशति संधानके हरएक श्लोकका अर्थ २४ कथाओं (२४ तीर्थंकर) के अनुसार चौबीस २४ होते है । और इसीतरह "सप्तसंधान" के भी सात २ अर्थ लगते हैं । यह महत्त्व जैनेतरोंको नहीं मिलता लेकिन लेख विस्तार होजानेके कारण हम इस विषयको न कहकर अब खंडकाव्योंकी मनोहर वाटिकामें आप लोगोंको लिये चलता हू "पार्श्वाभ्युदय" काव्य जो कि श्रीयुत जिनसेनाचार्यने कालिदासके "मेघदूत"

अन्याकृत्यमलोवरो भवयमः कुर्वन्मतिं तापसे ।
तत्वा चित्यमतीशिता तयशितः स्तुत्योरुवाणि पुनः ॥
जिष्णूतष्फुटकीर्तिवारवशमः श्रेयोऽभिधे मण्डने ।
धीर स्थापय मां पुरो गुरुवर त्व वर्धमानो रुधी ॥

खडकाव्यमें क्षत्रचूडामणि नामक ग्रथ है इसमें जो महत्त्व है यह किसी कविको नहीं मिला है । इसमें अर्द्धश्लोक मय जीवधर अनुपम विचित्र चरित्र और अर्द्धश्लोकोंमें नीति है । वास्तवमें ऐसा नीतिशास्त्रका काव्य शायद ही सस्कृत काव्योंमें हो जब कि हम इसका स्वाध्याय करते हैं, तो यह मिलता है जिसको कि प्रात काल पढ़ना चाहिये ।

जीवितात्तु पराधीनाज्जीवानां मरण वरं ।
मृगेन्द्रस्य मृगेन्द्रत्वं वितीर्णं केन कानने ।

अब हम आपको कालिदासके रघुवशकी तथा क्षत्रचूडामणिकी नीतिका मिलान कराते है ।

प्रजानां विनयाधानाद्रक्षणाद्भरणादपि ।
स पितः पितरस्तापां केवलं जन्म हेतवः ॥
रात्रिंदिवविभागेषु यदादिष्टं महीक्षितां ।
तत्सिषेव नियोगेन, स विकल्प पराङ्मुख ।
स वेलावप्रवलयां, परिखीकृत सागरं ।
अनन्यशासनमुर्वी, शशासैक महीमिव ॥ (रघुवशे)

सुखदुःख प्रजाधीने, नदाभूतां प्रजापते ।
प्रजानां जन्मवर्जं हि, सर्वत्रपितरो नृपाः ॥
रात्रिंदिवविभागेषु नियतो नियतिं व्यधात् ।
कालातिपातमात्रेण, कर्तव्यं हि विनश्यसि ॥
प्रवुद्धेऽस्मिन् भुवं कृत्स्नां रक्षयत्येव पुरीमिव ।
राजन्वती भूरासीदन्वर्थं, रत्नसूरपि । (क्षत्रचूडामणि)

मिलानकर देखिये कितना रस, लालित्य, सरलता क्षत्रचूडामणिमें टपकती है, "गद्यकाव्य" भी एक, काव्यका भाग है यद्यपि हम इस गद्यके दृष्टांतको पूर्वमें दे चुके हैं फिर भी "गद्यचिंतामणि" कादम्बरीसे पदलालित्य, सरसतामें उत्तम है । कादम्बरीमें वृथा ही असिद्ध शब्दोंको देकर, कठिनता बढ़ा दी है । हम ही इसबातको नहीं कहते । बल्कि एक निरपेक्ष प्रोफेसरका भी ऐसा ही मत है। हम उनके वाक्योंको नीचे उद्धृत करते हैं–

" जैसे भारतके वनमें उन संघन वृक्षोंके नीचेमें पैदा हुई छोटी २ झाडियोंके मोर रास्ता गमन करनेमें असाध्य हो जाता है। और किसी तरह मार्ग निकाल भी लिया जाय तो दुष्ट भयंकर जन्तुओंसे पिंड छुटाना पड़ता है। उसी प्रकार वाण कविकी गद्यमें अप्रसिद्ध शब्दोंके मारे कथोपयोगी समझना कठिन पड़जाता है। और कठिन शब्दोंके समझनेके लिये वृथा ही कष्ट उठाना पडता है "।

वास्तवमें यह बात वाण कविके लिये बिलकुल ठीक प्रतीत होती है, हम लोगोंको बड़ा भारी गौरव समझना चाहिये कि हमारे यहाँपर क ख ग आदि ३२ अक्षरोंका क्रमसे ऐसा श्लोक भी है।

ऐसे श्लोक अन्य काव्योंमें नहीं देखे जाते है। यह महत्व जैन काव्योंमें ही प्रायः मिलता है।

प्रिय पाठक महाशय! हमारी इस काव्योंकी महत्ताको स्वयं हम ही नहीं कहते बल्कि विजातीय भी कहते हैं "निर्णयसागरमें जितने काव्य निकलते है वह सब प्रसिद्ध काशीनाथ पाडुरंग द्वारा संशोधित किये निकलते है। इन्होंने कईवार एक प्रसिद्ध जैन कार्यकर्तासे कहा था कि " जैन काव्योंके सामने वैष्णवकाव्य निष्प्रभ मालूम पड़ते हैं। " यद्यपि पश्चिमीय निरपेक्ष विद्वानोंकी इस मत पर बहुतसी सम्मतियां है किन्तु मैं उन सबको यहां कहना नहीं चाहता किंतु कितनी ही भाषाओंका वेत्ता, जगत्सिद्धान्तोंका अनुशीलन करनेवाला प्रसिद्ध डाक्टर हर्टलका कहना है–

" Now what would sanskrit poetry be without this large Sanskrit Literature of Jains. The more I learn to know it, the more my admiration rices

अर्थात्–यदि जैनोंका महान् संस्कृत साहित्य अलग कर दिया जाय तो संस्कृत कविताकी क्या दशा होगी। जितना कि मैं जाननेके लिये पढ़ता हूँ उतना ही अधिक आश्चर्य होता है।

यद्यपि जैन काव्य भारतीय समस्त प्राचीन भाषाओंके अन्दर पाया जाता है किन्तु हम भारतकी होनेवाली राष्ट्रीय भाषा हिन्दी काव्यके महत्वका दिग्दर्शन करायेंगे। क्योंकि भारतको स्वाधीनता दिलानेवाले "असहयोग"का मूल प्राण अहिंसाका बारीकतासे इसी काव्यकुंजमें निर्देश पाया जाता है।

नानानन्तनुतान्त तान्तितनितुन्नुन्नान्त नुन्नानृत।
नूतीनेन नितान्ततानिततुते नेतोन्नतानां ततः।
नुन्नातीतितिनन्नतिं नितनुताम्नीतिं निनूतातनु–
न्तान्तानीतितितान्नुतानन नतान्नो नूतनैनोऽस्तु नो।(जिनशतके)

माननीय विचारशील सुहृत्तम पाठकवृंद ! जिस समय हम बहुविस्तृत हिन्दी जैन काव्यसागरकी तरफ दृष्टिपात करते हैं तो हमारी दृष्टि वहांसे हटती नहीं है। और वहां पर चंचल मनको भी अपने स्वभावको बाध्य होकर बदलना पड़ता है। और वह अपने द्वारपाल चक्षुयुगलको वहापर खड़ाकर आप इस विस्तीर्णसागरमें मनोनीत माणिक्य-पुंजकी प्रबल ग्रहणेच्छासे प्रवेश होता है। धैर्य विभूषित सज्जनवृंद ! आप शांतचित्त होकर थोड़े समयके लिये आप भी इस अनतसागरके तट पर एकाग्रचित्त हो बैठिये। थोड़े ही समयमें यह सेवक हिन्दी जैनकाव्योत्तमरत्नपुंज भेंटमें सम्मानित कर आपसे विदा लेगा।

प्रथम जिससमय हम जैन हिन्दीपुराण काव्य, आदिपुराण, महापुराण, हरिवंश-पुराण, पॉडवपुराण, पुण्यास्रव, यशोधरचरित पुराण, आदि जैन पुराण काव्यनिकुंजमें घुसते हैं तो शब्दार्थालंकारोंकी शोभासे पूर्ण, एव च नूतन नामागुणोंकी सुगन्धित माला ओंसे सजे हुए एक ऐसे निकुंजमें पहुँचते हैं—जहा पर धर्म, शान्तिका वायुमण्डल प्रतिसमय हमारे त्रस्त, चंचलहृदयको,अनुपमशान्त वैराग्यमें स्थित बनाता है। इस पवित्र निकुंजमें अधर्म, हिंसादुर्गन्धयुक्त वायुका प्रवेश अन्य परिकल्पित लिंग पुराणादिककी तरह कहीं भी किसी सूक्ष्मातिसूक्ष्म छिद्र द्वारा नहीं हो पाता, क्योंकि इन पुराणानिकुंजोंकी चारों दीवालें अहिंसारूपी ईंटों तथा शान्तिके गिलाओंसे बहुत मजबूतीके साथ बनी हैं। जिस-तरहसे अन्यपुराणोंमें कपोलकल्पित, नितान्तासंभव, भ्रमोत्पादक तथा हिंसा घृणा क्रूरतादि विषयोंकी, अत्याधिक्य मर्यादाके उलंघन करनेवाला वर्णन पाया जाता है। जैसे कि ब्रह्माजी की उत्पत्ति पद्मजसे हुई है (१) सीता की उत्पत्ति विना माता पिताके हुई है (२) तथा एक गौमें ३३ कोटि देवता वास करते हैं इत्यादि असंख्य मिथ्या तथा विशेपवासनाओंके जालमें फंसानेवाली कथाओंका वर्णन जैसे वैष्णव पुराणोंमें पाया जाता है वैसा वर्णन भव्य, सभ्य, काव्यनिकुंजवृंदमेंसे किसी भी काव्यके सूक्ष्मतगाथमें भी अनुसंधानकारियोंके दृष्टिपथ नहीं होता। प्राय इन वैष्णव पुराणोंकी ऐसी निर्मूल, अत्यतासभव हिंसासे आढ्य (प्रचुर) देखकर ही हमारे यूरोपीयलोग मनगढंत, मिथ्या, भ्रमोत्पादक, मकारके वर्णनके लिये उपमाका काम लेते हैं।"अस्तु"। हम दृष्टांतस्वरूपमें इनके (जैन पुराणोंके) इधगव इस लेखमें लिखकर इस लेखका कलेवर-दाकार न करेंगे। किन्तु चित्तमें सदैव चुभनेवाले (हर्षोत्पादक) यशस्तिलकचरित पुराणके बारेमें अवश्य लिखेंगे। इस पवित्र पुराणको पढ़नेसे राक्षसी प्रकृतिवाले मनुष्यके भी हिंसासे घृणा होकर पवित्र अहिंसामय जीवनका सगठन होगा। तथा इस पुराणमें कविने जिस सौन्दर्य अनुपम-अहिंसासे वर्णन किया है कि पाठक श्रोताओंके रोमाञ्च खड़े हो जाते हैं

॥श्रीवीतरागाय नमः ॥

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभि ।
सबोधयत्पत्रमिद प्रवर्त्ततताम्, दैगम्बर जैन समाज मानम् ॥

वर्ष १९ वाँ.	वीर संवत् २४४८. आश्विन विक्रम सं० १९७८.	अंक १२वा



वीर निर्वाण। परमपूज्य दशलाक्षणी पर्व सानंद बीत गया और हमारे परम पूज्य अंतिम तीर्थंकर श्री महावीर प्रभुका निर्वाण दिन भी सब स्थानोंपर निर्विघ्नतासे मनाया गया होगा। हमारे वीरनिर्वाण पर्वका माहात्म्य इतना जगद्व्यापी है कि इस पर्वको हम तो क्या सब हिंदु लोग दिवाली (दीपावली) पर्वके नामसे मानते हैं। इतना बडा भारी पर्व कबसे चालु हुआ और उसको कितना समय बीत गया यह जाननेके लिये और हमारे पुज्य वीर प्रभुकी अहर्निश स्मृतिके लिये श्री वीर प्रभुका संवत चालू हुआ है। वीर प्रभुको निर्वाण गये २४४८ वर्ष हुए हैं और तबसे ही वीरनिर्वाण संवतका प्रचार है। जब विक्रमस० १९७९ शालिवाहन १८४४, इस्वीसन् १९२२ है व पारसी मुसल्मानोंके सन् इससे भी कम है तब हमारा वीरनिर्वाण संवत २४४९ हुआ है। परन्तु खेद है कि अब भी हमारे कई जैन भाई वीर संवतका प्रचार नही करते अर्थात् अपनी वहियों, पत्रव्यवहार आदिमें वीर सवतका व्यवहार नहीं करते। अब तो इस प्रमादको हटाना चाहिये और सर्वत्र वीरसवतका प्रचार करना चाहिये। आशा है सब जैनी भाई इस साल वीर स० २४४९का व्यवहार चिट्ठीपत्री वहियों आदिमें अवश्य करेंगे।

*　　*　　*

वर्षांत। 'दिगम्बर जैन'का १९ वे वर्षका यह अंतिम अंक है। अर्थात इस पत्रने १९ वर्ष पूर्ण किये है। इसका जन्म वीर निर्वाण संवतके प्रारम्भसे ही हुआ है इस लिये नवीन १६ वें वर्षका प्रारम्भ भी वीर सं० २४४९ कार्तिक माससे ही होगा। नवीन वर्षका सचित्र खास अंक हम मगसिर मासमें निकाल सकेंगे परन्तु यह अंक करीब ८० पृष्ठोंका कई चित्रोंसे सुशोभित प्रकट होगा। इस खास अंकके लिये हिन्दी, गुजराती, मराठी, अंग्रेजी लेख व कवितायें जो भाई भेजना चाहें वे ८ दिनके भीतर २ अवश्य भेज देवें अन्यथा वे स्थान नहीं पा सकेंगे। सबके सुभीतेके लिये नये सालका जैन तिथिदर्पण तैयार करके इसी

अंकके साथ बांट दिया है सो सर्व पाठक समाल लेवें। जहांतक हो नवीन वर्षका अंक शीघ्र ही प्रकट होगा। तिथिदर्पणके चित्रका परिचय भी नवीन अंकमें प्रकट होगा।

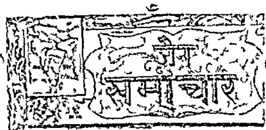
*   *   *

'दिगंबर जैन'का वीर सं० २४४७ व २४४८ का दो सालका मूल्य बहुत ग्राहकोंसे

मूल्य व उपहार। लेना शेष है। यह न वसूल करनेमें हमारा ही प्रमाद है। और वह प्रमाद सिर्फ उपहार ग्रंथ तैयार न हो सकनेका है। अब वीर सं० २४४७के दो उपहार ग्रंथ तैयार हुए हैं और ग्राहकोंको वीर संवत २४४७ के मूल्यकी वी० पी०से भेजे जांयगे। वर्ष १९ वीर सं० २४४८ का एक ऐतिहासिक उपहार ग्रन्थ तैयार हो रहा है वह तैयार होनेपर उसका मूल्य भी वी०पी०से वसूल किया जायगा। तथा वीर सं० २४४९ में कोई न कोई उत्तम ग्रंथ उपहारमें देनेका हम अवश्य प्रबंध करेंगे। वार्षिक मूल्य सिर्फ १॥) कायम रहेगा।

*   *   *

શન થવાની જરૂર છે. ગત વર્ષે નાતેપુતે (સોલાપુર)માં સભા થઇ ગઇ હતી અને આ વર્ષે ગુજરાતમાં થાય તો તે વાસ્તવિક છે. નિયમ પ્રમાણે કોઇ ન બોલાવે તો મુંબાઇમાં થવાની જરૂર છે. પણુ જે લાભ ગુજરાતમાં કોઇ મોટા સ્થળે થઇને થાય તે મુંબઇમાં નજ થઇ શકે. આ માટે મહુવા (સુરત)માં અતિશય ક્ષેત્ર શ્રી વિઘ્નહર પાર્શ્વનાથ પર અધિવેશન કરવાની ભ૦ સુરેંદ્રકીર્તિજી વગેરેની અભિલાષા છે, પણ ત્યાંના ભાઇઓ એ કામ ઉપાડી લે તોજ તે થઇ શકે પણ તે કરતાં વિશેષ સફળતા તો ગુજરાતના પાટનગર **અમદાવાદમાંજ** થઈ શકે એમ છે. અમદાવાદમાં ૨૦ વર્ષ થયા બોર્ડિંગ નીકળ્યા પછી એક પણ ઉત્સવ થયો નથી ને અમદાવાદ એવું મધ્યસ્થ સ્થળ છે કે જ્યાં જો ઉત્સવ થાય તો ગુજરાતના જૈન ભાઇયો ને બ્હેનો હજારોની સંખ્યામાં લાભ લે ને ત્યાંના ૨०००० શ્વે० જૈન ભાઇયોની સમક્ષમાં દિ० જૈન ભાઇયોની પણ પ્રભાવના થાય. આવો પ્રસંગ બની શકે એવાં કારણો ઉપસ્થિત છે અને તે એજ કે અમદાવાદમાં પનાભાનીપોળમાં સેઠ જેશંગભાઇ હરજીવનદાસના અથાગ પરિશ્રમ અને ઉત્સાહથી એક મોટી ટીપ થઇ દહેરાસર તૈયાર થયું છે તેની વેદી પ્રતિષ્ઠા થવાની તૈયારી છે. ગો



श्री हस्तिनापुरजी–में वार्षिक मेला व रथोत्सव आगामी अष्टान्हिका पर्वमें होगा। रथ-यात्रा १९ को होगी। ठहरनेको धर्मशाला डेरे तथा भोजनके लिये भोजनालयका प्रबंध होगा। सेवासमिति व स्वयंसेवकोंका भी प्रबंध हुआ है।

सिद्धवरकूट–सिद्ध क्षेत्रमें भी वार्षिक मेला अष्टान्हिका पर्वमें सुदी १९ व वदी १को होगा।

औरंगाबाद–की पार्श्वनाथ दि० जैन पाठशालाका वार्षिकोत्सव कार्तिक सुदी १९ को श्री कचनेरजी अतिशयक्षेत्रपर होगा।

वहाड मध्य प्रां० दि० जैन सभा–का पंचम वार्षिकोत्सव ता० ९–१० नवम्बरको श्री मातकुली सिद्ध क्षेत्रपर होगा। पाठशाला-ओंके छात्रोंकी परीक्षा भी इस समय ली जायगी।

मनोहर बापुजी वकील।

महासभाकी–प्रबंधक व ट्रस्ट कमेटीकी अलग २ मीटिंग आगामी ता० ४–९ नवम्बर मिती कार्तिक सुदी १९ व मगसिर वदी १ को कानपुरमें होगी। सभासद अवश्य पधारें।

चैनसुखलाल छावड़ा महामंत्री।

उत्तर बंगालमें–भयानक बाढ़के कारण हजारों आदमी व पशु मरगये। करोड़ोंका नुक-सान हुआ तथा लाखों आदमी व मकान, अन्न, वस्त्र, घास आदिसे पीड़ित हैं। इनकी रक्षाके लिये मारवाडी रिलीफ सोसायटी जगमोहन मल्लि लेन कलकत्ताने फंड खोला है जिसमें १८००० हुए हैं तथा कलकत्तेके दिगम्बर जैन भाइयों करीब ६०००) इकत्र करके भेजे हैं। हमने भी १९) भेजे हैं। हरएक पाठकका फर्ज है कि कुछ न कुछ द्रव्य इन दुःखितोंको उपरोक्त पतेसे अवश्य भेजें।

जैन महिलादर्श–नामक मासिक पत्र बहुत उत्तमताके साथ श्राविकाश्रम जुबिलीबाग तारदेव बम्बईके पत्तेसे ६ माहसे २४ पृष्ठोंमें प्रकट होता है। वार्षिक मूल्य सिर्फ १।) है। हरएक बहिन व भाइको इसका ग्राहक होना चाहिये।

सिद्धक्षेत्र श्री कुंथलगिरि–में वार्षिक मेला व रथोत्सव मगसिर सुद १९ को होगा। उसी मौकेपर वहाके देशभूषण कुलभू० ब्रह्म-चर्य आश्रमका उत्सव व कसरतके खेल गायन संवाद आदि होंगे। इस आश्रममें ८४ अत्यन्त अनाथ विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं। २९ कर्मचारी व १२००) मासिकखर्च है। कुंथलगिरिकी आबो हवा उत्तम है तथा यात्राका अपूर्व स्थान उंचो पहाडीपर है। बार्सी (सोलापुर) स्टेशनसे १० कोसपर है। गाडीका प्रबंध होता है।

कलकत्तेमें–नवरात्रीपर होता हुआ पाडे बकरे आदिका वध बंद करनेके लिये इसवार दि० जैन भाइयोंने ४०००० नोटेश बंगला व हिंदी भाषामें बाटे थे जिसमें हिन्दु शास्त्रानु सार ही पशु बलि करना धर्म विरुद्ध बताया था इसका असर इतना हुआ कि गत वर्षसे साढे छभानी वध इस वर्ष कम हुआ है। रिपोटसे

मालूम हुआ है कि इस वर्ष कम होते हुए भी इस वर्ष ९ भैंसे व ९१० बकरेका वध हुआ था। यदि पहिलेसे विशेष प्रयत्न हो तो और भी सफलता मिल सकेगी।

समाधान-हमारी महासभा व उसके पुराने कोषाध्यक्ष बाबू नवलकिशोरजीके बीचमें जो वैमनस्य चल रहा था उसका निवटेरा हो गया। अभी कानपुरमें सं० प्रा० दि० जैन सभाकी प्र० बैठक ता० २३-२४ सितम्बरको हुई थी उसमें बा० चंपतरायजी बेरिस्टर सभापति व नवलकिशोरजी मौजूद थे और एक प्रस्तावानुसार बा० नवलकिशोरजीने महासभाके ९००-००) के नोट बै० चंपतरायजीको दे दिये हैं। हिसाबका निवटेरा भी अब होजायगा।

नये संचालक-भारत दि० जैन महासभाके महामंत्री सेठ चैनसुखदास छाबडा नियत हुए हैं। महासभा संबंधी पत्रव्यवहार अब सिवनीसे होगा। महासभाका मुखपत्र 'जैनगजट' भी अब देहलीमें छपकर देहलीसे ही प्रकट होने लगा है। सहायक सम्पादक पं० लालारामजी शास्त्री प्रकाशक हो गये हैं। अब गजटकी दशा सुधरनेकी उम्मेद है।

जैन मित्र मंडल-देहलीका ७वां वार्षिकोत्सव रा० बा० सुलतानसिंहजीके सभापतित्वमें भादों सु० १९को होगया। पं० लालारामजी देवकीनंदनजी आदिके व्याख्यान हुए। कानूनी सुरपोंमें जैनीजन सुदन बांटनेका प्रस्ताव पास हुआ व सभापतिने जैन हो बनानेकी सहायार्थ ९१) दिये।

विजयादशमी-के दिन सोलापुर और कारंजाकी व्यायामशालामें खास उत्सव होकर तरवार पटा, लाठी जंजीर आदिके कसरतके खेल हुए थे।

महाराजपुर-में ब्र० परमानंदजी हैं और चार माहसे आंतरेसे उपवास कर रहे हैं। आपके उपदेशसे वहां खूब धर्म प्रभावना हो रही है।

नातेपुतेमें-खेमचंद मयाचंद गांधीने अपने पुत्रकी लिपि संख्यान क्रिया महापुराणानुसार अभी की थी।

मांगीतुंगी-में कार्तिक सुदी १५ को व **कुंथलगिरीमें** मगसिर सुदी १५ को वार्षिक मेला होगा।

कम्पिलाजी-तीर्थका प्रबंध अब सुधर गया है।

परतापगढ-में ब्र० गेबीलालजीके चातुर्मास होनेसे बड़ी धर्मप्रभावना हो रही है। कई आम सभायें भी होती हैं।

विना मूल्य मंगालो-अष्टसहस्री, श्लोकवार्तिक, जैनेन्द्र प्रक्रिया, पार्श्वाभ्युदय काव्य और विश्वलोचन कोष ऐसी ११।।।≈) की **संस्कृतभाषाकी** पुस्तकें हम विना मूल्य भेजते हैं। सबका पोस्टेज १।।।≈) भेजकर मगा लीजिये।

नाथारंगजी गांधी सोलापुर।

नये त्यागी-परतापुरमें क्षुल्लक शांतिसागरजीने चातुर्मास किया है और १ माहके उपवासका पारना भादों सु० १९को गमनाबाईके यहां किया था तब गमनाईने आर्यिकाके व्रत लिये धारावन कपूरने ब्रह्मचर्य व्रत धारण किया है।

इसका नाम हीरालाल ब्रह्मचारी रखा गया है। और भी बहुतसे व्रत नियम लिये जा रहे हैं। कन्याविक्रय करनेवाले व कन्या विक्रयवाले लग्नमें भोजन न करनेकी बहुतोंने प्रतिज्ञा ली और ज्यादे दहेज लेनेवालेके यहां भी कई भाई व बहिनोंने त्याग किया है।

कलकत्तेके–अजायबघरमें बहुतसी प्राचीन दि० जैन मूर्तिएं खंडित व अखंडित हैं। इनमें बहुतसी मूर्तिएं दो हजार वर्ष पहलेकी है। पूज्य ब्र० शीतलप्रसादजीने वहां जाकर निरीक्षण करके इसका हाल जैन मित्र अं० ४५ में प्रकट किया है। अखंडित मूर्तियें अपने कबजेमें लेनेका यत्न महासभा व तीर्थक्षेत्र कमेटीको करना चाहिये।

तीर्थ रक्षा फंड–भारत दि० जैन तीर्थ क्षेत्र कमेटीकी ओरसे प्रतिवर्ष फी घर १) लिया जाता है जिसमें इस वर्ष ता० २८–९–२२ तक कमेटीको १६० स्थानोंसे रु० १२७१≡) प्राप्त हुये हैं। सबसे बड़ी रकम ४७३) कलकत्तेकी है। जहां भी तीर्थरक्षा फंडके रुपये इकट्ठे हुए हों बम्बई भेज देने चाहिये।

सागर–पाठशालाके अनुभवी महामंत्री सिं० बालचंदजीका स्वर्गवास हो गया।

'जैन प्रभादर्श–नामक मासिक पत्र बम्बईसे प्रकट होनेवाला है।

तीन जातियोंका पता–बा० सूरजमलजी जैनने नागपुर प्रान्तमें भ्रमण करके पत्ता लगाया है कि इस प्रान्तमें अलग २ स्थानोंपर जैनकला ९, मानभाउ व जैनकोष्टी नामक जातियां हैं जो पूर्वमें जैन थी व उनके कई आचरण अभीतक जैन धर्मसे मिलते जुलते हैं।

अनंतकीर्ति–ग्रन्थमालाका दूसरा ग्रन्थ भी अमितगति श्रावकाचार करीब ४५० पृष्ठमें प्रकट होगया है। मूल व भाषाटीका सहित व मूल्य सिर्फ १॥≈) है।

एनापुर–(बेलगांव)में मुनि शांतिसागरजी बिराजते हैं। आपके उपदेशको भादों सु० १४ को आणप्पा खोंडे ब्रह्मचारी हुए हैं।

ब्र० दिग्विजयसिंहजी–ता० २१ सितम्बरको छूटे और अभी बिधुपुरामें हैं।

कल्याण जैन छात्राश्रम–इन्दौरमें सर सेठ हुकमचंदजीके हस्तसे रा० बा० दानवीर सेठ कल्याणमलजीने उपरोक्त बोर्डिंग ता० १३ सितम्बरको खोल दिया है। अब कल्याणमलजीके हाइस्कूलमें पढनेवाले छात्र इस बोर्डिंगमें रहसकेंगे।

डॉ० गौड–का सिविल मेरेज बिल बडी धारासभामें पेशकर चुनी हुई कमेटीको सुपुर्द किया गया है जो जैन व हिंदु धर्मसे विरुद्ध होनेसे इसके विरोधमें कलकत्तेमें बडी सभा होकर इसके विरोधमें वाइसरायको तार भेजा गया है और हरएक स्थानसे भी ऐसे तार जाने चाहिये।

६२५०)का दान–इन्दौरमें भादों सुदी ४ को सौ० गुलाबबाई धर्मपत्नी सेठ फतेचंदजीका स्वर्गवास हुआ था इस बाईके दश बालक है, पति भी है तौभी बाईने अपने हाथसे ६२५०) का दान किया है (इसमें ९००) बम्बई श्राविकाश्रम तथा सौ२ दो२सौकी रकमें संस्थाओंको दी है यथा ३०७५०) के हुकमचंद मीलके ६

शोका व्याज गरीबोंको व्यपारार्थ सहायता व विद्यार्थियोंको इनाममें खर्च किया जायगा।

दाहोद—में जैन पाठशालाका वार्षिकोत्सव पं० दीपचंदजी वर्णीके सभापतित्वमें गत मासमें बडे समारोहसे हुआ था। विद्यार्थियोंने उपदेशात्मक कई संवाद किये थे।

अनंतचतुर्दशी—की आम छुट्टी होनेके लिये महासभाने प्रस्ताव पास किया था उसका अमल होनेके लिये महासभाके सभापति सेठ चंपतरायजी सरकारसे लिखा पढी की तो उत्तर यह मिला है कि सन् १८८१के कानून अनुसार पब्लिक छुट्टीके दिन मंजूर करनेका अधिकार प्रान्तिक सरकारको है इसलिये उन प्रान्तीय सरकारोंको जहां अनंत चतुर्दशीकी छुट्टी न होती हो उसके लिये उनसे पत्रव्यवहार करें।

मूडबिद्री—में बडे मंदिरके जीर्णोद्धारका कार्य पूर्ण हुआ है और आगामी माघ मासमें पंचकल्याणक प्रतिष्ठा होनेवाली है।

० દાન-ભાવનગરમા અષાડ માસમાં મોતીચંદ ગોકળદાસની વિધવા કંકુબાઇએ પોતાના અવસાન સમયે નીચે પ્રમાણે ૫૦૧) નુ દાન કર્યું હતું— ૧૨૦) ગેનુંજય પર જીર્ણોદ્ધાર માટે, ૧૨૦) ભાવનગરના દેરાસરમ. ચાદીની દીવી માટે, ૨૦) પાઠશાલા, ૨૫) કાશી વિદ્યાલય, ૨૫) બ્ર૦ આશ્રમ, ૫૧) કુંથલગિરિ આશ્રમ, ૨૫) મોરેના વિદ્યાલય, ૨૫) સુબાઇ શ્રાવિકાશ્રમ તથા પરચુરણ.

ભાવનગર-મા સંતોષ બ્હેન પાઠશાળાનું કામ સારૂં ચાલે છે. ૨૬ વિદ્યાર્થી છે. શાળાને અંગે ઇનામી ફંડ છે, તેમા આ વર્ષ ૧૬) પેટ. હાર સધે આપ્યા હતા. વારવાર ઇનામો વંચાય છે; પંડિતની જરૂર છે.

અમદાવાદ—ની ગેઠ પ્રેમચંદ મોતીચંદ દિ. જૈન ઓડિંગની આતરિક વ્યવસ્થા સારી રીતે ચાલી શકે તે માટે ગુજરાતના ભાઇયોનું એક વ્યવસ્થાપક મંડળ નીમવાનો વિચાર કરવાને એક મીટિંગ અમદાવાદ ઓર્ડિંગમાં આસો વદ ૩ પર પોલીટીકલ કમેટીના મંત્રી શેઠ હરજીવનભાઇ રાયચંદે બોલાવી હતી જેમા ગુજરાતમાથી ૨૫-૩૦ આગેવાનો એકત્ર થયા હતા અને શેઠ મંગળદાસ નાથાભાઇના પ્રમુખપણા નીચે મીટીંગ થઇ હતી અને તેમાં હરજીવનભાઇ, મુલચંદભાઇ કાપડિયા, છોટાલાલ ઘે. ગાંધી વગેરેના વિવેચનો પછી એક વ્યવસ્થાપક મંડળ નીચેના ૧૧ સભ્યોનું નીમવામા આવ્યું હતુ. શેઠ તારાચંદ નવલચંદ (પ્રમુખ), શેઠ લલ્લુભાઇ લખમીચંદ, શા૦ હરજીવનભાઇ રાયચંદ ઉપપ્રમુખ, ચીમનલાલ નરસિંહદાસ વકીલ (સેક્રેટરી), મુલચંદ કસનદાસ કાપડીયા, છોટાલાલ ઘેલાભાઇ ગાધી, શંકરલાલ તાપીદાસ, ડૉ૦ માધવલાલ, ચીમનલાલ જેશંગભાઇ, રતીલાલ જગજીવનદાસ અને ડાયાભાઇ હરગોવનદાસ. આ પ્રસંગે રૂપાબાઇ સ્મારક મંડળની વાર્ષિક સભા પણ શેઠ રતનચંદ પ્રેમચંદ ઝવેરીના પ્રમુખપણા નીચે થઇ હતી તેમાં રિપોર્ટ વંચાયો હતો ને વિદ્યાર્થીઓના ભાષણો થયા હતા. તેમજ 'સ્વતંત્ર' વિદ્યાર્થી નામનું લેખિત માસિક વિદ્યાર્થીએ બહાર પાડવા માંડયું છે તેનો પ્રથમ અંક રજુ થયો હતો. વિદ્યાર્થીઓમા બાનુભાવ, દેશ સેવા ને એક દીલી વિશેષ થયેલી માલમ પડતી હતી. વળી વ્યવસ્થાપક મંડળના શરૂઆતના ખર્ચ માટે ૨૫) માંહોમાહે ભરાયા હતા. તેમજ શેઠ મંગળદાસે બે દિવસનો રસોડા ખર્ચ આપ્યો હતો.

पर्युषण पर्व।

આમોદ-માં પાંચેમ આઠેમ ને પૂનેમે ખાસ સભાઓ ભરાઇ દશ ધર્મ તથા ખાદી વાપરવા શેઠ હરજીવન રાયચંદ વગેરેના વિષે ભાષણો થયા હતાં જેની અસરથી દહેરાસરમાં વપરાતું ભ્રષ્ટ કેશર બંધ કરવામાં આવ્યુ, વિદેશી ભ્રષ્ટ ખાંડના પતાસાં ને સાકેર બંધ થયાં, તથા વરઘોડો સ્વદેશી પોષાકમાં નીકળ્યો હતો. અત્રે ખાદીનો પ્રચાર વિશેષ છે.

અકલકોટ-માં નિત્ય તત્વાર્થ ને દશ ધર્મના વિવેચનો થતાં ને ચાર જાહેર સભાઓ થઇ હતી તેમાં વિદ્યોન્નતિ સંવાદ નાટક રૂપે ચર્ચાયો હતો. વરઘોડાની શોભા અપૂર્વ હતી. તેમજ મોટા દહેરાસરનો શિખર પૂરો કરવા માટે ૧૭૭૬)ની ટીપ થઇ છે જેમાં છસો રૂ૦ની બે રકમો મેતા રામભાઉ કસ્તુરચંદ ને ગાનચંદ સખારામની છે ને કામ ચાલુ છે.

સીતવાડા-માં ૧૫ ભાઇયોએ જુદા જુદા વ્રત કર્યા હતાં. ઉત્સાહ સારો હતો.

તલોદ-માં ૧૩ જણે વ્રત કર્યાં હતા પણ શા૦ નેમચંદ જેચંદે દહેરાસરમાં આપેલું ઘર ન આપવાથી ઝઘડો હોવાથી વિશેષ પ્રભાવના થઇ નહોતી.

વડોદરા-માં નિત્ય વાજીંત્ર સાથે પૂજન થતું રોજ શાસ્ત્ર વંચાતું તેમજ ખાસ સભા થઈ એકતા વિષે ભાષણ અપાયું હતું તથા પાઠશાલાના વિદ્યાર્થી ને બાલકોઓને ઇનામ વેચાયા હતાં, મંડળને લીધે અત્રે ઉત્સાહ સારો છે. તીર્થરક્ષા ફંડનો એકેક રૂપીઓ બધાએ તરતજ આપી દીધો હતો.

કાણીસા-માં ઉત્સાહ બહુ સારો હતો. શાસ્ત્રની સુચી તૈયાર થઇ. ખંભાત મંદિર માટે ટીપ થઇ. વરઘોડાની શોભા અપૂર્વ હતી.

પાદરા-માં એક બાઇએ પાંચ ને બેએ ત્રણ ત્રણ અપવાસ કર્યા હતાં. પાઠશાળા બંધ હતી તે શ્વે૦ મુનિ કેશરવિજયજીના ઉપદેશથી ચાલુ થઇ ને પાંચ વર્ષ માટે ટીપ થઇ છે. સંસ્કૃતના અધ્યાપકની જરૂર છે.

ઝેહેર-માં ગયે વર્ષે ગંભીર બનાવ બનેલો તેનો નીવેડો હજુ આવ્યોજ નથી જેથી ઘણાઓ પર્યુષણ કરવા બહારગામ ગયેલા ને દહેરાસરમાં પુજા, પ્રભાવના, શાસ્ત્ર વરઘોડો કે પાખી કંઇપણ થયેલું નહીં !! કોઇપણ રીતે આ ઝઘડાનો નીકાલ થવો જોઇએ અથવા તો નરસીપુરમાં નવું દેહરાસર બંધાવવું જોઇએ. એમ. ડી. શાહ.

ગુજરાત-માં જુદે જુદે સ્થળે ઉજવાયેલા પર્યુષણ પર્વના સમાચારનો લેખ મુંબાઇના ગુજરાત દિ૦ જૈન યુવક મંડળ તરફથી મલ્યો છે તે સ્થાનાભાવને લીધે આવતા અંકમાં આખો પ્રકટ થશે.

સુરત-માં નવાપરાનાં મંદિરમાં નિત્ય અમો શાસ્ત્ર વાંચતા હતા. ચાર દાનની ટીપ થઇ હતી તેમાં રૂ૦ ૫૨॥ સ્ત્રી સમાજ તથા આશરે ૧૫૦)૦ પુરૂષ સમાજ તરફથી થયેલા તે જુદી જુદી સંસ્થાઓને મોકલવામાં આવ્યા હતા તેમજ તીર્થરક્ષા ફંડમાં ૫૯) ભરાયા હતાં. સ્ત્રીઓની પાઠશાલા ચાલુ છે ને છોકરાઓની પાઠશાલા બંધ હતી તે પાંછી ભાદરવા વદ ૫ થી ચાલુ થઇ છે જેમાં ૩૫ વિદ્યાર્થી લાભ લે છે. અત્રે સ્ત્રીઓમાં ધર્મપ્રેમ વિશેષ છે.

खंडवा-में एकने १० व कई भाइयोंने पांच २ उपवास किये थे। **परतापगढ**-में ब्र० गेबीलालजीके ठहरनेसे खूब धर्म प्रभावना हुई थी। **भिवानी**-में न्या० पं० माणिकचंदजीके पधारनेसे धर्मामृतकी वर्षा खूब हुई थी। **नादगांव**-में भी ऐलक पन्नालालजी व ब्र० हीरालालजीके

होनेसे अपूर्व आनंद रहा। **दाहोद**–में पं० दीपचंदजी वर्णी होनेसे तत्वचर्चाका लाभ अपूर्व था। पाठशालाकाउत्सव भी हुआ तथा कई भाइयोंने यज्ञोपवीत संस्कार कराया था। **कुचामन**–में तेरह द्वीप ढाई द्वीपकी पूजन भी हुई थी। **झालरापाटन**–में मुनि चंद्रसागरजीने १६ उपवास किये थे। **कोपरगांव**–में तात्या केशव चोपडे कीर्तनकार पधारनेसे खूब आनंद रहा था। **बोधेगांव**–में जलयात्रा अभिषेक पूजन व्याख्यानका आनंद अपूर्व था। **खेखडा**–में जैन कुमार सभाके प्रयत्नसे मंदिरमें भी खादीके वस्त्रका व्यवहार प्रारंभ हो गया। **पवई**–में सब मंदिरमें स्वदेशी वस्त्र रखनेका ही प्रस्ताव हो गया। **रायपुर**–में फूट मिटकर एकता हो गई। **छिंदवाडा**–में बालसभाका प्रयास उत्तम था। पाठशालाका पंचायतीकी ओरसे प्रबंध हो गया। रेशम व विदेशी वस्त्र मंदिरमेंसे निकाल देनेका प्रस्ताव हुआ। पवित्रताका निर्णय न होने तक केशर बंद किया गया। वहियोंपर कपड़े गत्ते लगाये भाव आदि महत्वपूर्ण कार्य हुए। **लाडनूं**–में व्रत नियम उपवास खूब हुए। शास्त्र नित्य होता था व संस्थाओंके लिये १००) चंदा हुआ था।

खातेगांव–में पं० मेवारामजीने उपदेशसे दि० जैन मंडल स्थापित हुआ, ११ स्वयंसेवक हुवे व पाठशाला चालू हो गई। **सोलापुर**–में व्रत उपवास खूब हुए थे। नित्य शास्त्र होता था। जैन गायन समाजका मंडेमें प्रथम नंबर था। **जिंतुर**–में व्र० महावीरप्रसादजीके उपदेशसे रथयात्रा हुई थी। **नेमागिरि** फंडमें १०१) आये थे

कलकत्ता–में पूज्य ब्र० शीतलप्रसादजीका चातुर्मास होनेसे यह पर्व अपूर्व सफलतासे पूर्ण हुआ था। आप ब्र० चांदमलजी, पं० झम्मनलालजी, पं० मुन्नालालजीका उपदेश अच्छा हुआ था। कई भाई बहिनोंने ८–९–१० तक उपवास किये थे। स्त्रियोंमें जैन कन्याशालाके लिये १२००) का चंदा हुआ। दो आम सभाएं हुई थीं। सेठ रामजीवनदासजी आदिके उद्योगसे संस्थाओंके लिये १०००) का चंदा हुआ था जो संस्थाओंको भाग करके बडी २ रकम भेजी गई। तीर्थरक्षा फंडकी उगाही हुई थी। सामायिक पाठ व नियम पोथी सबको बांटे गये थे।

जैन काव्योंका महत्व।

(गतांकसे आगे)

इस बातको हमारे वन्दनीय स्वाध्यायिवर्ग तथा मध्यके विद्वान महाशय कर अपने हृदक्षेत्रोंमें विधिरिको वो सकेंगे। मैं अब पुण्याश्रवादि उत्तमोत्तम जैनकाव्योंकी उत्तमता बतलानेके लिये समय नहीं रखता। फिर भी काव्योत्तम पार्श्वपुराणआदिकोंके कुछ चुने हुए कुसुमोंसे आप सज्जनोंपर वर्षा करताहुआ इस प्रकरणको समाप्त करूंगा।

वास्तवमें कविवर भूधरदासजीने श्री पार्श्वनाथ पुराणको क्या ही उच्च अति मनोहर काव्य बनादिया है। दृष्टांतके लिये हम उनका आद्यका छप्पय देते हैं–

भुवनतिलक भगवंत, संतजन कमल दिवाकर।
जगतजंतु बंधव अनंत, अनुपम गुणसागर॥
रागनाग मदमंत, दंत-उच्छेपन वलि अति।
रमाकंत अरहंत, अतुल जसवंत जगतपति॥

तथा च-विमलबोधदातार, विश्व विद्या परमेसर।
लछमीकमलकुमार, मार मातंग-मृगेसर॥
मुखमयंक अवलोकि, रंक रजनीपति लाजै
नाममंत्रपरताप, पाप पन्नग डरि भाजैं॥

क्या ही आदरणीय तथा आलंकारिकाभूषणोंसे सजित है। पाठक क्षमा करें, हमें इन कविकी इस लेखनशैलीकी उत्तमताको देखकर आश्चर्य होता है तथा हम इसी पुराणके और श्लोक कुछ देंगे जिससे कि इनकी विद्वत्ताका पूर्ण पता लगे–

जय अश्वसेन कुलचंद्र जिन, सक्र चक्र पूजित चरन।
तारो अपार भवजलधिते, तुम तरंड तारन-तरन॥
बाघ सिंह वस होयहिं, विषम विषधर नहि डंकैं।
भूत प्रेत वैताल, व्याल वैरी मन सकैं॥
साकिनि डाकिनि अगनि, चौर नहि भय उपजावैं।
रोग सोग सब जांहि विपत नेरे नहिं आवैं॥ (पा० पु०)

पाठकवृंद, कविकी इस अनुपम कवितामें शब्दालंकार, अर्थालंकारको देखकर क्या नहीं कह सकते कि जैनेतर काव्योंमें ऐसे पुराणरत्न उपस्थित होंगे? अब इन्हीं कविका बनाया हुआ "जैनशतक" ग्रंथ है। इसकी उत्तमताका वर्णन क्या करें यह हि दीमें पद्यमय अत्यंत काव्य है जिसकी कि कुछ बानगी हम आपको देते हैं–

चितवत वदन, अमल चंद्रोपम, तजि चिंता चित होय अकामी।
त्रिभुवन चंद पाप तप चंदन, नमत चरन चन्द्रादिक नामी।

तिहु, जग छई चंद्रिका कीरति, चिह्न चंद्र चिंतत शिवगामी ॥
वन्दौं चतुर चकोर चन्द्रमा, चन्द्रवरन चंद्रप्रभस्वामी ॥

इसी तरह और भी चतुर्विंशति स्तुति कैसी उत्तम की गई है इसको हमारे पाठकवृंद ही विचारें।

इस कविने यज्ञमें हिंसानिषेधार्थ कैसे अनमोल बोल रहे हैं—

कहै पशु दिन सुन यज्ञके करैया मोहि,
होमत हुताशनमें कौनसी बडाई है।
स्वर्गसुख मैं न चहौं "देह मुझे" यौं न कहौं,
घास खाय रहौं मेरे यही मन भाई है॥
जो तू यह जानत है वेद यौं वखानत है,
जग्य जलौ जीव पावै-स्वर्ग सुखदाई है।
डारै क्यों न वीर यामें अपने कुटुंब ही कौं,
मोहि जिन जारै जगदीश की दुहाई है ॥

प्रिय पाठकवृंद ! कविकी यह सरस, सुयुक्ति यज्ञमें हिंसाका निषेध, अन्यमतावलम्बि देखते हैं तो दांतों तले उंगली दबा लेते हैं। बस इन कव्युत्तमके दो ही ग्रंथोंकी बानगी देकर हम आगे बढ़ते हैं। हम स्वर्गीय कविवर द्यानतरायजीकी कविताकी अब उत्तमता बतावेंगे। हम उदाहरणके लिये इनका "धर्मविलास" पेश करते हैं। वास्तवमें हिंदी संसारमें यह एक उत्तम पद्य ग्रंथ है। इसकी भी थोड़ी कविता भव्य पाठकोंके निमित्त पेश करता हूं। ज्ञानीका बखान आपने छप्पयमें इस प्रकार किया है—

धाम तजत धन तजत, तजत गजवर तुरग रथ।
नारि तजत नर तजत, तजत भुवपति प्रमाद पथ॥
अघि भजत अघ भजत, भजत सब दोष भयंकर।
मोह तजत मन तजत, सजत दल कर्म सत्रुवर॥
अरि चट्ट चट्ट सब कट्टकरि, पट्ट पट्ट महि पट्ट किय।
करि अट्ट नट्ट भवकट्ट पदि, सट्ट सट्ट सिव सट्ट लिय
तजत अंग अरधंग करत थिर, अंग पंग मन।
लखि अभंग सरवंग, तजत वचननि तरंग मन।
जित अनंग धिमि सैलसिंग, गहि भावलिंग वर।
तप तुरंग चढि समा रंगरचि, करम जंग करि।

अरि झट झट मदहट करि, सटसट चौपट किय।
करि अट्ट नट्ट भव कट्ट दहि, सटसट सिय सट्ट लिय। इत्यादि

विचारक गण! विचारिये कैसी अनुपम कविता है। इसके रस वैराग्यके चढ़ावको देखिये तथा जैनेतर नागरी काव्य पुंजमेंसे शायद ही इस ढंगकी उत्तम कविता मिले। ऐसी कविताओंके पुंजका पुंज इनके काव्योंमें पाया जाता है।

अब हम आपको कविवर भगवानदासजीका भी परिचय देंगे। आपका वृहद्ग्रंथ समुच्चय हिन्दी जैन काव्योंमें पाया जाता है। आपकी कविताकी यादें हम यहां पर दें तो ठीक होगा! विचारशीलविद्वद्गुत्तम! प्रायः कवि केशवदासको प्रायः सब हिन्दी संसार जानता होगा। कवि केशवने अपना "रसिकप्रिया" नामक काव्य बनाकर समालोचनार्थ कविवर विद्वच्छिरोमणि भगवानदासजीके समीप भेजा। कविवर, भगवानदासजीने १ पद्य इसकी समालोचनामें भेजा। वह पद्य आपलोगोंके लिये दिया जाता है जिससे कि आपकी उत्तम कविताका पता लगेगा।

बड़ी नीति लघु नीति करत वहै, वाप सरित वद वोप भरी।
फोज आदि फुनगुणीमंडित, सकलदेह मनुरोग दरी।
शोणित हाड़ मांस मय मूरति, तापर रीजत घरीय घरी।
ऐसी नारि निरपि कर केशव, रसिक प्रिया तुम कहा करी।

प्रिय पाठकवृन्द! देखिये कैसी उत्तम कविता तथा अर्थ (केशवने रसिकप्रिया एक स्त्रीपर मोहित रची थी) स्फुट है। वास्तवमें हमने जितना भी संस्कृत साहित्यकी तरह हिन्दी जैन काव्यको देखा है, कहीं भी शृंगार रसकी प्रधानता नहीं देखी। अक्सर जैनेतर हिन्दी काव्य शृंगाररसमय ही होते हैं। कृष्णजीकी स्तुति भी राधाके कटाक्ष, गोपियोंकी आसक्ता तथा नीच भावोंसे भरी हुई होती है लेकिन जैन काव्यकुंजमें कहीं भी शृंगार मय कविताका आविर्भाव नहीं पाया जाता है। अतः यह बात बिल्कुल अक्षरशः सत्य है कि जैन काव्योंके निर्माणमें श्रीयुत भूधरदासजी, दौलतरामजी, बनारसीदासजी, श्री वृन्दावनदासजी आदि कविश्रेष्ठोंने शृंगार रसकी निंदा करते हुए वैराग्यामृतहीको रचा है जिसको पढ़कर हिन्दीके विद्वान् प्रतिदिन वैराग्य नदीमें सानंद गोते लगाते रहते हैं तथा केशवादि द्वारा रचे हुए, अजैन काव्योंमें वैराग्यका नाम तक नहीं पाया जाता। बल्कि इन लोगोंके काव्यपुंज भारतवर्षकी अवनतिमें ही प्रधान कारण हुए हैं।

मान्यवर पाठक! अब हम आपको कविश्रेष्ठ बनारसीजीकी कवितामृत पान कराते हैं—

"गुणविचार श्रृंगार वीर उद्दिम उदाररुख ।
करुणा सम रस रीति, हाँस हिरदै उछाह सुख ॥
अष्ट कर्मदल मलन, रुद्र वरते तिहि थानक ।
तन विलेच्छ बीभत्स, द्वन्द्व दुख दशा भयानक ।
अद्भुत अनंत बल चिंतवन, शांत सहज वैराग ध्रुव ।
नवरस विलास परकाश तब, जब सुबोध प्रगट हुव ।

पाठक, जिस तरह जैनेतर कवि श्रृंगाररस विषय पर ही कविता रचकर सुकवि बननेका दावा करते हैं। किन्तु हमारे कविश्रेष्ठ श्रीयुत बनारसीदासजीने उपर्युक्त पद्यमें आत्मामें ही नवरस अति सुंदर रीत्या घटित किये हैं। पर ब्रह्मात्माका यह नवरस युक्त अपूर्व चितवन अविद्वानोंको अभूतपूर्व आनन्दमय बनाता है।

ऐसी जैन कवियोंकी अनुपम सुन्दर कविता रचना अनेक काव्योंमें मिल सकती है। हम इन्हीं कविश्रेष्ठकी कविता ऐसी पेश करते हैं कि समस्त हिन्दी संसारमें इस ढँगकी कविता नहीं मिलेगी।

भगवान पार्श्वनाथ और सुपार्श्वनाथकी स्तुतिमें आपका

(सर्वहस्वाक्षर) मनहरण

करम भरम जग तिमिर हरन खग ।
उरगल खन पग शिव मग दरसि ।
निरखत नयन भविक जल वरपत ।
हरपत अमित भविक जन सरसि ॥ १ ॥
मदन कदन जित परम धरम हित ।
सुमिरत भगत भगन सब डरसि ।
सजल जलद तन मुकुट सपत फन ।
कमठ दलन जिन नमत घनरसि ॥ २ ॥

(सर्व ह्रस्वकारान्त) छप्पय

सकल करम खल दलन कमठ शठ पवन कनक नग ।
धवल परम पद रमन, जगत जन अमल कमल खग ।
परमत जलधर पवन, सजल घन समतन समकर ।
पर अघ रज हर जलद, सकल जननत भव भय हर ॥
यम दलन नरक पद छयकरन, अगम अतट भव जल तरन ।
वर सबल मदन वन हरद हन, जय जय परम अभय करन ॥१॥

प्रिय पाठकवृन्द, विचारिये कैसी उत्तमतम कविता है। क्या ही पदलालित्य अर्थगांभीर्यमय एवं च अलंकारोंसे सुसज्जित है। इन कवीश्वर श्रीयुत बनारसीदासजीद्वारा जैन काव्यपुंज बहुलतासे रचा गया है। इन कविवरकी कविता देखकर श्रीयुत रामायण लेखक गोस्वामी तुलसीदासजी भी इनपर अत्यंत, प्रेम, श्रद्धा करनेलगे थे। एक दफे गोस्वामी तुलसीदासजीने अपनी "रामायण" की समालोचनाके बारेमें पूछा तब पूज्य कविवरजीने उत्तर दिया।

राग सारंगवृन्दावनी।

विराजै रामायण घट माँहि, मरमी होय मरम सो जानै।
मूरख मानैं नाहिं विराजै, रामायण घट माँहि॥ १॥
आतमराम ज्ञान गुन लछमन, सीता सुमति समेत।
शुभपयोग वा नर दल मंडित, वर विवेक रण खेत, विराजै०॥२॥
ध्यान धनुष टंकार शोर सुनि, गई विषयदति भाग।
भई भस्म मिथ्यामत लंका, उठी धारणा आग, विराजै०॥ ३॥
जरै अज्ञान भाव राक्षसकुल, लरे निकांछित सूर।
जूझे रागद्वेष सेनापति, संसै गढ़ चकचूर, विराजै०॥ ४॥
विलखत कूंभकरण भव विभ्रम, पुलकित मन दरयाव।
थाकित उदार वीर महिरावण, सेतुबंध समभाव, विराजै०
मूर्छित मंदोदरी दुराशा, सजग चरन हनुमान।
घटी चतुर्गति परणति सेना, छुटे छपक गुण बान, विराजै०॥६॥
निरखि सकति गुन चक्रसुदर्शन, उदय विभीषण दीन।
फिरै कबंध मही रावणकी, प्राणभाव शिरहीन, विराजै०॥ ७॥
इह विधि सकल साधुघट अंतर, होय सहज संग्राम।
यह व्यवहार दृष्टि रामायण, केवल निश्चय राम, विराजै०॥

तुलसीदास इस अनुपम आध्यात्मिक चातुर्यको देखकर अत्यंत प्रसन्न हुये और अपनी कविताको "किसी भी लायक भी नहीं" यह कहकर कविवरजीकी भक्तिसे "**भक्ति विरदावली**" नामक सुन्दर कविता (पार्श्वनाथ स्तोत्र) प्रदान की। वास्तवमें इन कविवरकी जितनी भी कविता कुसुम वाटिका है वह सब आध्यात्मिक गंधसे सुगंधित है। आपका बनाया हुआ "**समयसार**" कैसी सुंदर कविताओं आध्यात्मिक रससे भरा हुआ है इसके लिये हम आप लोगोंको एक पद्य भेंट करते हैं—

राम रसिक अरु रामरस, कहन सुननको दोय ।
जब समाधि परगट भई, तब दुविधा नहिं कोय ॥
नंदन वंदन श्रुति करन, श्रवण चिंतवन जाप ।
पठन पठावन उपदिशन, बहुविधि क्रिया कलाप ॥
शुद्धातम अनुभव जहां, शुभाचार तिहि नांहि ।
करम करम मारग विषें, शिवमारग शिव मांहि ॥

और भी जैनसाहित्यमें अच्छे २ ग्रंथ हैं उनमें से श्रीयुत कवि वृन्दावनजीके पुत्र अजितदासने जैन रामायण जिसमें कि ७२ अध्याय हैं, रची हैं। काव्यदृष्टिसे यह भी अनुपम कविता है। इसमें तुलसीदासजीकी तरह निर्युक्त विवेचन नहीं किये गये हैं।

जैनकाव्यनिकुंजमें "बुधजनसतसई" भी बहुत उत्तम ग्रंथ है। इसकी वानगीके लिये हम नीचे लिखते हैं—

आपने पहिले १०० श्लोकोंमें जिन स्तुति की है उनके दो श्लोक यह हैं—

तीन लोकके पति प्रभु, तीन लोकके तात ।
त्रिविधि शुद्ध वन्दन करूं, त्रिविधि ताप मिट जात ।
मन मोहो मेरो प्रभु, सुन्दर रूप अपार ।
इन्द्र सारिखे थकगये, करि करि नैंन हजार ॥

आगे आकर इसी ग्रंथमें बहुत ही अच्छी २ शिक्षायें, तथा शुभ नीतियुंन हैं। जिनको पढ़कर आश्चर्य होता है।

प्रिय पाठको, अब आपका समय नहीं लेना चाहता हूं बल्कि इसी कथनको उपसंहारसे कहता हूं।

संसारमें संस्कृत काव्यसागरके समान कोई भी काव्य इस जगतमें नहीं है, तिस संस्कृत काव्यसागरसे भी जैन काव्यसागर अत्यंत विस्तीर्ण है तथा इसके अन्दर यह वह रत्न उपस्थित हैं कि यदि काव्यरसिकवृन्दोंने इसको छाना तो उन रत्नोंको प्राप्त होगी, जो कि जैनियोंके लिये ही वे भूषण नहीं होंगे बल्कि इस ३० कोटि जनसंख्यावाले भारतवर्षके लिये अनुपम प्रदर्शनीयका स्थान पावेंगे। तथा जैन हिन्दीकाव्यपुंज भी हिन्दी काव्यनिकुंजमें अनुपम, वैराग्यके रससे अमृतको पिलाता हुआ, दीन हीन भारतके रक्षक असहयोगकी जान अहिंसाके सूक्ष्म तत्त्वोंकी शिक्षा देकर इतिहासमें अपना सर्वोपरि नाम लिखा सकता है। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः

भवच्चरणाम्बुजमधुप ।

स्वतंत्र्योत्सुक—पन्नालाल स्याद्वादी, शास्त्रोद्धारक, मोरेना (ग्वालियर)

उपवास-महिमा ।

पाठक ! चंचल चित्त सँभालो—करो दूर अविवेक ।
स्वास्थ्य सर्वदा जीवन—जीवन संयम सिद्ध—विवेक ॥
गाँठमें बाँधो मंत्र महान्—करो उपवास—बनो बलवान् !

काम-अर्थ पुन धर्म—मोक्षकी, सिद्धि स्वास्थ्यके हाथ ।
कभी न स्वास्थ्य रहेगा निश्चल, यदि उपवास न साथ ॥
सुनो यह आयुर्वेदिक गान—करो उपवास—बनो बलवान् !

खाना पीना मौज उड़ाना, यही नहीं है कर्म ।
कुछ तो शर्म शेष ही रहती, कुछ तो रहता धर्म ॥
मानवी जीवन दुर्लभ जान—करो उपवास—बनो बलवान् !

आधा पेट कीजिये भोजन, सो भी सादा पुष्ट ।
आधा भरो पवन पानीसे, हटे अजीरण दुष्ट ॥
बना जो आज मसाले खान—करो उपवास—बनो बलवान् !

प्रति हफ्तेमें एक दिवस तो अवश करो उपवास ।
पावक-यंत्र थकावट खोवें मलका होये खलास ॥
क्षुधाका होवे सच्चा ज्ञान—करो उपवास—बनो बलवान् !

मन मलीन त्यों विकसित होवे, कर निज हलका भार ।
भरा हुआ 'एकाग्र' तत्वमें, जग—जीवनका सार ॥
कि जिससे दृढ़ हो जाता ध्यान ! करो उपवास-बनो बलवान् !

क्रोध दूर होजाता बिल्कुल, आजाती है शान्ति ।
और दीख जाती है सचमुच, वह अभिमानी भ्रान्ति ॥
कि जिससे दूर हुआ कल्यान ! करो उपवास-बनो बलवान् !

भूखोंके प्रति दया उमड़ती, रहे दानका ख्याल ।
देकर ही लेना होता है, यों हल हुआ सवाल ॥
शीघ्र ही बन जाओ धनवान् ! करो उपवास—बनो बलवान् !

हिंसा—वृत्ति दूर हो इससे, ऐसा सरल उपाय ।

दिखलाना विज्ञान विश्वका, ईश्वर भी दिखलाय ॥
गृहस्थोंको ये योग समान–करो उपवास–बनो बलवान् !
दुख पाते यदि नित रोगोंसे, लगता जीवन भार ।
पड़े हुए हैं कार्य अधूरे, तो इस ओर निहार ॥
शास्त्रकी बात लीजिये मान ! करो उपवास-बनो बलवान् !
निज नारीके सिवा, सभीको देखो मात समान ।
बन गार्हस्थ्य–ब्रह्मचारी यों, चमकाओ निज शान ॥
मित्र ! पुन बनिये निष्ठावान्–करो उपवास–बनो बलवान् !
शक्तिहीन क्या कर सकते हैं, कोई यशके कार्य ?
शक्तिहीन कब कहला सकते, जीवित मानुष आर्य ?
क्रिया यह सचमुच शक्ति-निधान–करो उपवास-बनो बलवान् !
" वैद्य "] [नयन ।

स्वार्थीयतापर दो मित्रोंकी वार्तालाप-

(ले० दीपचन्द पांड्या–छिंदवाडा)

ज्ञानचंद–कहो भाई प्रेमचंद कुशल तो हो ?

प्रेमचंद–जी हां ! मित्र कुशल हूं ।

ज्ञान–और आपका भतीजा भाई ?

प्रेम–जी हां, मित्र वह भी कुशल है परन्तु...

ज्ञान–रुकर, क्यों ? मित्र आगे तो कहो ?

प्रेम–क्या कहूं मित्र जमानेकी खूबी, उसकी इच्छा तो बहुत कुछ विद्याध्ययन करनेकी है परन्तु उसके कर्म बड़े अभागी हैं ।

ज्ञान–कैसे ?

प्रेम–आजकलकी सामाजिक रीतिके अनुसार उसके स्वार्थीयताकी हद तक ही पढ़ानेकी है ।

ज्ञान–स्वार्थीयताकी हद याने क्या ?

प्रेम–व्यापार !

ज्ञान–व्यापार तो थोडीसी मात्र भाषा और गणितके जानने से ही आ जाता है ।

प्रेम–बस ? वहीं तक हद भी हो चुकी !

ज्ञान–तो फिर भाई ऐसी अधूरी शिक्षासे क्या होता है ?

प्रेम–ऐसी शिक्षासे मनुष्य किसी हालतमें भी मनुष्यताको प्राप्त नहीं कर सकता ।

ज्ञान–यदि वह व्यापारिक शिक्षा ले ,परिपूर्ण हुआ तो ठीक ! अगर नहीं हुआ तो ?

प्रेम–ऐसी हालतमें एक पिशाच (स्वार्थरूपी-भूत) सवार हो जायगा, उसे कई प्रकारके कटुवचन सुनने पड़ेंगे ।

ज्ञान–ये कैसे वचन ?

प्रेम–आजकलके सामाजिक रीतरिवाजके अनुसार याने पढ मूर्ख, हमारे मासे निकल जा, कहां वहांसे हमारे यहां पैदा हुवा, जो तू अपना भी पेट नहीं

मर सकता तो फिर हमारा कहांसे मर सकेगा इत्यादि।

ज्ञान–तो फिर ऐसी बातोंसे उसपर क्या असर पड़ेगा?

प्रेम–भाई ऐसी बातोंसे वह अपने तकदिरकी परीक्षाके लिये विदेशोंमें चला जावेगा।

ज्ञान–तो आश्चर्य है! उसके पिताके पत्थर समान कठोर दिलको जो स्वार्थका गुलाम बनकर निज पुत्रको अपनेसे सदैवके लिये छोडता है।

प्रेम–भाई साहेब, आजकालके जमानेकी ऐसी ही खूबी है।

ज्ञान–भाई प्रेम देखो! जिसपुत्रको बडे प्रेमसे पालनपोषण किया और आज उसीकी साथ यह अत्याचार; आश्चर्य है। निर्दयी 'स्वार्थ' जरा भी तुझे दया नहीं।

प्रेम–भाई दया कहेंसे, यह (स्वार्थ) जिसके हृदयमें बास करता है उसे निर्दया कठोर परिणामी बना देता है।

ज्ञान–भाई प्रेम–क्या यह मातापिताका धर्म है और कर्तव्य है कि वह अपने प्यारेसे प्यारे पुत्रको घरसे निकाल दें।

प्रेम–किंतु भाई यह सब इसी (स्वार्थ)की करामात और लीला है।

ज्ञान–बहुतसे पुत्र अपने माता पिताकी बदौलत बाल्यावस्थामें विवाहके जालमें फंस जाते हैं और अपने भाग्यकी परीक्षा अपने मां बापके मर जाने पर किया करते हैं।

प्रेम–मित्र सच है! कि छोटी अवस्थामें बालकोंकी शादी कर देनेसे उनका कच्चा वीर्यपात हो जाता है जिससे वे बुद्धि हीन, बलहीन तथा निकम्मे होकर थोड़े ही दिनोंमें अपने भाग्यके परीक्षक बन जाते हैं।

ज्ञान–भाई प्रेम, जिन बालकोंका विवाह बाल्यावस्थामें हो जाता है उनके द्वारा सन्तानोत्पत्तिकी क्या आशा है?

प्रेम–जिस तरह खाद रहित खेतसे धान्य उत्पन्न होनेकी आशा नहीं की जा सकती उसी प्रकार उनसे भी नहीं।

ज्ञान–यदि किसी प्रकार संतानोत्पत्ति हो भी जाय तो?

प्रेम–वह सन्तान बहुत कमजोर और रोगी होगी इसलिये वह ज्यादा दिन न जी सकेगी और माबापके भी अधिक दिन जीनेमें शंका ही है।

ज्ञान–तब तो भाई प्रेम, मुझे बालविवाहमें अनेक दोष मालूम पडते हैं।

प्रेम–इस बातको सत्य माननेमें कसर ही क्या है?

ज्ञान–इतने पर भी मातापिता अपनी सन्तानकी शादी छोटी अवस्थामें कर देते हैं इसका भी कोई कारण जरूर होगा?

प्रेम–भाई मुझे तो एक मात्र यही कारण मालूम होता है कि, जिन्होंने (स्वार्थ रूपी अमृत पिया है) वे यह समझते हैं कि शायद अगर हम मरजाये तो हमारी सन्तानकी शादी विवाह कौन

करेगा ?

ज्ञान–इसके सिवाय और भी कोई कारण है क्या ?

प्रेम–ज्ञान, मुझे एक कारण और भी मालूम पड़ता है कि कई लोग अपने सामने पुत्रकी बाल लीला वो छोटीसी बहूकी घरमें छम २ छम आवाजमें ही आनंद मानते हैं यही दो खास कारण हैं।

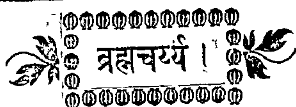
ज्ञान–अच्छा भाई प्रेम, अब मुझे आजकलकी सामाजिक रीति रिवाजका पूरा-२ परिचय मिल गया।

प्रेम–अजी मित्र, इतनी ही नहीं, इसके सिवाय और भी कई कुरीतियां, वृद्ध विवाह, अनमेल विवाह आदि समाजमें हैं।

ज्ञान–अच्छा मित्र, अब समय बहुत हो चुका, दीवाली पर मिलेंगे।

प्रेम–बहुत ठीक मित्र ! जयजिनेंद्र।

लेखक-दीपचंद पांड्या–छिंदवाड़ा।



ब्रह्मचर्य।

ऐसा कोई विषय नहीं है कि जिसपर हमारे साहित्य (प्राचीन साहित्य) ने प्रकाश न डाला हो। परन्तु प्रत्येक विषयका संगठन, समयानुकूल–अवस्थाके आधार पर हुवा करता है। सिद्धांत मूलक युक्तियोंमें नवीनता नहीं आसकती है तो न सही, समय और अवस्थाकी आवश्यकताओंका रूप तो आधुनिक भाषा द्वारा व्यक्त किया जासकता है। आधुनिक साहित्यका यही काम है कि वह प्रत्येक विषय पर प्राचीन साहित्यको मननकर मौलिकता पूर्णभावसे लेखनी उठवानेका प्रयत्न करे। नहीं तो वर्त्तमान साहित्य, अनुवाद, अनुकरण, पुनरुक्ति और दुरुक्तिके सिवाय और कुछ न होगा। पुरानी बातोंकी नवयुवकगण किस्से, कहानियोंकी तरह मनोरंजकतासे सुन सकते हैं। किन्तु ऐसा कार्य नहीं कर सकते हैं। क्योंकि न तो वैसे लेखोंमें समयानुसार क्रियात्मक सुविधायें ही होती हैं और न वर्तमान कालीन दृश्य होते हैं कि जिनको देखकर लोग उत्साहित हों और उन शिक्षाओंको बिना कार्यमें परिणत किये, चुपचाप रह ही न सकें। लेखकका काम है कि वह ऐसा प्रभाव डाले कि जिससे पाठक अस्थिर और अधीर होजावें। वर्तमान समयमें लेख लिखे जाते हैं, परन्तु उनका प्रभाव आवश्यकतानुसार इसी लिए नहीं पड़ता है कि वे इधरउधरकी निःसार बातोंसे पूर्ण होते हैं।

ब्रह्मचर्यके विषयमें "मौलिकता" की बात कह कर हम खुद गलती करनेपर विवश हुए हैं। परन्तु इस विषय पर हम स्वतंत्रता पूर्वक विचार करना चाहते हैं और संभव है कि प्राचीन मत पर कहीं २ आक्षेप आजावें! इसी कारण हमने निवेदन किया है कि प्रत्येक विषय पर अर्वाचीन दृष्टिसे आन्दोलन करना आधुनिक साहित्यका प्रधान कर्तव्य है और सत्यासत्यका निर्णय करते हुए कर्तव्य पालन करना हमारा काम है और यही साहित्य नाम है कि जिसके लिए लिखने और पढ़नेकी सृष्टि हुई है।

प्राय ब्रह्मचर्यकी परिभाषा सभीको अवगत है। वीर्यकी रक्षा करना ही ब्रह्मचर्य कहलाता है। किन २ क्रियाओं द्वारा ब्रह्मचर्य सुरक्षित रक्खा जासकता है यह बातें ब्रह्मचर्यके विषयमें कर्तव्यपथ प्रदर्शक हैं।

परन्तु ब्रह्मचर्यका साहित्य सबके लिए एक ही प्रकारका नहीं होसकता है। यदि सब लोग ब्रह्मचारी हो जावेंगे तो संसार उजड़ जायगा। यदि कहाजाय कि बाल्यावस्थामें सबको ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहिए तो क्या गृहस्थों और संन्यासियोंको ब्रह्मचर्यकी आवश्यकता नहीं है?

हम ब्रह्मचर्यकी परिभाषा नवीन ढंगसे करना चाहते हैं। ब्रह्मचर्यका अर्थ उस उपासनासे है कि जिसकी शक्ति प्रत्येक जीवको अपनी सत्ता स्थिर करा सकती है। अर्थात ब्रह्मचर्य एक ऐसा आधार है कि जिसके सहारे ही से जीवन व्यतीत किया जासकता है। संसारमें आत्मिक उन्नति ही जीवनका उद्देश्य है। बाल्यकालकी विद्या, गार्हस्थकी सफलता और संन्यासकी रक्षा जीवकी उन्नतिके लिए ही आवश्यक है। पापोंसे दूर रहनेकी यही आवश्यकता है। वैसा करनेसे कोई सुख नहीं मिलता है और नैतिक ह्रास होता है। अज्ञानकी इसी लिए बुराई की जाती है कि वह व्यर्थ हम लोगोंको इधर उधर भटकाता हुआ ठोकरें खिलाता है। कमजोरीको हीन समझनेका यही कारण है कि उससे कोई कार्य सम्पन्न नहीं होता। साहस, दृढ़ता और संयमके लिये हमारा चित्त इसलिये लालायित रहा करता है कि उससे स्वाभाविक उन्नति होती है। अतएव यदि ऐसे स्थान पर रहना हो कि जहा अच्छाई और बुराई दोनों हों तो एक ऐसी शक्ति चाहिये कि जो अच्छाइयोंको ग्रहण करावे और बुराइयोंसे घृणा उत्पन्न कराती हुई उनको दूर हटावे। विचार पूर्वक देखनेसे मालूम होगा कि यह गुण सिवाय ब्रह्मचर्यके और कहीं नहीं है। ऐसी अवस्थामें यदि कहा जाय कि ब्रह्मचर्यकी आवश्यकता केवल बाल्यकालमें ही है तो सर्वथा अनुचित होगा। ब्रह्मचर्यका दूसरा नाम जीवरक्षक दैवीशक्ति भी रक्खा जासकता है। इस शक्तिकी आवश्यकता विद्यार्थीको भी है, गृहस्थको भी है, सन्यासीको भी है और स्त्रियोंको भी है। कुमारी कन्याके लिये भी वह प्रयोजनीय है और विधवाके लिये भी आवश्यक है। एक शब्दमें जो शक्ति जीव मात्रका जीवन आधार है वह किसीसे किसी अवस्थामें भी दूर न होनी चाहिये। जिस समय ब्रह्मचर्य पूरा होगा उसी समय घोर ह्रास हो जायगा। समाजकी शृंखला, उपदेशोंका महत्व,

चरित्र गठन और मानसिक विकारोंमें शक्तिकी ज्योति जगमगा रही है। उसके विना यह सब अङ्ग भंग और अप्राकृतिक एवं विपरीत हो जावेंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं।

वीर्यकी रक्षा करना ही ब्रह्मचर्य कहलाता है किन्तु जो गृहस्थ पुरुष वीर्यकी रक्षा नहीं करता है और यदि वह ब्रह्मचारी रहेगा तो क्या जीवित ही नहीं रहेगा? हजारों लाखों गृहस्थ पूर्ण ब्रह्मचारी होगये हैं। इस पर आश्चर्य करनेकी कोई बात नहीं है। प्राचीन ग्रन्थोंमें इसके बहुतेरे प्रमाण मिलते हैं। अब भी हजारों गृहस्थ एक पत्नीव्रतके धारक पाये जाते हैं। परन्तु हम इनसे ही सन्तुष्ट नहीं होसकते हैं। हमारे पूर्वजोंने इस व्यापक ब्रह्मचर्यके विषयको संकुचित करके थोड़ी सी भूल की है।

संसारमें उत्पन्न होकर जीव नानाप्रकारकी अवस्थाओंमें होकर जीवन व्यतीत करता है। उसकी शारीरिक इन्द्रियां और मानसिक इन्द्रियां भी उन्हीं अवस्थाओंके अनुकूल रूप धारण किया करती हैं। साथ ही, समस्त शक्तियोंकी विविध अवस्थाओंमें विविध भांतिसे सहायता देती हुई जीवकी सहायक रहा करती हैं। बाल्यकालमें विद्याध्ययनके लिये हम लोग विद्यार्थी कहलाते हैं। विवाह होजाने पर और नौकरी करनेपर क्या विद्यार्थी नहीं रहते हैं? हम लोग किस समय विद्यार्थी नहीं रहते हैं? यदि नहीं रहते हैं तो बाबाद होते हैं। यदि रहते हैं तो विद्यार्थीका रूप बदल कर भी विद्यार्थी ही होते हैं। गृहस्थी अवस्थामें और नौकरीकी अवस्थामें जो भेद है वह भेद विद्यार्थी भावको अवस्थाके अनुसार केवल बदल देता है—निर्मूल नहीं करता है। निर्मूल होनेसे अवश्य ही हानि होगी। बाल्यकालमें जब लड़के भूलते हैं तो अध्यापकका तमांचा खाते हैं? पढ़नेके बाद जब हम लोग "स्वतंत्र" हो जाते हैं और उस समय जब कोई भूल करते हैं तो क्या दण्ड नहीं पाते हैं? शारीरिक भूल करनेपर पश्चात्ताप, अपमान, क्षोभ, दुःख, चिन्ता और व्याकुलता आदिके मानसिक "तमाचे" झेला करते हैं। अस्तु, दण्ड सभी पाते हैं परन्तु अवस्थाके अनुसार दण्डविधि अन्य रूप धारण कर लिया करती है। अब यह सिद्धांत प्रमाणित होकर मान्य होगया होगा कि समस्त अच्छी और बुरी शक्तियाँ सर्वदा जीवके साथ रहा करती हैं और विविध नामोंसे व्यक्त हुआ करती हैं। इसी तरहसे जीवनका आधार ब्रह्मचर्य सबके लिए अनिवार्य है। परन्तु अवस्थाके अनुसार उसके कई भेद होते हैं। उन भेदोंकी परिभाषाएं भी पृथक् २ हैं। जो आदमी जिस अवस्थामें हो वह उस अवस्थाका ब्रह्मचर्य धर्म पालन करे। यदि उसमें त्रुटि होगी तो उसका दण्ड मिलेगा। नीचे अवस्थानुसार ब्रह्मचर्यके भेदों पर विचार किया जाता है।

किसी पण्डितने एक छुपे हुए स्थान पर एक ऐसा सफेद झूठ लिख मारा है कि जिससे कितने ही भोले भाले पाठक बहक गये। लिखा है कि कलियुगमें मनका पाप नहीं होता है। लेखककी समझमें मनके साथ शरीरका क्रियात्मक सम्बन्ध नहीं है। इसीसे उसने ऐसा लिख मारा है।

इस आज्ञाके अनुसार एक ब्रह्मचारी विद्यार्थी, सडकों पर निकलने वाली स्त्रियोंके साथ मानसिक व्यभिचार कर सकता है? मान लो कि करसकता है—मन पर कोई कानूनी कार्रवाई नहीं की जासकती। परन्तु इससे उन स्त्रियोंका तो कुछ बिगडता नहीं है किन्तु, इन जहर मिले मनके लड्डुओंसे कुछ दिन बाद उस ब्रह्मचारीका घोर पतन होजाता है, यदि उसे यह मालूम होता कि इन प्रकारकी मानसिक कल्पनाएं अपना प्रभाव बिना दिखलाये कभी न चुप रहेंगी तो वह बेचारा व्यर्थ अपने पैरमें कुल्हाडी न मारता। इस बातकी आडमें जो घोर और मलीन स्वार्थ छिपा बैठा है उस पर विचार करनेसे लेखकके ऊपर बेतरह क्रोध आता है।

वास्तवमें, क्या कलियुगमें और क्या सतयुगमें क्या प्रात और क्या सायंकाल सर्वदा जीवकी स्थिति मानसिक विचारोंके अनुसार रहती है। अपने विचारों पर विचार करके हरएक आदमी जानसकता है कि वह कैसा है। यह भी आजमाया जासकता है कि मानसिक कुविचारोंमें प्रभाव होता है या नहीं। हमने इस सिद्धातको स्वयं आजमाया है। एक प्रकारके विचारसे हम कुछ दिनोंतक मानसिक चिन्तामें कैसे फंसे रहे। जिस तरह हमारे ऊपर अच्छे विचारोंके साकार प्रभाव पडे उसी तरहसे उस बुरे विचारका भी प्रभाव पड़ा और ऐसा पड़ा कि त्राहि त्राहि। अतएव हमें अच्छी तरह मालूम होगा कि मानसिक अवस्था ही हमारी सच्ची अवस्था है।

बाल्यकालका ब्रह्मचर्य्य आदि और प्रारम्भिक होनेसे कठिन व्रत है। बालक नहीं जानता है कि प्रसङ्गमें क्या सुख और क्या दुःख है। परन्तु वह सुन्दरताको देखकर यह ख्याल कर सकता है कि सुन्दरीका साथ अवश्य अपूर्व आनन्ददायक होगा। यही उसकी आदि अवस्था है। वीर्य्यकी प्रारम्भिक अवस्था जो एक तरहका जोश उत्पन्न करती है उससे कठिनता मालूम होती है। यदि किसी बालकने बीस अथवा पच्चीस वर्ष तक ब्रह्मचर्य्य धारण किया है परन्तु बीच २ में उसे प्रसंगकी बलवती इच्छा हुई है और जब कभी स्वप्न भी हुए हैं तो वह निकृष्ट ब्रह्मचारी है और इसी सिद्धांत पर विचार करनेसे गुरुकुलोंकी सृष्टि की गई। बाल्यकालका ब्रह्मचर्य बिलकुल निर्दोष होना चाहिए। शारीरिक ब्रह्मचर्यके साथ मानसिक ब्रह्मचर्य भी आवश्यक है। बाल-ब्रह्मचारीको खाना पीना खूब सोच समझ कर देना चाहिए। पुस्तकावलोकनमें सचेत होना चाहिए। जो बालक 'प्रसंग' विषयसे अनजान रहेगा यही पूर्ण ब्रह्मचारी कहा जायगा।

विवाहके उपरांत नवयुवक स्त्री-प्रसंगका विषय स्वयम् अनुभव करता है। जवानीकी नई उमङ्ग प्रसङ्गको आनन्ददायक बतलाती है। उस समय अपनी स्त्री पर स्नेह किया जासकता है। परन्तु, इधर उधर कुदृष्टि डालना या उसका विचार भी करना व्यभिचार है और उससे शक्ति नष्ट होती है। पत्नीव्रत मनुष्य भी वीर्यपात करता है और व्यभिचारी मनुष्य भी वैसा ही करता है। यदि दोनों आदमी परिमितरूपसे समान भावसे वीर्य्यपात करें तो भी

व्यभिचारी मनुष्य अधिक निर्बल होजायगा। फलत: एक पत्नीव्रत युवक मनसा और कर्मणासे वीर्यपात करता हुआ भी ब्रह्मचारी है। गृहस्थको सन्तानकी इच्छासे प्रसंग करना इसी कारण बतलाया गया है। प्रसंग करना कोई लाभदायक बात नहीं है। किन्तु पत्नी पाकर मनुष्यका प्रसंग करना धर्म है—पाप नहीं है। अर्थात्—एक कर्त्तव्यके पीछे ब्रह्मचर्य उसी भांति स्पष्ट विराजमान है कि जिस प्रकार स्कूल छोड़नेके बाद 'विद्यार्थित्व'। अब आप ही कहें कि क्या गृहस्थी ब्रह्मचारी नहीं है? यहां पर ब्रह्मचर्यकी परिभाषा दूसरी है और बाल्यकालमें दूसरी थी।

बहुतसे वृद्ध प्रसंगशक्ति हीन होजाने पर भी मोहें मटकाया करते हैं। बिना कारण, बिना आवश्यकताके उनका यह निष्प्रयोजनीय और निंदनीय कर्म्म ब्रह्मचर्य नाशक है।

वह साधु भी ब्रह्मचारी नहीं है कि जो शरीर और मन पर पूरा कब्जा नहीं रखता और वीर्यको भांग आदि मादक द्रव्योंसे जलाता है।

वह विधवा भी व्यभिचारीणी है कि जो जान बूझकर मन ही मन प्रसंगकी लालसा रखती है। और वह व्यभिचार, कायिक व्यभिचारके समान इस कारण है कि उससे कायिक व्यभिचार होजायगा। यदि न हो तो सतीत्वकी प्रबल शक्ति अवश्य मन्द होजावगी। कायिक व्यभिचार अधिक हानिकारक है और मानसिक उससे कम। परन्तु हैं दोनों व्यभिचार ही। हां—सुबहका भूला शामको ठीक होजाय तो वह भूला नहीं कहलाता है—यह बात ठीक है। मानवी निर्बलताओंका खयाल रखना ही होगा।

जो कामलिप्त नहीं है—जिसको वीर्य बहाना पसंद नहीं है जो साधना सहित इच्छाशक्तिको ब्रह्मचारिणी बनाये हैं—वह पूर्ण ब्रह्मचारी है।

अब इस लेखके उपसंहारमें ब्रह्मचर्यकी महिमा पर स्वतंत्र विचार प्रकट किये जाते हैं।

वास्तवमें ब्रह्मचर्य एक आध्यात्मिक विषय है। संसारी लोगोंकी दृष्टि उस पर नहीं पड़ती है—तो यह आश्चर्यकी बात नहीं है। जो लोग भावुक हैं, जो अपनी कोई विशेष सत्ता रखते, जो भक्त और श्रद्धालु हैं, जिन लोगोंके द्वारा कोई विशेष कार्य होनेवाला होता है, जो कवि हैं, जिनकी मति संस्कारोंके कारण शुद्ध और सात्विकी होगई है वही ब्रह्मचर्यको पहिचान सकते हैं। क्योंकि संसारमें एक यही शक्ति नावके स्वरूप है जो यात्रीको कुशलता पूर्वक 'उस पार पहुँचा देती है और मार्ग' के नानाप्रकारके प्रलोभन रूपी भंवरोंसे साफ निकाल लेती है। कमलके पत्तेकी तरह वर्षाके समय भी पानीसे बिना भीगा ही बचा रखने वाली यह दैवी शक्ति है और आश्चर्य जनक सफलताओंकी सिद्धि देनेवाला यह अमोघ मंत्र है। अधिकारीके लिये ब्रह्मचर्यका पालन स्वाभाविकताके कारण सरल है और इधर उधरके भटके पुरुषोंके लिए पहाड़ पर चढ़नेके बराबर कठिन है। ऐसे ही लोग साश्चर्य पूछते हैं—"क्या वह पूर्ण ब्रह्मचारी था"? उनको यह बात कुछ असम्भवसी दीखती है।

ब्रह्मचर्यके विषय पर व्याख्यान देनेवाले और लेख लिखनेवाले उसके सम्बन्धमें ऐसा भी कह-

जाते हैं कि देखो अतीतकालमें ब्रह्मचर्यके कारण ही भीमसेन इतने बलवान् हुए, परशुराम इतने तेजस्वी हुए, भीष्मजी ऐसे महात्मा हुए, स्वामी शंकराचार्य ऐसे प्रचारक हुए, मह‍ीर स्वामी ऐसे सच्चे उपदेशक हुए और स्वामी दयानन्दजी ऐसे परिवर्तक हुए। यह सब बातें किसी अंशमें ठीक हैं। पर ब्रह्मचर्यके बल ही यह सब नहीं हुआ। और न ब्रह्मचर्यके कारण प्रो० राममूर्ति प्रसिद्ध हुए। ब्रह्मचर्य एक आवश्यक और अनिवार्य आधार है। उसपर बिना खड़े हुए तो कोई काम नहीं हो सकता। परन्तु केवल उसीसे कुछ नहीं हो सकता है। वह "योग्यता" है–उसे अधिकसे अधिक 'अधिकार' समझना होगा। ब्रह्मचर्य शिक्षाकी तरह विविध ज्ञानकी पहली सीढ़ी है। उपर्युक्त स्वनामधन्य प्रातःस्मरणीय महात्माओंने, ब्रह्मचर्यके आधारपर स्थिर होकर योगसहायतासे मनमाने कर्म किये हैं। फलतः ब्रह्मचर्यके बिना इस प्रकारके कार्य होना असम्भव है। इस कारण, ब्रह्मचर्यका जितना भी पक्ष लिया जाय थोड़ा है।

सन्तानोत्पत्तिकी अवस्थाके सिवा अन्य समस्त जीवनमें वीर्यकी रक्षा होना अनिवार्य है। वीर्य और ब्रह्मचर्यमें क्या अन्तर? ब्रह्मचर्य निराकार है और वीर्य साकार है। मेरी रायमें वीर्यको ब्रह्मचर्यसे पृथक मानना न चाहिए। अतएव, जिन लोगोंको प्रमेह रोग हो वे चाहे जो हों–अपनेको ब्रह्मचारी समझनेकी भूल न करें। ब्रह्मचारी पक्षीकी तरह सदा हवामें नहीं डोलता है। वह उर्वशी जैसी सुंदरीको सहज ही दूर कर सकता है। ब्रह्मचर्यमें पुरुषत्व है। यदि पूछा जाय कि संसारमें कितने पुरुष हैं तो इसका कोई लम्बा चौड़ा उत्तर न होगा।

ब्रह्मचर्य अथवा वीर्यकी 'रक्षा' कई प्रकारसे की जा सकती है।

(१) सादा भोजन करना, एक ही समय खाना, आधा पेट खाना।

(२) जलके सिवाय कोई तरल पदार्थ न पीना।

(३) मादक द्रव्योंसे बचाव रखना।

(४) अपने इष्टदेव, धर्म या ईश्वरमें पूर्ण भक्ति रखना।

(५) संसारको गुरुद्वार समझ अदबसे रहना।

(६) परमात्माको सजग समझ होशमें रहना।

(७) शृङ्गारकी कविता न पढ़ना, पुस्तक भी न पढ़ना।

(८) शृङ्गार रसका कोई चिन्ह न देखना।

(९) स्त्रियोंको माताकी दृष्टिसे देखना। इससे महाशक्ति पुत्रकी तरह रक्षा करेगी। भूलका दण्ड भयानक जानना।

(१०) मनपर कड़ी दृष्टि रखना।

(११) योगाभ्यास करते रहना।

(१२) समाजकी सेवा करना।

(१३) अभिमान आदि उत्तेजक भावोंसे दूर रहना।

(१४) प्रसन्नचित्त और आशावादी रहना।

(१५) ब्रह्मचर्यका प्रचार करना।

(अ) लेखों द्वारा (ब) व्याख्यानों द्वारा (स) गुरुकुलों द्वारा और (द) कर्म प्रदर्शन द्वारा।

(१६) स्त्रियोंको भी ब्रह्मचर्यका महत्व बतलाना। [वैद्य]

[शिवनारायण वर्मा।

ऊन्हा-आंसु

અને

मावापोनी निर्दयता।

સંસારભૂમિપર ભજવાતા નાટય પ્રયોગો-માંથી બે પ્રકારનાં તત્વ ખેંચાય છે. એક તો ધર્મ ભાવનાથી અને બીજી પાપ ભાવનાથી; આજ પ્રમાણે સંસારમાં રહીને કોઇ કુળની, સમાજની, અને દેશની સેવા બજાવી સ્વજન્મને સફળ બનાવે છે ત્યારે કેટલાક આત્માઓ અવળા-પંથને ગ્રહી પોતાની મનુષ્ય ફરજથી નિષ્ફળ થઇ સ્વ-સંસારોને માટીમાં મેળવે છે, આજે હું નાટય પ્રયોગ રૂપેજ ઊન્હાં-આંસુ સારતી દયાપાત્ર વ્યક્તિઓના આત્મ કલ્પાંતને તમારી સન્મુખ રજુ કરૂં છું તો આશા છે કે કોઇપણ ભાઇ વાંચી પોતાના સમાજમાં રહેલા અધમ રીવાજોને છિન્ન ભિન્ન કરવા પ્રયાસ કરશે અને તેથી ખરાબ રૂઢિઓને ભોગે થતાં આશાનાં વૃક્ષો ફાલી તમોને આશીર્વાદ આપશે.

બાળ વિવાહી બાલિકા.

ઉષાકાળના પવનની શીતળ લહેરીઓ વાય છે, પખીડાં કલરવ કરતાં જનસમાજને આનંદ આપે છે. પાણી ભરી આવતી પનીહારીઓ અરસપરસ આત્મ કથાઓ કહી દિલને ડોલાવી રહી છે. સૂર્યદેવ પોતાનો રથ પુર વેગથી ચલાવી રહ્યા છે, બરાબર સાડાનવ વાગી રહ્યા છે. ગ્રીષ્મ ઋતુનો સમય હોવાથી ગરમી જરૂ પડે છે. આવા સમયમાં એક સત્તર વર્ષની યુવતિ જળ ભરવાને સરિતા તરફ દોડી રહી છે. સરિતા આ સમયે સુંદર હરતી વહેતી આનંદ આપી રહીછે. પાણી ભરવાને આવેલી યુવતીએ બેડલું નીચે મુકી સરિતા દેવીની સામે નિહાળી અંતરનો એક ઉંડો નિશ્વાસ નાખી સૂર્યદેવ સન્મુખ નિહાળી બે હાથ જોડી વિનવવા લાગી.

હે સરિતા દેવી! હું તો તમારા અમાપ જળમાં આ અભાગિનીને વિશ્રાંતિ આપો તો મારૂં દુનિયાનાંપાપી કૃત્યોમાં પણ અવિચારપણાને પોષનારાનવ સમાજમાં રહેવા કરતાં તો તમારાં સહવાસે પ્રાપ્ત થતું મરણ પણ ઉત્તમ છે. છતાં પણ એ અનાથ રહેલી યૌવનભર બાળા હું મારા દિવસો કેમ કાઢું. પિતાને ઘેરજ શું મારી પૂર્ણાહુતિ છે? હે સૂર્યદેવ! તમારા પ્રબળ કિરણોનીમિશ્ર જવાળા મારા ઉપર ફેંકો કે જેથી હું બળીભસ્મ થાઉં. સખીયોના હાસ્ય વિનોદ પતિની ગતિ હોવા છતાંએ લુખ્ખા કંકરની સમા છું. એવા જીવનની હયાતિ હોય યાતો ન હોય તોએ શું? હે દેવી, દયાકર, દયાંકર. તારા પ્રેમ પ્રવાહનું એકજ મોજું લાવી મને ઘસડી જા, કે જેથી હું સુખી થઉં. તારી કૃપાથી થયેલું મૃ ઉત્તમ છે. પરંતુ આ દશામાં રહેલું જીવન વધે દુઃખકર છે. હે દેવી, લગ્ન કર્યા પછીથી ત્યાર સુધી મારી આંખોનાં નીર સુકાતાંજ નથી પુરૂષો એક સ્ત્રી મરવાથી અગર હયાતિ હો છતાંએ બીજી સાથે લગ્ન કરી શકે છે, પરંતુ અમારા માટે યોગ્ય પતિ પણ ન જોવાય, એ કેટલો જુલમ કહેવાય! ઓ માતા પિતા, જુઓ જરા, હૃદય ચીરી લગાર તો નિહાળો કે હમારો આત્મા કેટલો દીન બની રહ્યો છે. પુત્રી ચાહે તેમ રે, તેની હમને લેશ માત્ર દરકાર નથી, પરંતુ હું તો આર્યાવર્તનું સતીત્વ ગૌરવ ચાહે તેવો પતિ પણ દેવ માની હમારૂં સર્વસ્વ જે શીયળ છે, તેનું રક્ષણ પ્રાણના ભોગે પણ કરી ઉજ્જવળ બનાવીશું; પરંતુ ઓ દયાહીણ માબાપો! તમારી શી દશા? તમો તમારી હમારા પ્રત્યે એકપણ ફરજ બજાવી શકતા નથી. હમને નથી ભણાવી કે નથી કોઇ કળા (ભરવા ગુંથવાદિ) સીખવાડી કે નથી હમારા માટે યોગ્ય વરની અપેક્ષા કરી. તમે તો હમોને જન્મભરની ગુલામીજ શીખવાડી છે.

તમે તો તમોને માનપાનથી (સ્વાર્થ દોષ ના સાધીજ) ભોળાને, સહેજ ભારથી બીછાનેસ પલંગમાં સ્યાડે અને સીરો પુરી ને લાડવાનાં ભોજન આપે તેના પેરાય તેટલું જોવાં, પરંતુ

જેની સાથે મારે જીંદગીભર આંસુ ઢાળવાં પડશે તેવા પતિના સાથે લગ્ન કરતાં સહેજ પણ વિચાર કર્યો છે? હમારો તો આશીર્વાદ છે, પરંતુ દૈવ તો હમારા અવિચારી કૃત્યનો બદલો આપ્યા વિના કેમ રહેશે!

આવી રીતે મૃત્યુની ભિક્ષા માગી બાલિકા જળ ભરી ઘર તરફ વળી. વહાલા વાંચકો! વિચારો કે આ સમયે તમારા દીલમાં દયા નથી આવતી? પથ્થર સમ દીલ પીગળાવનાર ઉનાં આંસુ શું સમાજના ઉદયની નિશાની? નહિ કદાપિ નહિ.

ઘોડીયામાં હીંચતાં બાળકોના કરેલા વેવીશાળોનાં બંધન લગનથી મજબુત થાય છે, એ પછી ટુટતાંજ નથી, પછી તો દૈવ તોડે છે. વેવાઇ સારા છે, વેવાણ સારાં છે. છોકરો દીયેર જેઠ છે, એક બે ઘર પણ ગામમાં છે, કુળ સારૂં છે. માટે કન્યાનો વેવીશાળ કરીએ તો સારૂં છે. આવો શંભુ મેળો પાછો મળવો મુશ્કેલ છે, વળી પૈસાદાર છે; કોઇક સમય ભીડ પડે ભવિષ્યમાં ભિખારી થવાની આશાએ) ભીડ ભાંગશે પણ ખરા (સ્વાર્થ સર્યા પછી તો તું કોન મેરે કયા હૈ. મીયાંભાઇના ન્યાય જેવો ન્યાય થાય છે) એવું એવું તો પોતાના માટે ઘણું વિચારો કર્યા પણ કન્યાના હિતનો એક ફિકર કર્યો છે? બાળ વિવાહ થાય છે, ત્યારથી અયોગ્ય વય થતાં સુધીમાં શરીરોની કૃતિ બદલે છે એટલે કાણો થાય, કુબડો થાય, દીવાનો મૂર્ખ થાય, વ્યસની થાય કે અભણ રહે એ કરેલા વેવીશાળોથી લગ્ન કરવાંજ પડે એવા બાળ વેવીશાળથી આવાં ભયંકર પરિણામ આવે છે. કન્યાવાળાઓ ઘરને જુએ છે જ વરવાળા અધીરાઇતાં સ્વપ્નોમાં (કોણ જાણે રળશે કે નહિ) પોતાના બાળકોનાં જીવન નિર્જિવ કરી મુકે છે. એ તો ભા ઘર જોયું ને? વરને ક્યાં જોવો છે, વરકન્યા વેવીશાળ કરતી સમય તો ઉમરે સરખાં હોય છે, પરંતુ લગ્ન કરવા સમયે બેઉની વયનું અંતર મા અને દીકરાના અંતર સમાન લાગે છે, ત્યારે માબાપો મુંઝાય છે, પરંતુ કરેલા વેવીશાળો જો તજે તો અરસપરસની આબરૂ જાય, ઘર અને કુળનો સત્યાનાશ થાય, એ ભલે, પરંતુ હાડહડતી અન્યાય ભરી આબરૂ સાચવવી જોઇએ. એ છોડાયજ કેમ? વરને વરસ તેર થયાં, આંહિ કન્યાને પણ તેર થયાં, વર નાનો રહે, અને કન્યા તો યુવાન થઇ એટલે લગ્ન કર્યા સિવાય છુટકો નથી હોતો, એટલે બાળ પતિ સાથે કન્યાને પરણાવી પોતે પોતાની ફરજમાંથી મુક્ત થયેલાં માને છે. પહેલાં આબરૂનો જે સવાલ રહેતો હતો, તે હવે સેકન્ડ હેન્ડ થયો એટલે પોતે અરધી ચિંતામાથી મુક્ત થયા, પુરી ચિંતા વરના બાપને રહી. તેને વહુને સંભાળવી રહી અને પુત્રને સંભાળવો રહ્યો. જો પુત્રની સંભાળ ઓછી રાખે તો તે બિચારો કુમળો બાળક અનેક વ્યાધિનો ભોગ થાય છે. જો કન્યાની ચિંતા ઓછી કરે તો દુનીયામાં લોકવાયકાનો મોટો ભય રહે છે. એટલે વર ભયમાં, કન્યા ભયમાં, અને તેનાં હિત ચિંતકો પણ ભયમાં! અરેરે દૈવ! આવા દયાપાત્ર સંજોગોમાં આવો સમાજ પોતાની શ્રેષ્ઠતા ક્યાંથી મેળવશે? વહુ વરને જોઇ આંસુ સારે છે, વર વહુને જોઇ ભાગે છે, આવાં બાળ વિવાહનાં નાટક ક્યાં સુધી ભજવાશે? હે દૈવ! જ્યાં જ્યાં જે જે સમાજોમાં આવું પરિવર્તન હોય ત્યાં ત્યાં ત્યાંના આત્માઓમાં સદ્‌બુદ્ધિ પ્રેરજે એવી મારી પ્રાર્થના છે, અને જે જે આવા અનુભવોના યાદ હોય તેમણે પોતાનાં પાપને ધોઇ નાખવા. પોતાનું અનુકરણ સમાજમાં કોઇ ન કરે તેને માટે શ્રમ લઇ હજુએ વરકન્યાના વરસનું અંતર સારા પ્રમાણમાં રાખવા સુચવું એમ ઇચ્છું છું.

હવે વાંચક આગળ વધ, કારણકે ગ્રીષ્મ ઋતુના દિવસો છે, તેથી સરિતાનું પહેલું દૃશ્ય વાંચી ગરમી ની "લુ" ન વાય, માટે હવે ઘર તરફ વળીએ અને આજેજ આપણ બીજે ગામ જઇએ અને ત્યાં જે માર્ગના બીજાં કલંકપ્રથાથી બધાયેલ એક નાની વયની બાલિકાની ખબર લઇએ,

[illegible]નો તડફડીને મરવા [illegible] બાળ [illegible] વાતે રસ ભરી બિન્દુ સાંભળી પડે છે [illegible] વરુંધારીકરણ ઉપર હોમ દેનારી વાતોના આનંદને સે અગ્નિ સળગતો દેખાયો, જગતમાં જેને રવે તરફની ચિંતા રહે છે. તેને શાંતિ ક્યાંથી મળી હતી? ધન દોલત કે વસ્ત્રો કે સાસુ સસરાદિરે અંગ-ચિત સુખો હોય તે પણ શા કામના? સૌ એકજ પતિ વિના ખોટાં છે-અલુણા એ.ક [illegible] સમાન સ્વાદ રહિત છે. હમારી આ દશા, નાર માબાપો ગાડરીયા, પ્રવાહને અનુસરીને, આપ સમજો, સમજો, ડગલે અને પગલે વરના નિ-સાસા અને ટપકતાં ઉન્હાં આંસુઓ ને રીબા-વશો અને નરકના ભાગીદાર બનાવશો ફરજ હીણ મોટાઇમાં બીજાઓનું બલી, અપ-નાર માબાપો! તમારામાં અને કસાઇમાં શો ફેરક છે, કસાઇ અણબોલ પશુઓ કાપે છે ત્યારે તમો તમારી અભણ રહેલી એવી પુત્રી-ઓપર તમારા અવિચારનું શસ્ત્ર ચલાવી હમોને થોડે થોડે રીબાવો છો. તમારી પુત્રીની જીવતી ચીતાઓ પર તાપી તમો આનંદ [illegible] તમારી પાપી રૂઢીઓને પોષો છો. ઓ સર્વના મોટી મોટી વાતો કરનારા પટેલો! તમારી બુદ્ધિ ક્યાં વેચી નાંખી છે? લક્ષાધીપતિની પત્નીઓ છતાં અને મોટાઇમાંજ મરચુસ રહેતાં તમારે જોવું છે, જુઓ-જુઓ તમારીજ પુત્રીઓની દશા થઇ રહી છે, બુદ્ધિને ગીરવી મુકનાર નારી પટેલો જાગો અને ગીરવી મુકેલી બુદ્ધિને જરમાંથી ખરીદો, અને તમારા હાથે બંધાતા ધંધાને ન તોડતાં વધારે સારો કાયદો બાંધી રીરી હજારો પુત્રીઓના આશીર્વાદ મેળવો, જાગો અને જુઓ કે તમો દુર્નિમાની સંપૂર્ણ કચરીમાં સુના છો અને તે કચરાપટ્ટીમાંથી નીકળ દુર્ગંધનો પવન હમોને લાગી રહ્યો છે. અને તેથીજ હમે અભણ અજ્ઞાન નિર્જિવ જીવનમાંથી હમારું જીવન ખતમ કરીએ છીએ.

એ પણ હૈયું ખાલી કરી પર બાળાની સારવારમાં રોકાઇ. હવે આપણે પણ આપણી ફરજ બજાવવા બાકી રહી જતા બે શબ્દોની નવાજેશ કરીએ.

અવિચારી માબાપો લગ્નની લહાણું લેવાને લેણે તેમજ ખર્ચ બચાવવાની ખાતર આવી નાની વયમાં અવિચારી વેવીશાળો અને લગ્ન શામાટે કરે છે?

વાંચક, આંદગીમાં જે ખાળો છે તેના વિશે કેટલુંક રહી જાય છે, તે કહીએ અને પછી આગળ વધીએ.

નાજુક કન્યાઓને લગ્ન ગ્રંથીથી જોડી ગોરે કહ્યું તે સહીથી વગર મુહૂર્તે શરમના પીંજરે (સાસરે) પુરે છે.

જે વય ખેલવા, કુદવા, વિગેરે નીર્દોષ રમતોને યોગ્ય હોય, તે સ્થળે તે નાજુક કુસુમપર સંસાર રૂપી હજારો મણની શલ્યા મુકવાથી ખીચોરી ખાળાનું બેલી કોણ?

જે સમાજમાં જ્ઞાનામૃતનું એક પણ બિંદુ ચાખવાનો અધીકાર દુરાગ્રહી માબાપો ન રાખે તેમજ કોઇ ભરવા ગુંથવા કે સમજવાની બધી વ્યવહારકુશળતાથી અજાણ રાખે અને ઘર કાર્યના અસહ્ય બોજાથી લાધી રાખે તો આવા વર્તનથી આપણને નિર્ભયપણે જીવવાનો અધિકાર પણ શો? જે સમાજમાં પુત્ર અને પુત્રી પ્રત્યે ભિન્ન ભાવો છે. અને તે બાળ રત્નોને કેળવણીથી દૂર રાખી બેપરવાઇમાં સમાજનું સત્યાનાશ કરી રહ્યાં છીએ; પુત્રોને તો થોડું થોડું આપણને કમા-ઇને ખવડાવી શકવાના સ્વાર્થથી શિક્ષણ આપીએ છિએ પરંતુ પુત્રીઓને તો પરાઇ ઘરની લક્ષ્મિ માની ક-ખ-ગ થી પણ વંચીત રાખીએ છીએ. આવી પક્ષપાત વૃત્તિથી આપણો ઉદ્ધાર જો સમ-જતા હોઇએ તો તે આશા વ્યર્થ છે. પુત્ર અને પુત્રી એકજ પ્રભુની બક્ષિસ છે. લક્ષ્મિ તો પુન્ય-ની દાસી છે, પુત્રીનું નસીબ લઇ પુત્રી અવતરે છે. તે તો સાક્ષાત લક્ષ્મી છે. તે ઇશ્વર શક્તિને (લક્ષ્મીને) ઠોકરે મારી, મૃગજળવત લક્ષ્મી પ્રાપ્ત કરવા મથી રહેવાથી ખરી લક્ષ્મી ગુમાવો

કર્તવ્યભંગ થઇ વધારે ને વધારે નિર્ધન બની અધોગતિનો માર્ગ લઇ રહ્યા છીએ.

બિચારી બાળા માંદી પડે અને તે પણ પૈસાના ઉપાસકોને ત્યાં પછી પુછવુંજ શું ? સગાં વ્હાલાની દદ જામી હોય, સીરોપુરી ઉડતા હોય, બીજી કન્યાનાં માગાં માટે ધાંધલ અને વાટાઘાટ થતી હોય, તેવી પુન્ય પ્રવૃત્તિમાં બીમાર બાળાનું રક્ષણ પ્રભુજ કરે છે, વૈદ્યને બોલાવે છે. અને ડૉકટરની વાતો કરે છે, અને દવાના ઉકાળાના લીસ્ટ તો ખીસામાં ને ખીસામાંજ રહી જાય છે, વ્હાલા વાચક ! આ સમય બિચારો ઘરધણી કરે શું? વધારે ફરજ માંદાની આવજત કરવામાં રહેલી છે કે વેવીશાળ કરવા માટે (બીમાર બાળાના મૃત્યુની રાહ જોવા પધાર્યા) આવેલા મહેમાનોની સારવારમાં ખાંડ અને કંસાર ખવરાવવામાં તેનો નિર્ણય તો વાંચક તમેજ કરશો. આ મરશે તો બીજી જડશે એ ભાવનાના શ્રીમંતો શ્રીમંતો નહિ પરંતુ કંગાલો છે, સાચો શ્રીમંત તો એ છે કે જે પુત્રવધુને પોતાનું બાળ ગણે અને તેની દયાવૃત્તિ હોય ત્યાં સુધી તેની બરાબર સારવાર કરે તેમજ એકજ શક્તિનાં સર્વે બાળકો છીએ, એકજ જમતવાડીનાં આપણ પુષ્પો છીએ અને સહુ એકજ સુગંધીથી પરિપૂર્ણ છીએ. વૈભવો પુન્યના છે તો તે પુન્યનો દુરુપયોગ નહિ કરતાં વધારે પુન્ય જમા કરવાની કોશીશ કરીએ.

પુન્ય ઉપાર્જન કરવાનો ખરો માર્ગ દયા છે. દયાથી ધર્મ સાંપડે છે, અને એ અણમોલ ધર્મભાવથી દરેક આત્માઓને સરખા માન્ય કરી દાદાનો પણ આત્મા ન દુભાય તેવું વર્તન રાખવું જોઇએ, ઉચ નીચના ભેદભાવ દોડુરવાનની પડતી છે. તે પડતીના માર્ગમાંથા બચવા આગળ અત્યારે પ્રબલશીલ (ઉભો) થઇ રહ્યો છે.

હવે ત્રીજી જે બાળ વિધવાએ પોતાનું દુ:ખ કહી તમારી આ.પે.માં અત્યારનો ફેર કહ્યો છે, તેને ઉતારવા પ્રાર્થના કરી છે, તે ખોટી ન કહી શકાય કારણ કે જે નાના અપરિપાક વીર્ય બાળા બાળકો માર્ગે ઉમરે પહોંચેલી યુવતિઓનાં પાણી ગ્રહણ થાય તો તે કોમળ મગજ પ્રણાં છેવટે કને અર્દર્ય સાચવવામાં નિષ્ફળ થવું ... ઉમર ઢક થયેલી બાળા પોતાની સ્થિતિ ના દશાથી ચિંત હોવાથી પોતાના (નુકસાન નહિ નનણવાથી) લાવણ્ય યુક્ત ભાવોથી લોહ ચુંબકની સમાન બાળ પતિને ખેંચી જીંદગીના લ્હા માણે છે.

દુનિતી જવાબદારી ઓછી નથી હોતી ઘરમાં ઉરલાયક વહુ હોય એટલે પોતાના બાળકના હિત માટે તેમના માબાપો આંખો આડ હાથ ધરી પશ્ચાત્તાપ કરે છે. બાધા આખડીઓથી પ્રાપ્ત થયેલા પુત્રોને હજારો વ્યાધિઓના મેમાન બનાવી તેનું કુળ પુત્ર વિનાનું કરી મુકે છે એટલે પુત્રો આ ફાની દુનિયાને તજે છે. એક બાજુ પુત્રનું દુખ ત્યારે બીજી બાજુ બાળ વિધવાના વિલાપોરૂ દુ:ખ અને તેથી નરકના ભાગીદારો થવાય છે. અને તે આપણાજ અવિચારથી ! માટેજ ભાઇઓ, આ ત્રણ અને હવે પછી લખાયેલો ચોથો પ્રવેશ ધ્યાનમાં લેશો.

સમાજના કાયદાઓમાં સુધારા કરો—કન્યા અને વરની વચ્ચેનું અંતર ઓછામાં ઓછું વરસ ૬ નું રહે તો સમાજનો ઉદ્ધાર થાય. કન્યા વરસ ૧૦ ની થાય અને વરની ઉમર બરાબર ૧૬ ની હોય ત્યારેજ શુદ્ધદોષ તપાસી વેવીશાળ થાય તો છતાં પતિએ અનાથ થવાનું ન રહે, અને કન્યા વરસ તેરની થાય ત્યારેજ લગ્ન કરવાનો પ્રતિબંધ થાય તો સાસરામાં જતી મુગ્ધાઓને મુંઝાવું ન પડે અને તેથીજ બાળ વિધવાઓ પુત્ર હીન પણ ના રહે, એમ માનું છું. સંતાન પ્રાપ્તિ એ કર્મની કૃપા છે, પુન્યનો પ્રસાદ છે પરંતુ ઉમરેજ થયેલાં લગ્નોમાં ઓછા વરસના અંતરમાં પ્રાપ્ત થતા વૈધવ્ય સૌખ્ય વિધવાઓને સંતાન રૂપી રત્નો પ્રાપ્ત થાય છે તેથી તેઓ વૈધવ્ય દશામાં ઓછું દુ:ખ માને છે.

વિદ્યાર્થી જીવ અને લગ્ન આરંભ
વિદ્યા ભુવન.

માસ્તર સાહેબ–શેઠજી પધારો આજે કંઇ વધારે ઉમંગમા જણાવો છો

શેઠ–સાહેબ, વૈશાખ માસમા એટલે આજથી એક અઠવાડિયા પછી છોકરાનું લગ્ન છે. તેથી છોકરાને તેડવાજ આવ્યો છું માટે કૃપા કરી એનામાં ઓછી બે મહીનાની રજા આપશોજી.

માસ્તર–રામ રામ રામ–અરેરે આવડા ૧૦ વરસના બચ્ચાના લગ્ન કરીની જીંદગી પાયમાલ કરશો. ભણતર બગાડશો અને તેનુ સર્વસ્વ નાશ કરશો સેઠજી મારી તો ઇચ્છા છે કે તમો લગ્ન હાલમા મુલતવી રાખશો

શેઠ–નારે સાહેબ, આ તો જાયલગ્નની ના પાડીએ તો ન્યાત કહે કે અભિમાન આવ્યુ છે. ખર્ચ કરવા નથી મગાતો એટલે લગ્નની ના કહે છે. માટે સાહેબ બધ રહે તેમ્યથા.

માસ્તર–વારુ શેઠ છોકરો તમારો છે કે ન્યાતનો ?

શેઠ–મારો છે સાહેબ ?

માસ્તર–તમો છોકરાઓ પ્રાપ્તકરવાને તો હજારો ઉપાયો કરો છો. તમો સમયે તો તમારો ધર્મ છોડી પરધર્મમા શ્રદ્ધા રાખી બાધા આખડીઓથી પુત્ર મેળવવાની ઇચ્છા રાખો છો, માટે સેઠજી તમારો પુત્ર તમે ગુમાવો ?

શેઠ–શું કરું સાહેબ, કન્યાને સ અગીયાર થયા છે, પરન્તુ દેખાવમા તો વરસત્તર જેટલી લાગે છે, તેથી કન્યાનો બાપ રહીશકતો નથી, માટે મારો ઉપાય નથી

માસ્તર–ત્યારે શેઠજી વેવીશાળ ભગ કરો, તમે કુંવારી દશામા ભગ નહિ તો પરણાવીને બેઉના જીવન ધૂળ કરશો માટે હુ તમારા ભલાને માટે કહું છુ

[illegible], સાહેબ, વેવીશાળ ભગ થાય ત્યાતવાળાઓ ન્યાત બહાર અને કન્યાવાળાઓ મને અભિમાનનુ પુતળુ માની કન્યા ન આપે એટલે સાહેબ બધી રીતે મુઝવણ થાય, માટે પ્રભુ પ્રભુ થવાનું હશે તે થશે.

માસ્તર–ત્યારે શું તમારો સમાજ ન્યાયી નથી ? તેમજ તમારામાં આત્મબળ નથી ? તમો ઇશ્વરને માની જૈની તરીકે ઓળખાવો છો, મહાવીરના પુત્રો કહેવાઓ છો, છતા તમારા જીવન નિરસ નિર્જિવ અને આત્મહીન છે ગાડરીયા પ્રવાહમાંજ તમારો આત્મા છે અને તેથીજ તમારો ઉદય તમો માની રહ્યા છો ? શું તમારી સમાજના આગેવાનોનો પણ આજ વિચાર છે ?

શેઠ–અરે માસ્તર સાહેબ, ત્યારે તો પચાત છે કે હમારા જ્ઞાતિ નાયકો કંઇ કરી શકતા નથી અને પછી હમારે બહુ મતિને માન આપવુ પડે છે

વાંચક–ઉપરની વાતચીત પરથી અનુમાન થાય છે કે સમાજમાં બહુ પક્ષ પાપ વૃત્તિઓને પાછુ વાળી ન જોતા હોય, ત્યારે અલ્પ ભાગ પણ પાપીજ બને છે. આવા પરિવર્તનમા તો જ્ઞાતિના નાયકોએ જીવનોજ ભોગ આપવાનો છે, છતા એ આપી શકતા નથી. ઉપર જણાવેલ વેવીશાળનું અંતર અને મર્યાદા આવા બાળકોને માટે ઉત્તમ છે આવો સુધારો કરો એવી આશા રાખુ છુ ખરો, છતા પણ તેની સાથે કેળવણી જોઇએ. જેમ મ્યાન સિવાય તલવાર ન શોભે તેમ સમાજનુ બધારણ કેળવણી વિના ન ટકે–શુદ્ધ સસ્કારના બાળકોજ અને તે પણ સુશોભિત નીવડે તો નિદાને પાત્ર થતો સમાજ યશને પામે એમ કહી હુ વિરમુ છુ. ભુલચુકની ક્ષમા માગુ છુ, તે સાથે તમારી સસારનૌકાની સફર સફળ નીવડે તે માટે સુવ્યવસ્થા કરવાનુ સૈભાગ્ય પ્રાપ્ત કરે તેવી પ્રભુ પ્રત્યે પ્રાર્થના છે લેખ––

સી૦ વી૦ જી૦

हैं जैसे कुछ सुधारक समझे बैठे हैं। उनका मूल्य इस विभिन्नतामें ही गर्भित है न कि उनकी एकत्वतामें। यदि स्त्री और पुरुष एक ही समान हैं तो इसमें कुछ हानि नहीं कि उन मेंसे कोई भी जातीय वा राष्ट्रीय उन्नतिके मार्गमें अग्रसर हों; परन्तु इस कारणसे कि वे एक दूसरेसे विभिन्न हैं क्योंकि वे प्रत्येक प्रश्नको विभिन्न नय—विभिन्न दृष्टिसे देखते हैं, क्योंकि स्त्री प्रत्येक प्रश्नको अपने स्त्री जैसे मस्तिष्क हृदयसे विचारती है जो कि मनुष्यके दिल और दिमागसे नितान्त विभिन्न है। बस यह इसी कारणसे है कि दोनोंका सहयोग वह शक्ति रखता है जो पृथक्त्वमें कभी भी संभव नहीं है। यह गान विद्याके सदृश है जिसमें कि स्वरोंकी विभिन्नतासे ही इसकी उत्तमता प्राप्त होती है। और यह ही वह विभिन्नता है जो कि शारीरिक स्थिति पर व्यक्त है और हार्दिक एवं मानसिक स्वभाव पर भी। इसी विभिन्नता पर मैं इस बातका दावा करूंगी कि स्त्रियोंका साथ साधारण कार्योंमें एवं राष्ट्रके जातीय और व्यवहारिक विभागमें अवश्य होना चाहिए। खासकर व्यवस्था (administmtion) के कार्यक्रममें स्त्रियोंका सहयोग एक विशेष मूल्य रखता है। साफ कहूं तो मैं यह समझती हूं कि स्त्रीमें पुरुषके समान ही नियोजक शक्ति (Intiativo) नहीं है। मैं साधारण तौर पर कह रही हूं न कि दोनों ओरके व्यक्ति विशेषोंको दृष्टि लेकर। परन्तु यदि आप अशिक्षित पुरुषोंको लें और अशिक्षित स्त्रियोंको तो आपको मालूम होगा कि अशिक्षित पुरुषोंमें अशिक्षित स्त्रियोंसे अधिक योजक शक्ति [illegible] है परन्तु व्यवस्था और सिद्धांतोंको कार्यमें परिणत करनेके समय पर आप सदैव यह देखेंगे कि व्यवस्था-संयोजक नियमोंपर स्त्रीके मस्तिष्क का पूर्ण आधिपत्य है जो कि किसीको व्यवस्था संबंधी कार्योंमें विशेष उपयोगी बना देता है। मुझे यहां इसके अमली प्रयोगका उदाहरण जैसे इंग्लैन्डमें प्राप्त है उपस्थित करने दीजिए जबकि स्त्रियोंके सुपुर्द अस्पतालों, बच्चोंकी शालाएं रोगियोंकी सेवा और अन्य स्थानोंकी जहां गर्भों और युवकोंका ध्यान रक्खा जाता हो अथवा है। इन सब स्थानोंपर स्त्रियोंका व्यवस्थापक ज्ञान विशेष मूल्यवान पाया गया है। स्त्रियां उन बातोंको ढूंढ निकालती हैं जिनका पुरुषको विचार भी न था। यहां पर मुझे एक शालामहकी याद आती है जहां पर एक बालसंस्थामें बच्चे थे और जहांकी स्थिति बहुत दिनोंसे पुरुषोंके हाथमें थी। परन्तु उस कार्यप्रबंधकारिणीमें एक स्त्री चुन ली गई। पहिला कार्य जो उसने किया वह यह था कि वह प्रातः बिछौने सुनिश्चित किए ही सबेरे शयनागारमें निरीक्षणार्थ आने लगी। दूसरा कार्य ले यह किया कि उसने बच्चोंके जूते उतार कर देखा कि उनके मोजे सिरे पर पूरी तरह सीले हुए हैं जिसके कारण कोमल पगोंको बड़ा कष्ट उठाना पड़ता था। उसने बच्चोंके स्वास्थ्य वर्द्धन हेतु बहुतसे कार्य किए जिनको कि पुरुषपनी [illegible] नहीं कर [illegible] पहुंची दृष्टिके अभावमें न [illegible] जहां कं आप आशिक्षि